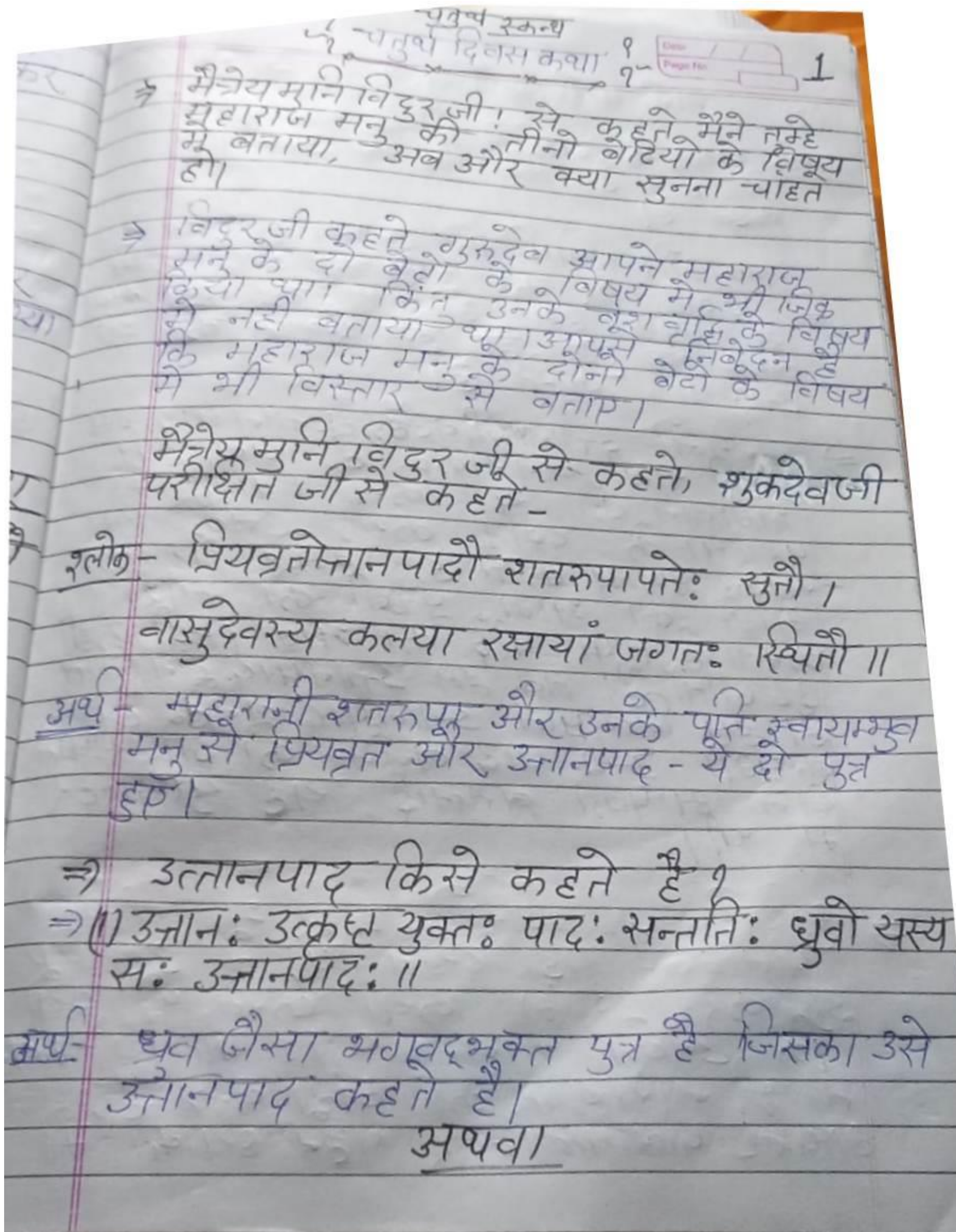
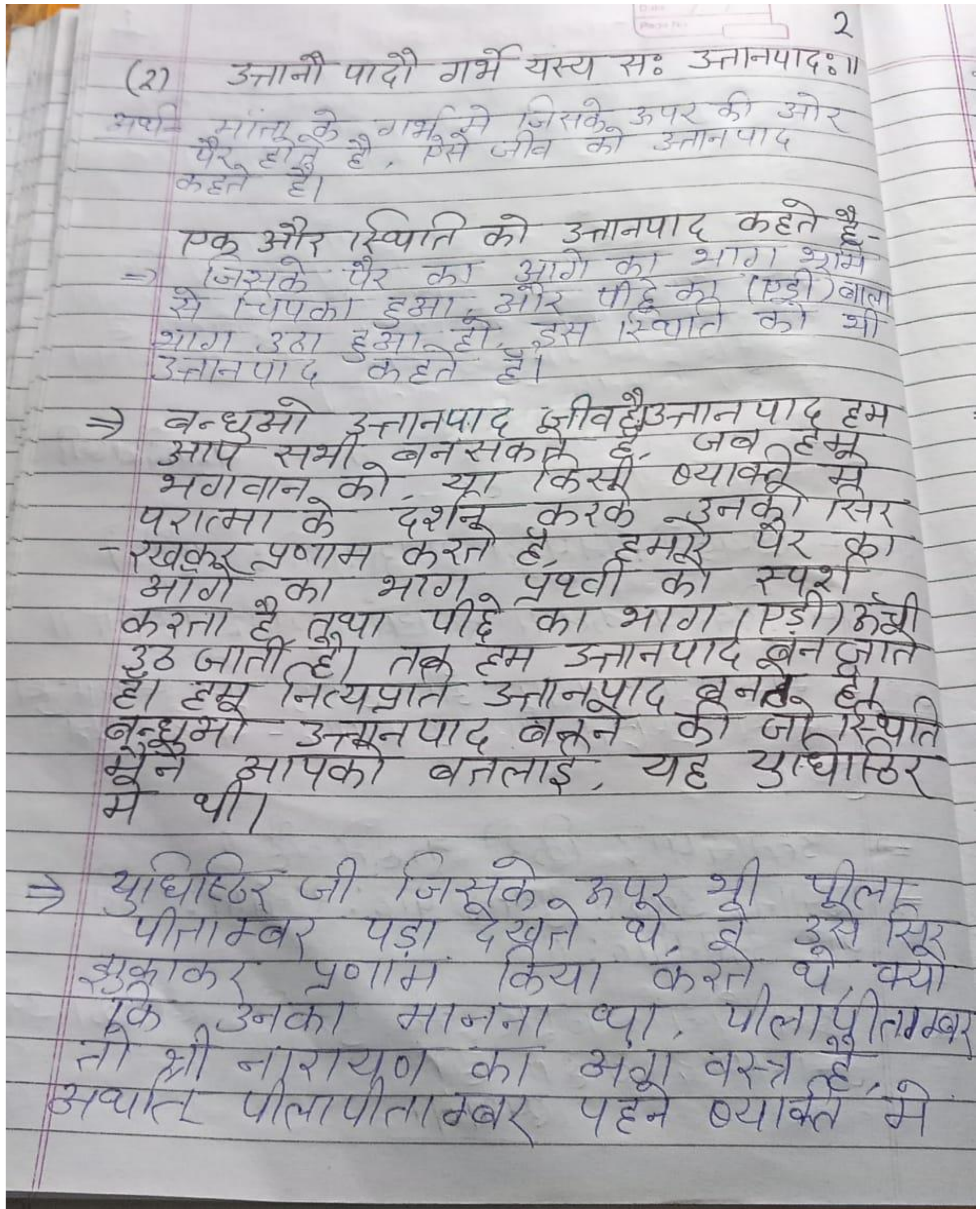

चतुर्थ स्कन्ध
चतुर्थ दिवस कथा
1
मैत्रेय मुनि विदुर जी ! से कहते मैंने तुम्हे महाराज मनु की तीनो बेटियो के विषय मे बताया, अब और क्या सुनना चाहते हो।
विदुर जी कहते गुरुदेव आपने महाराज मनु के दो बेटों के विषय में भी जिक्र किया था किंतु उनके वंश वृद्धि के विषय मे नही बताया था। आपसे निवेदन है कि महाराज मनु के दोनो बेटो के विषय मे भी विस्तार से बताए।
मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते, शुकदेवजी परीक्षित जी से कहते-
श्लोक- प्रियव्रतोत्तानपादौ शतरूपापतेः सुतौ।
वासुदेवस्य कलया रक्षायां जगतः स्थितौ॥
अर्थ- महारानी शतरूपा और उनके पति स्वायम्भुव मनु से प्रियव्रत और उत्तानपाद - ये दो पुत्र हुए।
उत्तानपाद किसे कहते है?
(1) उत्तानः उत्कृष्ट युक्तः पादः सन्ततिः ध्रुवो यस्य सः उत्तानपादः॥
अर्थ- ध्रुव जैसा भगवद्भक्त पुत्र है जिसका उसे उत्तानपाद कहते है।
अथवा



2

(2) उत्तानौ पादौ गर्भे यस्य सः उत्तानपादः॥

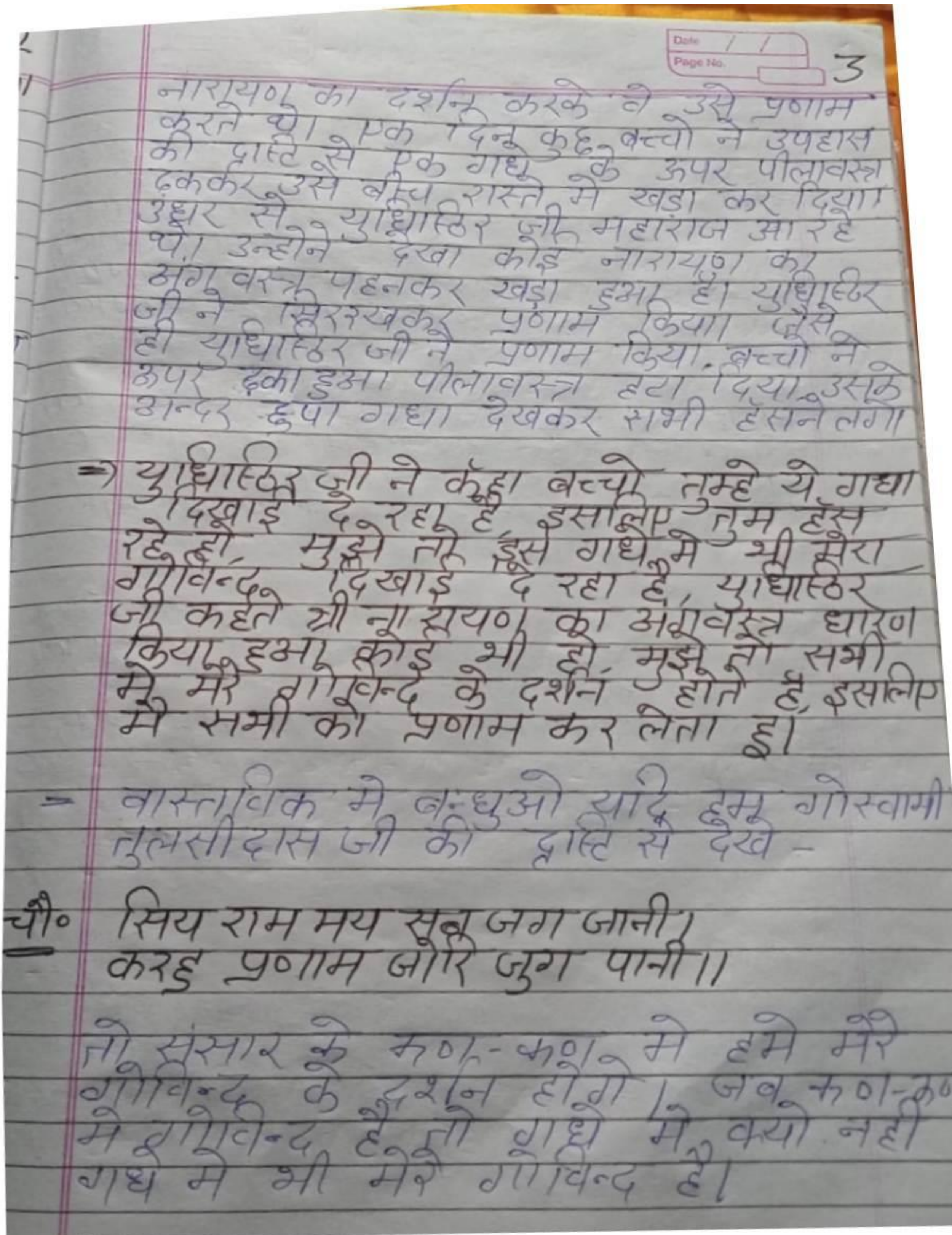
अर्थात् माँता के गर्भ मे जिसके ऊपर की ओर पैर होते है, ऐसे जीव को उत्तानपाद कहते है।

एक और स्थिति को उत्तानपाद कहते है-

=> जिसके पैर का आगे का भाग भूमि से चिपका हुआ, और पीछे का (एड़ी) वाला भाग उठा हुआ हो, इस स्थिति को भी उत्तानपाद कहते है।

=> बन्धुओ उत्तानपाद जीव है उत्तानपाद हम आप सभी बन सकते है- जब हम भगवान को या किसी व्यक्ति मे परात्मा के दर्शन करके उनको सिर रखकर प्रणाम करते है, हमारे पैर का आगे का भाग पृथ्वी को स्पर्श करता है तथा पीछे का भाग (एड़ी) ऊँची उठ जाती है। तब हम उत्तानपाद बन जाते है। हम नित्यप्रति उत्तानपाद बनते है। बन्धुओ उत्तानपाद बनने की जो स्थिति मैंने आपको बतलाई, यह युधिष्ठिर मे थी।

=> युधिष्ठिर जी जिसके ऊपर भी पीला पीताम्बर पड़ा देखते थे, वे उसे सिर झुकाकर प्रणाम किया करते थे, क्यो कि उनका मानना था, पीला पीताम्बर तो श्री नारायण का अंग वस्त्र है, अर्थात् पीला पीताम्बर पहने व्यक्ति मे



3

नारायण का दर्शन करके वे उसे प्रणाम करते थे। एक दिन कुछ बच्चो ने उपहास की दृष्टि से एक गधे के ऊपर पीलावस्त्र ढककर उसे बीच रास्ते मे खड़ा कर दिया। उधर से युधिष्ठिर जी महाराज आ रहे थे। उन्होने देखा कोई नारायण का अंग वस्त्र पहनकर खड़ा हुआ है। युधिष्ठिर जी ने सिर रखकर प्रणाम किया। जैसे ही युधिष्ठिर जी ने प्रणाम किया, बच्चो ने ऊपर ढका हुआ पीलावस्त्र हटा दिया, उसके अन्दर छुपा गधा देखकर सभी हँसने लगे।

=> युधिष्ठिर जी ने कहा बच्चो तुम्हे ये गधा दिखाई दे रहा है इसलिए तुम हँस रहे हो, मुझे तो इसे गधे मे भी मेरा गोविन्द दिखाई दे रहा है, युधिष्ठिर जी कहते थे नारायण का अंगवस्त्र धारण किया हुआ कोई भी हो, मुझे तो सभी मे मेरे गोविन्द के दर्शन होते है, इसलिए मै सभी को प्रणाम कर लेता हूँ।

→ वास्तविक मे बन्धुओ यदि हम गोस्वामी तुलसीदास जी की दृष्टि से देखे -

चौ॰ सिय राम मय सब जग जानी।
करहु प्रणाम जोरि जुग पानी॥

तो संसार के कण-कण मे हमे मेरे गोविन्द के दर्शन होंगे। जब कण-कण मे गोविन्द है तो गधे मे क्यो नही गधे मे भी मेरे गोविन्द है।

Date / /
Page No.
4

बन्धुओ मुझे एक दृष्टान्त याँद आ रहा है-

दृष्टांत- महाराष्ट्र मे एक सन्त रहा करते थे। उनका नाम संत एकनाथ था। एकबार कि बात संत एकनाथ ने विचार किया कि मैं गंगोत्री से जलभरकर भगवान रामेश्वर को चढ़ाऊंगा। कई दिनो की लम्बी यात्रा के बाद संत एकनाथ गंगोत्रि से जलभर कर रामेश्वरम पहुंचे, किंतु जैसे ही वह मंदिर के समीप पहुंचने वाले थे उन्होने देखा, एक गधा है जिसके प्राण निकलने वाले है, समीप जाकर देखा कि प्यास की वजह से वह तड़प रहा है और उसके प्राण निकलने वाले है। संत एकनाथ ने बिना विचार किए वह सारा कमण्डल का जल उस गधे को पिला दिया और कहा हे प्रभु मैंने सुना है आपतो कण कण मे रहते हैं, इसलिए इस गधे मे भी आपका दर्शन कर के साराजल मै इसको पिला दे रहा हूं। यही से मेरे जल को स्वीकार कीजिए। बन्धुओ उस गधे मे से भगवान शंकर प्रगट हो गए और बोले तूने मुझे इस रूप मे भी पहचान लिया। संत एकनाथ जी बोले ऐसे कौन सी जगह है प्रभु जहां आपका वास नही है। बन्धुओ जिस प्रकार एकनाथ की भक्ती से प्रसन्न होकर गधे मे भगवान प्रगट हो गए। इसी प्रकार युधिष्ठिर जी उन बालको से कहते बच्चो भाव से देखो तो इस गधे मे भी भगवान है, तुमने इसे मेरे नारायण

Date / /
Page No. 5

का अंग वस्त्र भी पहना दिया, इसलिए मैंने इसे प्रणाम किया। तो बन्धुओ जैसे युधीष्ठिर जी उत्तानपाद बनते थे। इसी प्रकार सभी मे भगवान का दर्शन करके उनको प्रणाम करके हम भी उत्तानपाद बन सकते है।

⇒ बन्धुओ उत्तानपाद राजा का विवाह सुनीति नामक राजकुमारी से हुआ।

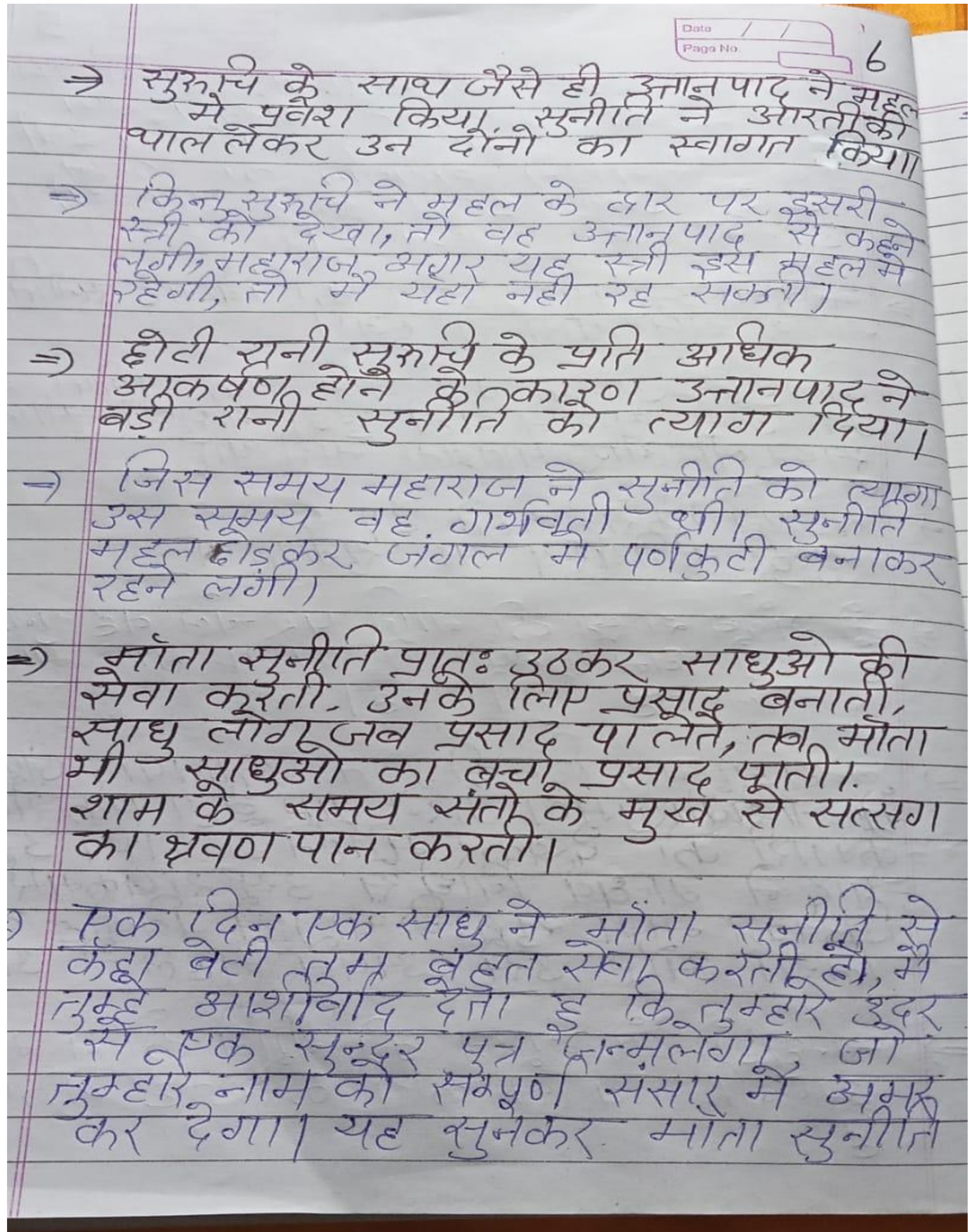
= विवाह के उपरान्त कई वर्षो तक सुनीति को कोई सन्तान नही हुई, बन्धुओ सुनीति सदगुणी और पतिव्रता नारी थी।

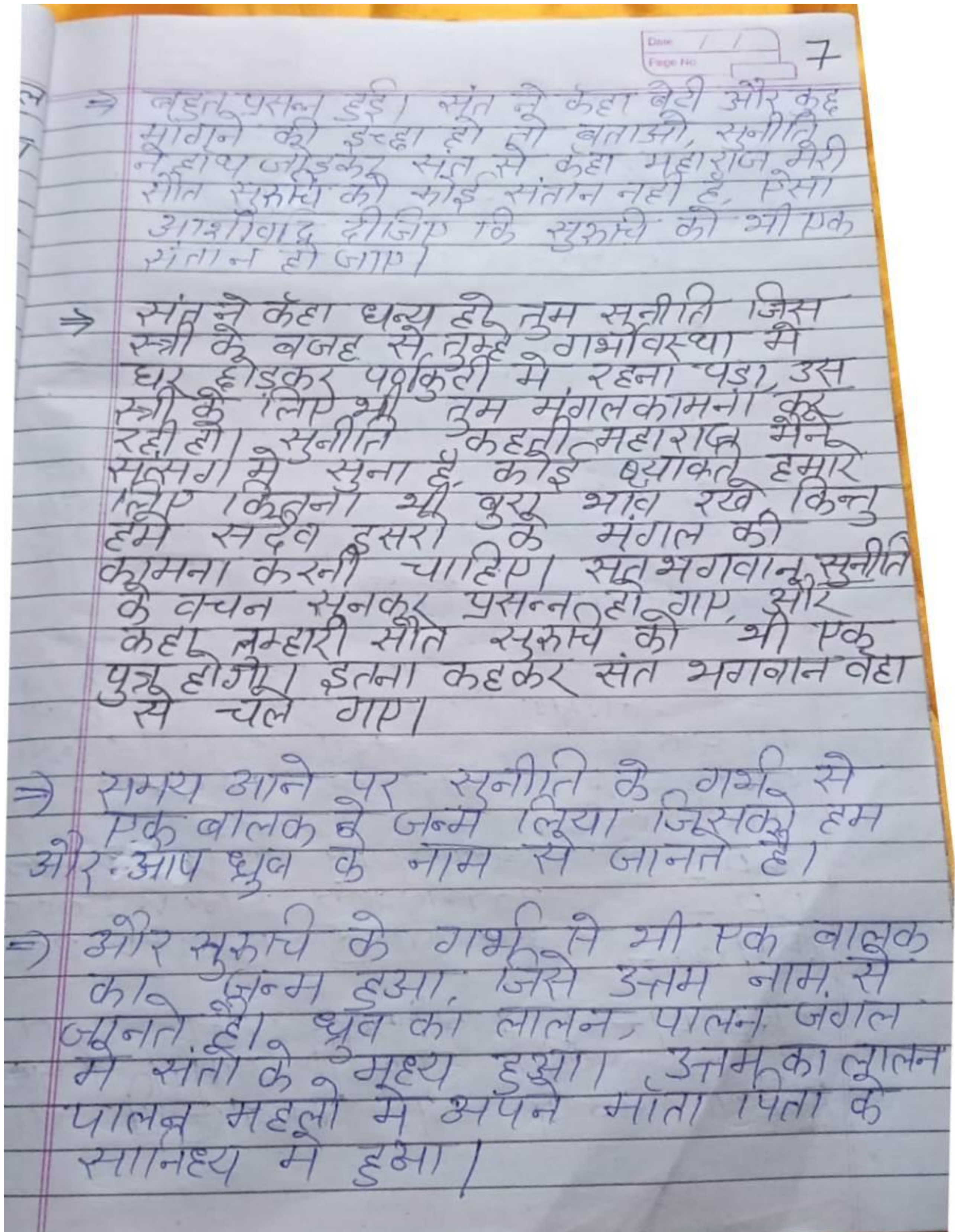
⇒ सुनीति किसे कहते है?
॥ सुष्ठु: नीतिर्यस्य स: सुनीति ॥

⇒ जो सदैव शास्त्र की नीति पर चले वह सुनीति है। जो धर्म ग्रन्थो मे बताए गए मार्ग पर चले वह सुनीति है।

⇒ बन्धुओ एक दिन की बात उत्तानपाद सुदूर प्रान्तो मे भ्रमण करने गए वहा एक राजकुमारी को देखकर मोहित हो गए। उत्तानपाद ने गन्धर्व विधि से उस राजकुमारी (जिसका नाम सुरुचि था) से विवाह कर लिया और उसे अपने महल ले आए।

⇒ बन्धुओ जो शास्त्र की नीति को न मानकर अपनी रुचि से कार्य करे वह सुरुचि है।


Date / /
Page No. 6
⇒ सुरुचि के साथ जैसे ही उत्तानपाद ने महल मे प्रवेश किया, सुनीति ने आरती की थाल लेकर उन दोनो का स्वागत किया।
⇒ किन्तु सुरुचि ने महल के द्वार पर दूसरी स्त्री को देखा, तो वह उत्तानपाद से कहने लगी, महाराज, अगर यह स्त्री इस महल मे रहेगी, तो मै यहा नही रह सकती।
⇒ छोटी रानी सुरुचि के प्रति अधिक आकर्षण होने के कारण उत्तानपाद ने बड़ी रानी सुनीति को त्याग दिया।
⇒ जिस समय महाराज ने सुनीति को त्यागा उस समय वह गर्भवती थी। सुनीति महल छोड़कर जंगल मे पर्णकुटी बनाकर रहने लगी।
⇒ माता सुनीति प्रातः उठकर साधुओ की सेवा करती, उनके लिए प्रसाद बनाती, साधु लोग जब प्रसाद पा लेते, तब माता भी साधुओ का बचा प्रसाद पाती। शाम के समय संतो के मुख से सत्संग का श्रवण पान करती।
⇒ एक दिन एक साधु ने माता सुनीति से कहा बेटी तुम बहुत सेवा करती हो, मै तुम्हे आशीर्वाद देता हू कि तुम्हारे उदर से एक सुन्दर पुत्र जन्म लेगा, जो तुम्हारे नाम को सम्पूर्ण संसार मे अमर कर देगा। यह सुनकर माता सुनीति



7

⇒ बहुत प्रसन्न हुई। संत ने कहा बेटी और कुछ मांगने की इच्छा हो तो बताओ, सुनीति ने हाथ जोड़कर संत से कहा महाराज मेरी सौत सुरुचि की कोई संतान नही है, ऐसा आशीर्वाद दीजिए कि सुरुचि को भी एक संतान हो जाए।

⇒ संत ने कहा धन्य हो तुम सुनीति जिस स्त्री के वजह से तुम्हे गर्भावस्था मे घर छोड़कर पर्णकुटी मे रहना पड़ा, उस स्त्री के लिए भी तुम मंगलकामना कर रही हो। सुनीति कहती महाराज मैंने सत्संग मे सुना है, कोई व्यक्ति हमारे लिए कितना भी बुरा भाव रखे किन्तु हमे सदैव दूसरो के मंगल की कामना करनी चाहिए। संत भगवान सुनीति के वचन सुनकर प्रसन्न हो गए, और कहा तुम्हारी सौत सुरुचि को भी एक पुत्र होगा। इतना कहकर संत भगवान वहा से चले गए।

⇒ समय आने पर सुनीति के गर्भ से एक बालक ने जन्म लिया जिसको हम और आप ध्रुव के नाम से जानते है।

⇒ और सुरुचि के गर्भ से भी एक बालक का जन्म हुआ, जिसे उत्तम नाम से जानते है। ध्रुव का लालन, पालन जंगल मे संतो के मध्य हुआ। उत्तम का लालन पालन महलो मे अपने माता पिता के सानिध्य मे हुआ।

8

⇒ बन्धुओ इस ध्रुव चरित्र के कथा मे जितने भी मुख्य पात्र है, उनको आध्यात्मिक दृष्टिकोण से समझने का प्रयास करें।

⇒ उत्तानपाद जीव है, और प्रत्येक उत्तानपाद रुपी जीव की दो रानियां है ① सुनीति (बुद्धि), ② सुरुचि (मन)।

⇒ उत्तानपाद रुपी जीव जब बुद्धि का संग करता है, तो उसे ध्रुव जैसा पुत्र प्राप्त होता है।

⇒ उत्तानपाद रुपी जीव मन का संग करता तो उत्तम जैसा पुत्र प्राप्त होता।

⇒ ① ध्रुव किसे कहते है

⇒ जो अटल है, अचल है, नित्य, शाश्वत है, जिसका संकल्प अटल है, जो सम्पूर्ण विश्व को पसन्द है, वह ध्रुव है।

② उत्तम ⇒ बन्धुओ कुछ सीमित लोगो को जो पसन्द है, वह उत्तम है।

उदाहरण- जैसे हम ठाकुर जी को गुलाब का इत्र लगाते है, क्यो कि हमे गुलाब का इत्र बहुत पसंद है, किंतु वही एक दूसरा व्यक्ति ठाकुर जी को चन्दन का इत्र लगाता है, क्यो कि उसे गुलाब का

9

इत्र पसन्द नही है। कहने का भाव यह है कि जो गुलाब का इत्र हम पसंद है जरूरी नही दूसरो को भी हो और जो चन्दन का इत्र दूसरो को पसंद है, वह हमे पसंद हो यह भी आवश्यक नही। जो कुछ लोगो की पसंद है वह उत्तम है।

= किन्तु जो सभी को पसंद हो वह ध्रुव है।

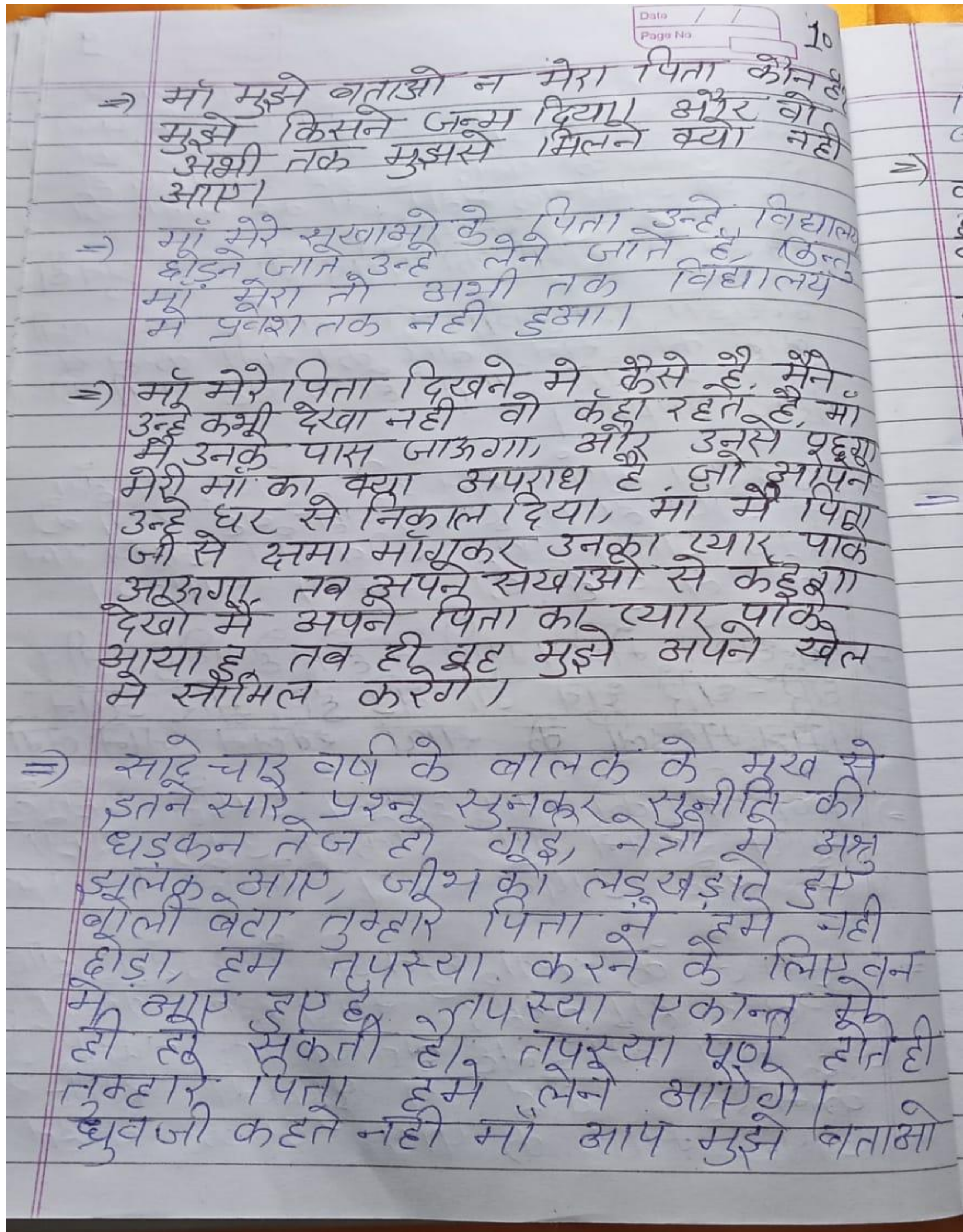
= बन्धुओ हम सभी को चाहिए हम अपनी बुद्धि की सुने, बुद्धि का संग करने से जो भी हमे प्राप्त होगा वह सभी को पंसद आएगा।

=) यदि हम अपने मन की सुनेगे, तो हमे जो प्राप्त होगा, जरूरी नही वह सभी को पसंद आए। प्रत्येक जीव को अपने मन की नही बुद्धि की सुननी चाहिए।

→ बन्धुओ मैत्रेय मुनि कहते है विदुर जी! धीरे-धीरे ध्रुव जी बड़े हुए, और अपने मित्र मण्डली के साथ खेलने जाने लगे।

=) एक दिन की बात ध्रुव जी अपने मित्रो के साथ खेलने गए, किन्तु उनके मित्रो ने उन्हे अपने साथ खेलने नही दिया।

= ध्रुव जी के सखा ध्रुव जी से कहते आज के बाद हम तुम्हारे साथ तब खेलेगे जब तुम हमे यह बता दो कि तुम्हारे पिता कौन है। तब से ध्रुव जी रोते-रोते अपनी माता के पास आकर कहते



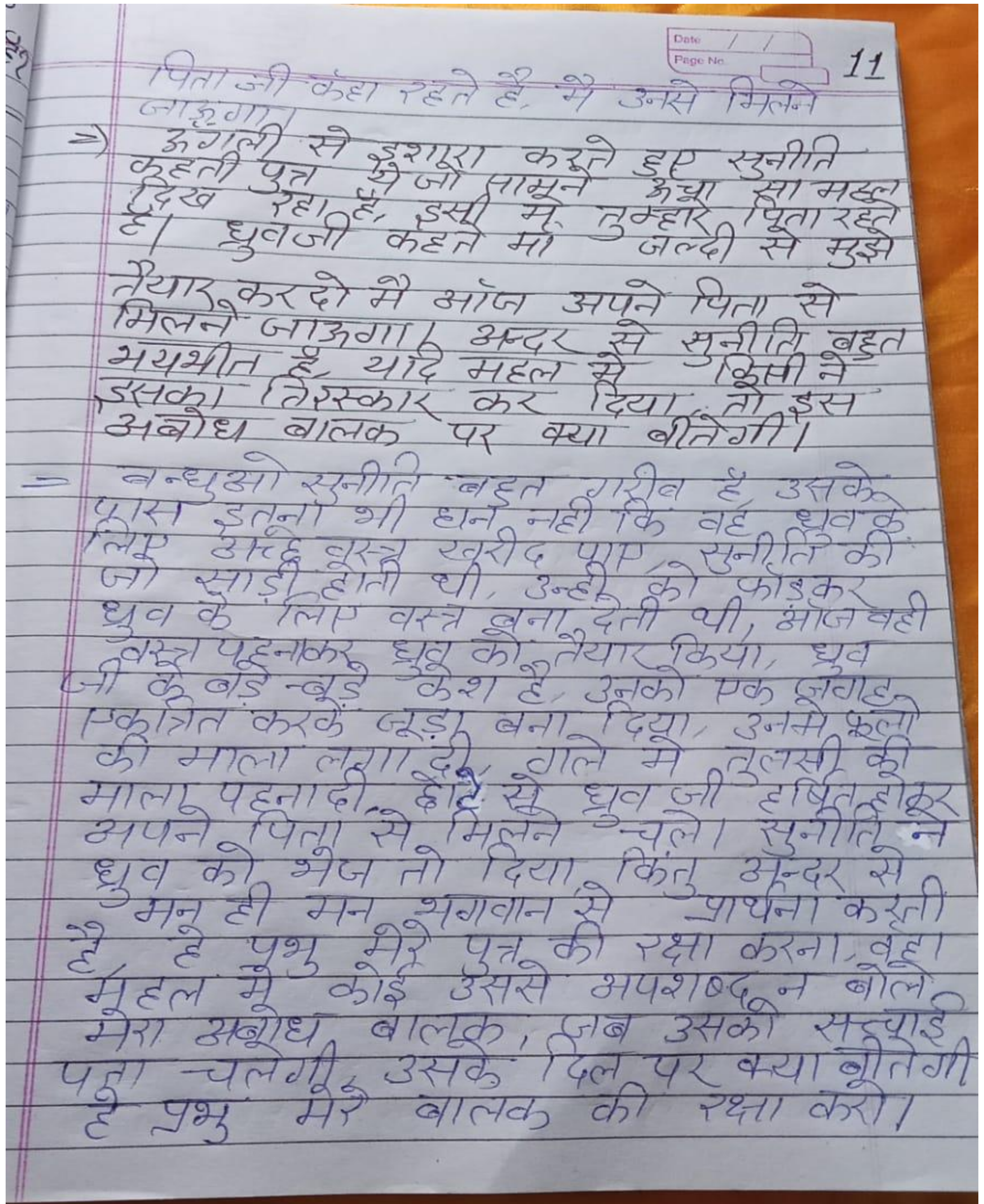
Date / /
Page No. 10

=> माँ मुझे बताओ न मेरा पिता कौन है, मुझे किसने जन्म दिया। और वो अभी तक मुझसे मिलने क्यों नही आए।

=> माँ मेरे सखाओ के पिता उन्हे विद्यालय छोड़ने जाते उन्हे लेने जाते है किन्तु माँ मेरा तो अभी तक विद्यालय मे प्रवेश तक नही हुआ।

=> माँ मेरे पिता दिखने मे कैसे है, मैने उन्हे कभी देखा नही वो कहा रहते है, माँ मैं उनके पास जाऊंगा, और उनसे पूछूंगा मेरी माँ का क्या अपराध है, जो आपने उन्हे घर से निकाल दिया, माँ मैं पिता जी से क्षमा मांगकर उनका प्यार पाके आऊंगा, तब अपने सखाओ से कहूंगा देखो मैं अपने पिता का प्यार पाके आया हूँ, तब ही वह मुझे अपने खेल मे शामिल करेगे।

=> साढ़े चार वर्ष के बालक के मुख से इतने सारे प्रश्न सुनकर सुनीति की धड़कन तेज हो गई, नेत्रो से अश्रु झलक आए, जीभ को लड़खड़ाते हुए बोली बेटा तुम्हारे पिता ने हमे नही छोड़ा, हम तपस्या करने के लिए वन मे आए हुए है, तपस्या एकान्त मे ही हो सकती है, तपस्या पूर्ण होते ही तुम्हारे पिता हमे लेने आएगे। ध्रुवजी कहते नही माँ आप मुझे बताओ

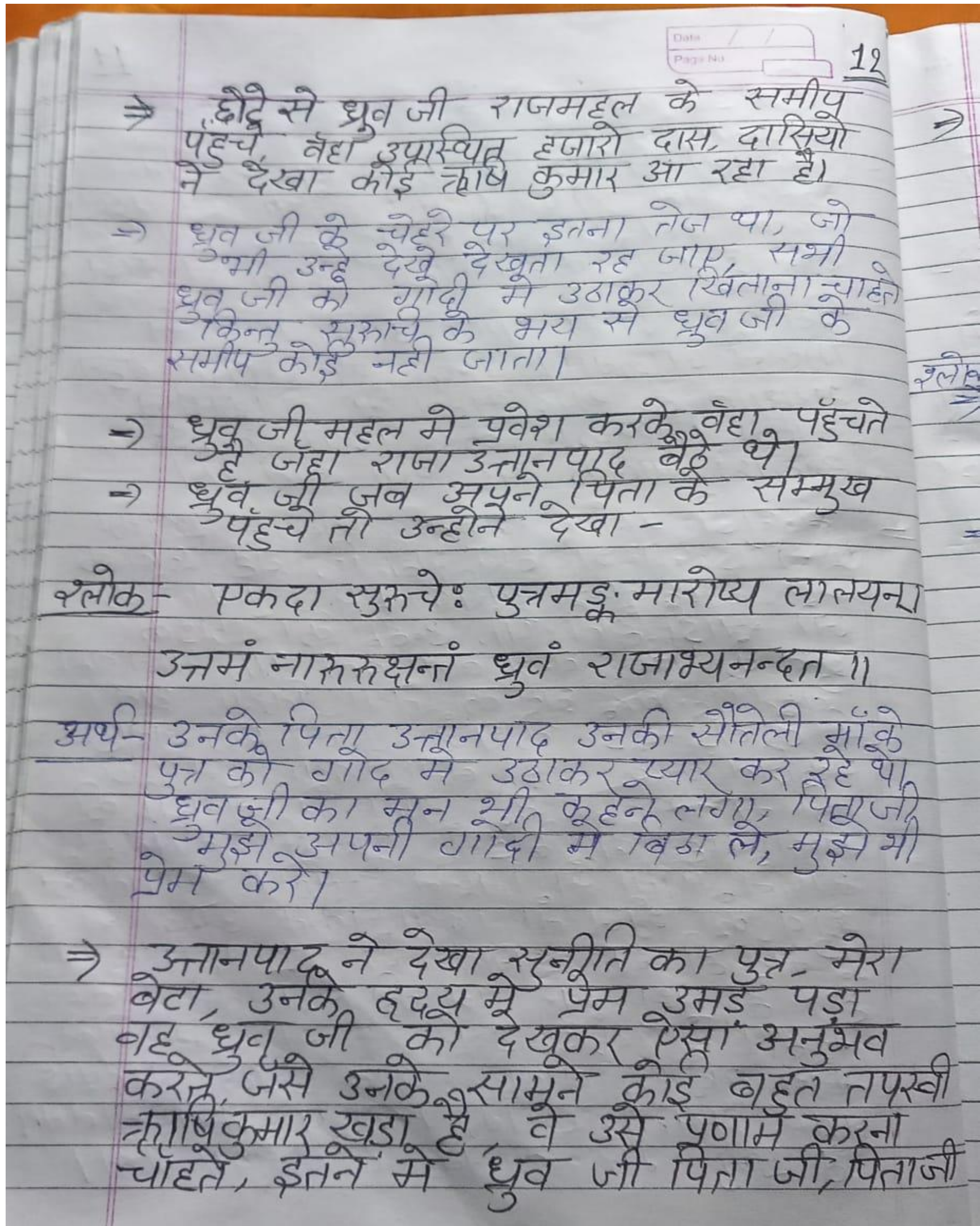


11

पिता जी कहाँ रहते हैं, मैं उनसे मिलने जाऊंगा।

=> ऊंगली से इशारा करते हुए सुनीति कहती पुत्र ये जो सामने ऊँचा सा महल दिख रहा है, इसी में तुम्हारे पिता रहते हैं। ध्रुवजी कहते माँ जल्दी से मुझे तैयार कर दो मैं आज अपने पिता से मिलने जाऊंगा। अन्दर से सुनीति बहुत भयभीत है, यदि महल से किसी ने इसका तिरस्कार कर दिया, तो इस अबोध बालक पर क्या बीतेगी।

= बन्धुओ सुनीति बहुत गरीब है उसके पास इतना भी धन नहीं कि वह ध्रुव के लिए अच्छे वस्त्र खरीद पाए, सुनीति की जो साड़ी होती थी, उन्हीं को फाड़कर ध्रुव के लिए वस्त्र बना देती थी, आज वही वस्त्र पहनाकर ध्रुव को तैयार किया, ध्रुव जी के बड़े-बड़े केश हैं, उनको एक जगह एकत्रित करके जूड़ा बना दिया, उनमें फूलों की माला लगा दी, गले मे तुलसी की माला पहना दी, हौले से ध्रुव जी हर्षित होकर अपने पिता से मिलने चले। सुनीति ने ध्रुव को भेज तो दिया, किंतु अन्दर से मन ही मन भगवान से प्रार्थना करती है हे प्रभु मेरे पुत्र की रक्षा करना, वहाँ महल में कोई उससे अपशब्द न बोले मेरा अबोध बालक, जब उसको सच्चाई पता चलेगी, उसके दिल पर क्या बीतेगी हे प्रभु मेरे बालक की रक्षा करो।



⇒ दौड़ते से ध्रुव जी राजमहल के समीप पहुंचे, वहां उपस्थित हजारो दास, दासियो ने देखा कोई ऋषि कुमार आ रहा है।

→ ध्रुव जी के चेहरे पर इतना तेज था, जो भी उन्हे देखे देखता रह जाए, सभी ध्रुव जी को गोदी मे उठाकर खिलाना चाहते किन्तु सुरुचि के भय से ध्रुव जी के समीप कोई नही जाता।

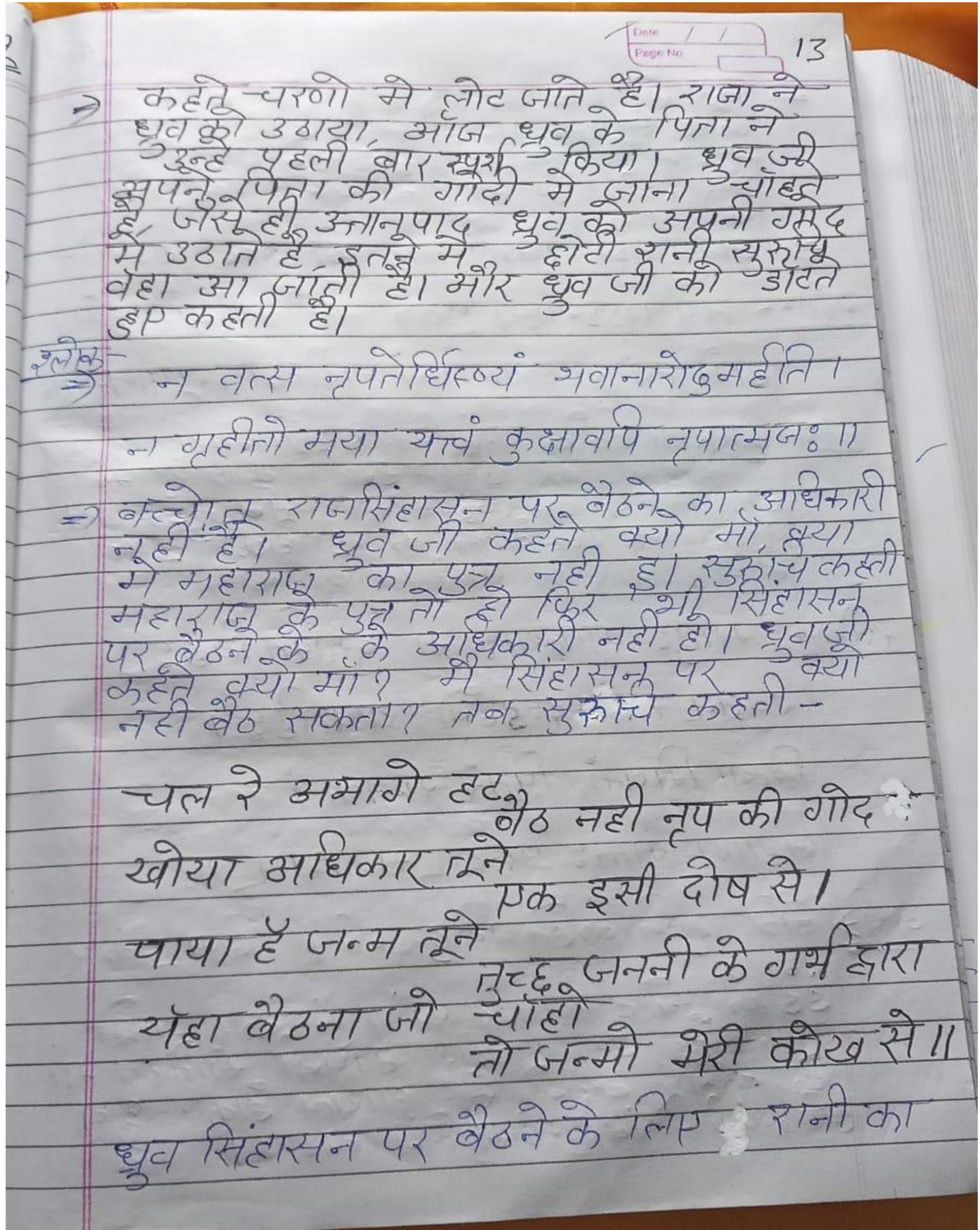
→ ध्रुव जी महल मे प्रवेश करके वहां पहुंचते है जहां राजा उत्तानपाद बैठे थे।

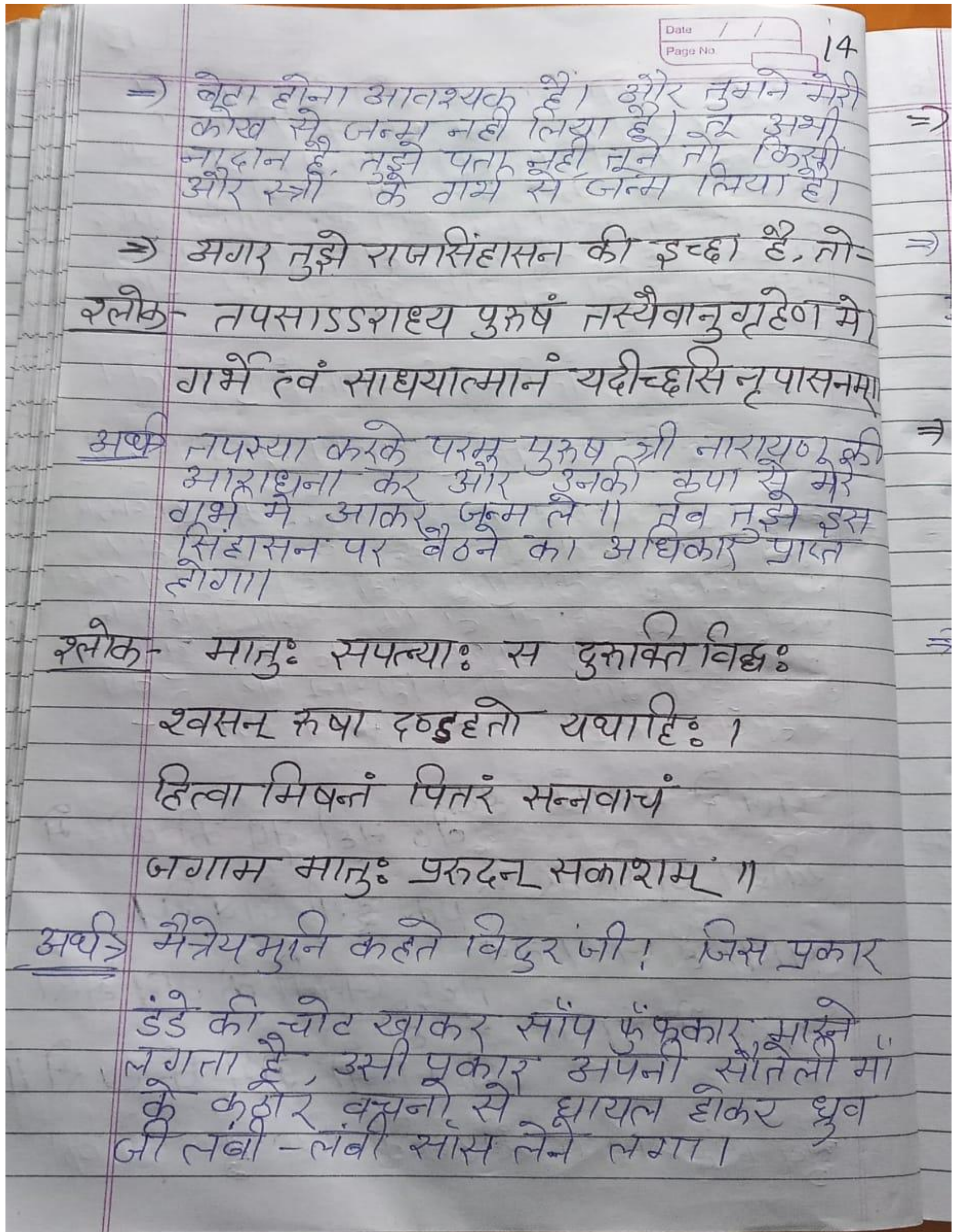
→ ध्रुव जी जब अपने पिता के सम्मुख पहुंचे तो उन्होने देखा -

श्लोक- एकदा सुरुचेः पुत्रमङ्कमारोप्य लालयन्।
उत्तमं नारुरुक्षन्तं ध्रुवं राजाभ्यनन्दत ॥

अर्थ- उनके पिता उत्तानपाद उनकी सौतेली मां के पुत्र को गोद मे उठाकर प्यार कर रहे थे, ध्रुव जी का मन भी कहने लगा, पिताजी मुझे अपनी गोदी मे बिठा ले, मुझे भी प्रेम करो।

⇒ उत्तानपाद ने देखा सुनीति का पुत्र, मेरा बेटा, उनके हृदय मे प्रेम उमड पड़ा वह ध्रुव जी को देखकर ऐसा अनुभव करते, जैसे उनके सामने कोई बहुत तपस्वी ऋषिकुमार खड़ा है, वे उसे प्रणाम करना चाहते, इतने मे ध्रुव जी पिता जी, पिताजी


13
कहते चरणों मे लोट जाते है। राजा ने ध्रुव को उठाया, आज ध्रुव के पिता ने उन्हे पहली बार स्पर्श किया। ध्रुव जी अपने पिता की गोदी मे जाना चाहते है जैसे ही उत्तानपाद ध्रुव को अपनी गोद मे उठाते है इतने मे छोटी रानी सुरुचि वहा आ जाती है। और ध्रुव जी को डांटते हुए कहती है।
श्लोक
न वत्स नृपतेर्धिष्ण्यं भवानारोढुमर्हति।
न गृहीतो मया यत्त्वं कुक्षावपि नृपात्मजः॥
बच्चे तू राजसिंहासन पर बैठने का अधिकारी नही है। ध्रुव जी कहते क्यो माँ क्या मै महाराज का पुत्र नही हूँ। सुरुचि कहती महाराज के पुत्र तो हो फिर भी सिंहासन पर बैठने के अधिकारी नही हो। ध्रुव जी कहते क्यो माँ? मैं सिंहासन पर क्यो नही बैठ सकता? तब सुरुचि कहती -
चल रे अभागे हट, बैठ नही नृप की गोद मे
खोया अधिकार तूने एक इसी दोष से।
पाया है जन्म तूने तुच्छ जननी के गर्भ द्वारा
यहा बैठना जो चाहो तो जन्मो मेरी कोख से॥
ध्रुव सिंहासन पर बैठने के लिए रानी का



14

=> बेटा होना आवश्यक है। और तुमने मेरी कोख से जन्म नहीं लिया है। तू अभी नादान है, तुझे पता नहीं तूने तो किसी और स्त्री के गर्भ से जन्म लिया है।

=> अगर तुझे राजसिंहासन की इच्छा है, तो-

श्लोक- तपसाऽऽराध्य पुरुषं तस्यैवानुग्रहेण मे।
गर्भे त्वं साधयात्मानं यदीच्छसि नृपासनम्॥

अर्थ- तपस्या करके परम पुरुष श्री नारायण की आराधना कर और उनकी कृपा से मेरे गर्भ मे आकर जन्म ले ।। तब तुझे इस सिंहासन पर बैठने का अधिकार प्राप्त होगा।

श्लोक- मातुः सपत्न्याः स दुरुक्तिविद्धः
श्वसन् रुषा दण्डहतो यथाहिः ।
हित्वा मिषन्तं पितरं सन्नवाचं
जगाम मातुः प्ररुदन् सकाशम् ॥

अर्थ- मैत्रेयमुनि कहते विदुर जी! जिस प्रकार डंडे की चोट खाकर साँप फुँफकार मारने लगता है, उसी प्रकार अपनी सौतेली माँ के कठोर वचनो से घायल होकर ध्रुव जी लंबी-लंबी साँस लेने लगा।

15

⇒ उत्तानुपाद यह सब देखता रहा किन्तु रुचि के प्रेम आकर्षण के जाल मे फंसकर कुछ कर न सका।

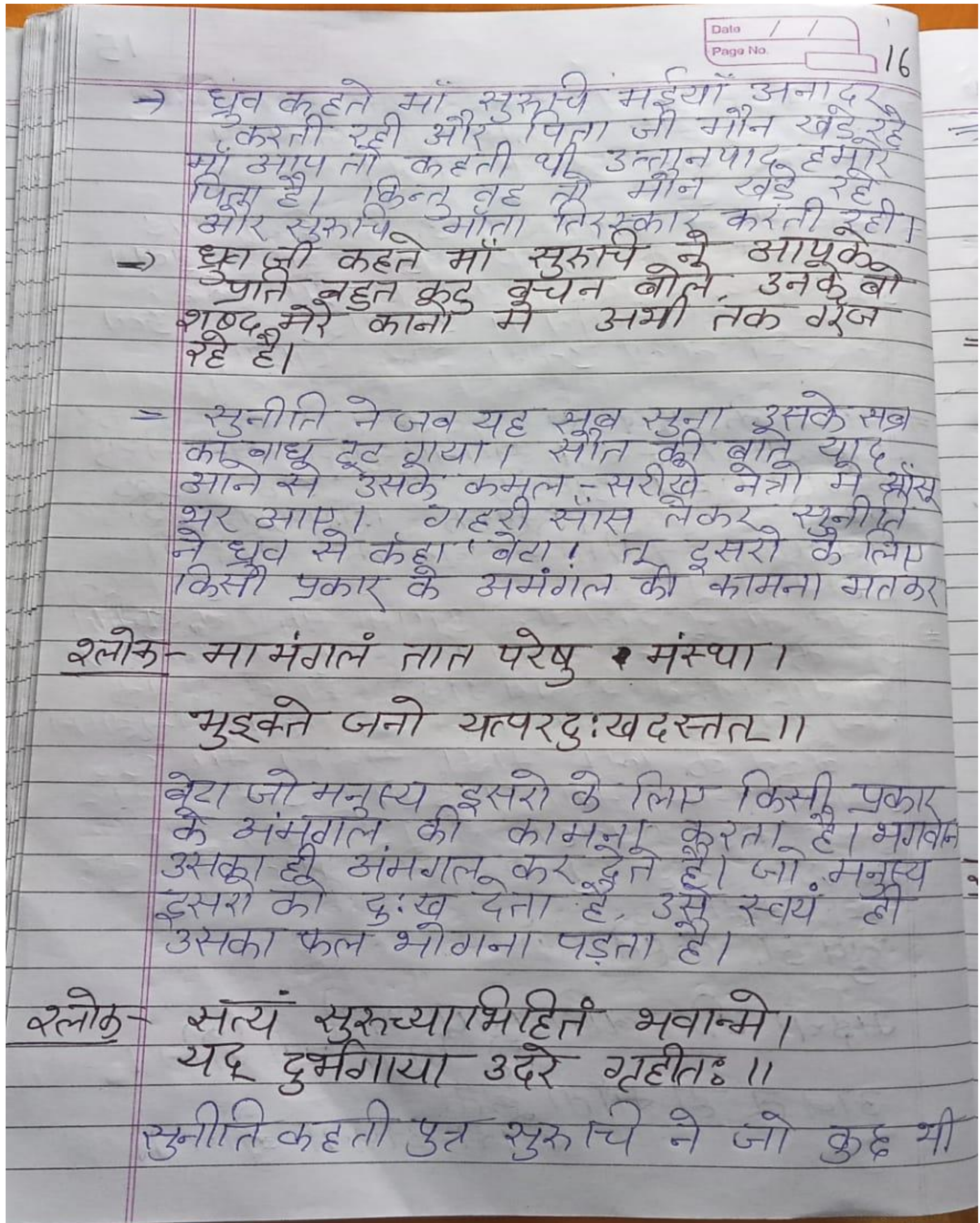
⇒ ध्रुवजी ने देखा कि उनका छोटा भाई उत्तम एक किनारे खड़ा हुआ है। उत्तम उत्तम कहकर ध्रुव जी उसकी और बढ़े, किन्तु सुरुचि बीच मे आ गई और उच्च स्वर मे बोली उत्तम अन्दर जाओ।

⇒ मॉता के मुख से कटु बचनो को सुनकर ध्रुव जी रोते-रोते अपनी मॉता सुनीति के पास पहुंचे, ध्रुव के दोनो होठ फड़क रहे थे, और वह सिसक-सिसककर रो रहा था। सुनीति ने ध्रुव को गोद मे उठा लिया।

⇒ ध्रुवजी ने रोते रोते अपनी मॉता सुनीति से कहा मैं तो अपने पिता से मिलने गया था मॉ, किन्तु सुरुचि मईया ने कहा कि पिता की गोद मे बैठने के लिए सिंहासन पर बैठने के लिए मुझे सुरुचि मॉ के गर्भ से जन्म लेना पड़ेगा। उन्होने मेरे साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। सुनीति ने कहा, यह सुनकर तेरे पिता ने कुछ नहीं कहा?

ध्रुव जी कहते मॉ —

मईयॉ की बाते विष भरी
रहे पिता भी मौन।
अब तू ही मॉता बता
मेरा अपना कौन ॥



16

→ ध्रुव कहते माँ सुरुचि मईया अनादर करती रही और पिता जी मौन खड़े रहे माँ आप तो कहती थी उत्तानपाद हमारे पिता है। किन्तु वह तो मौन खड़े रहे और सुरुचि माता तिरस्कार करती रही।

→ ध्रुव जी कहते माँ सुरुचि ने आपके प्रति बहुत कटु वचन बोले, उनके वो शब्द मेरे कानों में अभी तक गूंज रहे है।

= सुनीति ने जब यह सब सुना उसके सब्र का बांध टूट गया। सौत की बात याद आने से उसके कमल-सरीखे नेत्रों में आँसू भर आए। गहरी साँस लेकर सुनीति ने ध्रुव से कहा 'बेटा! तू दूसरो के लिए किसी प्रकार के अमंगल की कामना मत कर

श्लोक- मा मंगलं तात परेषु मंस्पा।
भुङ्क्ते जनो यत्परदुःखदस्तत॥

बेटा जो मनुष्य दूसरो के लिए किसी प्रकार के अमंगल की कामना करता है। भगवान उसका ही अमंगल कर देते है। जो मनुष्य दूसरो को दुःख देता है, उसे स्वयं ही उसका फल भोगना पड़ता है।

श्लोक- सत्यं सुरुच्याभिहितं भवान्मे।
यद् दुर्भगाया उदरे गृहीतः॥

सुनीति कहती पुत्र सुरुचि ने जो कुछ भी

17

=> कहा ठीक ही है। क्यो कि महाराज को मुझे 'पत्नी' तो क्या, 'दासी' स्वीकार करने मे भी लज्जा आती है। सुनीति कहती, बेटा तू बार-बार पूछता था, मेरे पिता कौन है कौन है? आज तुझे तेरी असली पिता के बारे मे बताऊगी।

=> ध्रुवजी कहते माँ तो क्या उत्तानपाद हमारे पिता नही है। सुनीति कहती, बेटा यह तो तुम्हारे शरीर के पिता है। किन्तु हे पुत्र हम शरीर नही, हम आत्मा है। बेटा आत्मा का पिता तो परमात्मा होता है। जिसने सम्पूर्ण जगत को बनाया। जो स्वयं ही जगत बनकर आया। जिसकी कृपा से सृष्टि की रचना, पालन और संघार होता है। वही जगत के पालनहार हम सबके पिता है।

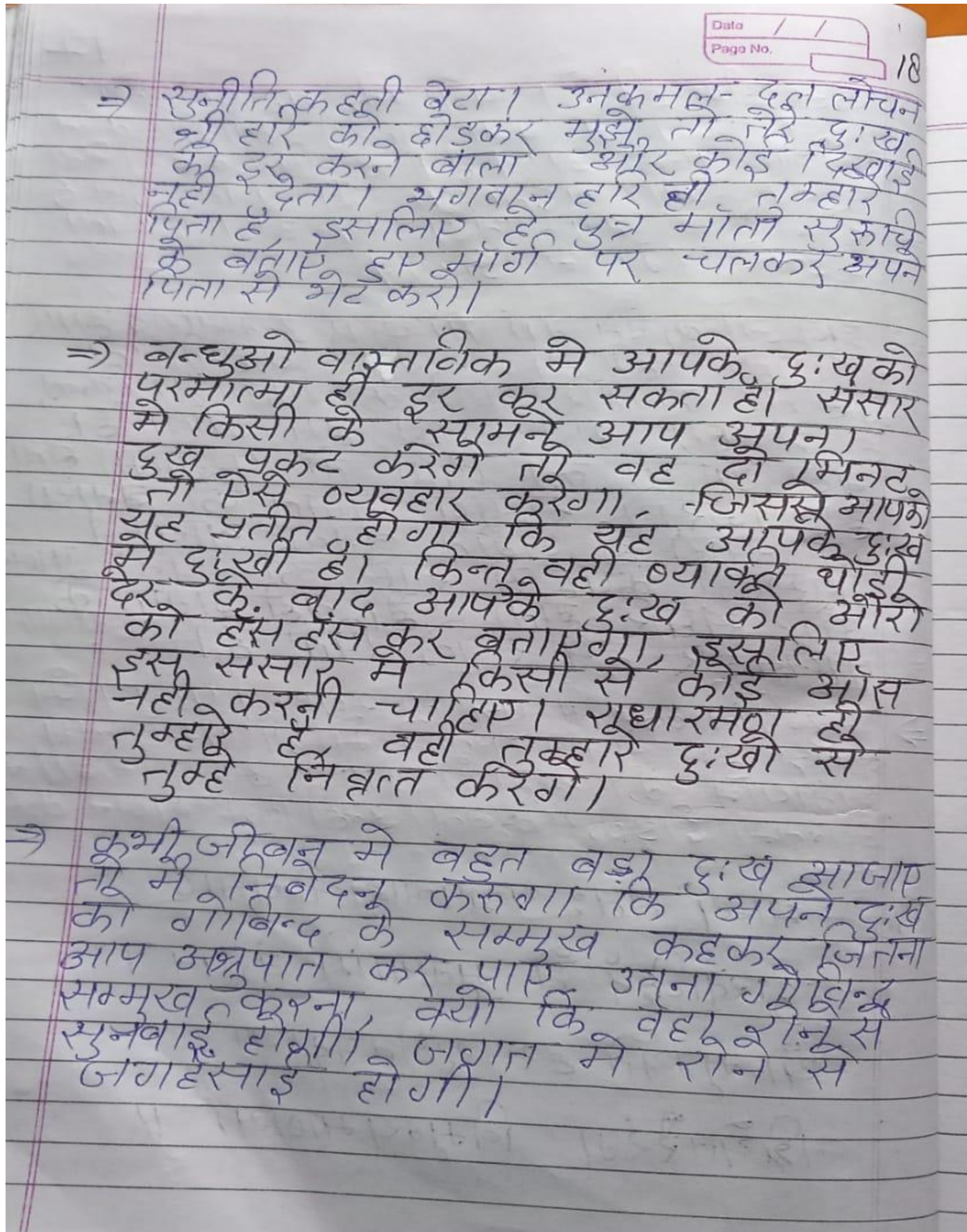
=> सुनीति कहती पुत्र तू स्वधर्म पालन से पवित्र हुए अपने चित्त मे श्री पुरुषोत्तम भगवान को बैठा ले तथा अन्य सभी का चिन्तन छोड़कर केवल उन्ही का भजन कर।

श्लोक – नान्यं ततः पद्मपलाशलोचनाद्

दुःखाच्छिदं ते मृगयामि कंचन।

यो मृग्यते हस्तगृहीतपद्मया

श्रियेतरैरंग विमृग्यमाणया ॥



Date / /
Page No. 18

=> सुनीति कहती बेटा। उन कमल-दल लोचन श्री हरि को छोड़कर मुझे तो तेरे दुःख को दूर करने वाला और कोई दिखाई नही देता। भगवान हरि ही तुम्हारे पिता है इसलिए हे पुत्र माता सुरुचि के बताए हुए मार्ग पर चलकर अपने पिता से भेंट करो।

=> बन्धुओ वास्तविक मे आपके दुःख को परमात्मा ही दूर कर सकता है। संसार मे किसी के सामने आप अपना दुख प्रकट करेगे तो वह दो मिनट तो ऐसे व्यवहार करेगा जिससे आपको यह प्रतीत होगा कि यह आपके दुःख मे दुःखी है। किन्तु वही व्यक्ति थोड़ी देर के बाद आपके दुःख को औरो को हँस हँस कर बताएगा, इसलिए इस संसार मे किसी से कोई आस नही करनी चाहिए। सुधारमण ही तुम्हारे है वही तुम्हारे दुःखो से तुम्हे निवृत्त करेगे।

=> कभी जीवन मे बहुत बड़ा दुःख आ जाए तो मै निवेदन करूंगा कि अपने दुःख को गोविन्द के सम्मुख कहकर जितना आप अश्रुपात कर पाए उतना गोविन्द सम्मुख करना, क्योकि वहां रोने से सुनवाई होगी। जगत मे रोने से जगहँसाई होगी।

19

:: भजन ::

दुःखो से जो ठोकर खाई न होती -2
तुम्हारी, प्रभु याद आई न होती -2
दुःखो से जो ठोकर — — — — — —

(1) कभी जिन्दगी मे -2
ये आंखे न खुलती -2
अगर, रोशनी, तुमसे, आई न होती -2
दुःखो से जो ठोकर — — — — —

(2) जगाते न यदि तुम -2
निज ज्ञान द्वारा -2
कभी हमसे कोई भलाई न होती -2
दुःखो से जो — — — — — —

(3) कभी भी हमे चैन -2
मिलती न जग मे -2
तुम्ही ने जो चिन्ता मिटाई न होती -2
दुःखो से जो ठोकर — — — —

(4) बनी तुमसे लाखो की -2
ये हम मानते क्यो -2
हमारी जो बिगड़ी बनाई न होती -2
दुःखो से जो ठोकर — —

(5) पावन से पतित की भला कौन सुनता -2
तुम्हारे यहा जो सुनाई न होती -2
दुःखो से जो — — — — — —

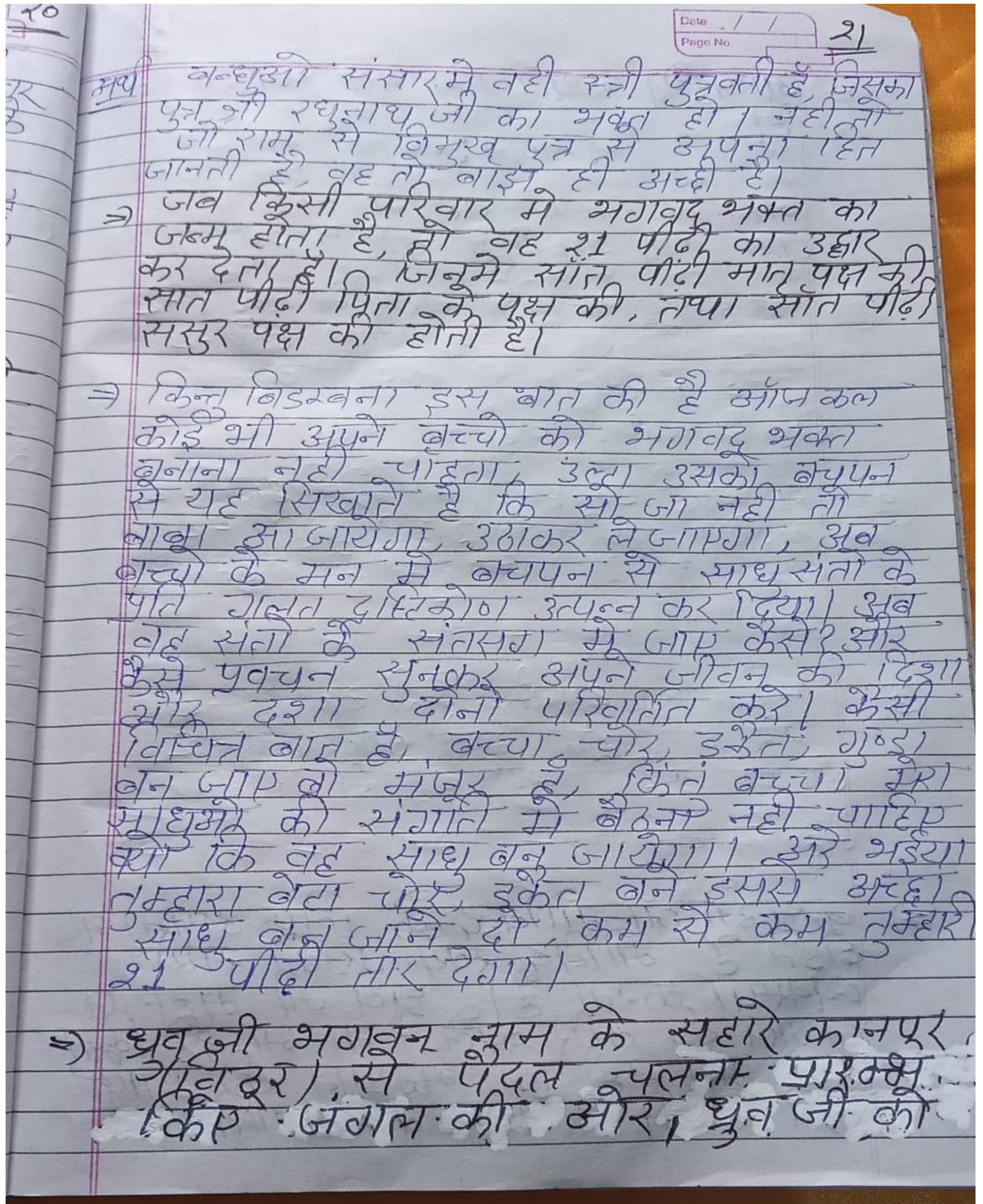
२०

⇒ बन्धुओ जब जीवन मे किसी के द्वारा हमे दुख प्राप्त होता है, तो हमे ईश्वर की ही याद आती है। आज सुरुचि के कटु बचनो से ध्रुव जी भी बहुत दुःखी है। ध्रुव की माँ सुनीति कहती पुत्र संसार से जब हमे दुःख मिलता है तो उस दुख को नारायण के अलावा और कोई दूर नही कर सकता।

⇒ आज से नारायण ही तेरे पिता है, उन्ही का स्मरण कर जा बेटा वन मे जाकर तपस्याकर और अपने पिता नारायण का स्मरण कर वे तुमसे मिलने अवश्य आयेगे। श्री ध्रुव जी माता के कहे बचनो को धारण कर अपने पिता के नगर कानपुर (बिठूर) से अपनी माता को प्रणाम करके चल दिए।

⇒ बन्धुओ जब ध्रुव जी ने अपनी माता सुनीति को प्रणाम किया तो उनके नेत्रो से अश्रु झलक आए, वह अपने आप को बड़ा ही सौभाग्यशाली समझती है कि उन्होने ध्रुव जैसे भगवद भक्त को जन्म दिया।

चौ० पुत्रवती जुबती जग सोई।
रघुपति भगतु जासु सुतु होई॥

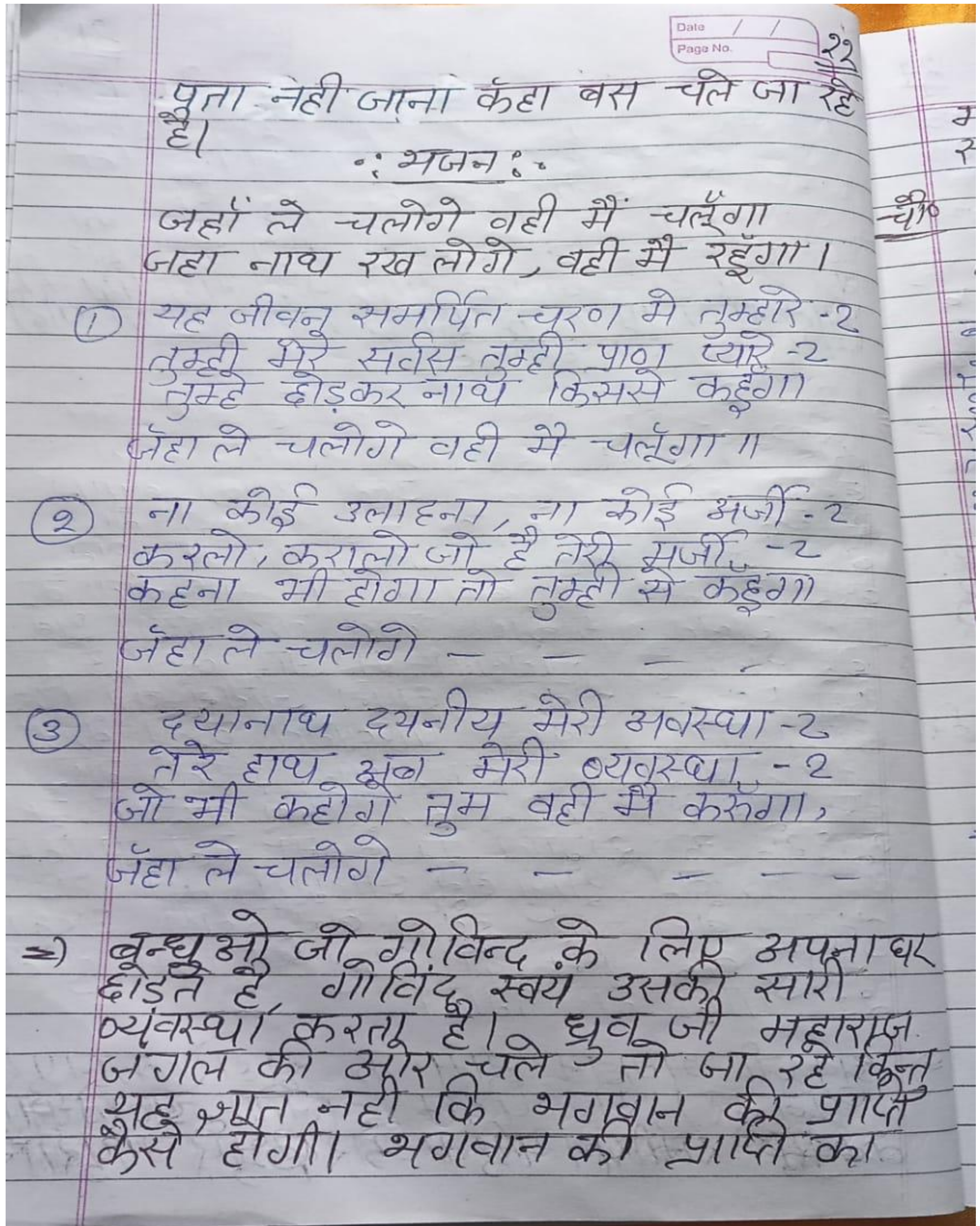

Date / /
Page No. 21

अर्थ बन्धुओ संसार मे वही स्त्री पुत्रवती है, जिसका पुत्र श्री रघुनाथ जी का भक्त हो। नहीं तो जो राम से विमुख पुत्र से अपना हित जानती है वह तो बांझ ही अच्छी है।

⇒ जब किसी परिवार मे भगवद् भक्त का जन्म होता है, तो वह 21 पीढ़ी का उद्धार कर देता है। जिनमे सात पीढ़ी मातृ पक्ष की सात पीढ़ी पिता के पक्ष की, तथा सात पीढ़ी ससुर पक्ष की होती है।

⇒ किन्तु विडम्बना इस बात की है आज कल कोई भी अपने बच्चो को भगवद् भक्त बनाना नही चाहता, उल्टा उसको बचपन से यह सिखाते है कि सो जा नही तो बाबा आ जायेगा, उठाकर ले जाएगा, अब बच्चो के मन मे बचपन से साधु संतो के प्रति गलत दृष्टिकोण उत्पन्न कर दिया। अब वह संतो के सतसंग मे जाए कैसे? और कैसे प्रवचन सुनकर अपने जीवन की दिशा और दशा दोनो परिवर्तित करे। कैसी विचित्र बात है, बच्चा चोर, डकैत, गुण्डा बन जाए वो मंजूर है, किंतु बच्चा मेरा साधुओ की संगति मे बैठना नही चाहिए क्यो कि वह साधु बन जायेगा। अरे भईया तुम्हारा बेटा चोर, डकैत बने इससे अच्छा साधु बन जाने दो, कम से कम तुम्हारी 21 पीढ़ी तार देगा।

⇒ ध्रुव जी भगवन्नाम के सहारे कानपुर (विठूर) से पैदल चलना प्रारम्भ किए जंगल की ओर, ध्रुव जी को


22
पता नही जाना कहा बस चले जा रहे है।
: भजन :
जहां ले चलोगे वही मैं चलूँगा
जहा नाथ रख लोगे, वही मैं रहूँगा।
(1) यह जीवन समर्पित चरण मे तुम्हारे -2
तुम्ही मेरे सर्वस तुम्ही प्राण प्यारे -2
तुम्हे छोड़कर नाथ किससे कहूँगा
जहा ले चलोगे वही मै चलूँगा ॥
(2) ना कोई उलाहना, ना कोई अर्जी -2
करलो, करालो जो है तेरी मर्जी -2
कहना भी होगा तो तुम्ही से कहूँगा
जहा ले चलोगे — — —
(3) दयानाथ दयनीय मेरी अवस्था -2
तेरे हाथ अब मेरी व्यवस्था -2
जो भी कहोगे तुम वही मै करूँगा,
जहा ले चलोगे — — — —
=) बन्धुओ जो गोविन्द के लिए अपना घर छोड़ते है, गोविंद स्वयं उसकी सारी व्यवस्थाएं करता है। ध्रुव जी महाराज जंगल की ओर चले तो जा रहे किन्तु यह ज्ञात नही कि भगवान की प्राप्ति कैसे होगी। भगवान की प्राप्ति का

Date / /
Page No 23

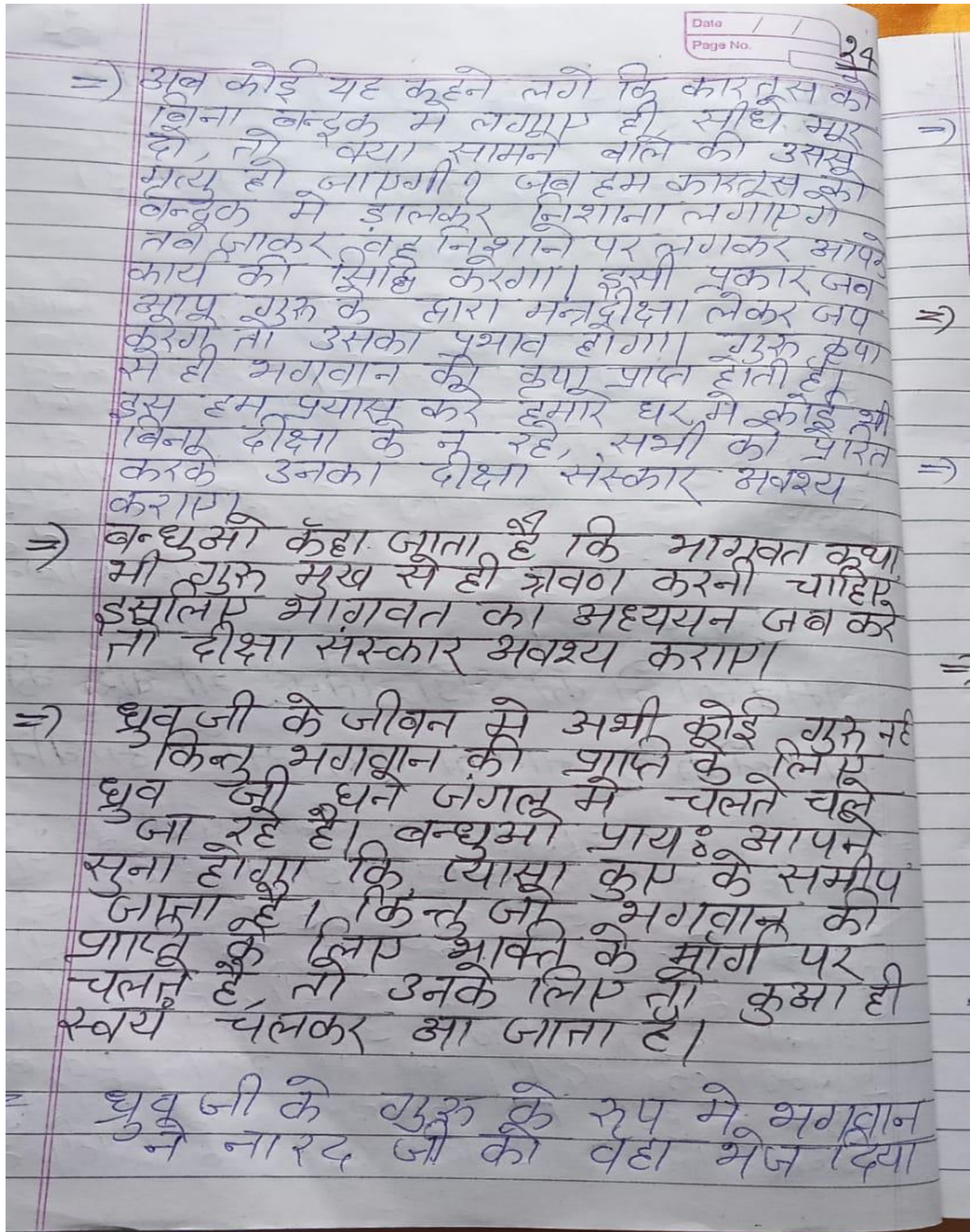
माँगें तो कोई द्रष्टा गुरु ही प्रशस्त कर सकता है।

चौ० गुरु बिन भव निधि तरई न कोई।
जो बिरंच शंकर सम होई ।।

बन्धुओ बिना गुरु के गोविन्द नही मिलते इसलिए परमात्मा की प्राप्ति के लिए गुरु बनाना परम आवश्यक है बन्धुओ बहुत से लोग कहते है गुरु क्यो बनाए? हमने तो हनुमान जी को गुरु मान लिया, हमने कृष्ण भगवान को अपना गुरु मान लिया। यह सब व्यर्थ की बाते है, जिन भगवान को आप अपना गुरु मानते है उन राम और कृष्ण ने भी अपने जीवन मे गुरु बनाए।

रामकृष्ण ते को बड़ो, तिनहूँ भी गुरु कीन।
तीन लोक के नायका गुरु आगे आधीन॥

⇒ बन्धुओ जब भगवान को इस पृथ्वी पर मनुष्य रूप धारण करके आना पड़ा तो उन्होने भी गुरु बनाए। अब कोई यह कहे कि जो मन्त्र किताब मे लिखा है, वही गुरु जी देते है, तो हमने तो हनुमान जी, कृष्ण जी को अपना गुरु मानकर उसी मन्त्र को जपना प्रारम्भ कर दिया। तो मै आपसे एक बात पूछना चाहूँगा कि कारतूस किसी को यदि लग जाए तो उसकी मृत्यु हो जाती है



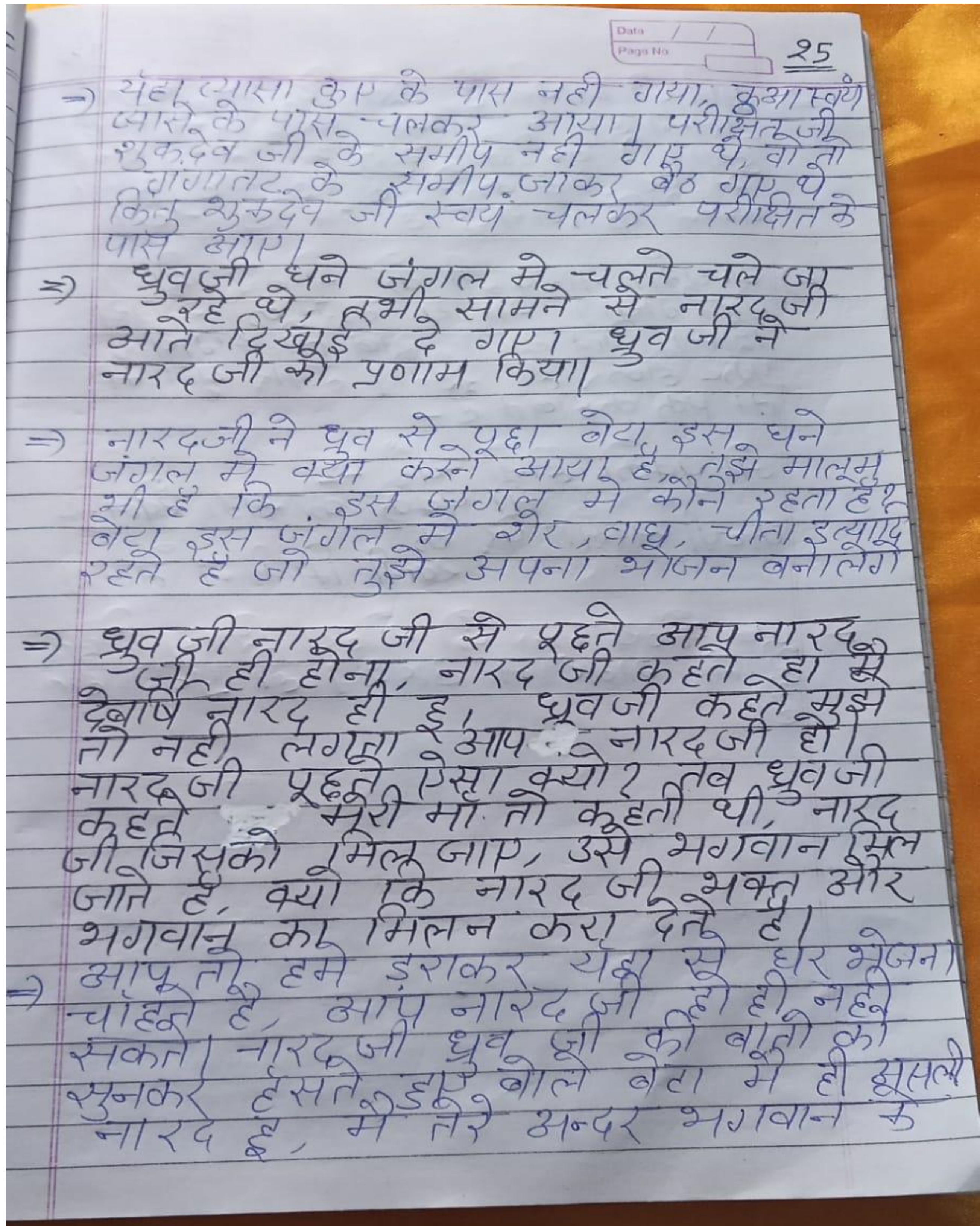
24

=> अब कोई यह कहने लगे कि कारतूस को बिना बन्दूक मे लगाए ही सीधे मार दो, तो क्या सामने वाले की उससे मृत्यु हो जाएगी? जब हम कारतूस को बन्दूक मे डालकर निशाना लगाएगे तब जाकर वह निशाने पर लगकर आपके कार्य की सिद्धि करेगा। इसी प्रकार जब आप गुरु के द्वारा मन्त्रदीक्षा लेकर जप करेगे तो उसका प्रभाव होगा। गुरु कृपा से ही भगवान की कृपा प्राप्त होती है। इस हम प्रयास करे हमारे घर मे कोई भी बिना दीक्षा के न रहे, सभी को प्रेरित करके उनका दीक्षा संस्कार अवश्य कराए।

=> बन्धुओ कहा जाता है कि भागवत कथा भी गुरु मुख से ही श्रवण करनी चाहिए इसलिए भागवत का अध्ययन जब करे तो दीक्षा संस्कार अवश्य कराए।

=> ध्रुव जी के जीवन मे अभी कोई गुरु नहीं किन्तु भगवान की प्राप्ति के लिए ध्रुव जी घने जंगल मे चलते चले जा रहे है। बन्धुओ प्रायः आपने सुना होगा कि प्यासा कुए के समीप जाता है। किन्तु जो भगवान की प्राप्ति के लिए भक्ति के मार्ग पर चलते है तो उनके लिए तो कुआ ही स्वयं चलकर आ जाता है।

= ध्रुव जी के गुरु के रूप मे भगवान ने नारद जी को वहा भेज दिया



25

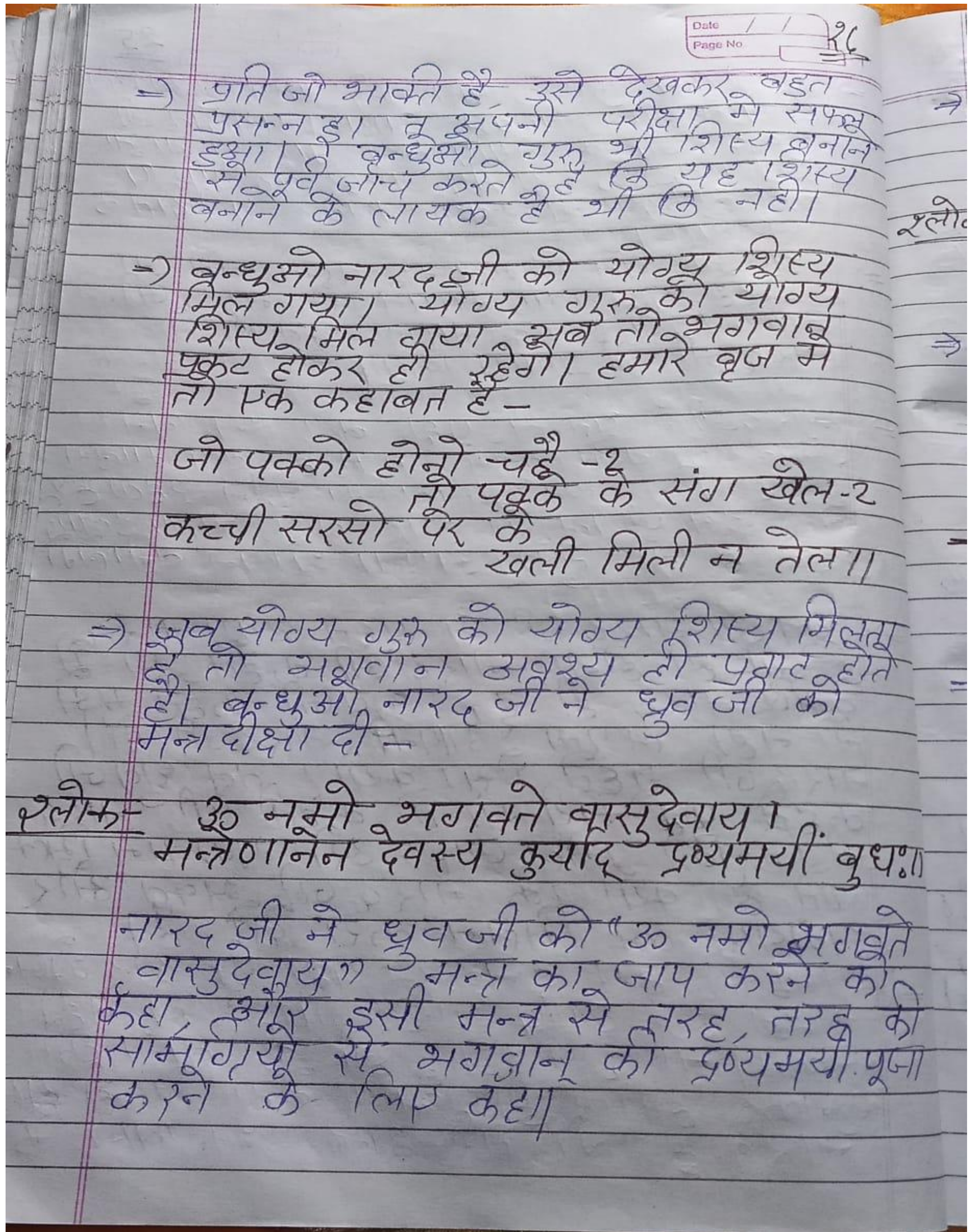
=) यहा प्यासा कुए के पास नही गया, कुआ स्वयं
प्यासे के पास चलकर आया। परीक्षित जी
शुकदेव जी के समीप नही गए थे, वो तो
गंगातट के समीप जाकर बैठ गए थे
किन्तु शुकदेव जी स्वयं चलकर परीक्षित के
पास आए।

=) ध्रुवजी घने जंगल मे चलते चले जा
रहे थे, तभी सामने से नारद जी
आते दिखाई दे गए। ध्रुव जी ने
नारद जी को प्रणाम किया।

=) नारदजी ने ध्रुव से पूछा बेटा, इस घने
जंगल मे क्या करने आया है, तुझे मालूम
भी है कि इस जंगल मे कौन रहता है?
बेटा इस जंगल मे शेर, बाघ, चीता इत्यादि
रहते है जो तुझे अपना भोजन बनालेगे

=) ध्रुव जी नारद जी से पूछते आप नारद
जी ही होना, नारद जी कहते हा मै
देवर्षि नारद ही हूं, ध्रुवजी कहते मुझे
तो नही लगता है आप नारदजी हो।
नारद जी पूछते ऐसा क्यो? तब ध्रुवजी
कहते मेरी माँ तो कहती थी, नारद
जी जिसको मिल जाए, उसे भगवान मिल
जाते है, क्यो कि नारद जी भक्त और
भगवान का मिलन करा देते है।

=) आप तो हमे डराकर यहा से घर भेजना
चाहते है, आप नारद जी हो ही नही
सकते। नारद जी ध्रुव जी की बातो को
सुनकर हँसते हुए बोले बेटा मै ही असली
नारद हूं, मै तेरे अन्दर भगवान के



Page No. 26

=> प्रति जो भक्ति है उसे देखकर बहुत प्रसन्न हुआ तू अपनी परीक्षा मे सफल हुआ। हे बन्धुओ गुरु भी शिष्य बनाने से पूर्व जाँच करते है कि यह शिष्य बनाने के लायक है भी कि नही।

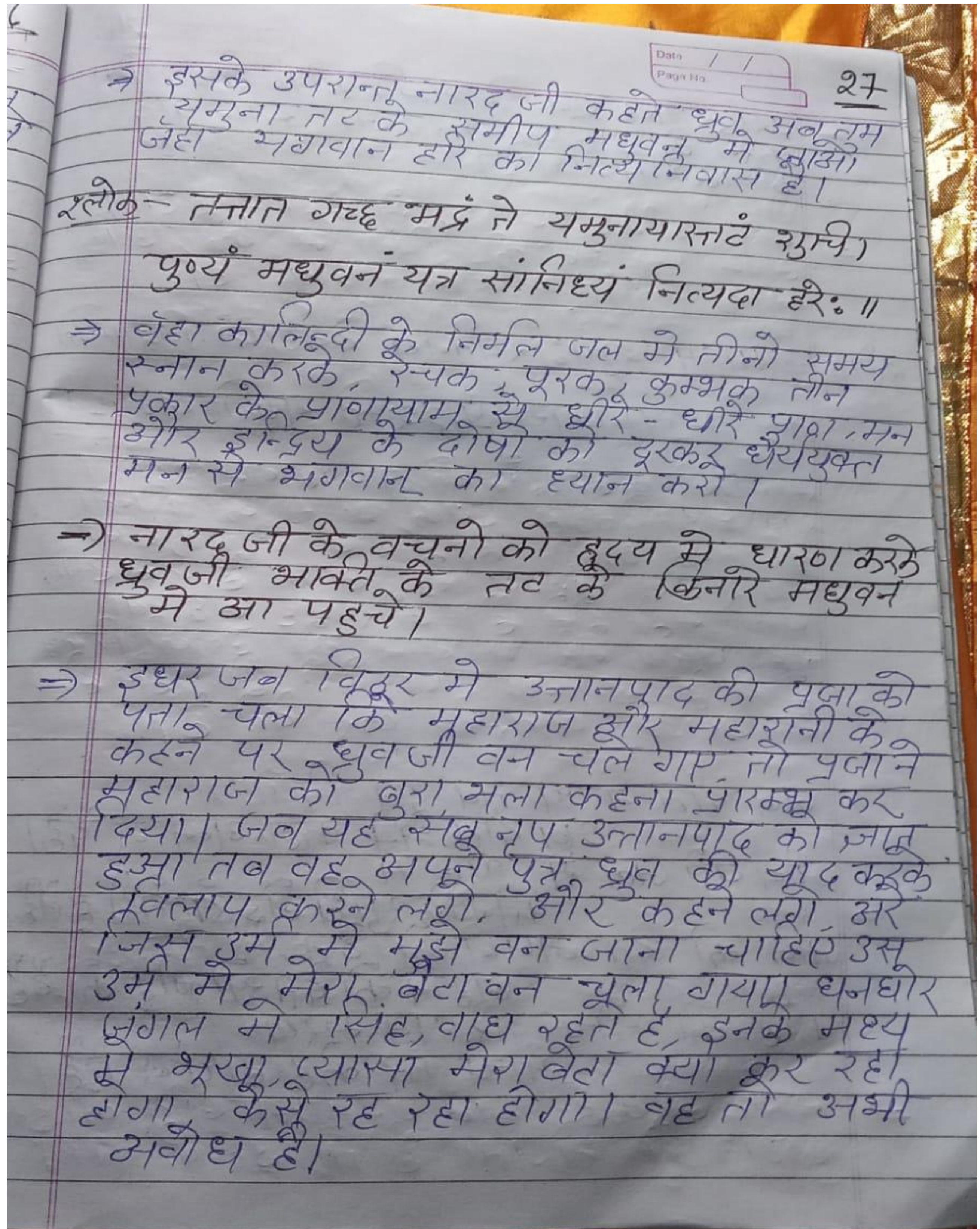
=> बन्धुओ नारद जी को योग्य शिष्य मिल गया। योग्य गुरु को योग्य शिष्य मिल गया अब तो भगवान् प्रकट होकर ही रहेगे। हमारे बृज मे तो एक कहावत है –

जो पक्को होनो चहै -2
तो पक्के के संग खेल -2
कच्ची सरसो पेर के
खली मिली न तेल।।

=> जब योग्य गुरु को योग्य शिष्य मिलता है तो भगवान अवश्य ही प्रकट होते है। बन्धुओ, नारद जी ने ध्रुव जी को मन्त्र दीक्षा दी –

श्लोक– ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।
मन्त्रेणानेन देवस्य कुर्याद् द्रव्यमयीं बुधः।।

नारद जी ने ध्रुव जी को "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय" मन्त्र का जाप करने को कहा, और इसी मन्त्र से तरह तरह की सामग्रियो से भगवान् की द्रव्यमयी पूजा करने के लिए कहा।



27

⇒ इसके उपरान्त नारद जी कहते ध्रुव अब तुम यमुना तट के समीप मधुवन मे जाओ जहा भगवान हरि का नित्य निवास है।

श्लोक- तत्तात गच्छ भद्रं ते यमुनायास्तटं शुची।
पुण्यं मधुवनं यत्र सांनिध्यं नित्यदा हरेः॥

⇒ वहा कालिन्दी के निर्मल जल मे तीनो समय स्नान करके, रेचक, पूरक, कुम्भक तीन प्रकार के प्राणायाम से धीरे-धीरे प्राण, मन और इन्द्रिय के दोषो को दूरकर धैर्ययुक्त मन से भगवान का ध्यान करो।

⇒ नारद जी के वचनो को हृदय मे धारण करके ध्रुव जी भाक्ति के तट के किनारे मधुवन मे आ पहुचे।

⇒ इधर जब विठूर मे उत्तानपाद की प्रजा को पता चला कि महाराज और महारानी के कहने पर ध्रुव जी वन चले गए तो प्रजा ने महाराज को बुरा भला कहना प्रारम्भ कर दिया। जब यह सब नृप उत्तानपाद को ज्ञात हुआ तब वह अपने पुत्र ध्रुव की याद करके विलाप करने लगे, और कहने लगे, अरे जिस उम्र मे मुझे वन जाना चाहिए उस उम्र मे मेरा बेटा वन चला गया। घनघोर जंगल मे सिंह, बाघ रहते है, इनके मध्य मे भूखा, प्यासा मेरा बेटा क्या कर रहा होगा, कैसे रह रहा होगा। वह तो अभी अबोध है।

Date / / Page No. 28

- उसी समय ध्रुव को भक्ति मार्ग का उपदेश करने के उपरान्त नारद जी उत्तानपाद के महल मे पधारे।

=> नारद जी ने उत्तानपाद से कहा नृप आप अपने पुत्र ध्रुव की चिंता न करो, उसके रक्षक स्वयं भगवान नारायण है।

श्लोक - मा मा शुचः स्वतनयं देवगुप्तं विशाम्पते
तत्प्रभावमविज्ञाय प्रावृङ्क्ते यद्यशो जगत्॥

नारद जी कहते जो लोग भगवान भरोसे सब छोड़ देते है, उनकी पल-2 की चिन्ता गोविन्द करते है। जब बालक जन्म लेकर इस संसार मे आता है, तब उसके दांत नही होते है। और वह कुछ खा नही पाता, मेरे भगवान को उसकी चिन्ता होती है, इसलिए जन्म लेने से पहले ही वे उसकी व्यवस्था कर देते है।

जब दाँत न थे तब दूध दियो,
अब दाँत भये कहा अन्न न दैहै।
जीव बसे जल मे, थल मे
तिनकी सुधि लेइ सो तेरी हू लैहै।
जान को देत अजान को देत,
जहान को देत सो तोहूँ को दैहै
काहे को सोच करे मन मूरख
सोच करे कछु हाथ न ऐहै।

=> नारद जी कहते जब परमात्मा जीव को इस जगत मे भेजता है तो उसकी सारी

29

=) व्यवस्था भी वही करता है, इसलिए राजन तुम चिन्ता मत करो, तुम्हे अपने पुत्र का प्रभाव नही पता है, उसका यश सारे जगत मे फैल रहा है। शीघ्र ही तुम्हारा पुत्र अपने कार्य को पूर्ण करके लौट आएगा।

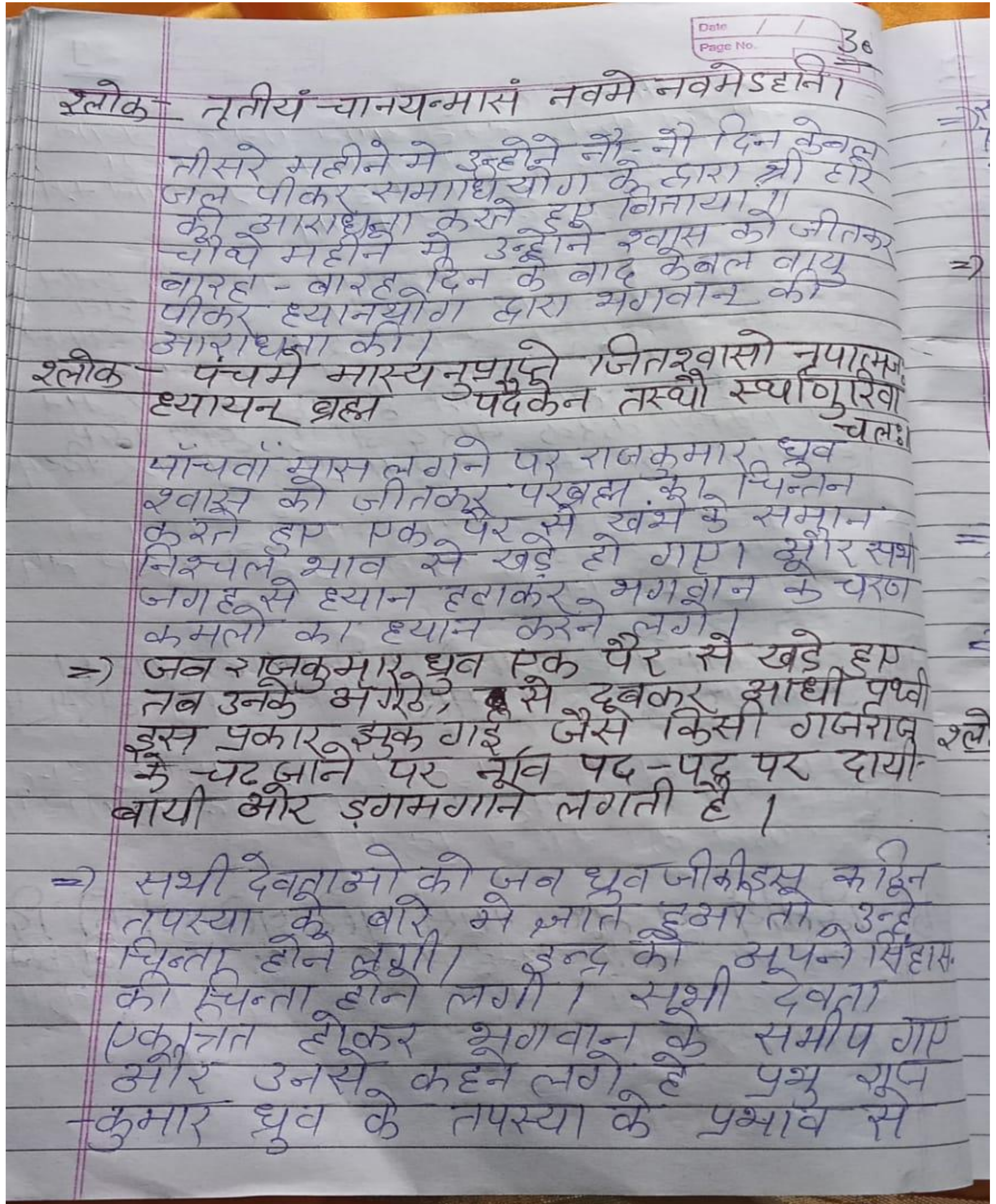
=) शुकदेव जी कहते है परीक्षित! नारद जी उत्तानपाद को समझाकर चले गए, इधर ध्रुव जी ने यमुना मे स्नान किया, इसके उपरान्त यमुना के समीप मधुवन मे एक स्थान है जिसे ध्रुव टीला बोलते है, वहा बैठकर मन को एकाग्र करके नारद जी के द्वारा दिए हुए मन्त्र का जप करना प्रारम्भ कर दिया।

=) ध्रुव जी महाराज उपासना के समय मे अन्न ग्रहण नही करते, उन्होने कठोर तप करना प्रारम्भ किया।

श्लोक- त्रिरात्रान्ते त्रिरात्रान्ते कपित्थबदराशनः।
आत्मवृत्त्यनुसारेण मासं निन्येऽर्चयन्हरिम्॥

उन्होने प्रथम माह मे तीन तीन रात्रि के अन्तर मे शरीर के निर्वाह के लिए केवल कैथा और बेर फल का सेवन किया।

श्लोक- द्वितीयं च तथा मासं षष्ठे षष्ठेऽर्भको दिने
दूसरे महीने मे उन्होने छः छः दिन तक सूखे घास और पत्ते खाकर भगवान का भजन किया।



30

श्लोक- तृतीयं चानयन्मासं नवमे नवमेऽहनि।

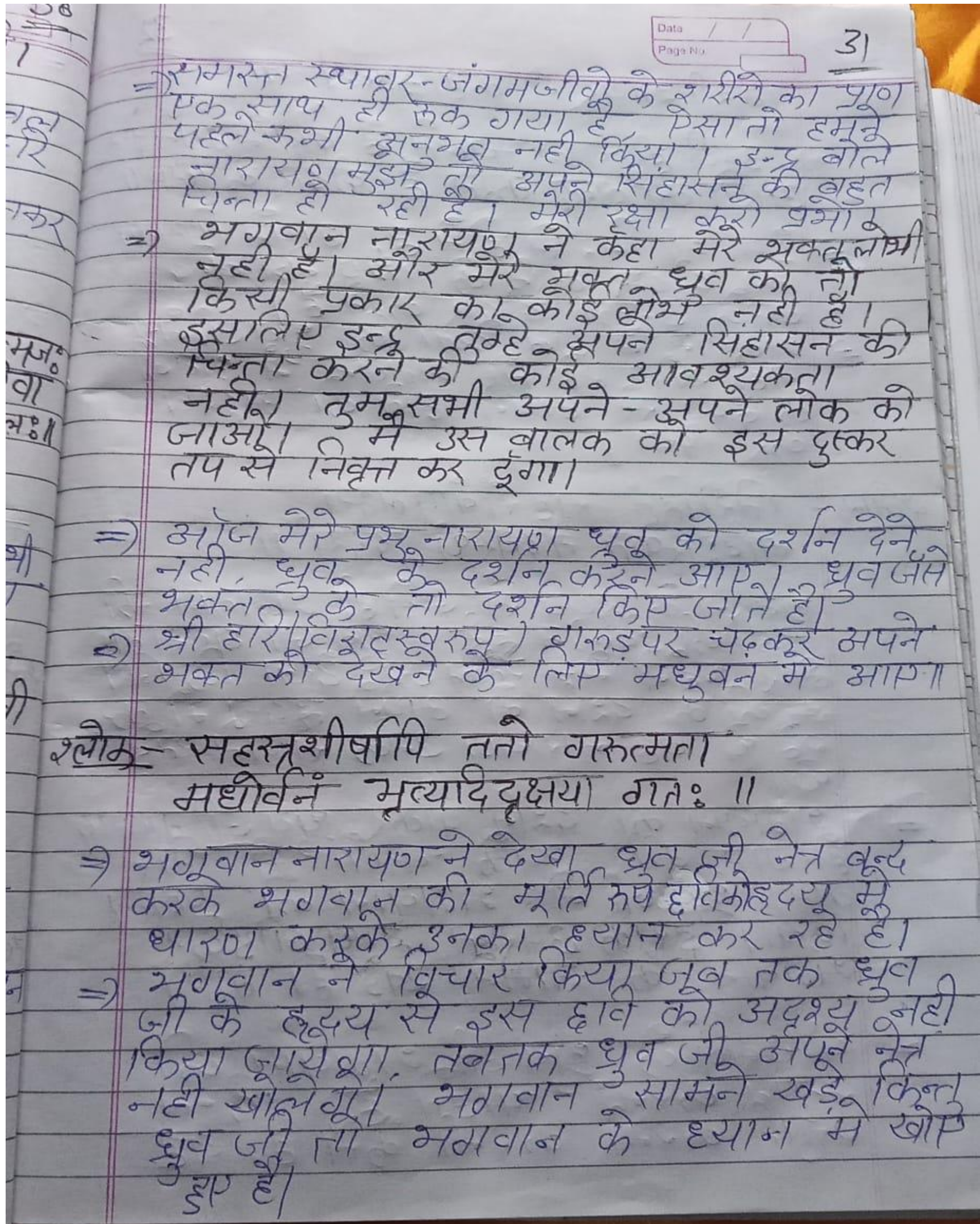
तीसरे महीने मे उन्होने नौ-नौ दिन केवल जल पीकर समाधियोग के द्वारा श्री हरि की आराधना करते हुए बिताया। चौथे महीने मे उन्होंने श्वास को जीतकर बारह-बारह दिन के बाद केवल वायु पीकर ध्यानयोग द्वारा भगवान की आराधना की।

श्लोक- पंचमे मास्यनुप्राप्ते जितश्वासो नृपात्मजः ध्यायन् ब्रह्म पदैकेन तस्थौ स्थाणुरिवाचलः।

पाँचवां मास लगने पर राजकुमार ध्रुव श्वास को जीतकर परब्रह्म का चिन्तन करते हुए एक पैर से खंभे के समान निश्चल भाव से खड़े हो गए। और सभी जगह से ध्यान हटाकर भगवान के चरण कमलो का ध्यान करने लगे।

=) जब राजकुमार ध्रुव एक पैर से खड़े हुए तब उनके अंगूठे से दबकर आधी पृथ्वी इस प्रकार झुक गई जैसे किसी गजराज के चढ़ जाने पर नाव पद-पद पर दायी बायी ओर डगमगाने लगती है।

=) सभी देवताओ को जब ध्रुव जी के इस कठिन तपस्या के बारे मे ज्ञात हुआ तो उन्हे चिन्ता होने लगी। इन्द्र को अपने सिंहास की चिन्ता होने लगी। सभी देवता एकत्रित होकर भगवान के समीप गए और उनसे कहने लगे हे प्रभु नृप-कुमार ध्रुव के तपस्या के प्रभाव से



31

=> समस्त स्थावर-जंगमजीवों के शरीरों का प्राण एक साथ ही रुक गया है ऐसा तो हमने पहले कभी अनुभव नहीं किया। इन्द्र बोले नारायण मुझे तो अपने सिंहासन की बहुत चिन्ता हो रही है। मेरी रक्षा करो प्रभु।

=> भगवान नारायण ने कहा मेरे भक्त लोभी नहीं है। और मेरे भक्त ध्रुव को तो किसी प्रकार का कोई लोभ नहीं है। इसलिए इन्द्र तुम्हे अपने सिंहासन की चिन्ता करने की कोई आवश्यकता नहीं। तुम सभी अपने-अपने लोक को जाओ। मैं उस बालक को इस दुष्कर तप से निवृत्त कर दूंगा।

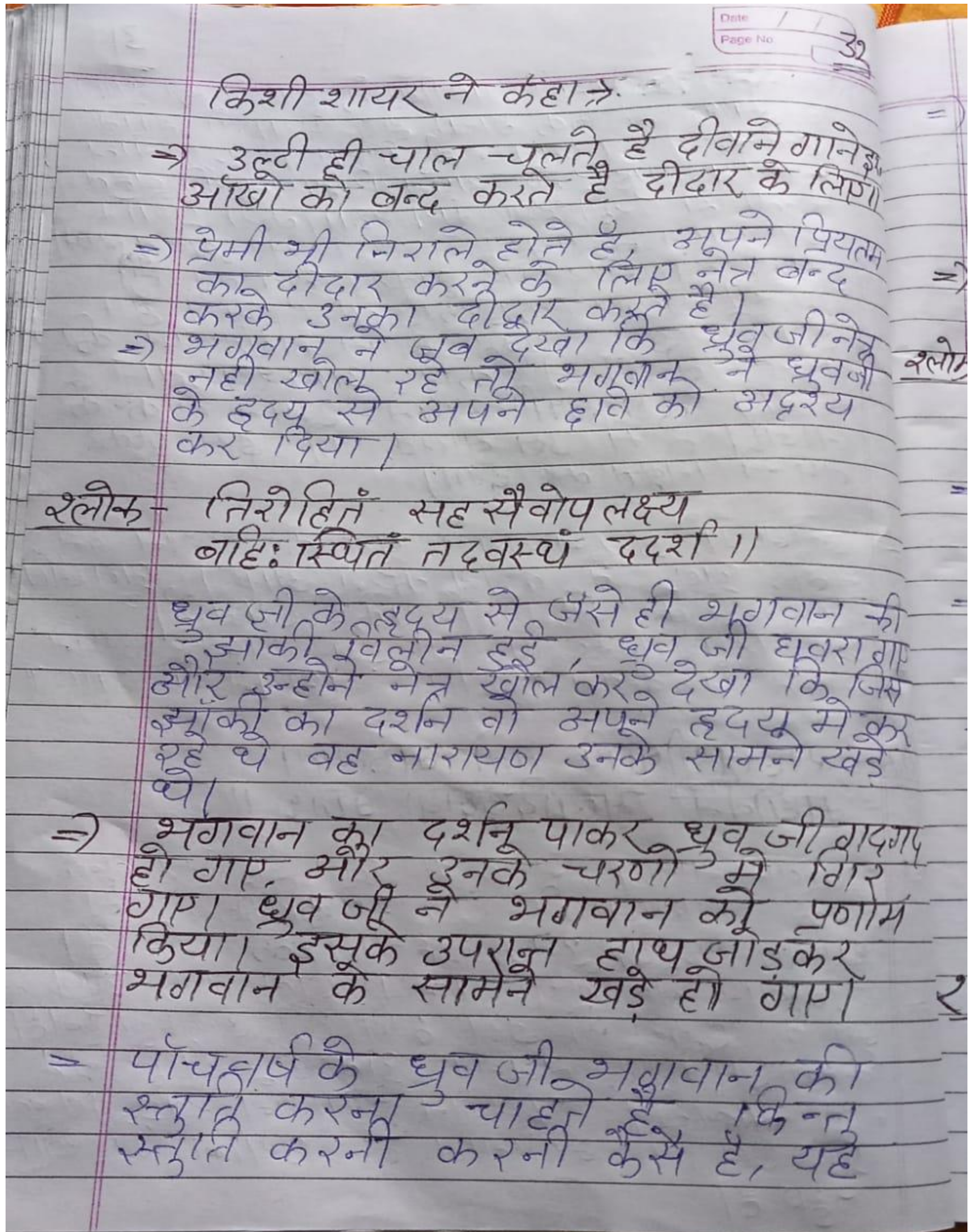
=> आज मेरे प्रभु नारायण ध्रुव को दर्शन देने नहीं, ध्रुव के दर्शन करने आए। ध्रुव जैसे भक्तों के तो दर्शन किए जाते हैं।

=> श्री हरि (विराटस्वरुप) गरुड़ पर चढ़कर अपने भक्त को देखने के लिए मधुवन में आए।

श्लोक- सहस्त्रशीर्षापि ततो गरुत्मता
मधोर्वनं भृत्यादिदृक्षया गतः ॥

=> भगवान नारायण ने देखा ध्रुव जी नेत्र बन्द करके भगवान की मूर्ति रूप छवि को हृदय में धारण करके उनका ध्यान कर रहे हैं।

=> भगवान ने विचार किया जब तक ध्रुव जी के हृदय से इस छवि को अदृश्य नहीं किया जायेगा, तब तक ध्रुव जी अपने नेत्र नहीं खोलेंगे। भगवान सामने खड़े किन्तु ध्रुव जी तो भगवान के ध्यान में खोए हुए हैं।


Page No. 32

किसी शायर ने कहा:-

=> उल्टी ही चाल चलते है दीवाने इश्क,
आँखो को बन्द करते है दीदार के लिए।

=> प्रेमी भी निराले होते हैं, अपने प्रियतम का दीदार करने के लिए नेत्र बन्द करके उनका दीदार करते है।

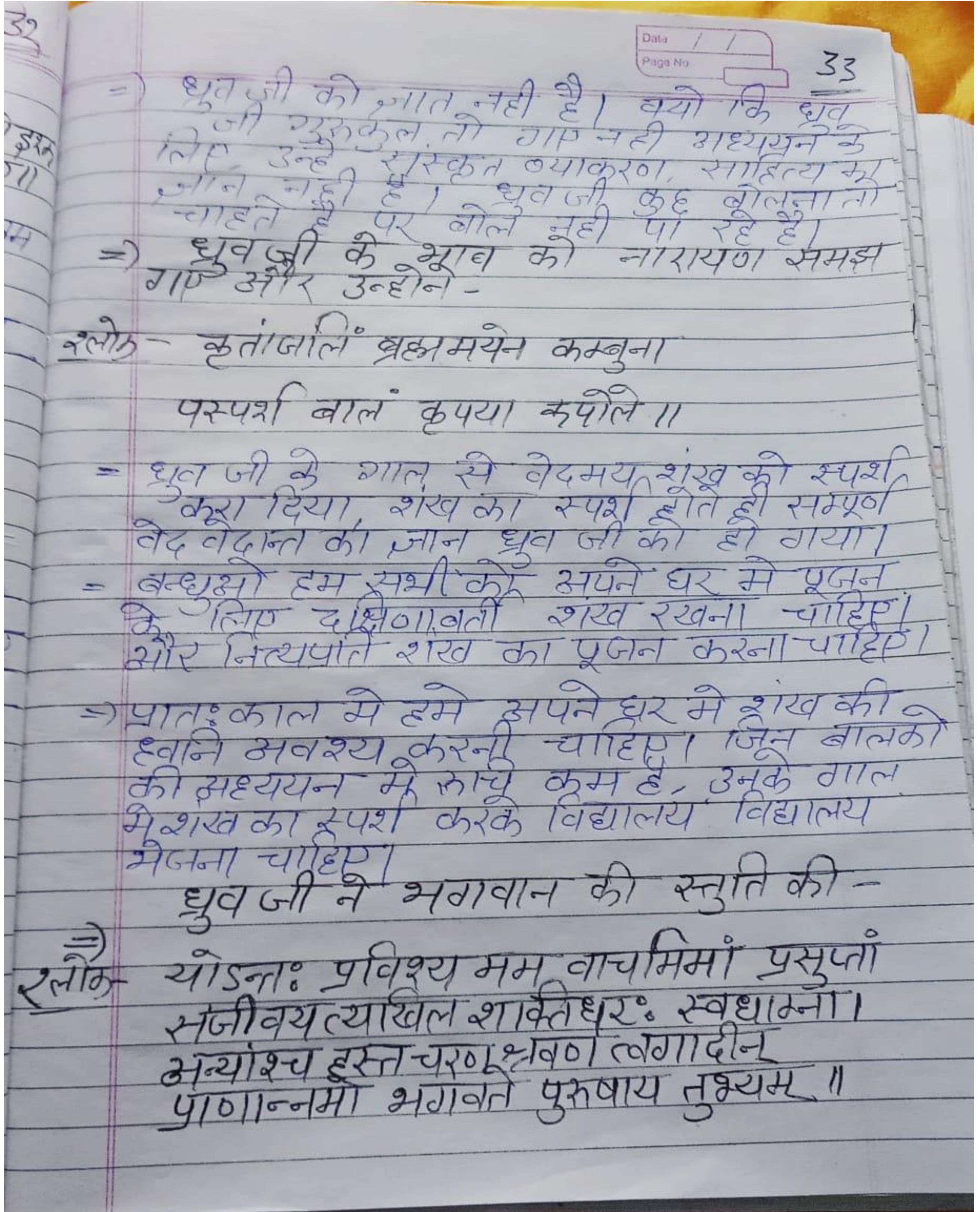
=> भगवान ने जब देखा कि ध्रुव जी नेत्र नही खोल रहे तो भगवान ने ध्रुवजी के हृदय से अपने छवि को अदृश्य कर दिया।

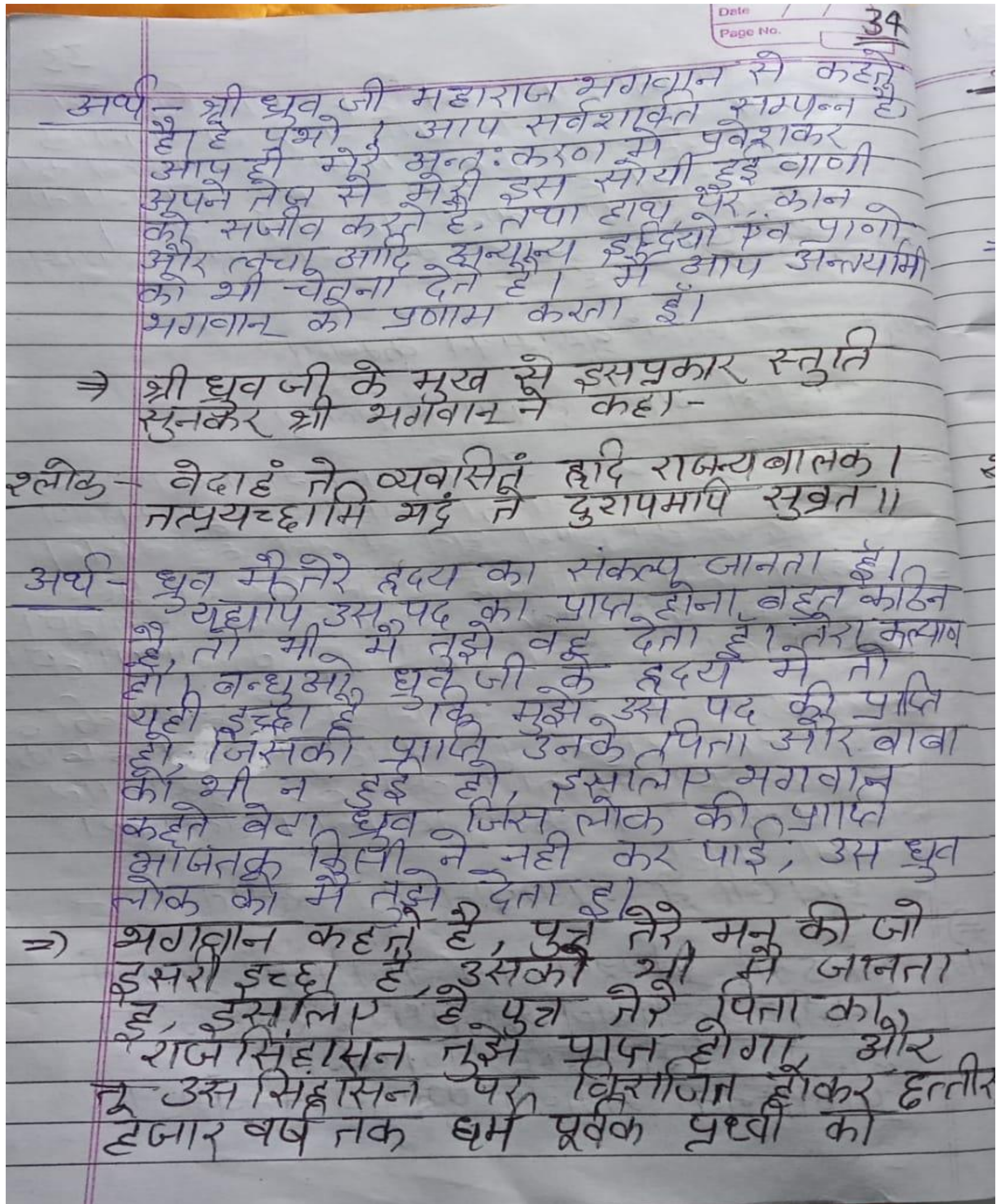
श्लोक- तिरोहितं सहसैवोपलक्ष्य
बहिः स्थितं तदवस्थं ददर्श।।

ध्रुव जी के हृदय से जैसे ही भगवान की झाँकी विलीन हुई, ध्रुव जी घबरा गए और उन्होंने नेत्र खोल कर देखा कि जिस झाँकी का दर्शन वो अपने हृदय में कर रहे थे वह नारायण उनके सामने खड़े थे।

=> भगवान का दर्शन पाकर ध्रुव जी गदगद हो गए और उनके चरणो मे गिर गए। ध्रुव जी ने भगवान को प्रणाम किया। इसके उपरान्त हाथ जोड़कर भगवान के सामने खड़े हो गए।

=> पाँच वर्ष के ध्रुव जी भगवान की स्तुति करना चाहते है किन्तु स्तुति करनी करनी कैसे है, यहे


33
=) ध्रुव जी को ज्ञात नहीं है। क्यो कि ध्रुव जी गुरुकुल तो गए नही अध्ययन के लिए उन्हें संस्कृत व्याकरण, साहित्य का ज्ञान नही है। ध्रुव जी कुछ बोलना तो चाहते है पर बोल नही पा रहे है।
=) ध्रुव जी के भाव को नारायण समझ गए और उन्होने -
श्लोक - कृतांजलिं ब्रह्ममयेन कम्बुना
पस्पर्श बालं कृपया कपोले ॥
= ध्रुव जी के गाल से वेदमय शंख को स्पर्श करा दिया, शंख का स्पर्श होते ही सम्पूर्ण वेद वेदान्त का ज्ञान ध्रुव जी को हो गया।
= बन्धुओ हम सभी को अपने घर मे पूजन के लिए दक्षिणावर्ती शंख रखना चाहिए। और नित्यप्रति शंख का पूजन करना चाहिए।
=) प्रातःकाल मे हमे अपने घर मे शंख की ध्वनि अवश्य करनी चाहिए। जिन बालको की अध्ययन मे रुचि कम है, उनके गाल मे शंख का स्पर्श करके विद्यालय विद्यालय भेजना चाहिए।
ध्रुव जी ने भगवान की स्तुति की -
=) श्लोक - योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्रसुप्तां
संजीवयत्यखिल शक्तिधरः स्वधाम्ना।
अन्यांश्च हस्त चरण श्रवण त्वगादीन्
प्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥



Date / / Page No. 34

अर्थ- श्री ध्रुव जी महाराज भगवान से कहते है हे प्रभो! आप सर्वशक्ति सम्पन्न है, आप ही मेरे अन्तःकरण में प्रवेशकर अपने तेज से मेरी इस सोयी हुई वाणी को सजीव करते है, तथा हाथ, पैर, कान और त्वचा आदि अन्यान्य इन्द्रियो एवं प्राणो को भी चेतना देते है। मैं आप अन्तर्यामी भगवान को प्रणाम करता हूँ।

⇒ श्री ध्रुव जी के मुख से इसप्रकार स्तुति सुनकर श्री भगवान ने कहा-

श्लोक- वेदाहं ते व्यवसितं हृदि राजन्यबालक।
तत्प्रयच्छामि भद्रं ते दुरापमपि सुव्रत॥

अर्थ- ध्रुव मैं तेरे हृदय का संकल्प जानता हूँ। यद्यपि उस पद का प्राप्त होना बहुत कठिन है, तो भी मैं तुझे वह देता हूँ। तेरा कल्याण हो। बन्धुओ, ध्रुव जी के हृदय में तो यही इच्छा है कि मुझे उस पद की प्राप्ति हो, जिसकी प्राप्ति उनके पिता और बाबा को भी न हुई हो, इसलिए भगवान कहते बेटा ध्रुव जिस लोक की प्राप्ति आजतक किसी ने नही कर पाई, उस ध्रुव लोक को मैं तुझे देता हूँ।

⇒ भगवान कहते है, पुत्र तेरे मन की जो दूसरी इच्छा है, उसको भी मैं जानता हूँ, इसलिए हे पुत्र तेरे पिता का राजसिंहासन तुझे प्राप्त होगा, और तू उस सिंहासन पर विराजित होकर छत्तीस हजार वर्ष तक धर्म पूर्वक पृथ्वी को

=) पालन करेगा। इसके उपरान्त तू अन्त में सम्पूर्ण लोकों के वन्दनीय और सप्तर्षियों से भी ऊपर मेरे निज धाम को जाएगा जहाँ पहुँच जाने पर फिर संसार मे लौटकर नही आना होता है।

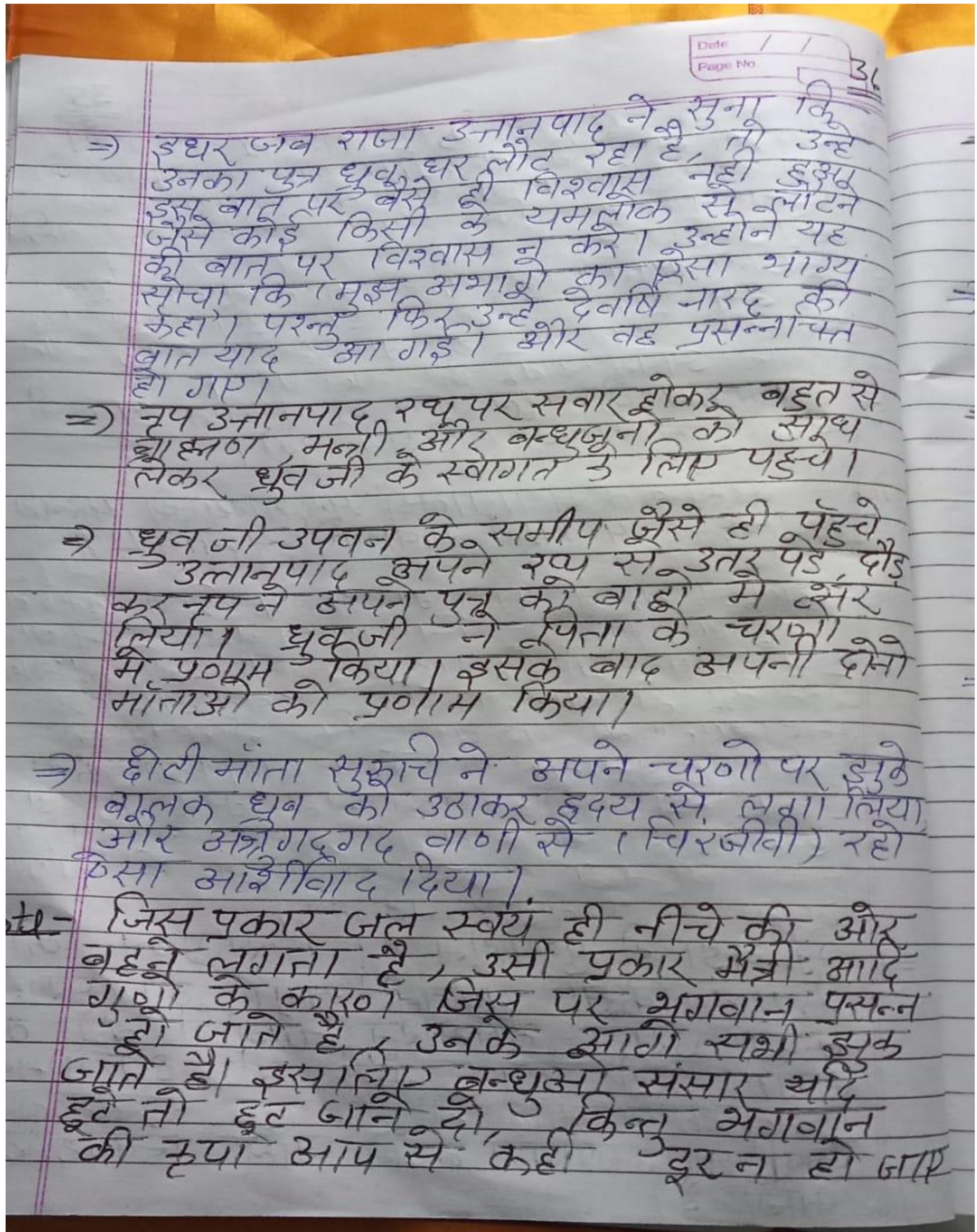
=) मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते बालक ध्रुव से इस प्रकार पूजित हो और उसे अपना पद प्रदान कर भगवान श्री गरुड़ध्वज उसके देखते देखते अपने लोक को चले गए।

=) भगवान के चले जाने के पश्चात ध्रुव जी अपने भाग्य को कोसने लगे।

श्लोक - अहो बत ममानात्म्यं मन्दभाग्यस्य पश्यत।
भवच्छिदः पादमूलं गत्वायाचे यदन्तवत् ॥

अर्थ- ध्रुव जी कहते मुझ मन्दभाग्य की मूर्खता तो देखो, मैंने संसार-पाश को काटने वाले प्रभु के पादपद्मो मे पहुँचकर भी उनसे नाशवान वस्तु की ही याचना की। देवताओं को स्वर्गभोग के पश्चात फिर नीचे गिरना होता है इसलिए वे मेरी भगवत्प्राप्तिरूप उच्च स्थिति को सहन नही कर सके, अतः उन्होंने ही मेरी बुद्धि को नष्ट कर दिया। तभी तो मुझ दुष्ट ने नारद जी की यथार्थ बात भी स्वीकार नही की।

=) मैं बड़ा ही पुण्यहीन हूँ। जिस प्रकार कोई कंगाला किसी चक्रवर्ती सम्राट को प्रसन्न करके उससे तुषसहित चावलो की कनी मांगे, उसी प्रकार मैंने भी आत्मानन्द प्रदान करने वाले श्री हरि से मूर्खतावश व्यर्थ का अभिमान बढ़ाने वाले उच्चपदादि ही मांगे है।



36

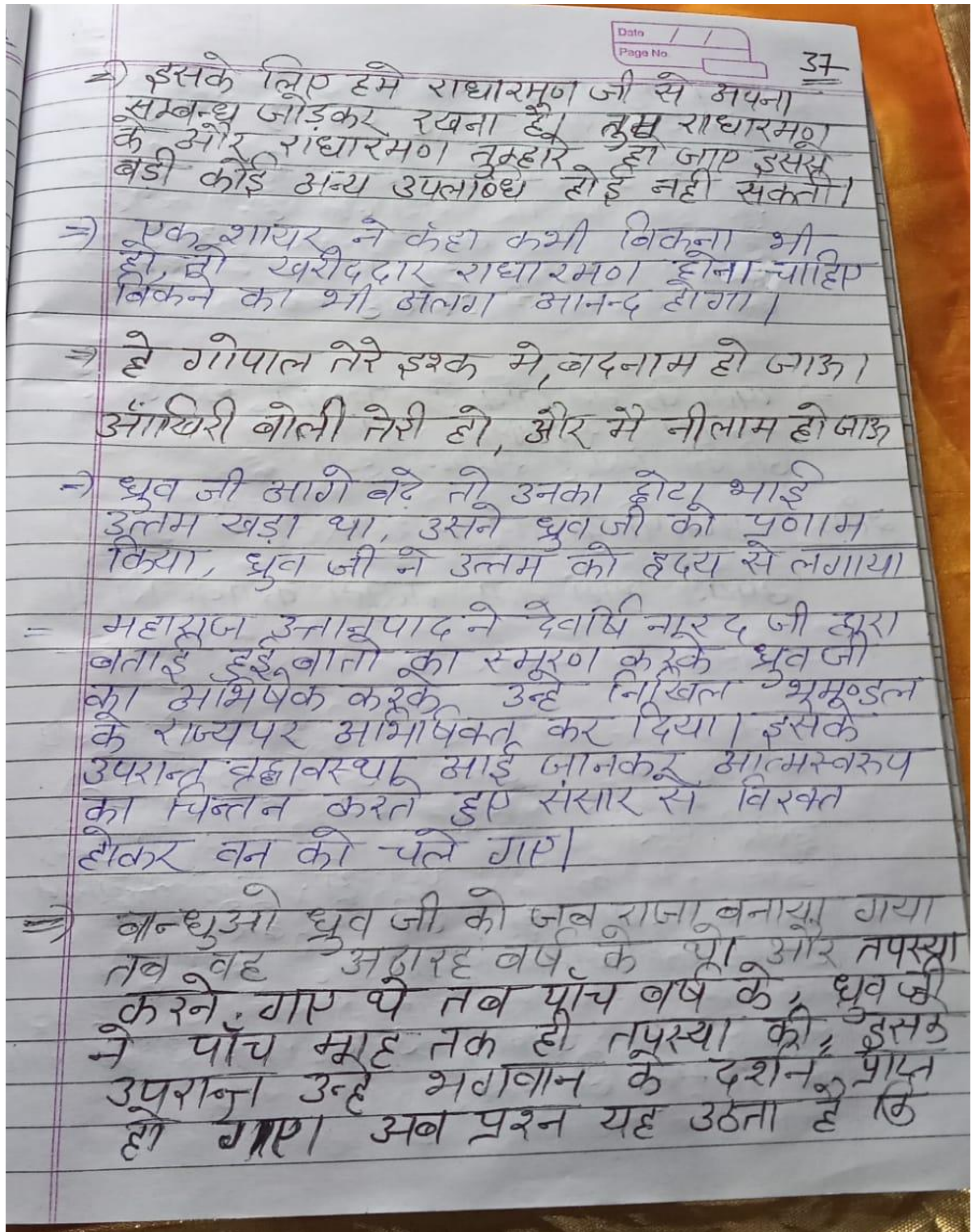
⇒ इधर जब राजा उत्तानपाद ने सुना कि उनका पुत्र ध्रुव घर लौट रहा है, तो उन्हें इस बात पर वैसे ही विश्वास नहीं हुआ जैसे कोई किसी के यमलोक से लौटने की बात पर विश्वास न करे। उन्होंने यह सोचा कि मुझ अभागे का ऐसा भाग्य कहाँ। परन्तु फिर उन्हें देवर्षि नारद की बात याद आ गई। और वह प्रसन्नचित्त हो गए।

⇒ नृप उत्तानपाद रथ पर सवार होकर बहुत से ब्राह्मण, मन्त्री और बन्धुजनों को साथ लेकर ध्रुव जी के स्वागत के लिए पहुँचे।

⇒ ध्रुव जी उपवन के समीप जैसे ही पहुँचे, उत्तानपाद अपने रथ से उतर पड़े दौड़ कर नृप ने अपने पुत्र को बाहों में भर लिया। ध्रुव जी ने पिता के चरणों में प्रणाम किया। इसके बाद अपनी दोनों माताओं को प्रणाम किया।

⇒ छोटी माता सुरुचि ने अपने चरणों पर झुके बालक ध्रुव को उठाकर हृदय से लगा लिया और अश्रुगद्गद वाणी से (चिरंजीवी) रहो ऐसा आशीर्वाद दिया।

नोट:- जिस प्रकार जल स्वयं ही नीचे की ओर बहने लगता है, उसी प्रकार मैत्री आदि गुणों के कारण जिस पर भगवान प्रसन्न हो जाते हैं, उनके आगे सभी झुक जाते हैं। इसलिए बन्धुओं संसार यदि छूटे तो छूट जाने दो, किन्तु भगवान की कृपा आप से कहीं दूर न हो जाए



Date / /
Page No. 37

⇒ इसके लिए हमे राधारमण जी से अपना सम्बन्ध जोड़कर रखना है, तुम राधारमण के और राधारमण तुम्हारे हो जाए इससे बड़ी कोई अन्य उपलब्धि होई नहीं सकती।

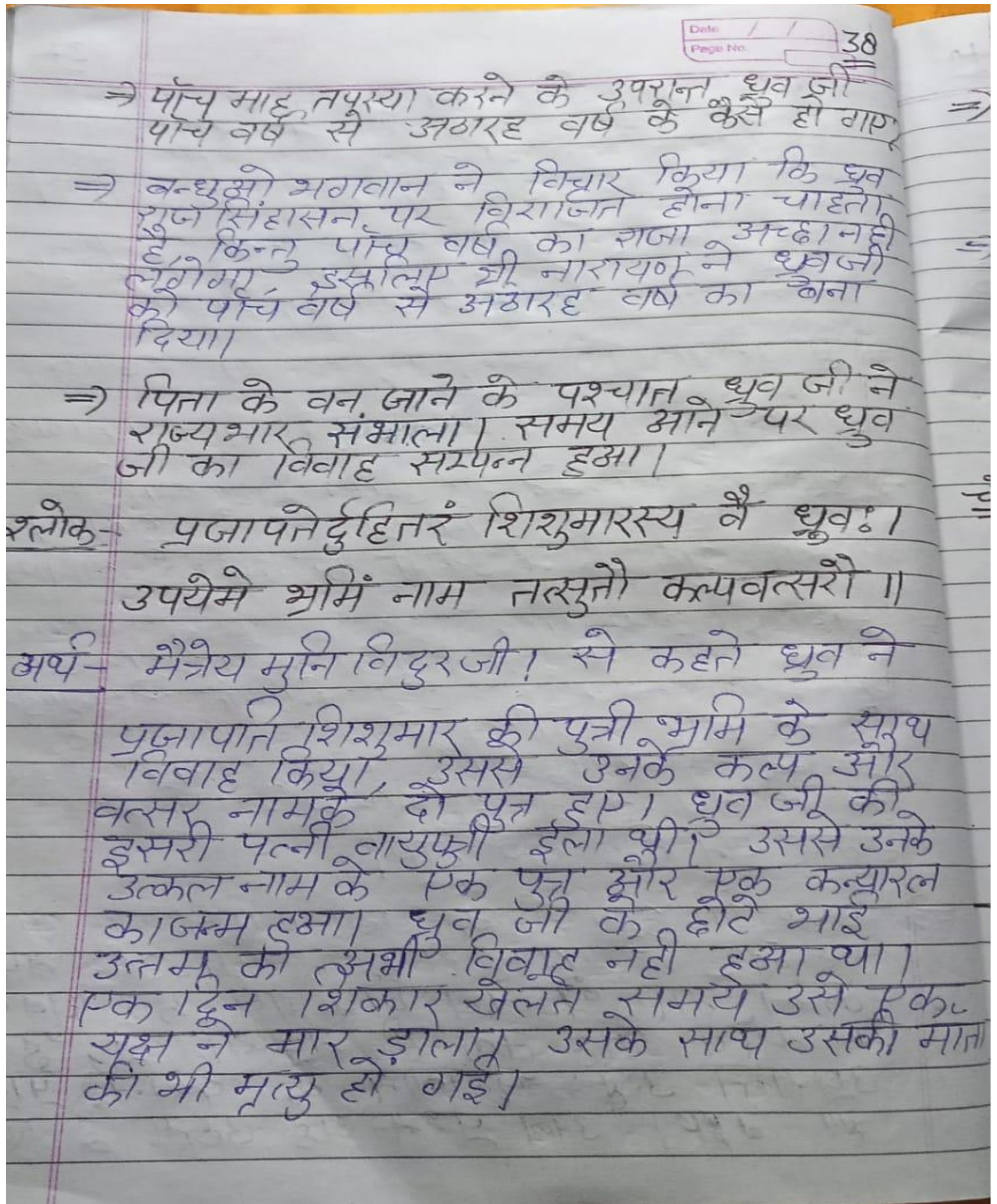
⇒ एक शायर ने कहा कभी बिकना भी हो, तो खरीददार राधारमण होना चाहिए बिकने का भी अलग आनन्द होगा।

⇒ हे गोपाल तेरे इश्क मे, बदनाम हो जाऊ।
आखिरी बोली तेरी हो, और मै नीलाम हो जाऊ

⇒ ध्रुव जी आगे बढ़े तो उनका छोटा भाई उत्तम खड़ा था, उसने ध्रुव जी को प्रणाम किया, ध्रुव जी ने उत्तम को हृदय से लगाया

= महाराज उत्तानपाद ने देवर्षि नारद जी द्वारा बताई हुई बातो का स्मरण करके ध्रुव जी का अभिषेक करके उन्हे निखिल भूमण्डल के राज्यपर अभिषिक्त कर दिया। इसके उपरान्त वृद्धावस्था आई जानकर आत्मस्वरुप का चिन्तन करते हुए संसार से विरक्त होकर वन को चले गए।

⇒ बान्धुओ ध्रुव जी को जब राजा बनाया गया तब वह अठारह वर्ष के थे और तपस्या करने गए थे तब पाँच वर्ष के, ध्रुव जी ने पाँच माह तक ही तपस्या की, इसके उपरान्त उन्हे भगवान के दर्शन प्राप्त हो गए। अब प्रश्न यह उठता है कि



38

⇒ पाँच माह तपस्या करने के उपरान्त ध्रुव जी पाँच वर्ष से अठारह वर्ष के कैसे हो गए?

⇒ बन्धुओ भगवान ने विचार किया कि ध्रुव राज सिंहासन पर विराजित होना चाहता है, किन्तु पाँच वर्ष का राजा अच्छा नहीं लगेगा, इसलिए श्री नारायण ने ध्रुवजी को पाँच वर्ष से अठारह वर्ष का बना दिया।

⇒ पिता के वन जाने के पश्चात ध्रुव जी ने राज्यभार संभाला। समय आने पर ध्रुव जी का विवाह सम्पन्न हुआ।

श्लोक- प्रजापतेर्दुहितरं शिशुमारस्य वै ध्रुवः।
उपयेमे भ्रमिं नाम तत्सुतौ कल्पवत्सरौ ॥

अर्थ- मैत्रेय मुनि विदुरजी। से कहते ध्रुव ने प्रजापति शिशुमार की पुत्री भ्रमि के साथ विवाह किया, उससे उनके कल्प और वत्सर नामके दो पुत्र हुए। ध्रुव जी की दूसरी पत्नी वायुपुत्री इला थी। उससे उनके उत्कल नाम के एक पुत्र और एक कन्यारत्न का जन्म हुआ। ध्रुव जी के छोटे भाई उत्तम का अभी विवाह नहीं हुआ था। एक दिन शिकार खेलते समय उसे एक यक्ष ने मार डाला। उसके साथ उसकी माता की भी मृत्यु हो गई।

38

39

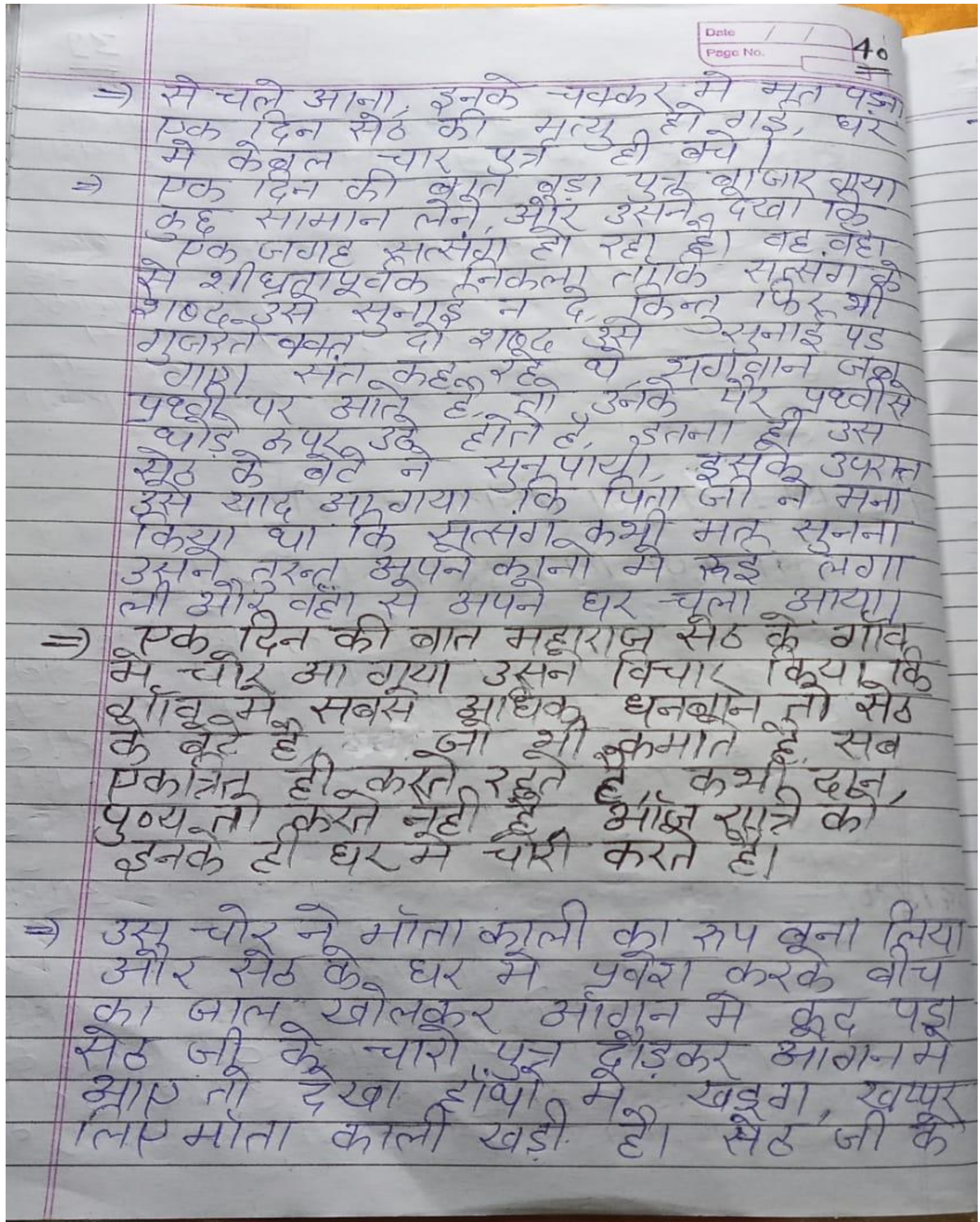
=> ध्रुव जी ने जब भाई के मारे जाने का समाचार सुना तो वे क्रोध, शोक, और, उद्वेग से भरकर एक विजयप्रद रथपर सवार हो यक्षो के देश मे जा पहुंचे।

=> बन्धुओ विचार का विषय है कि जिस ध्रुव को भगवान के दर्शन प्राप्त हो गए उन्हे अपने भाई के मृत्यु का समाचार सुनकर क्रोध आ गया, बदले की भावना से युद्ध करने निकल पडे। बन्धुओ ध्रुव जी को भगवान तो मिल गए, किन्तु सत्संग नही मिला।

चौ० बिनु सत्संग विवेक न होई।
राम कृपा बिन सुलभ न सोई॥

बिना सत्संग जीव को विवेक नही मिलता और कृष्ण की कृपा बिना सत्संग भी सुलभ नही होता। जिस जीव पर परमात्मा की पूर्ण कृपा होती है उसे ही सत्संग प्राप्त होता है। बन्धुओ एक मिनट भी यदि हम सत्संग श्रवण करते है, तो वह हमारे जीवन मे बहुत काम आता है।

उदाहरण – एक सेठ के चार पुत्र थे वह अपने पुत्रो को सदैव समझाता रहता था, देखो पुत्रो सदैव अपनी मेहनत पर विश्वास रखना और इन बाबाओ, और साधुओ के चक्कर मे मत पड़ना, यह सब ढगा होते है अगर यह कही भी तुम्हे उपदेश देते दिख जाए तो तुम अपने कान बंद करके वहा



Date / /
Page No. 40

=> से चले आना, इनके चक्कर मे मत पड़ना
एक दिन सेठ की मृत्यु हो गई, घर
मे केवल चार पुत्र ही बचे।

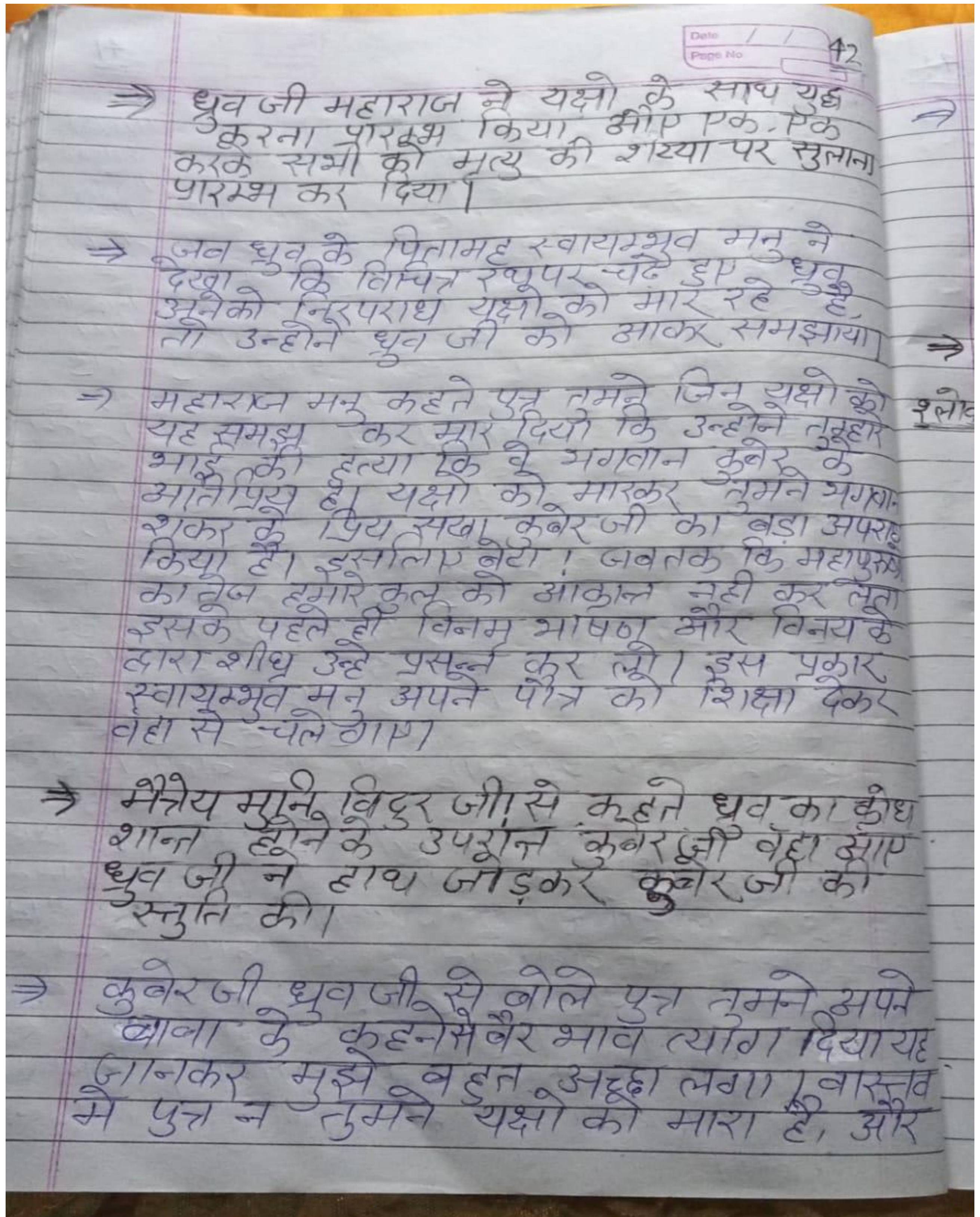
=> एक दिन की बात बड़ा पुत्र बाजार गया
कुछ सामान लेने, और उसने देखा कि
एक जगह सत्संग हो रहा है वह वहां
से शीघ्रतापूर्वक निकला ताकि सत्संग के
शब्द उसे सुनाई न दे किन्तु फिर भी
गुजरते वक्त दो शब्द उसे सुनाई पड
गए। संत कह रहे थे भगवान जब
पृथ्वी पर आते है तो उनके पैर पृथ्वी से
थोड़े ऊपर उठे होते है, इतना ही उस
सेठ के बेटे ने सुन पायी, इसके उपरान्त
उसे याद आ गया कि पिता जी ने मना
किया था कि सत्संग कभी मत सुनना
उसने तुरन्त अपने कानो मे रूई लगा
ली और वहां से अपने घर चला आया।

=> एक दिन की बात महाराज सेठ के गांव
मे चोर आ गया उसने विचार किया कि
गांव मे सबसे अधिक धनवान तो सेठ
के बेटे है, जो भी कमाते है, सब
एकत्रित ही करते रहते है कभी दान,
पुण्य तो करते नही है आज रात्रि को
इनके ही घर मे चोरी करते है।

=> उस चोर ने माता काली का रूप बना लिया
और सेठ के घर मे प्रवेश करके बीच
का जाल खोलकर आंगन मे कूद पड़ा
सेठ जी के चारो पुत्र दौड़कर आंगन मे
आए तो देखा हाथो मे खड्ग, खप्पर
लिए माता काली खड़ी है। सेठ जी के

Date / /
Page No. 41

- ) पुत्र माता काली के चरणो मे गिर गए और कहने लगे है माँ हमसे कौन सा अपराध हो गया कृपया हमे बताए। काली रूप धारण किए वह चोर कहने लगा तुम लोगो ने मेरा अपमान किया है, प्रतिवर्ष होने वाली पूजा पिता जी के जाने के पश्चात तुमने नही की है इससे मै बहुत कुपित हूँ जो कुछ भी तुम्हारे पास है, शीघ्र निकाल मेरे सामने रख दो सोना, चाँदी, पैसे इत्यादि। महाराज सारे भाई दौड-दौड कर सोना चाँदी निकाल-निकालकर काली माँ के चरणो मे रखने लगे, इतने मे सेठ के बडे बेटे को वो शब्द याद आ गए जो इसने बाजार जाते समय सत्संग मे संत के मुख से सुने थे, भगवान जब पृथ्वी पर आते है तो उनके पैर धरती से थोडे ऊपर होते है। फिर उसने काली माता के पैरो को देखा, उनके पैर तो धरती से ऊपर थे ही नही वह समझ गया कि यह कोई काली माता नही एक पाखण्डी है उसने अपने तीनो भाइयो को यह बताया, इसके उपरान्त उस चोर को पकड कर सबक सिखाया। इस दृष्टान्त से हमे यही शिक्षा मिलती है कि जीवन मे एक मिनट भी किया गया सत्संग हमे कई अनहोनियो से बचा लेता है। इसलिए जीवन मे जितना बन सके उतना महापुरुषो का संग करना चाहिए, और उनके मुख से सत्संग श्रवण करना चाहिए। ध्रुव जी को भगवान तो मिले किन्तु सत्संग नही मिला।



42

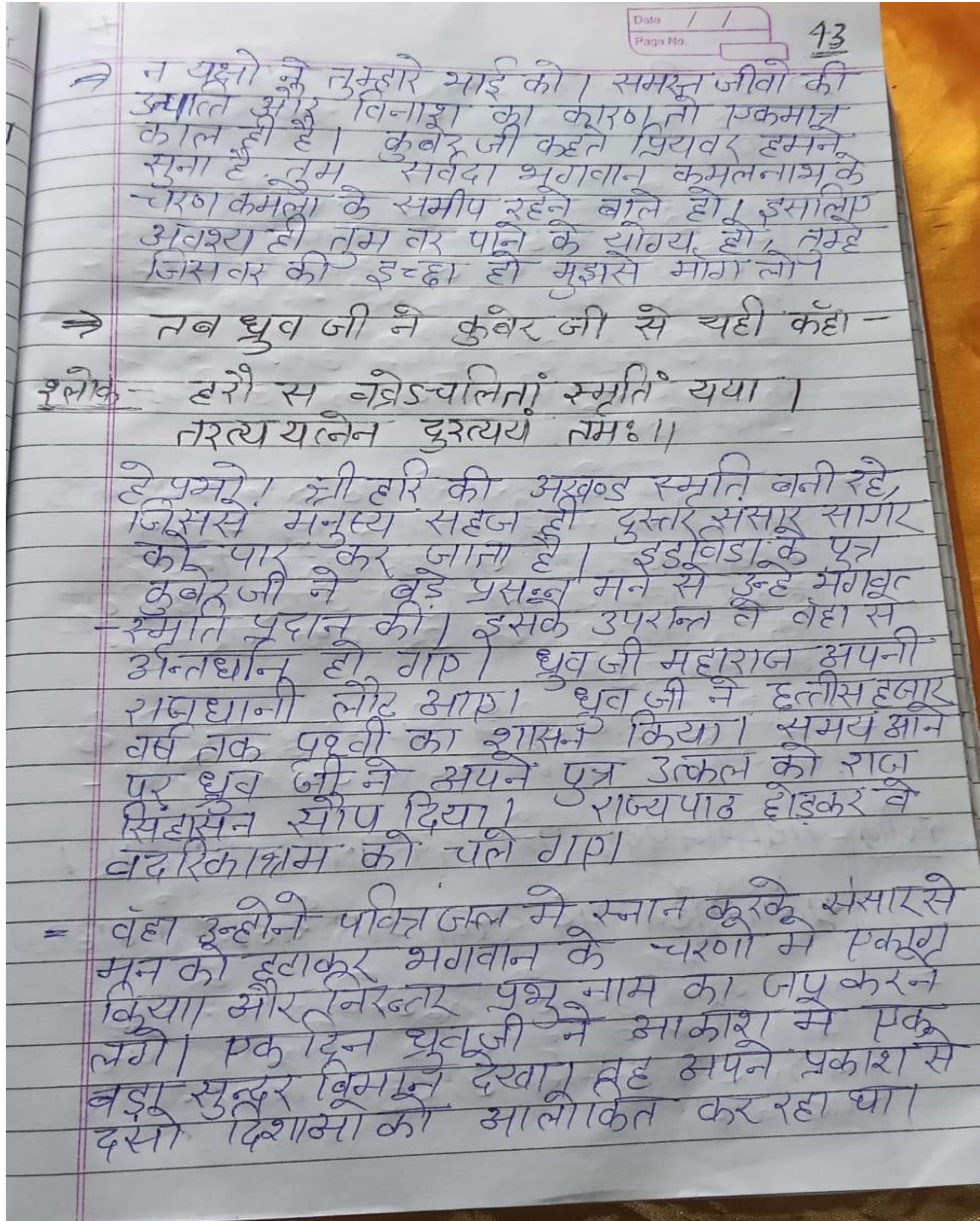
⇒ ध्रुव जी महाराज ने यक्षो के साथ युद्ध करना प्रारम्भ किया और एक-एक करके सभी को मृत्यु की शय्या पर सुलाना प्रारम्भ कर दिया।

⇒ जब ध्रुव के पितामह स्वायम्भुव मनु ने देखा कि विचित्र रथ पर चढ़े हुए ध्रुव अनेको निरपराध यक्षो को मार रहे है, तो उन्होने ध्रुव जी को आकर समझाया।

⇒ महाराज मनु कहते पुत्र तुमने जिन यक्षो को यह समझ कर मार दियो कि उन्होने तुम्हारे भाई की हत्या कि वे भगवान कुबेर के अतिप्रिय है। यक्षो को मारकर तुमने भगवान शंकर के प्रिय सखा कुबेर जी का बड़ा अपराध किया है। इसलिए बेटा! जबतक कि महापुरुषो का तेज हमारे कुल को आक्रान्त नही कर लेता इसके पहले ही विनम्र भाषण और विनय के द्वारा शीघ्र उन्हे प्रसन्न कर लो। इस प्रकार स्वायम्भुव मनु अपने पौत्र को शिक्षा देकर वहा से चले गए।

⇒ मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते ध्रुव का क्रोध शान्त होने के उपरान्त कुबेर जी वहा आए ध्रुव जी ने हाथ जोड़कर कुबेर जी की स्तुति की।

⇒ कुबेर जी ध्रुव जी से बोले पुत्र तुमने अपने बाबा के कहने से वैर भाव त्याग दिया यह जानकर मुझे बहुत अच्छा लगा। वास्तव मे पुत्र न तुमने यक्षो को मारा है, और



43

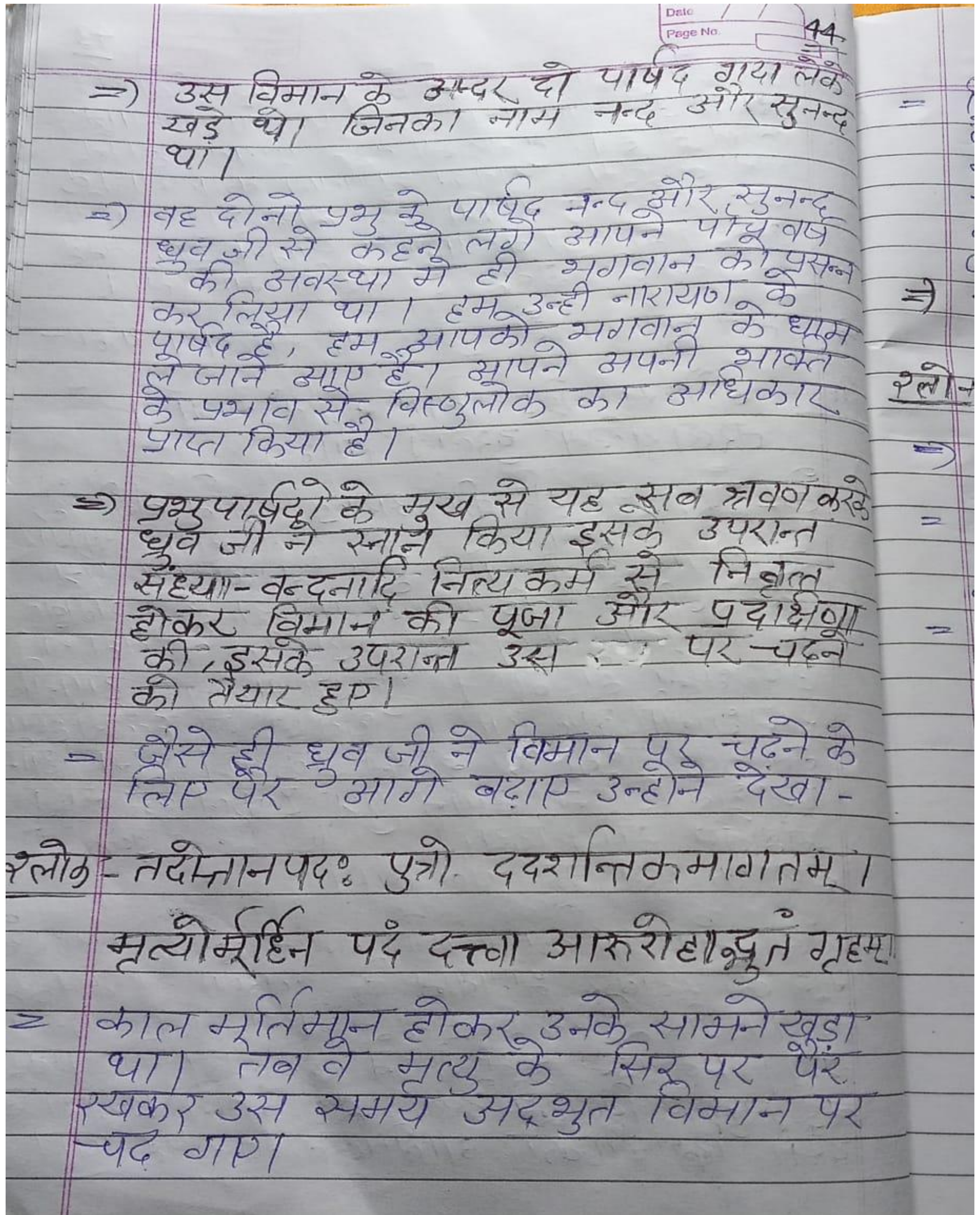
⇒ न यक्षो ने तुम्हारे भाई को। समस्त जीवो की उत्पत्ति और विनाश का कारण तो एकमात्र काल ही है। कुबेर जी कहते प्रियवर हमने सुना है, तुम सर्वदा भगवान कमलनाभ के चरण कमलो के समीप रहने वाले हो, इसलिए अवश्य ही तुम वर पाने के योग्य हो, तुम्हे जिस वर की इच्छा हो मुझसे मांग लो।

⇒ तब ध्रुव जी ने कुबेर जी से यही कहा –

श्लोक – हरौ स वव्रेऽचलितां स्मृतिं यया।
तरत्ययत्नेन दुरत्ययं तमः॥

हे प्रभो! श्री हरि की अखण्ड स्मृति बनी रहे, जिससे मनुष्य सहज ही दुस्तर संसार सागर को पार कर जाता है। इडविडा के पुत्र कुबेर जी ने बड़े प्रसन्न मन से उन्हे भगवत्-स्मृति प्रदान की। इसके उपरान्त वे वहा से अन्तर्धान हो गए। ध्रुव जी महाराज अपनी राजधानी लौट आए। ध्रुव जी ने छत्तीस हजार वर्ष तक पृथ्वी का शासन किया। समय आने पर ध्रुव जी ने अपने पुत्र उत्कल को राज सिंहासन सौंप दिया। राज्यपाट छोड़कर वे बदरिकाश्रम को चले गए।

= वहा उन्होने पवित्र जल मे स्नान करके संसार से मन को हटाकर भगवान के चरणो मे एकाग्र किया और निरन्तर प्रभु नाम का जप करने लगे। एक दिन ध्रुव जी ने आकाश मे एक बड़ा सुन्दर विमान देखा, वह अपने प्रकाश से दसो दिशाओ को आलोकित कर रहा था।


Date / / Page No. 44

=) उस विमान के अन्दर दो पार्षद गदा लेके खड़े थे। जिनका नाम नन्द और सुनन्द था।

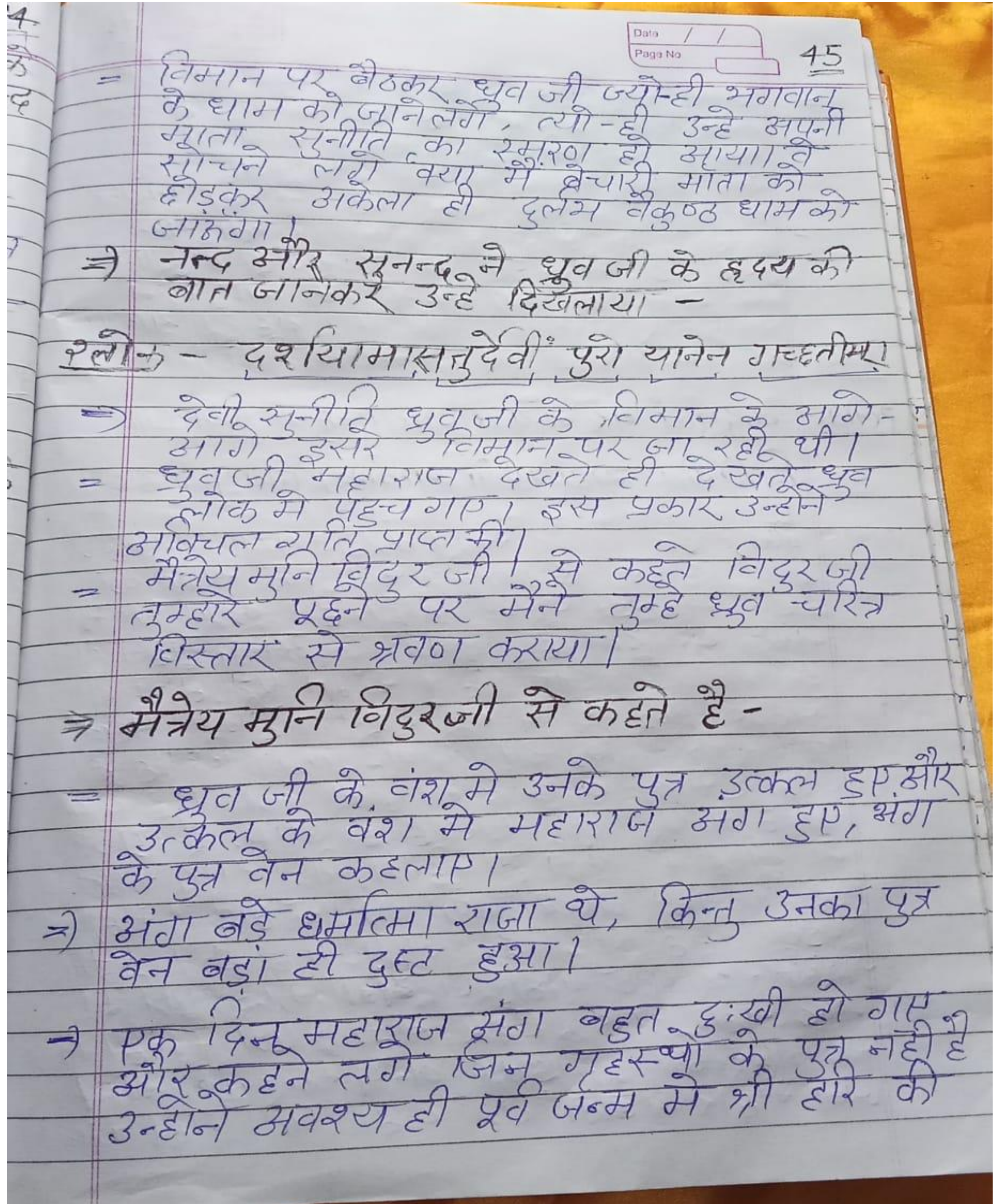
=) वह दोनो प्रभु के पार्षद नन्द और सुनन्द ध्रुव जी से कहने लगे आपने पाँच वर्ष की अवस्था मे ही भगवान को प्रसन्न कर लिया था। हम उन्ही नारायण के पार्षद है, हम आपको भगवान के धाम ले जाने आए है। आपने अपनी भक्ति के प्रभाव से विष्णुलोक का अधिकार प्राप्त किया है।

=) प्रभु पार्षदो के मुख से यह सब श्रवण करके ध्रुव जी ने स्नान किया इसके उपरान्त संध्या-वन्दनादि नित्य कर्म से निवृत्त होकर विमान की पूजा और प्रदक्षिणा की, इसके उपरान्त उस पर चढ़ने को तैयार हुए।

= जैसे ही ध्रुव जी ने विमान पर चढ़ने के लिए पैर आगे बढ़ाए उन्होने देखा -

श्लोक - तदोत्तानपदः पुत्रो ददर्शान्तकमागतम्।
मृत्योर्मूर्ध्नि पदं दत्त्वा आरुरोहाद्भुतं गृहम्।

= काल मूर्तिमान होकर उनके सामने खड़ा था। तब वे मृत्यु के सिर पर पैर रखकर उस समय अद्भुत विमान पर चढ़ गए।



45

= विमान पर बैठकर ध्रुव जी ज्यों-ही भगवान् के धाम को जाने लगे, त्यों-ही उन्हें अपनी माता सुनीति का स्मरण हो आया। वे सोचने लगे क्या मैं बेचारी माता को छोड़कर अकेला ही दुर्लभ वैकुण्ठ धाम को जाऊंगा।

=> नन्द और सुनन्द ने ध्रुव जी के हृदय की बात जानकर उन्हें दिखलाया -

श्लोक - दर्शयामासतुर्देवीं पुरो यानेन गच्छतीम्।

=> देवी सुनीति ध्रुव जी के विमान के आगे-आगे दूसरे विमान पर जा रही थी।

= ध्रुव जी महाराज देखते ही देखते ध्रुव लोक मे पहुंच गए। इस प्रकार उन्होंने अविचल गति प्राप्त की।

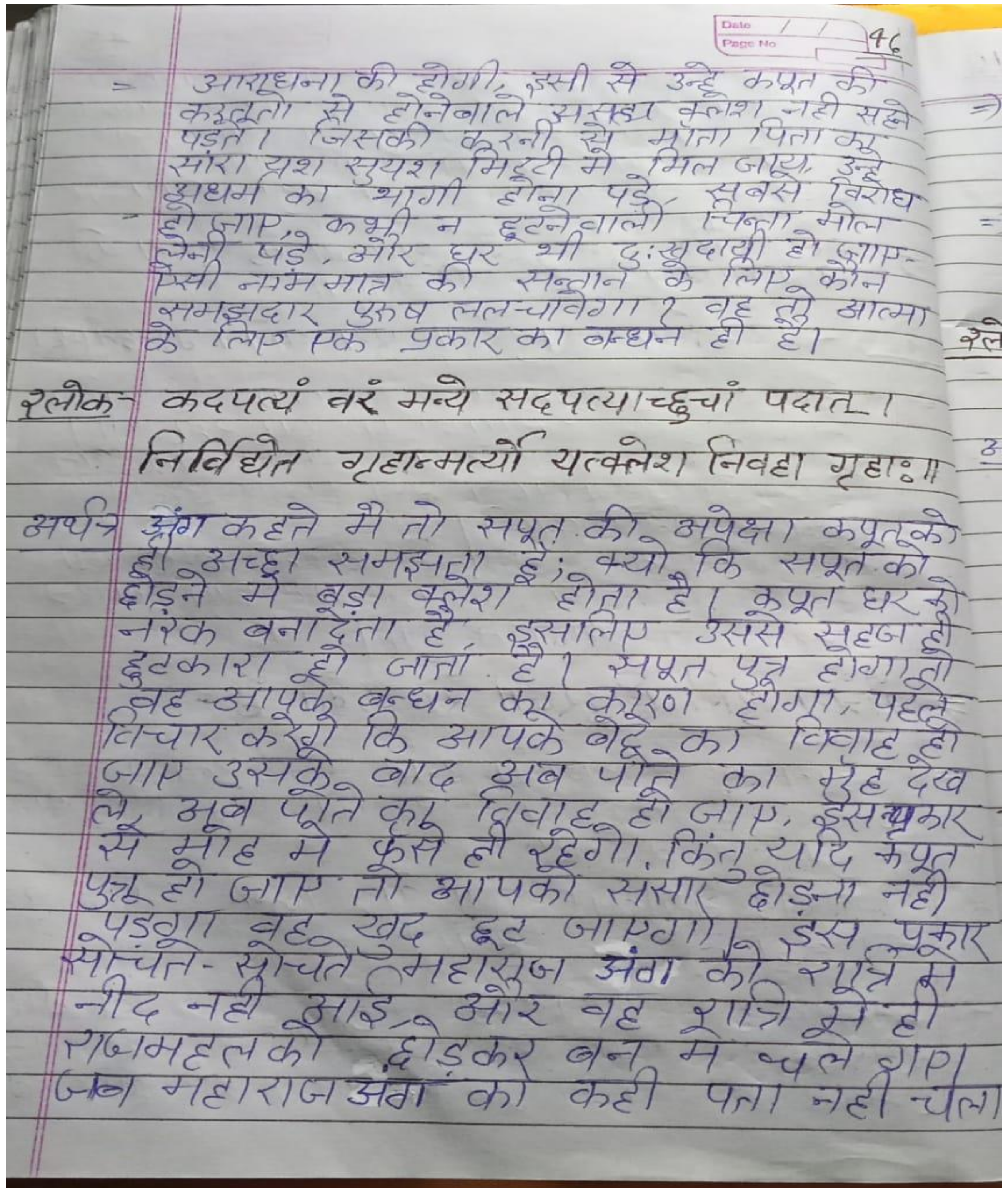
= मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते विदुर जी तुम्हारे प्रश्न पर मैंने तुम्हे ध्रुव चरित्र विस्तार से श्रवण कराया।

=> मैत्रेय मुनि विदुरजी से कहते है -

= ध्रुव जी के वंश मे उनके पुत्र उत्कल हुए और उत्कल के वंश मे महाराज अंग हुए, अंग के पुत्र वेन कहलाए।

=> अंग बड़े धर्मात्मा राजा थे, किन्तु उनका पुत्र वेन बड़ा ही दुष्ट हुआ।

=> एक दिन महाराज अंग बहुत दुःखी हो गए और कहने लगे जिन गृहस्थों के पुत्र नहीं है उन्होंने अवश्य ही पूर्व जन्म मे श्री हरि की

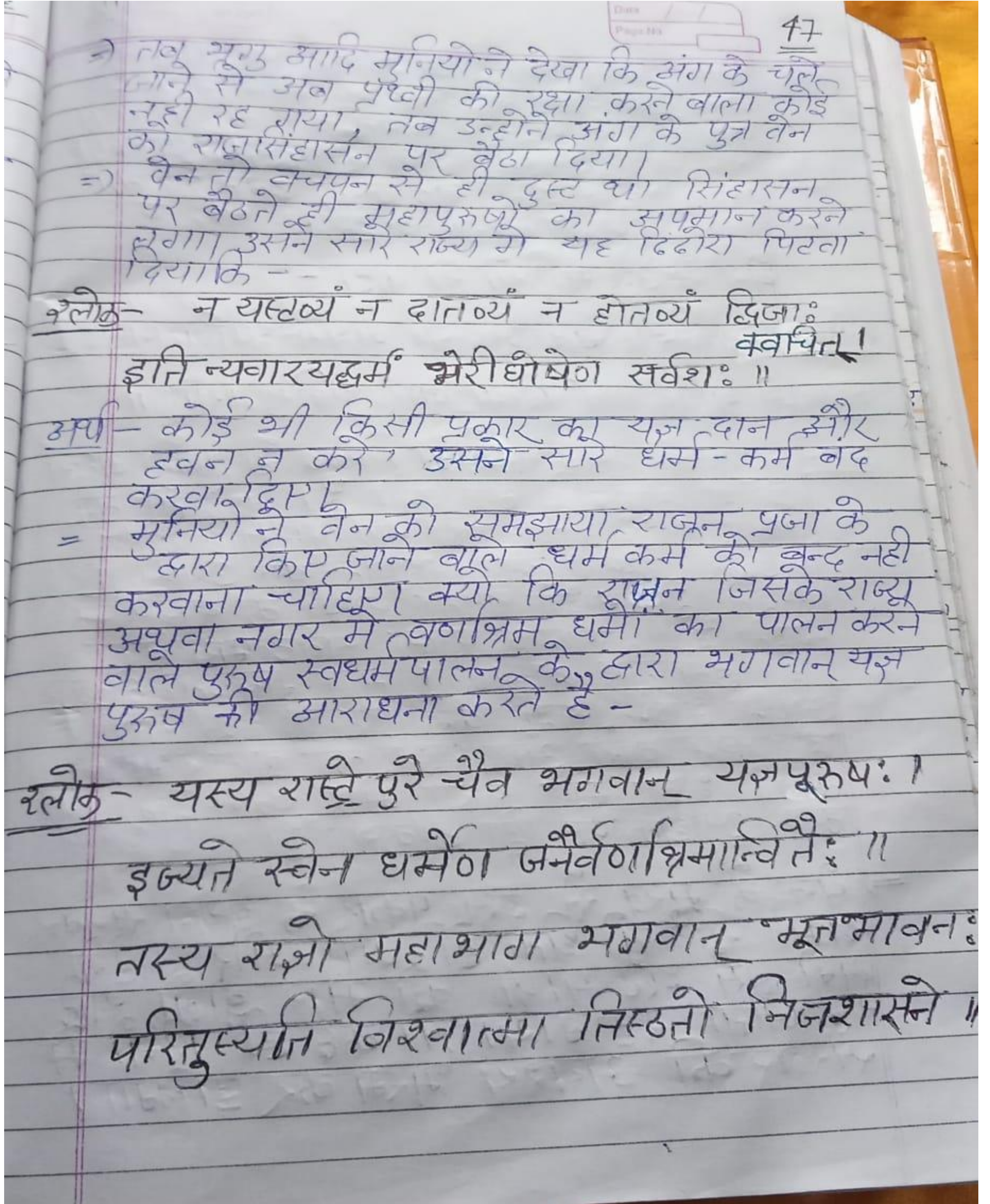


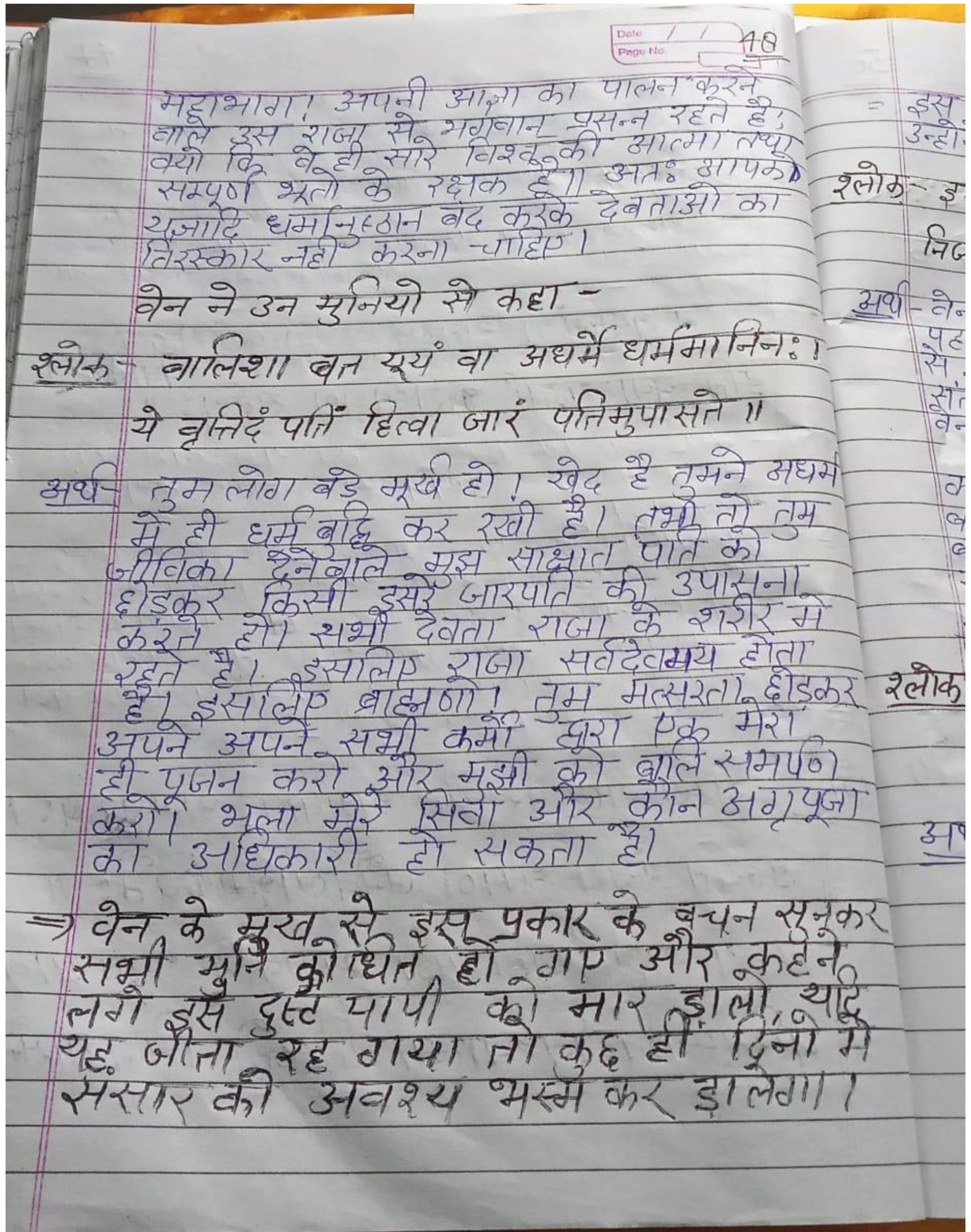
46

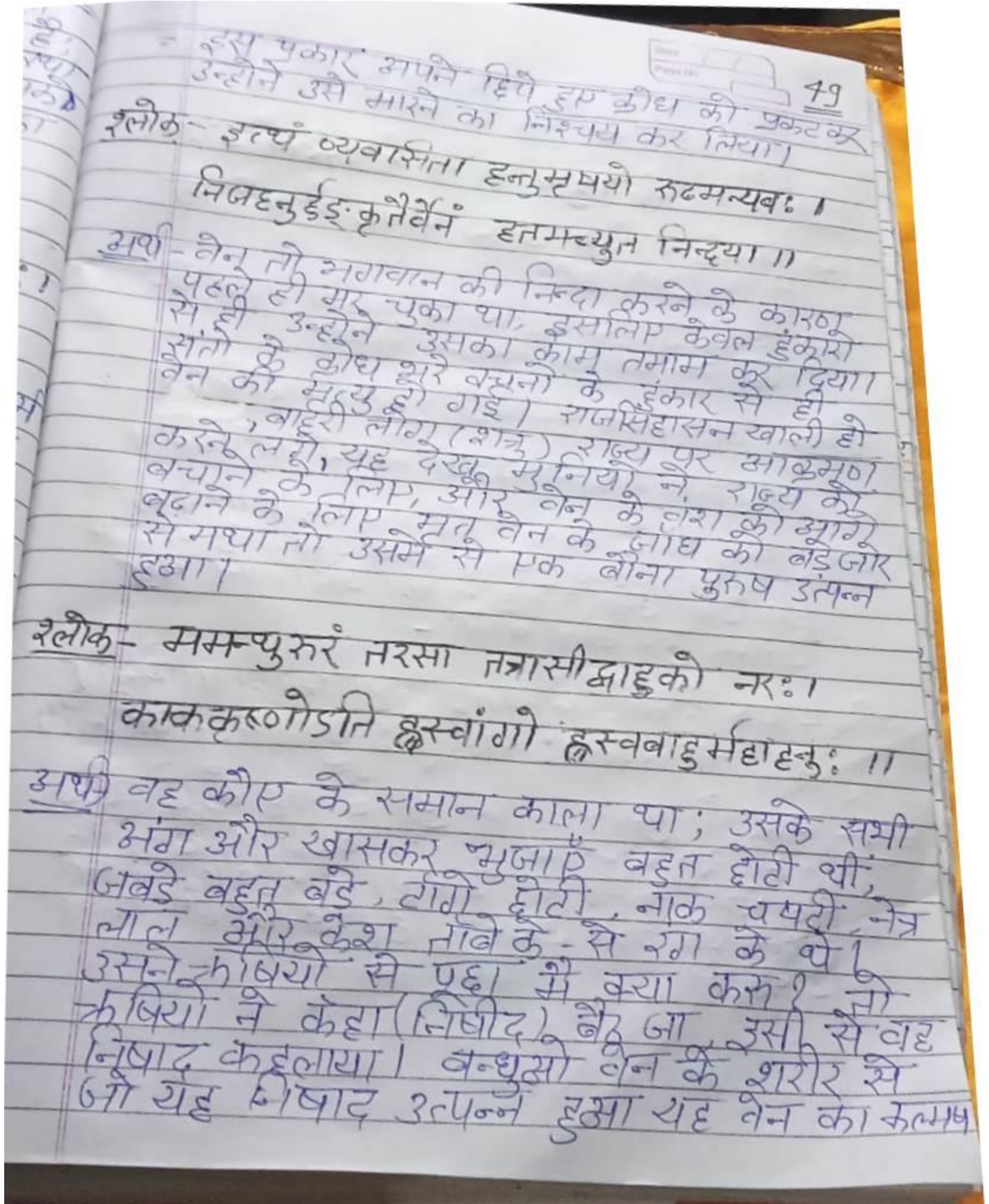
आराधना की होगी, इसी से उन्हें कपूत की करतूतों से होनेवाले असह्य क्लेश नहीं सहने पड़ते। जिसकी करनी से माता पिता का सारा यश सुयश मिट्टी मे मिल जाए, उन्हें अधर्म का भागी होना पड़े, सबसे विरोध हो जाए, कभी न छूटनेवाली चिन्ता मोल लेनी पड़े, और घर भी दुःखदायी हो जाए- ऐसी नाममात्र की सन्तान के लिए कौन समझदार पुरुष ललचावेगा? वह तो आत्मा के लिए एक प्रकार का बन्धन ही है।

श्लोक- कदपत्यं वरं मन्ये सदपत्याच्छुचां पदात्।
निर्विद्येत गृहान्मर्त्यो यत्क्लेश निवहा गृहाः॥

अर्थात् अंग कहते मै तो सपूत की अपेक्षा कपूत को ही अच्छा समझता हूँ; क्योकि सपूत को छोड़ने मे बड़ा क्लेश होता है। कपूत घर को नरक बना देता है, इसलिए उससे सहज ही छुटकारा हो जाता है। सपूत पुत्र होगा तो वह आपके बन्धन का कारण होगा, पहले विचार करेगी कि आपके बेटे का विवाह हो जाए उसके बाद अब पोते का मुंह देख ले, अब पोते का विवाह हो जाए, इसप्रकार से मोह मे फंसे ही रहेगी, किंतु यदि कपूत पुत्र हो जाए तो आपको संसार छोड़ना नहीं पड़ेगा वह खुद छूट जाएगा। इस प्रकार सोचते-सोचते महाराज अंग को रात्रि मे नीद नहीं आई, और वह रात्रि मे ही राजमहल को छोड़कर बन मे चले गए। जब महाराज अंग को कही पता नहीं चला


47
=> तब भृगु आदि मुनियों ने देखा कि अंग के चले जाने से अब पृथ्वी की रक्षा करने वाला कोई नहीं रह गया, तब उन्होंने अंग के पुत्र वेन को राजासिंहासन पर बैठा दिया।
=> वेन तो बचपन से ही दुष्ट था सिंहासन पर बैठते ही महापुरुषों का अपमान करने लगा। उसने सारे राज्य मे यह ढिंढोरा पिटवा दिया कि -
श्लोक- न यष्टव्यं न दातव्यं न होतव्यं द्विजाः क्वचित्।
इति न्यवारयद्धर्मं भेरीघोषेण सर्वशः॥
अर्थ- कोई भी किसी प्रकार का यज्ञ दान और हवन न करे, उसने सारे धर्म-कर्म बंद करवा दिए।
= मुनियों ने वेन को समझाया, राजन प्रजा के द्वारा किए जाने वाले धर्म कर्म को बन्द नही करवाना चाहिए। क्यों कि राजन जिसके राज्य अथवा नगर मे वर्णाश्रम धर्मो का पालन करने वाले पुरुष स्वधर्म पालन के द्वारा भगवान यज्ञ पुरुष की आराधना करते है -
श्लोक- यस्य राष्ट्रे पुरे चैव भगवान यज्ञपूरुषः।
इज्यते स्वेन धर्मेण जनैर्वर्णाश्रमान्वितैः॥
तस्य राज्ञो महाभाग भगवान भूतभावनः।
परितुष्यति विश्वात्मा तिष्ठतो निजशासने॥


48
महाभाग! अपनी आज्ञा का पालन करने वाले उस राजा से भगवान प्रसन्न रहते हैं; क्यों कि वे ही सारे विश्व की आत्मा तथा सम्पूर्ण व्रतो के रक्षक है। अतः आपको यज्ञादि धर्मानुष्ठान बंद करके देवताओ का तिरस्कार नही करना चाहिए।
वेन ने उन मुनियो से कहा -
श्लोक - बालिशा बत यूयं वा अधर्मे धर्ममानिनः।
ये वृत्तिदं पतिं हित्वा जारं पतिमुपासते॥
अर्थ - तुम लोग बड़े मूर्ख हो। खेद है तुमने अधर्म में ही धर्म बुद्धि कर रखी है। तभी तो तुम जीविका देनेवाले मुझ साक्षात पति को छोड़कर किसी दूसरे जारपति की उपासना करते हो। सभी देवता राजा के शरीर में रहते है। इसलिए राजा सर्वदेवमय होता है। इसलिए ब्राह्मणो! तुम मत्सरता छोड़कर अपने अपने सभी कर्मो द्वारा एक मेरा ही पूजन करो और मुझी को बलि समर्पण करो। भला मेरे सिवा और कौन अग्रपूजा का अधिकारी हो सकता है।
⇒ वेन के मुख से इस प्रकार के वचन सुनकर सभी मुनि क्रोधित हो गए और कहने लगे इस दुष्ट पापी को मार डालो, यदि यह जीता रह गया तो कुछ ही दिनो में संसार को अवश्य भस्म कर डालेगा।



49

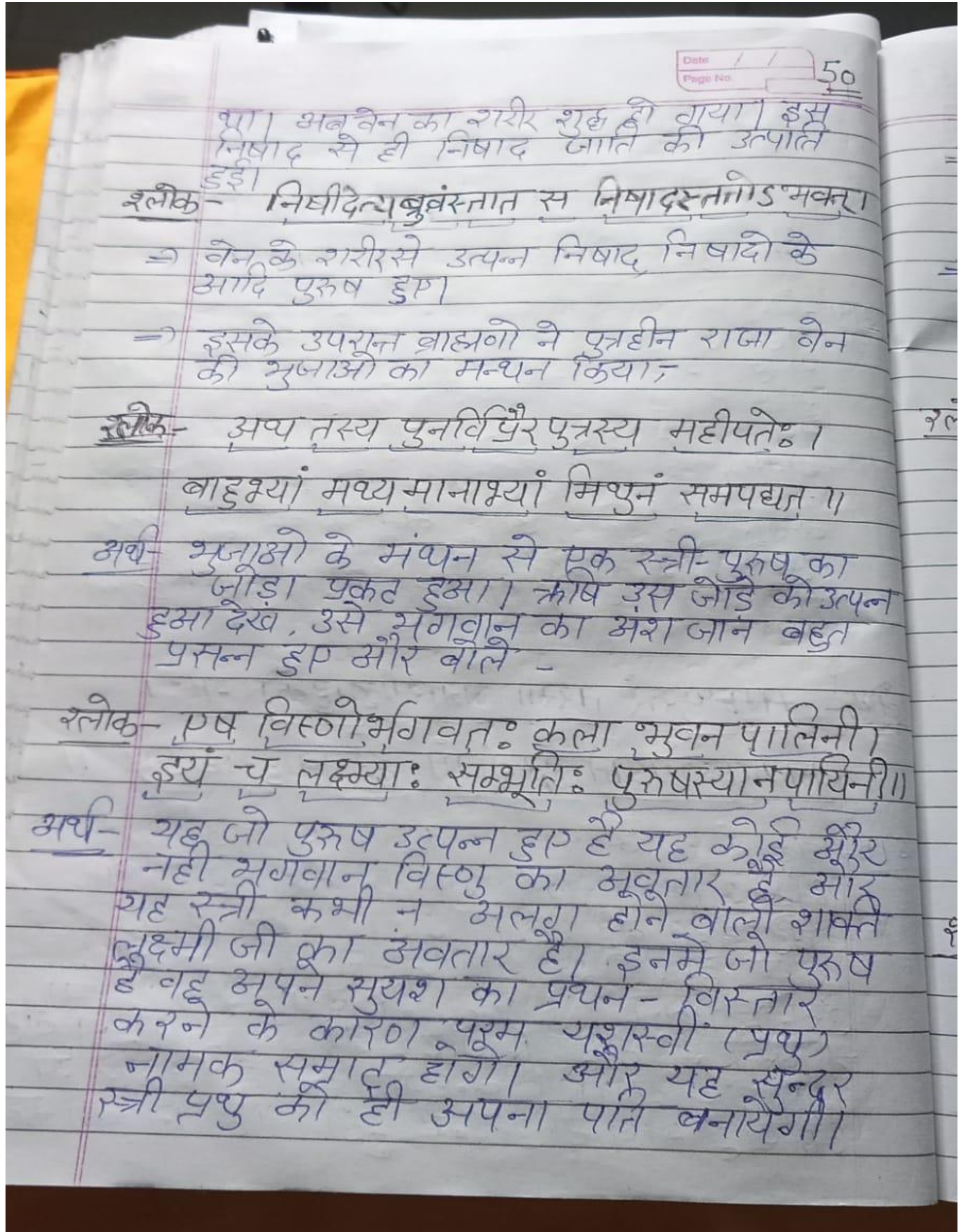
इस प्रकार अपने छिपे हुए क्रोध को प्रकट कर उन्होंने उसे मारने का निश्चय कर लिया।

श्लोक- इत्थं व्यवसिता हन्तुमृषयो रूढमन्यवः।
निजघ्नुर्हुङ्कृतैर्वेनं हतमच्युत निन्दया॥

अर्थ- वेन तो भगवान की निन्दा करने के कारण पहले ही मर चुका था, इसलिए केवल हुंकारों से ही उन्होंने उसका काम तमाम कर दिया। संतों के क्रोध भरे वचनों के हुंकार से ही वेन की मृत्यु हो गई। राजसिंहासन खाली हो, बाहरी लोग (शत्रु) राज्य पर आक्रमण करने लगे, यह देख मुनियों ने राज्य को बचाने के लिए, और वेन के वंश को आगे बढ़ाने के लिए मृत वेन के जांघ को बड़े जोर से मथा तो उसमें से एक बौना पुरुष उत्पन्न हुआ।

श्लोक- मथ्यमानादूरुं तरसा तत्रासीद्बाहुको नरः।
काककृष्णोऽतिह्रस्वांगो ह्रस्वबाहुर्महाहनुः॥

अर्थ- वह कौए के समान काला था; उसके सभी अंग और खासकर भुजाएँ बहुत छोटी थीं, जबड़े बहुत बड़े, टांगें छोटी, नाक चपटी, नेत्र लाल और केश तांबे के से रंग के थे। उसने ऋषियों से पूछा मैं क्या करूं? तो ऋषियों ने कहा (निषीद) बैठ जा, इसी से वह निषाद कहलाया। बन्धुओ वेन के शरीर से जो यह निषाद उत्पन्न हुआ यह वेन का कल्मष



50

था। अब वेन का शरीर शुद्ध हो गया। इस निषाद से ही निषाद जाति की उत्पत्ति हुई।

श्लोक- निषीदेत्यब्रुवंस्तात स निषादस्ततोऽभवत्।

=> वेन के शरीरसे उत्पन्न निषाद, निषादो के आदि पुरुष हुए।

=> इसके उपरान्त ब्राह्मणो ने पुत्रहीन राजा वेन की भुजाओ का मन्थन किया;

श्लोक- अथ तस्य पुनर्विप्रैरपुत्रस्य महीपतेः।
बाहुभ्यां मथ्यमानाभ्यां मिथुनं समपद्यत॥

अर्थ- भुजाओ के मंथन से एक स्त्री-पुरुष का जोड़ा प्रकट हुआ। ऋषि उस जोड़े को उत्पन्न हुआ देख, उसे भगवान का अंश जान बहुत प्रसन्न हुए और बोले -

श्लोक- एष विस्णोर्भगवतः कला भुवन पालिनी।
इयं च लक्ष्म्याः सम्भूतिः पुरुषस्यानपायिनी॥

अर्थ- यह जो पुरुष उत्पन्न हुए है यह कोई और नही भगवान विस्णु का अवतार है और यह स्त्री कभी न अलग होने वाली शक्ति लक्ष्मी जी का अवतार है। इनमे जो पुरुष है वह अपने सुयश का प्रथन- विस्तार करने के कारण परम यशस्वी (पृथु) नामक सम्राट होगा। और यह सुन्दर स्त्री पृथु को ही अपना पति बनायेगी।

Date / /
Page No 51

इसका नाम अर्चि होगा।

=> मैत्रेय मुनि विदुरजी से कहते है- ब्राह्मणो ने महाराज पृथु का राज्याभिषेक करके उन्हे प्रजा का रक्षक उद्घोषित किया।

=> एक दिन महाराज पृथु के पास आकर कहती है, महाराज पृथ्वी ने अन्न और समस्त रत्नो को अपने अन्दर छिपा लिया है, हम समस्त प्रजाजनो के शरीर काँटे होगए हैं।

श्लोक- प्रजा निरन्ने क्षितिपृष्ठ एत्य
क्षुत्क्षामदेहाः पतिमभ्यवोचन ॥

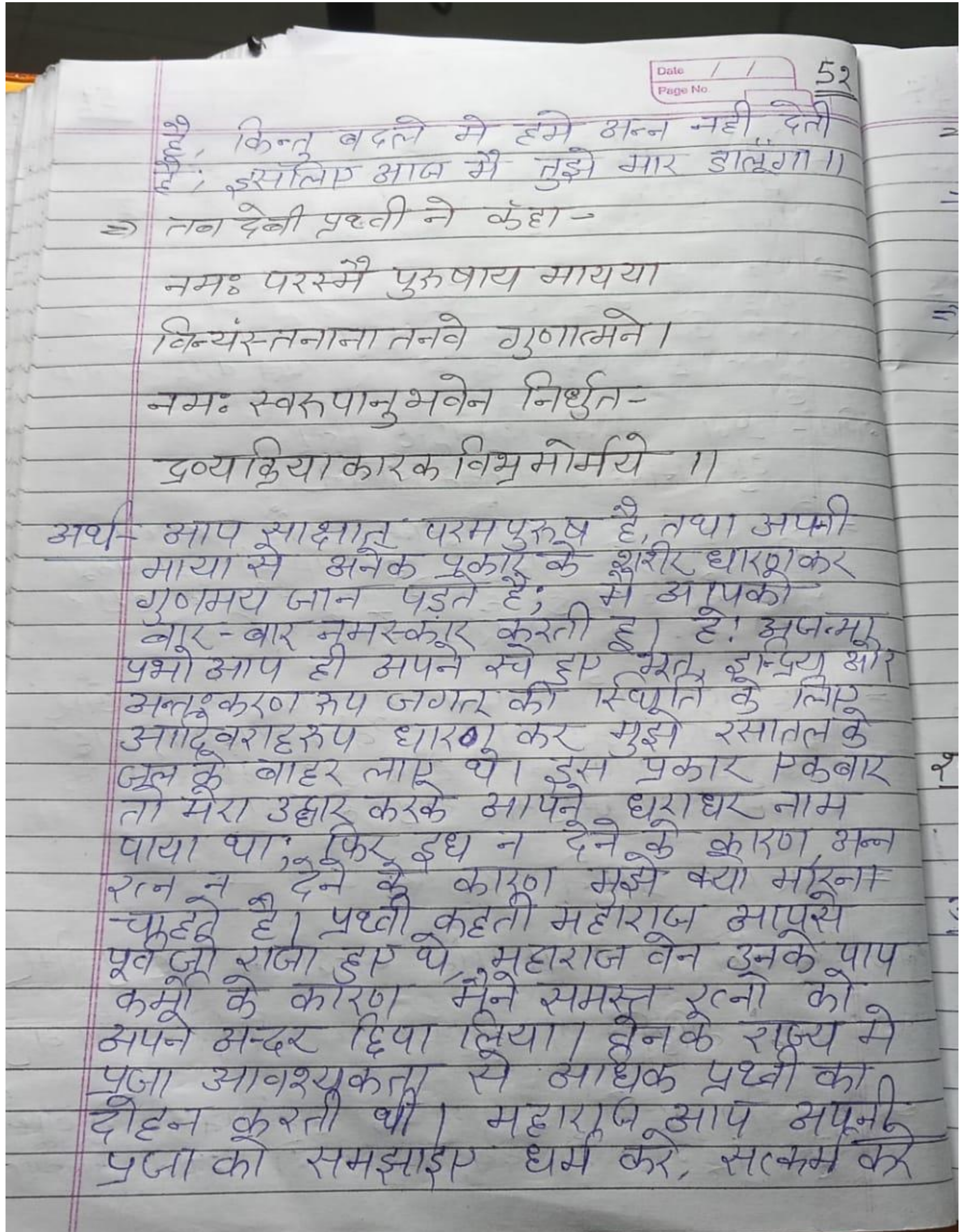
=> हे महाराज आप हमारे अन्नदाता है शरणागतो की रक्षा करने वाले है इसलिए हम आपकी शरण मे आए हुए हैं। हे प्रभु शीघ्र ही हमारे लिए अन्न की व्यवस्था कीजिए।

=> महाराज पृथु ने अपना धनुष बाण उठाया और पृथ्वी को लक्ष्य बनाकर बाण चढ़ाया, यह देख पृथ्वी काँपने लगी और पृथु महाराज के सामने हाथ जोड़कर खड़ी हो गई।

=> महाराज पृथु ने पृथ्वी से कहा —

श्लोक- वसुधे त्वां वधिष्यामि मच्छासन पराङ्मुखीम्।
भागं बर्हिषि या वृङ्क्ते न तनोति च नो वसु॥

=> पृथ्वी। तू मेरी आज्ञा का उल्लंघन करने वाली है। तू यज्ञ मे देवतारूप से भाग तो लेती



52

है, किन्तु बदले मे हमे अन्न नही देती है; इसलिए आज मै तुझे मार डालूँगा ॥

⇒ तब देवी प्रथ्वी ने कहा -

नमः परस्मै पुरुषाय मायया
विन्यस्तनानातनवे गुणात्मने ।
नमः स्वरूपानुभवेन निर्धुत-
द्रव्यक्रियाकारकविभ्रमोर्मये ॥

अर्थ- आप साक्षात् परमपुरुष है, तथा अपनी माया से अनेक प्रकार के शरीर धारण कर गुणमय जान पड़ते है; मै आपको बार-बार नमस्कार करती हूं। हे! अजन्मा प्रभो आप ही अपने रचे हुए भूत, इन्द्रिय और अन्तःकरण रुप जगत की स्थिति के लिए आदिवराहरुप धारण कर मुझे रसातल के जल से बाहर लाए थे। इस प्रकार एकबार तो मेरा उद्धार करके आपने धराधर नाम पाया था; फिर इध न देने के कारण, अन्न रत्न न देने के कारण मुझे क्या मारना चाहते है। प्रथ्वी कहती महाराज आपसे पूर्व जो राजा हुए थे, महाराज वेन उनके पाप कर्मो के कारण मैने समस्त रत्नो को अपने अन्दर छिपा लिया। वेन के राज्य मे प्रजा आवश्यकता से अधिक प्रथ्वी का दोहन करती थी। महाराज आप अपनी प्रजा को समझाइए धर्म करे, सत्कर्म करे

53

= आवश्यकता से अधिक मेरा दोहन न करें मैं पुनः अपने अन्दर छिपे रत्नों को देना
=> प्रारम्भ कर दूंगी। मैं गाय बनकर प्रकट हो जाती हूँ, आप अपनी प्रजा से कहो जिसको जो प्राप्त करना है वो मेरे पयोधर से प्राप्त कर ले।
=> भगवान पृथु ने सभी को आज्ञा दी देव, पितृ, दैत्य, मनुष्य जिसको जो चाहिए वो पृथ्वी का दोहन करके प्राप्त कर ले, सभी लोगों ने गाय रूप में खड़ी पृथ्वी का दोहन करके उसके पयोधर से, अन्न, बीज, रस, औषधि की प्राप्ति की। महाराज पृथु ने ही पृथ्वी को समतल करके कृषि के योग्य बनाया। इसलिए इसका नाम पृथ्वी पड़ा।

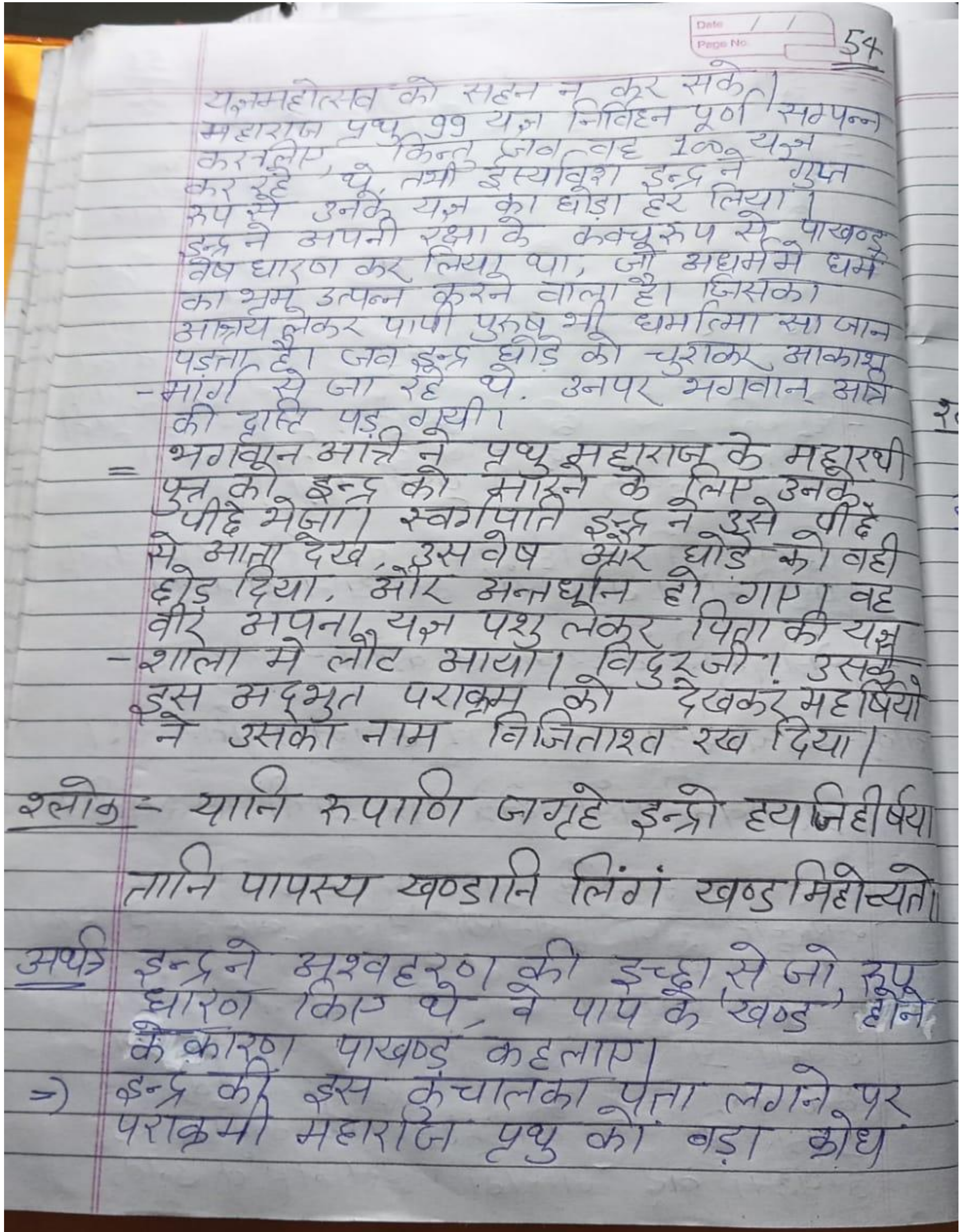
= जिसको जो चाहिए था, वह उसे प्रदान करके पृथ्वी माता वहाँ से अन्तर्धान हो गई।

= मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते - विदुर जी

श्लोक- अथादीक्षत राजा तु हयमेधशतेन सः।

ब्रह्मावर्ते मनोः क्षेत्रे यत्र प्राची सरस्वती॥

अर्थ- महाराज मनु के ब्रह्मावर्त क्षेत्र में, जहाँ सरस्वती नदी पूर्वमुखी होकर बहती है, राजा पृथु ने सौ अश्वमेध यज्ञों की दीक्षा ली। और पृथु महाराज ने अश्वमेध यज्ञ करना प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर भगवान इन्द्र को विचार हुआ कि इस प्रकार तो पृथु के कर्म मेरे कर्मों की अपेक्षा बढ़ जायेंगे। इसलिए वे उनके



54

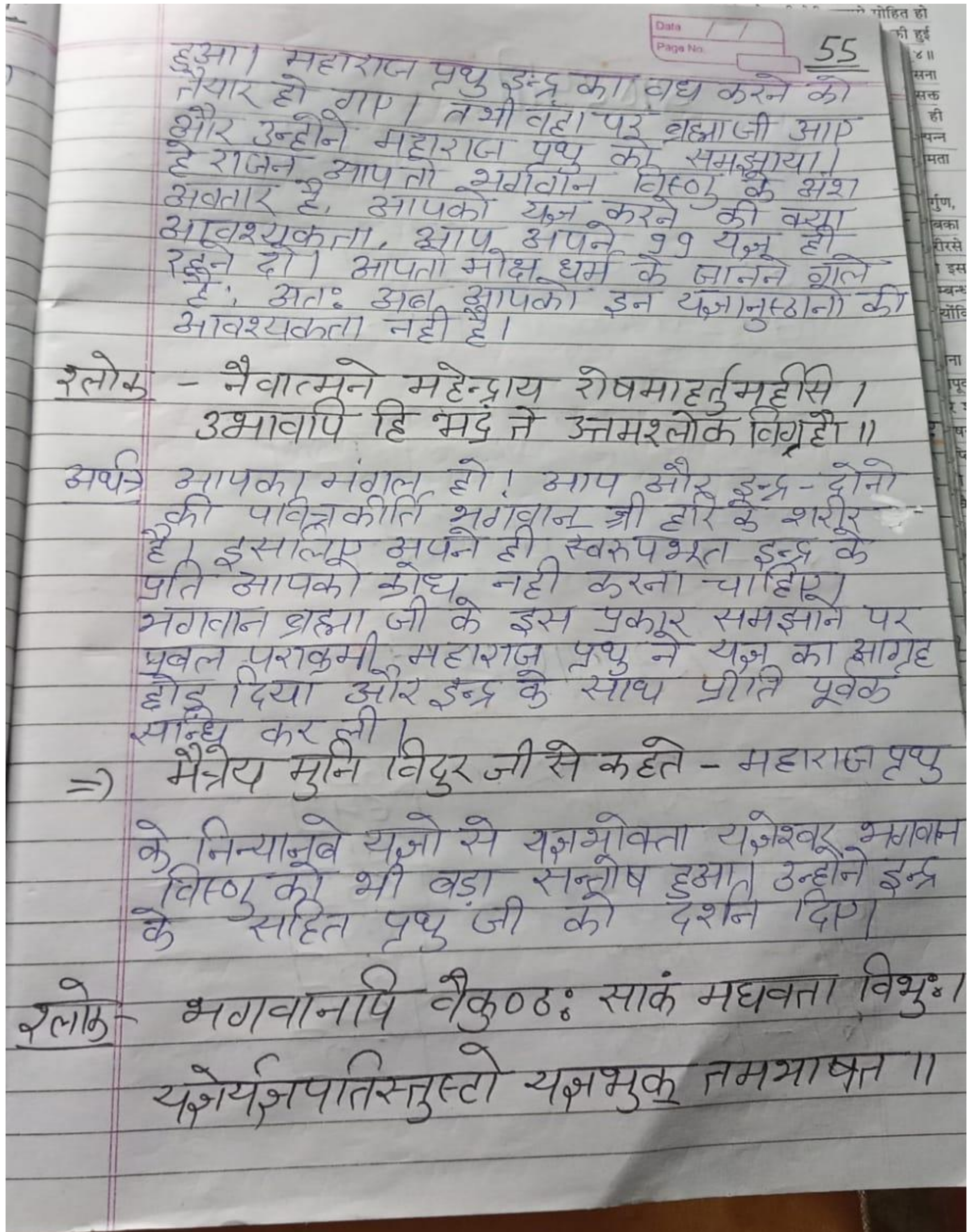
यज्ञमहोत्सव को सहन न कर सके।
महाराज पृथु 99 यज्ञ निर्विघ्न पूर्ण सम्पन्न
करलिए, किन्तु जब वह 100 यज्ञ
कर रहे थे, तभी ईर्ष्यावश इन्द्र ने गुप्त
रूप से उनके यज्ञ का घोड़ा हर लिया।
इन्द्र ने अपनी रक्षा के कवचरूप से पाखण्ड
वेष धारण कर लिया था, जो अधर्म मे धर्म
का भ्रम उत्पन्न करने वाला है। जिसका
आश्रय लेकर पापी पुरुष भी धर्मात्मा सा जान
पड़ता है। जब इन्द्र घोड़े को चुराकर आकाश
-मार्ग से जा रहे थे. उनपर भगवान अत्रि
की दृष्टि पड़ गयी।

= भगवान आत्री ने पृथु महाराज के महारथी
पुत्र को इन्द्र को मारने के लिए उनके
पीछे भेजा। स्वर्गपति इन्द्र ने उसे पीछे
से आता देख, उस वेष और घोड़े को वही
छोड़ दिया, और अन्तर्धान हो गए। वह
वीर अपना यज्ञ पशु लेकर पिता की यज्ञ
-शाला मे लौट आया। विदुरजी! उसके
इस अद्भुत पराक्रम को देखकर महर्षियो
ने उसका नाम विजिताश्व रख दिया।

श्लोक = यानि रूपाणि जगृहे इन्द्रो हयजिहीर्षया।
तानि पापस्य खण्डानि लिंगं खण्डमिहोच्यते॥

अर्थ = इन्द्र ने अश्वहरण की इच्छा से जो रूप
धारण किए थे, वे पाप के 'खण्ड' होने
के कारण पाखण्ड कहलाए।

=> इन्द्र की इस कुचाल का पता लगने पर
पराक्रमी महाराज पृथु को बड़ा क्रोध


55

हुआ। महाराज पृथु इन्द्र का वध करने को तैयार हो गए। तभी वहां पर ब्रह्माजी आए और उन्होंने महाराज पृथु को समझाया। हे राजन आप तो भगवान विष्णु के अंश अवतार है, आपको यज्ञ करने की क्या आवश्यकता, आप अपने 99 यज्ञ ही रहने दो। आपतो मोक्ष धर्म के जानने वाले है; अतः अब आपको इन यज्ञानुष्ठानो की आवश्यकता नही है।

श्लोक - नैवात्मने महेन्द्राय रोषमाहर्तुमर्हसि।
उभावपि हि भद्रं ते उत्तमश्लोक विग्रहौ॥

अर्थ - आपका मंगल हो! आप और इन्द्र - दोनो की पवित्रकीर्ति भगवान श्री हरि के शरीर है। इसलिए अपने ही स्वरुपभूत इन्द्र के प्रति आपको क्रोध नही करना चाहिए। भगवान ब्रह्मा जी के इस प्रकार समझाने पर प्रबल पराक्रमी महाराज पृथु ने यज्ञ का आग्रह छोड़ दिया और इन्द्र के साथ प्रीति पूर्वक सन्धि कर ली।

=) मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते - महाराज पृथु के निन्यानबे यज्ञो से यज्ञभोक्ता यज्ञेश्वर भगवान विष्णु को भी बड़ा सन्तोष हुआ। उन्होंने इन्द्र के सहित पृथु जी को दर्शन दिए।

श्लोक - भगवानपि वैकुण्ठः साकं मघवता विभुः।
यज्ञैर्यज्ञपतिस्तुष्टो यज्ञभुक् तमभाषत॥

श्री भगवान् ने कहा - राजन् ! (इन्द्र) ने तुम्हारे सौ अश्वमेध पूरे करने में विघ्न डाला है। अब ये तुमसे क्षमा चाहते हैं, तुम इन्हें क्षमा कर दो। भगवान श्री हरि के इस प्रकार कहने पर महाराज पृथु ने इन्द्र को हृदय से लगा लिया और मनोमालिन्य निकाल दिया। इसके उपरान्त महाराज पृथु ने भगवान का पूजन किया।

⇒ श्री भगवान पृथु जी से बोले मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूं, तुम्हारे गुणों और स्वभाव ने मुझको वश में कर लिया है। अतः तुम्हें जो इच्छा हो मुझसे वर मांग लो। तब पृथु महाराज ने नारायण से कहा है प्रभो -

श्लोक - न कामये नाथ तदप्यहं क्वचिन्-
न यत्र युष्मच्चरणाम्बुजासवः ।
महत्तमान्तर्हृदयान्मुखच्युतो
विधत्स्व कर्णायुतमेष मे वरः ॥

अर्थ - मेरी यही प्रार्थना है कि आप मुझे दस हजार कान दे दीजिए, जिनसे मैं आपके लीलागुणों को सुनता रहूं। हे प्रभो! आपके चरणकमल मकरन्द रूपी अमृत-कणों को लेकर महापुरुषों के मुख से जो वायु निकलती है, उसी में इतनी शक्ति होती है, कि वह तत्व को भूले हुए हम कुयोगियों को पुनः तत्वज्ञान करा देती है। अतएव हमें दूसरे वरों की कोई आवश्यकता नहीं है।

57

⇒ मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते -

इस प्रकार भगवान ने राजर्षि पृथु के सारगर्भित वचनो का आदर किया। इसके उपरान्त भगवान वहा से अन्तर्ध्यान हो गए।

⇒ एक समय की बात महाराज पृथु अपनी प्रजा के मध्य उपस्थित थे प्रजाजन परमपराक्रमी पृथ्वीपाल पृथु की प्रार्थना कर रहे थे।

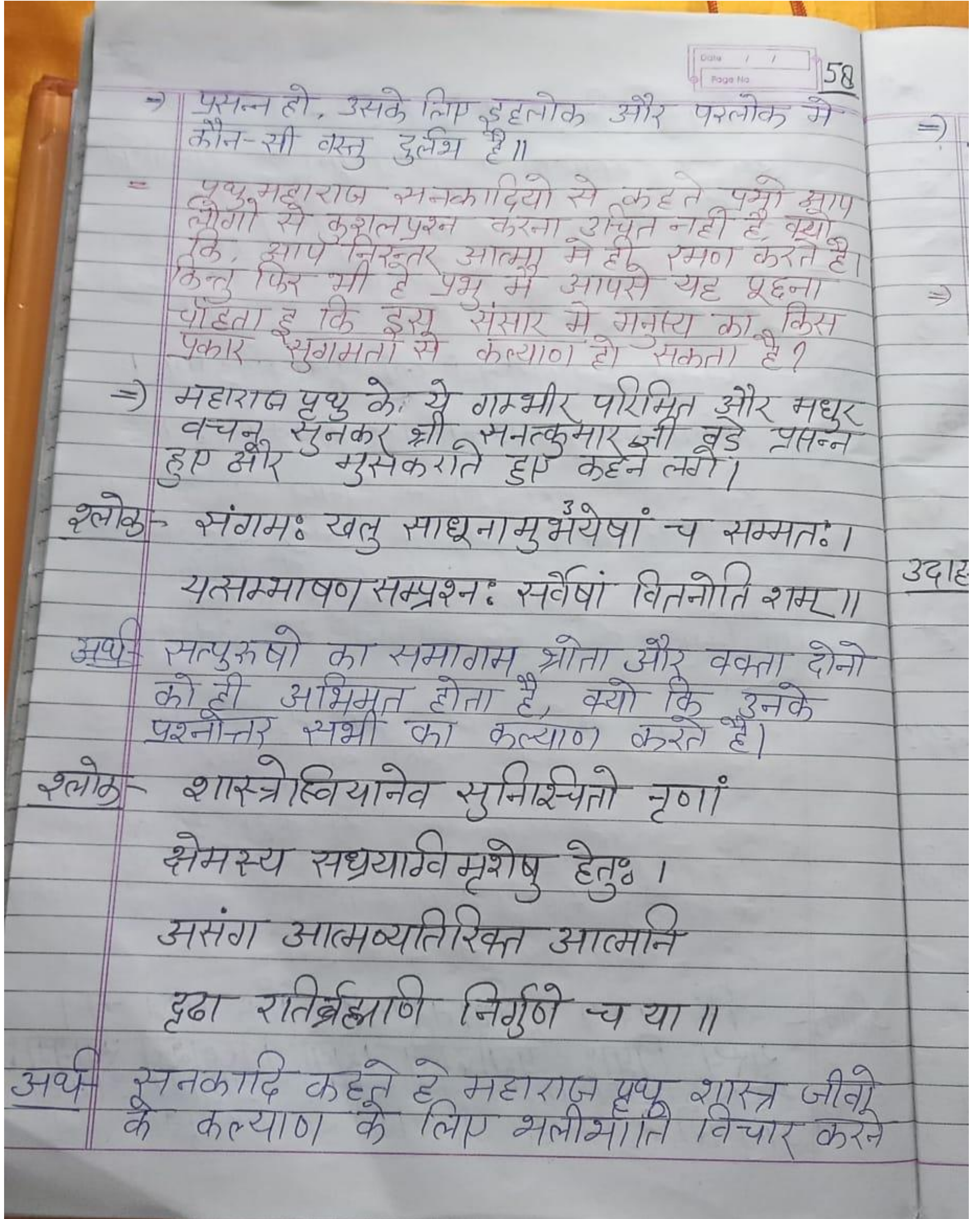
श्लोक- जनेषु प्रगृणत्स्वेवं पृथुं पृथुलविक्रमम्।
तत्रोपजग्मुर्मुनयश्चत्वारः सूर्यवर्चसः ॥

अर्थ- उसी समय वहा सूर्य के समान तेजस्वी चार मुनीश्वर आए। राजा और उनके अनचरो ने देखा तथा पहचान लिया कि वे सिद्धेश्वर अपनी दिव्य कान्ति से सम्पूर्ण लोको को पापनिर्मुक्त करते हुए आकाश से उतरकर आ रहे है।

⇒ महाराज पृथु ने सनकादियो का स्वागत किया पूजन किया, उनके चरणो को धोकर उनके चरणोदक को अपने सिर के बालो पर छिड़का इसके उपरान्त सनत्कुमारो से कहा मंगलमूर्ति मुनीश्वरो आपके दर्शन तो योगियो को भी दुर्लभ है; मुझसे ऐसा क्या पुण्य बना है, जिससे स्वतः आपका दर्शन प्राप्त हुआ।

श्लोक- किं तस्य दुर्लभतरमिह लोके परत्र च।
यस्य विप्राः प्रसीदन्ति शिवो विष्णुश्च सानुगाः।

अर्थ- महाराज पृथु कहते है, जिस पर ब्राह्मण अथवा अनुचरो के सहित श्री शंकर या विष्णु भगवान



58

=> प्रसन्न हो, उसके लिए इहलोक और परलोक मे कौन-सी वस्तु दुर्लभ है॥

= पृथु महाराज सनकादियो से कहते प्रभो आप लोगो से कुशलप्रश्न करना उचित नही है क्यो कि, आप निरन्तर आत्मा मे ही रमण करते है। किन्तु फिर भी हे प्रभु मैं आपसे यह पूछना चाहता हू कि इस संसार मे मनुष्य का किस प्रकार सुगमता से कल्याण हो सकता है?

=> महाराज पृथु के ये गम्भीर परिमित और मधुर वचन सुनकर श्री सनत्कुमार जी बड़े प्रसन्न हुए और मुसकराते हुए कहने लगे।

श्लोक- संगमः खलु साधूनामुभयेषां च सम्मतः।
यत्सम्भाषणसम्प्रश्नः सर्वेषां वितनोति शम्॥

अर्थ- सत्पुरूषो का समागम श्रोता और वक्ता दोनो को ही अभिमत होता है, क्यो कि उनके प्रश्नोत्तर सभी का कल्याण करते है।

श्लोक- शास्त्रेष्वियानेव सुनिश्चितो नृणां
क्षेमस्य सध्र्यग्विमृशेषु हेतुः।
असंग आत्मव्यतिरिक्त आत्मनि
दृढा रतिर्ब्रह्मणि निर्गुणे च या॥

अर्थ- सनकादि कहते हे महाराज पृथु शास्त्र जीवो के कल्याण के लिए भलीभाँति विचार करने

58

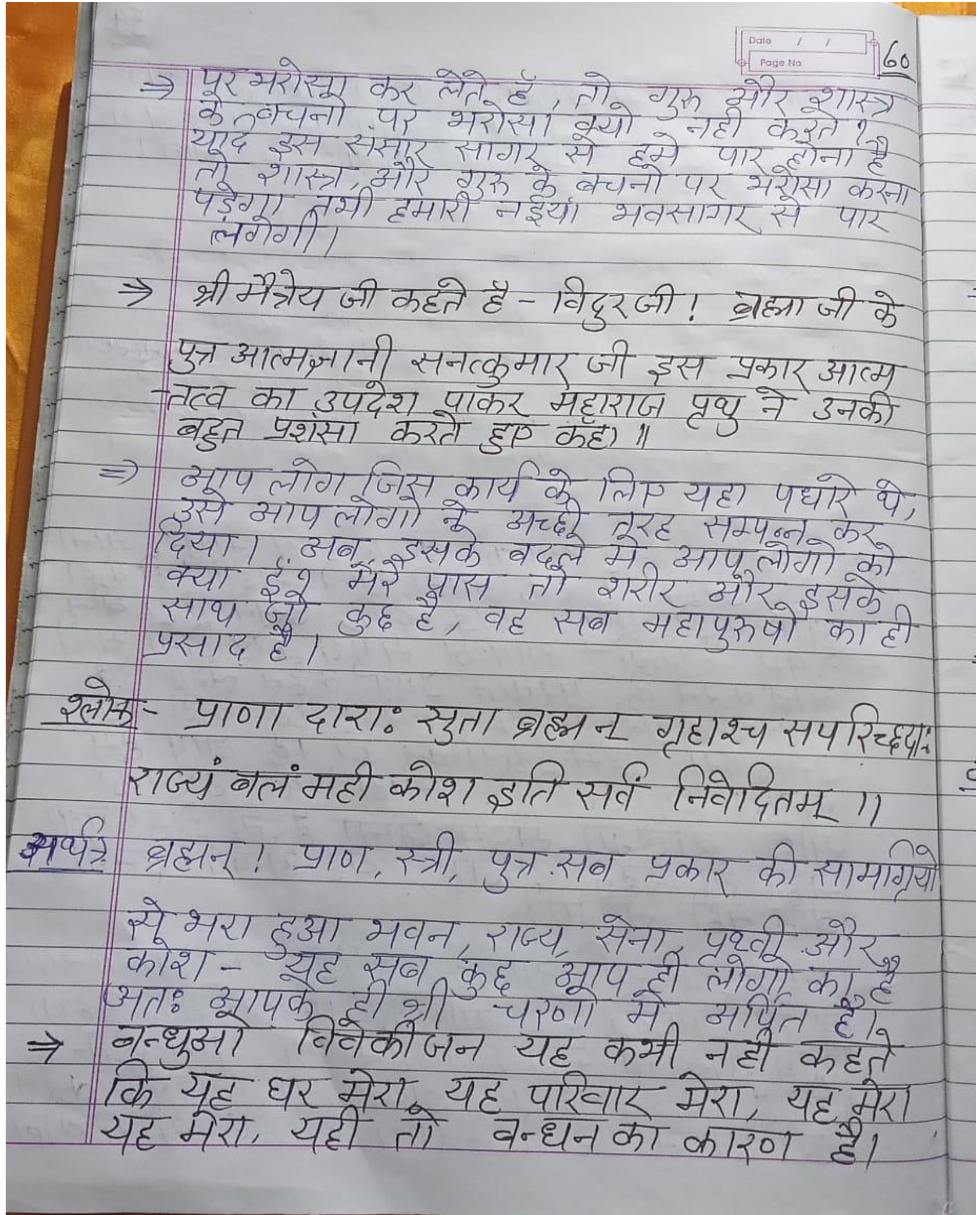
Date / / Page No 59

⇒ वाले है, उनमे आत्मा से भिन्न देहादि के प्रति वैराग्य तथा अपने आत्मस्वरुप निर्गुण ब्रह्म मे सुदृढ़ अनुराग होना - यही कल्याण का साधन निश्चित किया गया है।

⇒ सनकादि पृथु जी से कहते राजन - शास्त्रो का यह भी कहना है कि गुरु और शास्त्र के वचनो मे विश्वास रखना चाहिए, एवं उनके बताए हुए मार्गो का अनुसरण करना चाहिए किन्तु विडंबना इस बात की है कि आज का मनुष्य डॉक्टर पर तो आंख बंद कर के भरोसा कर लेता है किन्तु शास्त्र के वचनो और गुरु पर भरोसा नही करता।

उदाहरण - मान लीजिए आपको वृन्दावन से मथुरा जाना है आप ने एक ऑटो वाले भईया से कहा आप मुझे मथुरा छोड़ देगो, उसने कहा बीस रुपए लगेगो, आपको मथुरा छोड़ देगो सारी बात करने के पश्चात आप कहने लगो कि भईया मथुरा मे ही उतारेगो कि कही और उतार देगो, हमे लिखित दो कि आप हमे मथुरा ही उतारेगो, ऑटो वाला आपको सीधा बोलेगा मैडम जाना है तो बैठ जाइए नही तो रहने दीजिए, वह आपकी इतनी बात नही सुनेगा।

⇒ तो भईयां यदि आपको ऑटो वाले पर विश्वास है तो आपको वो आपके गन्तव्य तक पहुंचा देगा अन्यथा नही, कहने का भाव इतना सा है कि जब आप डॉक्टर पर भरोसा करके उसे अपना शरीर सौप देते है ऑटो वाले



60

⇒ पूरा भरोसा कर लेते हैं, तो गुरु और शास्त्र के वचनों पर भरोसा क्यों नहीं करते? यदि इस संसार सागर से हमें पार होना है तो शास्त्र और गुरु के वचनों पर भरोसा करना पड़ेगा तभी हमारी नईया भवसागर से पार लगेगी।

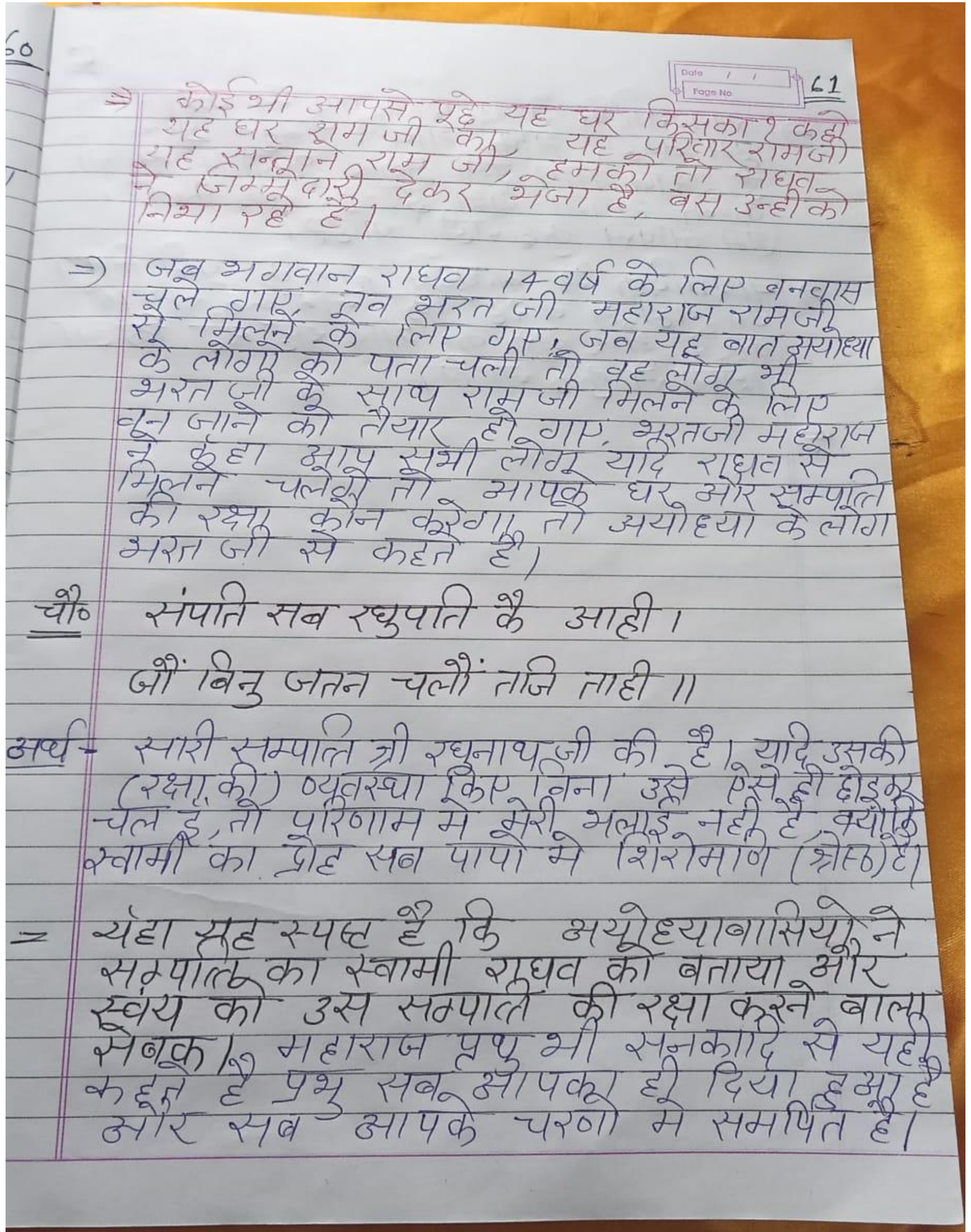
⇒ श्री मैत्रेय जी कहते हैं - विदुर जी! ब्रह्मा जी के पुत्र आत्मज्ञानी सनत्कुमार जी इस प्रकार आत्म तत्व का उपदेश पाकर महाराज पृथु ने उनकी बहुत प्रशंसा करते हुए कहा॥

⇒ आप लोग जिस कार्य के लिए यहां पधारे थे, उसे आप लोगों ने अच्छी तरह सम्पन्न कर दिया। अब इसके बदले में आप लोगों को क्या दूँ? मेरे पास तो शरीर और इसके साथ जो कुछ है, वह सब महापुरुषों का ही प्रसाद है।

श्लोक - प्राणा दाराः सुता ब्रह्मन् गृहाश्च सपरिच्छदाः
राज्यं बलं मही कोश इति सर्वं निवेदितम् ॥

अर्थ - ब्रह्मन्! प्राण, स्त्री, पुत्र सब प्रकार की सामग्रियों से भरा हुआ भवन, राज्य, सेना, पृथ्वी और कोश - यह सब कुछ आप ही लोगों का है अतः आपके ही श्री चरणों में अर्पित है।

⇒ बन्धुओं विवेकीजन यह कभी नहीं कहते कि यह घर मेरा, यह परिवार मेरा, यह मेरा यह मेरा, यही तो बन्धन का कारण है।



61

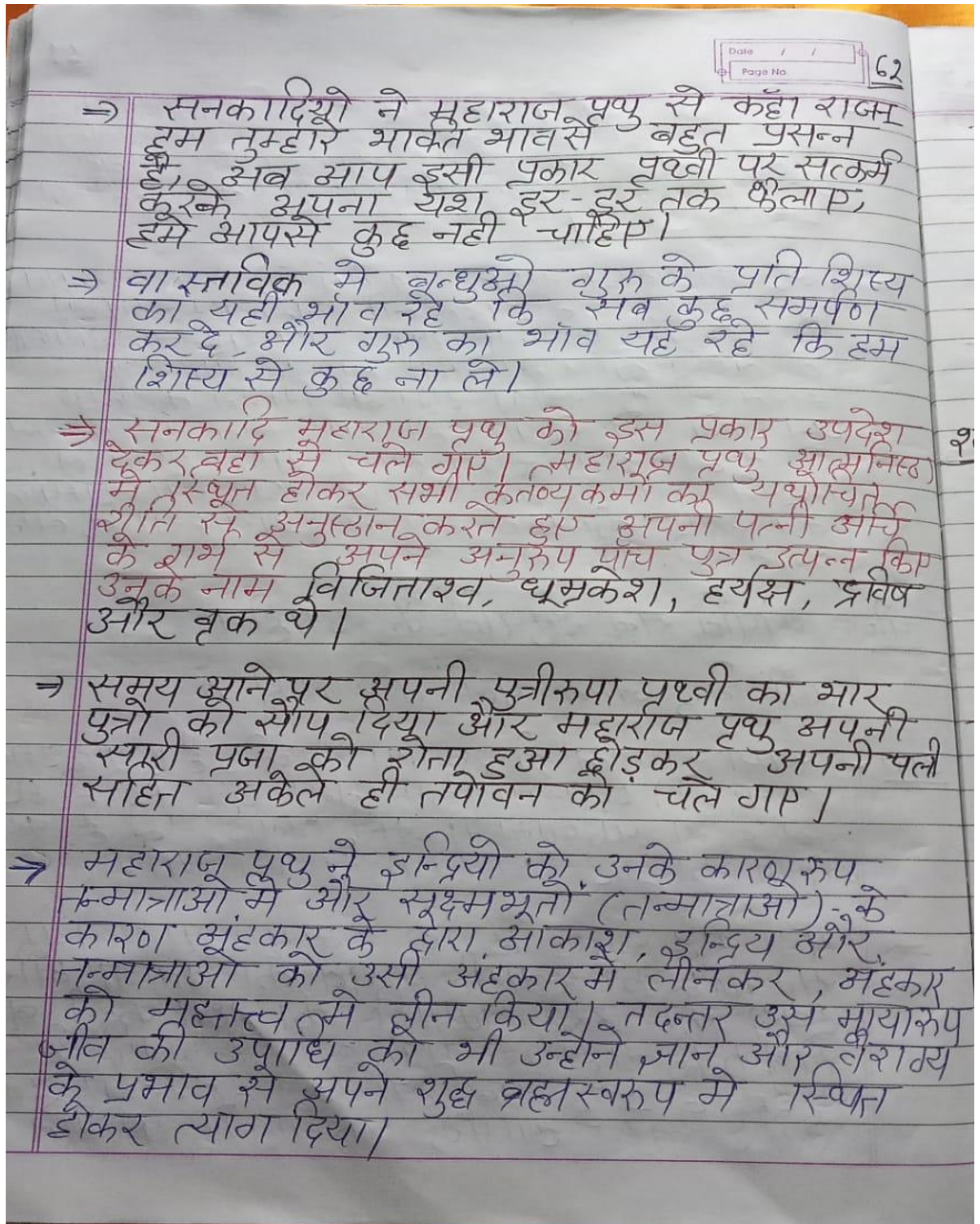
⇒ कोई भी आपसे पूछे यह घर किसका ? कहो यह घर राम जी का, यह परिवार रामजी यह सन्तान राम जी, हमको तो राघव ने जिम्मेदारी देकर भेजा है, बस उन्हीको निभा रहे है।

⇒ जब भगवान राघव 14 वर्ष के लिए बनवास चले गए, तब भरत जी महाराज रामजी से मिलने के लिए गए, जब यह बात अयोध्या के लोगों को पता चली तो वह लोग भी भरत जी के साथ राम जी मिलने के लिए वन जाने को तैयार हो गए, भरतजी महाराज ने कहा आप सभी लोग यदि राघव से मिलने चलोगे तो आपके घर और सम्पत्ति की रक्षा कौन करेगा, तो अयोध्या के लोग भरत जी से कहते है।

**चौ०** संपति सब रघुपति कै आही।
जौं बिनु जतन चलौं तजि ताही ॥

**अर्थ**- सारी सम्पत्ति श्री रघुनाथ जी की है। यदि उसकी (रक्षा की) व्यवस्था किए बिना उसे ऐसे ही छोड़कर चल दूं, तो परिणाम मे मेरी भलाई नही है, क्योंकि स्वामी का द्रोह सब पापो मे शिरोमणि (श्रेष्ठ) है।

⇒ यहा यह स्पष्ट है कि अयोध्यावासियो ने सम्पत्ति का स्वामी राघव को बताया और स्वयं को उस सम्पत्ति की रक्षा करने वाला सेवक। महाराज पृथु भी सनकादि से यही कहते है प्रभु सब आपका ही दिया हुआ है और सब आपके चरणो मे समर्पित है।



62

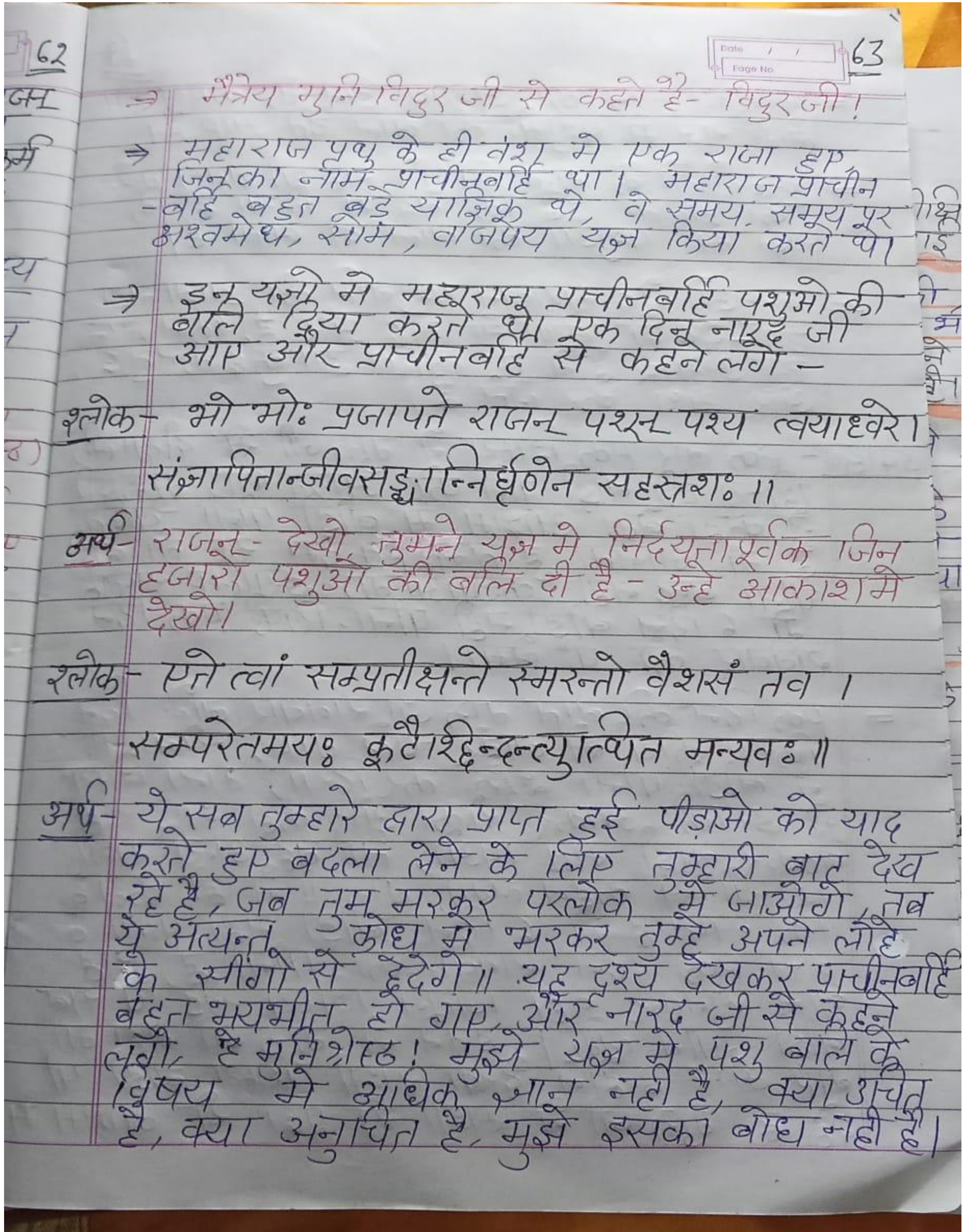
⇒ सनकादियो ने महाराज पृथु से कहा राजन हम तुम्हारे भक्ति भाव से बहुत प्रसन्न है, अब आप इसी प्रकार पृथ्वी पर सत्कर्म करके अपना यश दूर-दूर तक फैलाए, हमे आपसे कुछ नही चाहिए।

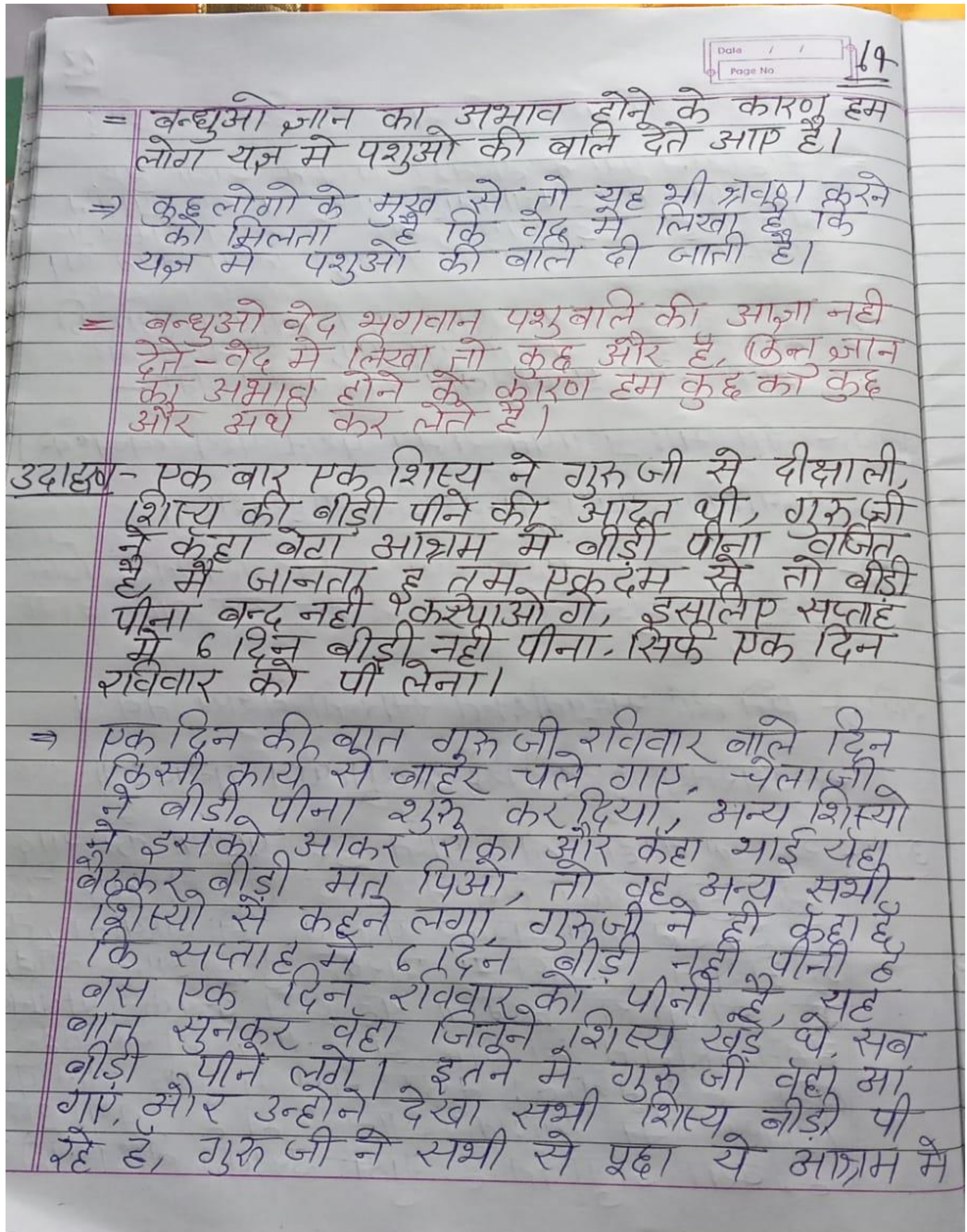
⇒ वास्तविक मे बन्धुओ गुरु के प्रति शिष्य का यही भाव रहे कि सब कुछ समर्पित कर दे और गुरु का भाव यह रहे कि हम शिष्य से कुछ ना ले।

⇒ सनकादि महाराज पृथु को इस प्रकार उपदेश देकर वहा से चले गए। महाराज पृथु आत्मनिष्ठ मे स्थित होकर सभी कर्तव्य कर्मो का यथोचित रीति से अनुष्ठान करते हुए अपनी पत्नी अर्चि के गर्भ से अपने अनुरूप पांच पुत्र उत्पन्न किए उनके नाम विजिताश्व, धूम्रकेश, हर्यक्ष, द्रविण और वृक थे।

⇒ समय आने पर अपनी पुत्रीरुपा पृथ्वी का भार पुत्रो को सौंप दिया और महाराज पृथु अपनी सारी प्रजा को रोता हुआ छोड़कर अपनी पत्नी सहित अकेले ही तपोवन को चले गए।

⇒ महाराज पृथु ने इन्द्रियो को उनके कारणरुप तन्मात्राओ मे और सूक्ष्मभूतों (तन्मात्राओ) के कारण अहंकार के द्वारा आकाश, इन्द्रिय और तन्मात्राओ को उसी अहंकार मे लीन कर, अहंकार को महत्त्व मे लीन किया। तदन्तर उस मायारुप जीव की उपाधि को भी उन्होने ज्ञान और वैराग्य के प्रभाव से अपने शुद्ध ब्रह्मस्वरुप मे स्थित होकर त्याग दिया।


63
⇒ मैत्रेय मुनि विदुर जी से कहते है- विदुर जी!
⇒ महाराज पृथु के ही वंश मे एक राजा हुए जिनका नाम प्राचीनबर्हि था। महाराज प्राचीन-बर्हि बहुत बड़े याज्ञिक थे, वे समय समय पर अश्वमेध, सोम, वाजपेय यज्ञ किया करते थे।
⇒ इन यज्ञो मे महाराज प्राचीनबर्हि पशुओ की बलि दिया करते थे। एक दिन नारद जी आए और प्राचीनबर्हि से कहने लगे -
श्लोक- भो भोः प्रजापते राजन् पशून् पश्य त्वयाध्वरे।
संज्ञापितान्जीवसङ्घान्निर्घृणेन सहस्रशः ॥
अर्थ- राजन्- देखो, तुमने यज्ञ मे निर्दयतापूर्वक जिन हजारो पशुओ की बलि दी है - उन्हे आकाश मे देखो।
श्लोक- एते त्वां सम्प्रतीक्षन्ते स्मरन्तो वैशसं तव ।
सम्परेतमयः कूटैश्छिन्दन्त्युत्थितमन्यवः ॥
अर्थ- ये सब तुम्हारे द्वारा प्राप्त हुई पीड़ाओ को याद करते हुए बदला लेने के लिए तुम्हारी बाट देख रहे है, जब तुम मरकर परलोक मे जाओगे, तब ये अत्यन्त क्रोध मे भरकर तुम्हे अपने लोहे के सींगो से छेदेंगे॥ यह दृश्य देखकर प्राचीनबर्हि बहुत भयभीत हो गए, और नारद जी से कहने लगे, हे मुनिश्रेष्ठ! मुझे यज्ञ मे पशु बलि के विषय मे अधिक ज्ञान नही है, क्या उचित है, क्या अनुचित है, मुझे इसका बोध नही है।



Date / / Page No 17

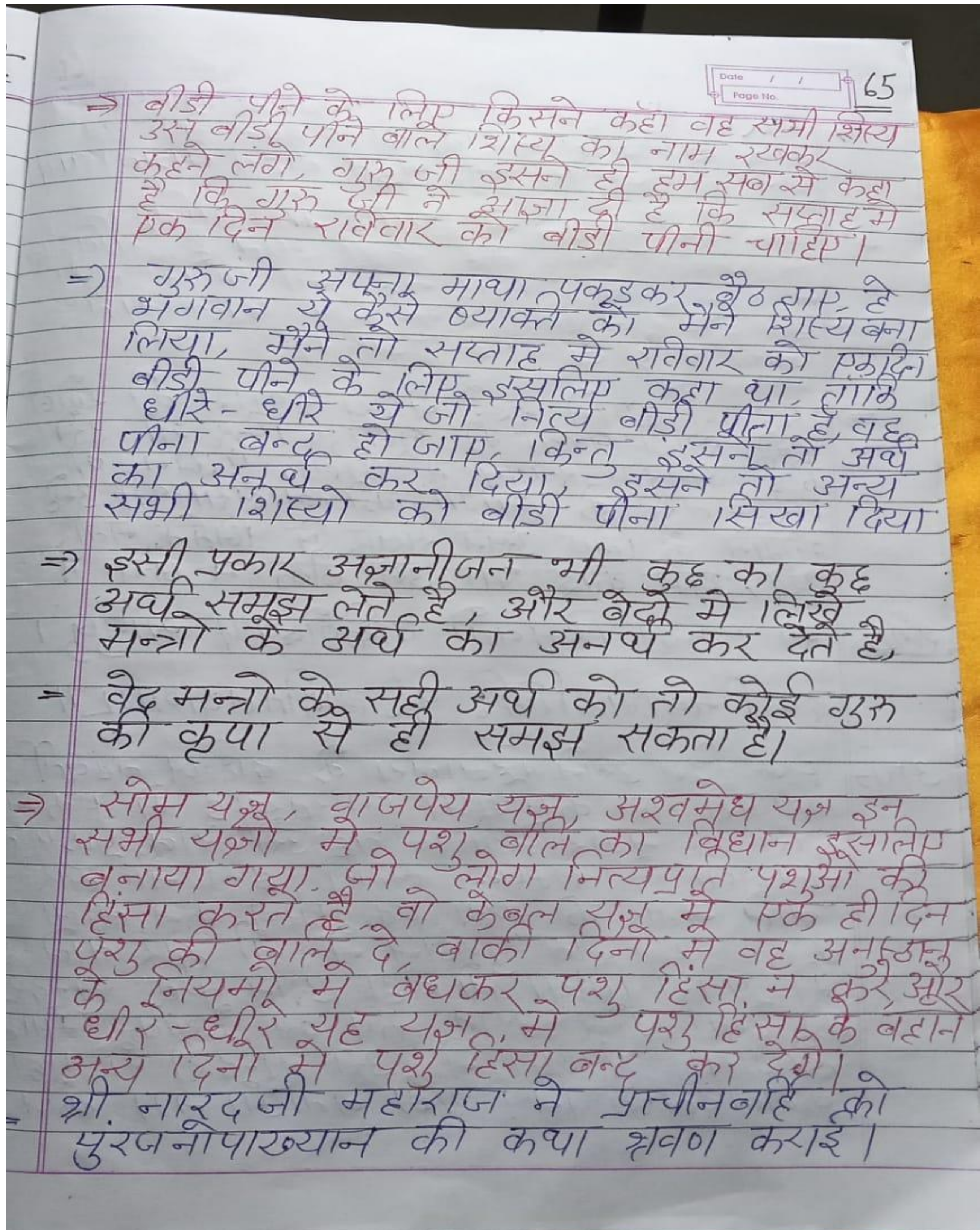
= बन्धुओ ज्ञान का अभाव होने के कारण हम लोग यज्ञ मे पशुओ की बलि देते आए है।

=> कुछ लोगो के मुख से तो यह भी श्रवण करने को मिलता है कि वेद मे लिखा है कि यज्ञ मे पशुओ की बलि दी जाती है।

= बन्धुओ वेद भगवान पशुबलि की आज्ञा नही देते - वेद मे लिखा तो कुछ और है, किन्तु ज्ञान का अभाव होने के कारण हम कुछ का कुछ और अर्थ कर लेते है।

उदाहरण - एक बार एक शिष्य ने गुरु जी से दीक्षा ली, शिष्य को बीड़ी पीने की आदत थी, गुरुजी ने कहा बेटा आश्रम मे बीड़ी पीना वर्जित है, मैं जानता हू तुम एकदम से तो बीड़ी पीना बन्द नही कर पाओगे, इसलिए सप्ताह मे 6 दिन बीड़ी नही पीना, सिर्फ एक दिन रविवार को पी लेना।

=> एक दिन की बात गुरु जी रविवार वाले दिन किसी कार्य से बाहर चले गए, चेलाजी ने बीड़ी पीना शुरु कर दिया, अन्य शिष्यो ने इसको आकर रोका और कहा भाई यहा बैठकर बीड़ी मत पिओ, तो वह अन्य सभी शिष्यो से कहने लगा, गुरुजी ने ही कहा है कि सप्ताह मे 6 दिन बीड़ी नही पीनी है बस एक दिन रविवार को पीनी है, यह बात सुनकर वहा जितने शिष्य खड़े थे, सब बीड़ी पीने लगे। इतने मे गुरु जी वहा आ गए, और उन्होने देखा सभी शिष्य बीड़ी पी रहे है, गुरु जी ने सभी से पूछा ये आश्रम मे



Date / / Page No. 65

=> बीड़ी पीने के लिए किसने कहा वह सभी शिष्य उस बीड़ी पीने वाले शिष्य का नाम रखकर कहने लगे, गुरु जी इसने ही हम सब से कहा है कि गुरु जी ने आज्ञा दी है कि सप्ताह मे एक दिन रविवार को बीड़ी पीनी चाहिए।

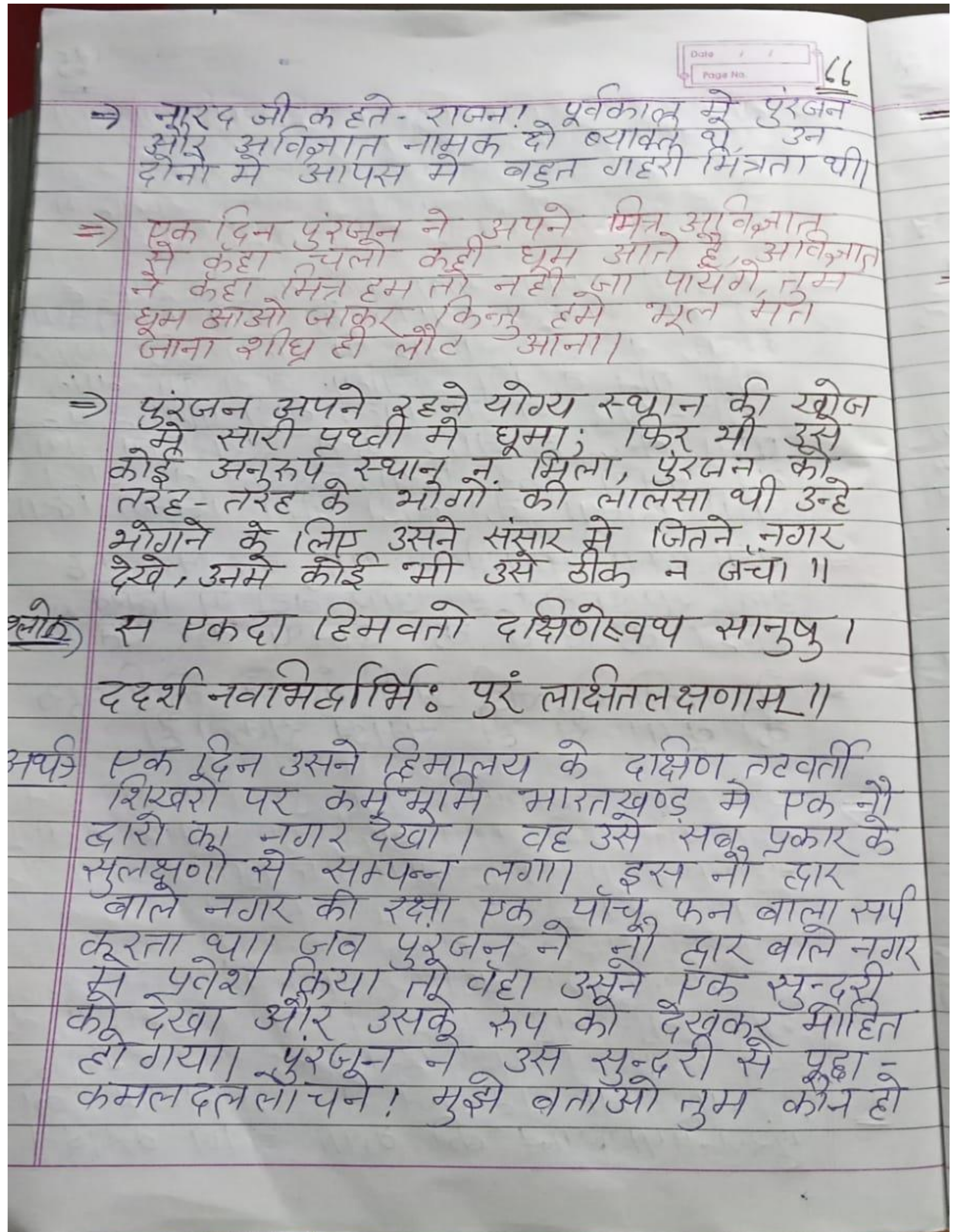
=> गुरु जी अपना माथा पकड़कर बैठ गए, हे भगवान ये कैसे व्यक्ति को मैने शिष्य बना लिया, मैंने तो सप्ताह मे रविवार को एक दिन बीड़ी पीने के लिए इसलिए कहा था, ताकि धीरे-धीरे ये जो नित्य बीड़ी पीता है, वह पीना बन्द हो जाए, किन्तु इसने तो अर्थ का अनर्थ कर दिया, इसने तो अन्य सभी शिष्यो को बीड़ी पीना सिखा दिया

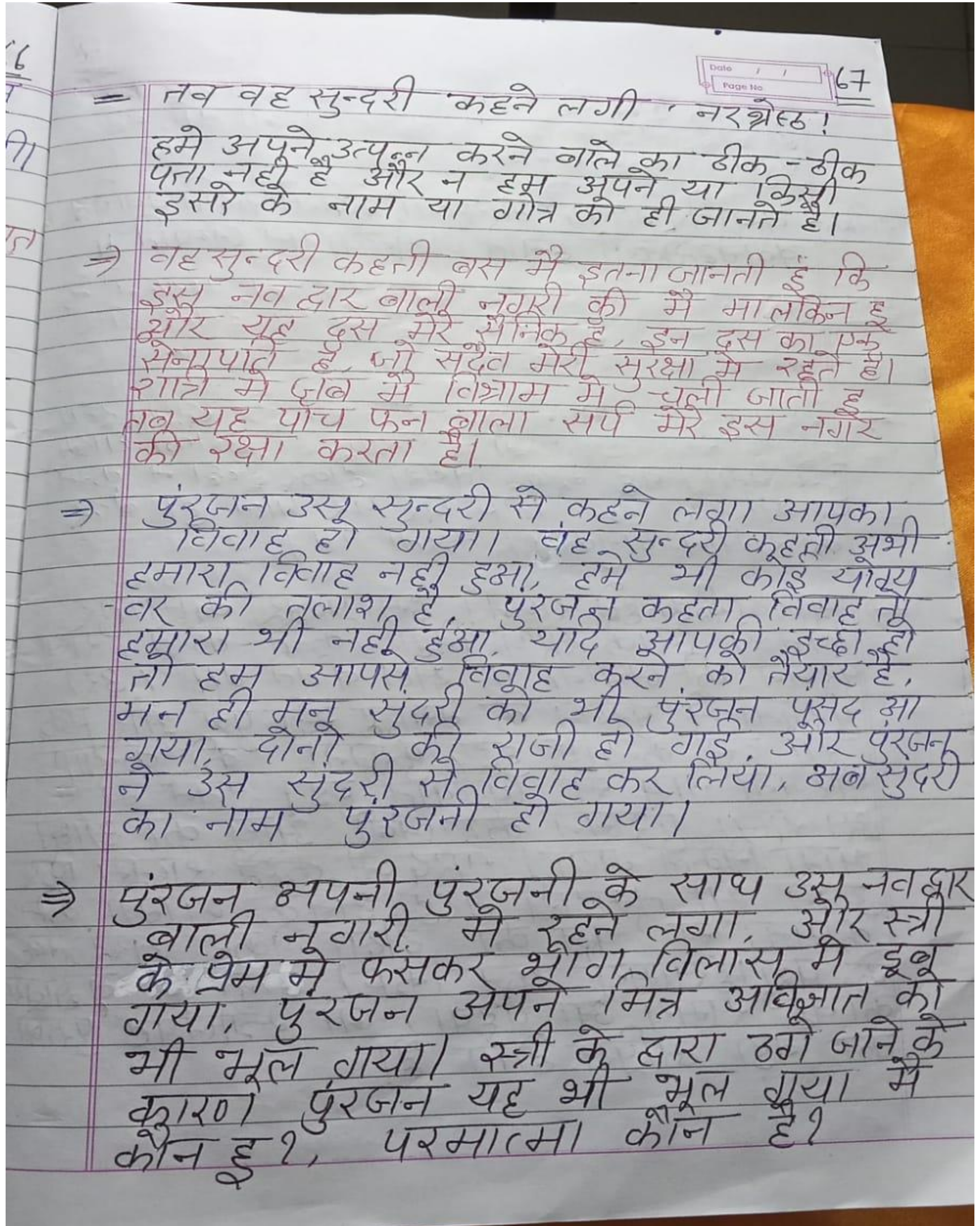
=> इसी प्रकार अज्ञानीजन भी कुछ का कुछ अर्थ समझ लेते है, और वेदो मे लिखे मन्त्रो के अर्थ का अनर्थ कर देते है,

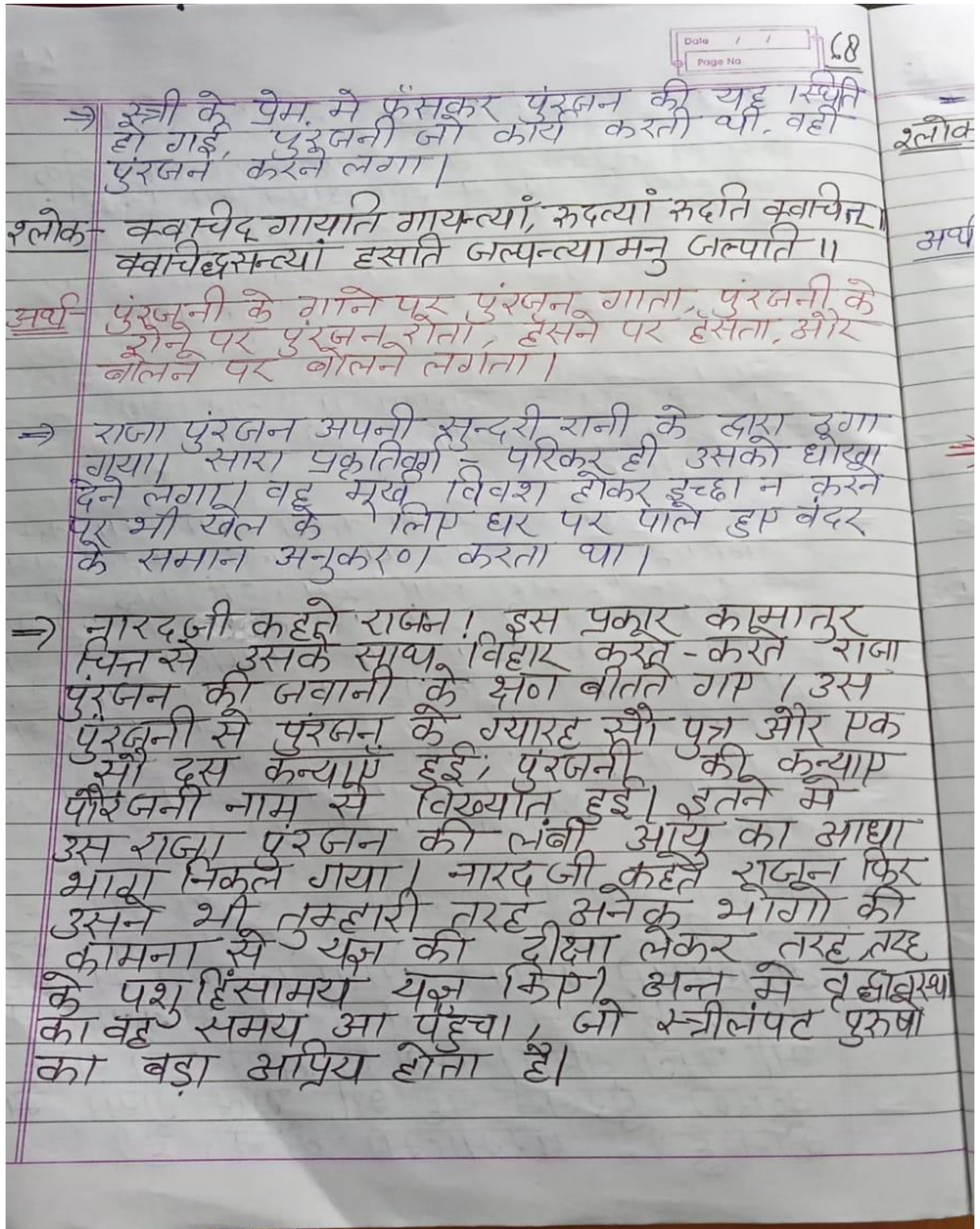
= वेद मन्त्रो के सही अर्थ को तो कोई गुरु की कृपा से ही समझ सकता है।

=> सोम यज्ञ, वाजपेय यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ इन सभी यज्ञो मे पशु बलि का विधान इसलिए बनाया गया जो लोग नित्यप्रति पशुओं की हिंसा करते है वो केवल यज्ञ मे एक ही दिन पशु की बलि दे, बाकी दिनो मे वह अनुष्ठान के नियमो मे बंधकर पशु हिंसा न करें और धीरे-धीरे यह यज्ञ मे पशु हिंसा के बहाने अन्य दिनो से पशु हिंसा बन्द कर देंगे।

= श्री नारद जी महाराज ने प्राचीनबर्हि को पुरंजनोपाख्यान की कथा श्रवण कराई।


66
⇒ नारद जी कहते- राजन! पूर्वकाल मे पुरंजन और अविज्ञात नामक दो व्यक्ति थे उन दोनो मे आपस मे बहुत गहरी मित्रता थी।
⇒ एक दिन पुरंजन ने अपने मित्र अविज्ञात से कहा चलो कही घूम आते है, अविज्ञात ने कहा मित्र हम तो नही जा पायेगे, तुम घूम आओ जाकर किन्तु हमे भूल मत जाना शीघ्र ही लौट आना।
⇒ पुरंजन अपने रहने योग्य स्थान की खोज मे सारी पृथ्वी मे घूमा; फिर भी उसे कोई अनुरूप स्थान न मिला, पुरंजन को तरह-तरह के भोगो की लालसा थी उन्हे भोगने के लिए उसने संसार मे जितने नगर देखे, उनमे कोई भी उसे ठीक न जचा ।।
श्लोक) स एकदा हिमवतो दक्षिणेष्वथ सानुषु ।
ददर्श नवभिर्द्वार्भिः पुरं लक्षितलक्षणाम् ।।
अर्थ) एक दिन उसने हिमालय के दक्षिण तटवर्ती शिखरो पर कर्मभूमि भारतखण्ड मे एक नौ द्वारो का नगर देखा। वह उसे सब प्रकार के सुलक्षणो से सम्पन्न लगा। इस नौ द्वार वाले नगर की रक्षा एक पाँच फन वाला सर्प करता था। जब पुरंजन ने नौ द्वार वाले नगर मे प्रवेश किया तो वहा उसने एक सुन्दरी को देखा और उसके रुप को देखकर मोहित हो गया। पुरंजन ने उस सुन्दरी से पूछा - कमलदललोचने! मुझे बताओ तुम कौन हो


67
= तब वह सुन्दरी कहने लगी, नरश्रेष्ठ! हमे अपने उत्पन्न करने वाले का ठीक-ठीक पता नहीं है और न हम अपने या किसी दूसरे के नाम या गोत्र को ही जानते है।
⇒ वह सुन्दरी कहती बस मैं इतना जानती हूं कि इस नव द्वार वाली नगरी की मैं मालकिन हू और यह दस मेरे सैनिक है, इन दस का एक सेनापति है, जो सदैव मेरी सुरक्षा मे रहते है। रात्रि मे जब मैं विश्राम मे चली जाती हू तब यह पाँच फन वाला सर्प मेरे इस नगर की रक्षा करता है।
⇒ पुरंजन उस सुन्दरी से कहने लगा आपका विवाह हो गया। वह सुन्दरी कहती अभी हमारा विवाह नहीं हुआ, हमे भी कोई योग्य वर की तलाश है, पुरंजन कहता विवाह तो हमारा भी नहीं हुआ यदि आपकी इच्छा हो तो हम आपसे विवाह करने को तैयार है, मन ही मन सुंदरी को भी पुरंजन पसद आ गया, दोनो की राजी हो गई और पुरंजन ने उस सुंदरी से विवाह कर लिया, अब सुंदरी का नाम पुरंजनी हो गया।
⇒ पुरंजन अपनी पुरंजनी के साथ उस नवद्वार वाली नगरी मे रहने लगा, और स्त्री के प्रेम मे फसकर भोग विलास मे डूब गया, पुरजन अपने मित्र अविज्ञात को भी भूल गया। स्त्री के द्वारा ठगे जाने के कारण पुरंजन यह भी भूल गया मैं कौन हू?, परमात्मा कौन है?



68

⇒ स्त्री के प्रेम मे फँसकर पुंरजन की यह स्थिति हो गई, पुरंजनी जो कार्य करती थी, वही पुंरजन करने लगा।

श्लोक- क्वाचीद् गायति गायन्त्यां, रुदत्यां रुदति क्वाचीत्।
क्वाचीद्धसन्त्यां हसति जल्पन्त्यामनु जल्पति ।।

अर्थ- पुंरजनी के गाने पर पुंरजन गाता, पुंरजनी के रोने पर पुंरजन रोता, हँसने पर हँसता, और बोलने पर बोलने लगता।

⇒ राजा पुंरजन अपनी सुन्दरी रानी के द्वारा ठगा गया। सारा प्रकृतिवर्ग - परिकर ही उसको धोखा देने लगा। वह मूर्ख विवश होकर इच्छा न करने पर भी खेल के लिए घर पर पाले हुए बंदर के समान अनुकरण करता था।

⇒ नारदजी कहते राजन! इस प्रकार कामातुर चित्त से उसके साथ विहार करते-करते राजा पुंरजन की जवानी के क्षण बीतते गए। उस पुंरजनी से पुंरजन के ग्यारह सौ पुत्र और एक सौ दस कन्याएँ हुई, पुंरजनी की कन्याए पौरंजनी नाम से विख्यात हुई। इतने मे उस राजा पुंरजन की लंबी आयु का आधा भाग निकल गया। नारदजी कहते राजन फिर उसने भी तुम्हारी तरह अनेक भोगो की कामना से यज्ञ की दीक्षा लेकर तरह तरह के पशु हिंसामय यज्ञ किए। अन्त मे वृद्धावस्था का वह समय आ पहुंचा, जो स्त्रीलंपट पुरुषों का बड़ा अप्रिय होता है।

Date / / Page No. 69

= नारद जी कहते-राजन!

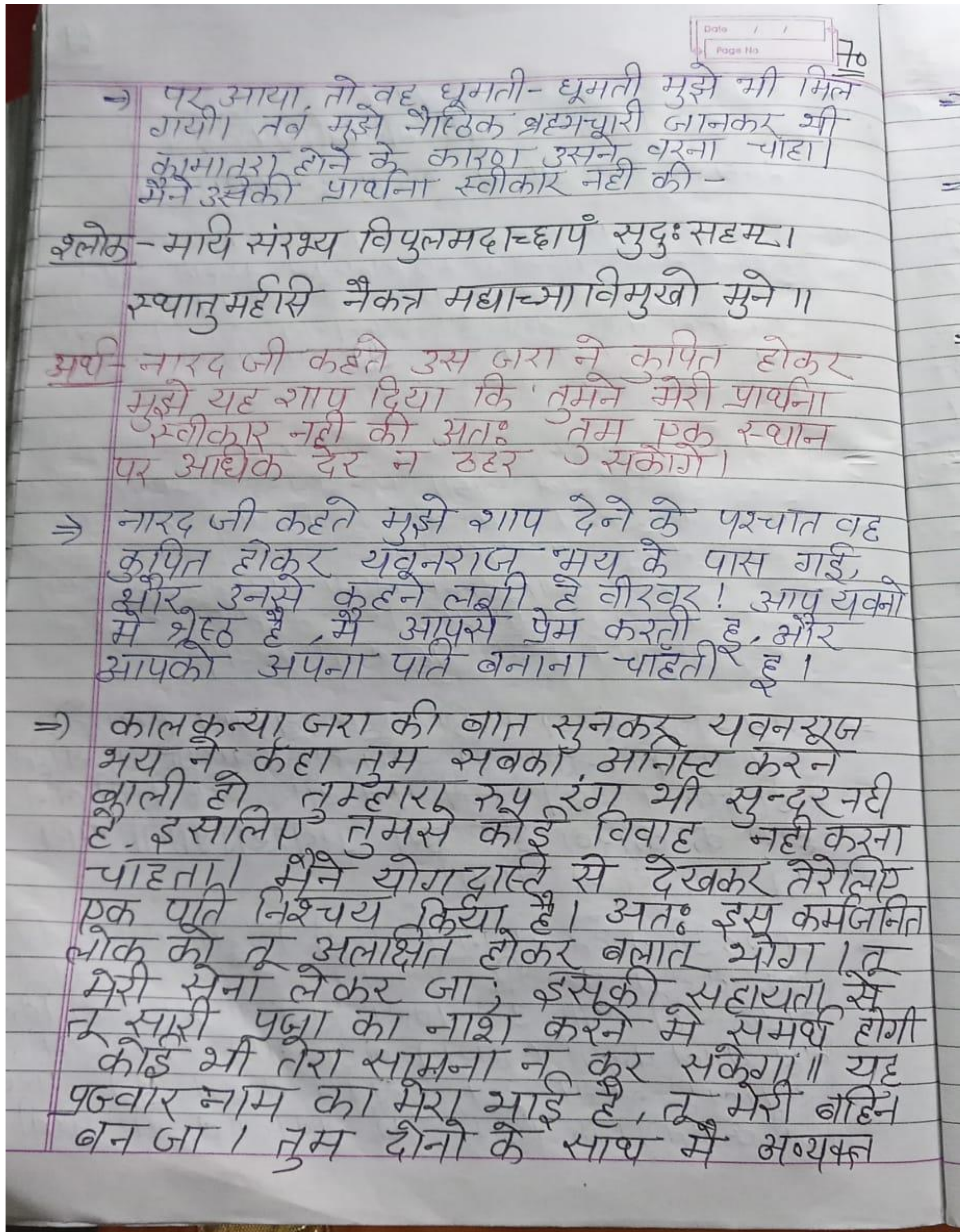
श्लोक चण्डवेगा इति ख्यातो गन्धर्वाधिपतिर्नृप।
गन्धर्वास्तस्य बलिनः षष्ट्युत्तरशतत्रयम्॥

अर्थ- चण्डवेग नाम का एक गन्धर्वराज है, उसके अधीन तीन सौ साठ महाबलवान गन्धर्व रहते हैं। इनके साथ मिथुनभाव से स्थित कृष्ण और शुक्लवर्ण की उतनी ही गन्धर्वियां भी हैं, ये बारी बारी से भोग-विलास सामाग्रियों से भरी-पूरी नगरी को लूटती रहती है।

⇒ एक दिन गन्धर्वराज चण्डवेग ने और उनके अनुचरों ने जब राजा पुरंजन का नगर देखा तो उसे लूटना आरम्भ कर दिया। तब उन्हें पांच फन के सर्प प्रजागर ने रोका। यह पुरंजन पुरी की चौकसी करने वाला महाबलवान सर्प सौ वर्ष तक अकेला ही उन सात सौ बीस गन्धर्वगन्धर्वियों से युद्ध करता रहा।

⇒ जब राजा पुरंजन को यह सब ज्ञात हुआ तो उन्हें अपने नगर में रहने वाले बान्धवों के सहित बड़ी चिन्ता हुई। स्त्री सुख और भोगों में लीन होने के कारण उसे इस अवश्यम्भावी भय का पता ही न चला।

= नारदजी कहते राजन! इन्हीं दिनों काल की एक कन्या वर की खोज में त्रिलोकी में भटक रही थी, उसे किसी ने स्वीकार नहीं किया वह काल कन्या (जरा) बड़ी भाग्यहीना थी, इसलिए लोग उसे दुर्भगा कहते थे। नारद जी कहते एक दिन मैं ब्रह्मलोक से पृथ्वी



Date / /
Page No 70

⇒ पर आया, तो वह घूमती- घूमती मुझे भी मिल गयी। तब मुझे नैष्ठिक ब्रह्मचारी जानकर भी कुमातरा होने के कारण उसने वरना चाहा। मैंने उसकी प्रार्थना स्वीकार नहीं की -

श्लोक - मयि संरभ्य विपुलमदाच्छापं सुदुःसहम्।
स्थातुमर्हसि नैकत्र मद्याच्ञाविमुखो मुने॥

अर्थ - नारद जी कहते उस जरा ने कुपित होकर मुझे यह शाप दिया कि 'तुमने मेरी प्रार्थना स्वीकार नहीं की अतः तुम एक स्थान पर अधिक देर न ठहर सकोगे।

⇒ नारद जी कहते मुझे शाप देने के पश्चात वह कुपित होकर यवनराज भय के पास गई, और उनसे कहने लगी, हे वीरवर! आप यवनों मे श्रेष्ठ है, मैं आपसे प्रेम करती हू, और आपको अपना पति बनाना चाहती हू।

⇒ कालकन्या जरा की बात सुनकर यवनराज भय ने कहा तुम सबको अनिष्ट करने वाली हो, तुम्हारा रूप रंग भी सुन्दर नहीं है, इसलिए तुमसे कोई विवाह नहीं करना चाहता। मैंने योगदृष्टि से देखकर तेरेलिए एक पति निश्चय किया है। अतः इस कर्मजनित लोक को तू अलक्षित होकर बलात भोगा। तू मेरी सेना लेकर जा; इसकी सहायता से तू सारी प्रजा का नाश करने मे समर्थ होगी कोई भी तेरा सामना न कर सकेगा॥ यह प्रज्वार नाम का मेरा भाई है, तू मेरी बहिन बन जा। तुम दोनो के साथ मैं अव्यक्त

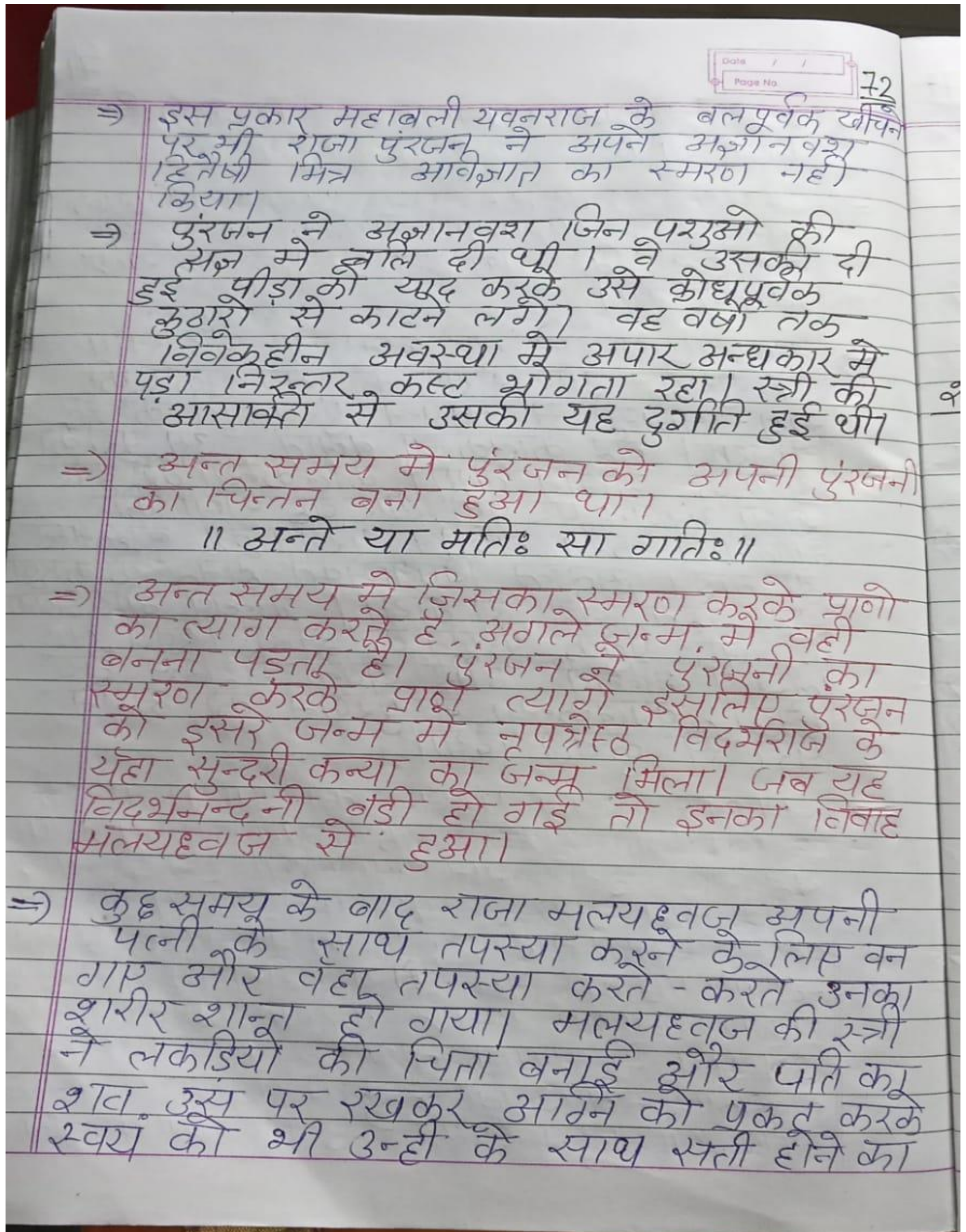
Date / /
Page No 71

⇒ शक्ति से भयंकर सेना लेकर सारे लोको मे विचरुँगा ॥

⇒ श्री नारद जी कहते - राजन - फिर भय नामक यवनराज के आज्ञाकारी सैनिक प्रज्वार और कालकन्या के साथ इस पृथ्वीतल पर सर्वत्र विचरने लगे।

⇒ एक बार उन्होने बडे वेग से बूढे सॉप से सुरक्षित और संसार की सब प्रकार की सुख-सामग्री से सम्पन्न पुरंजनपुरी को घेर लिया। वह कालकन्या बलात उस पुरी की प्रजा को भोगने लगी। कालकन्या की दृष्टि राजा पुरंजन पर पडी, और वह राजा का आलिंगन करने लगी। पुरंजन की बुद्धि नष्ट हो गई। अत्यन्त विषयासक्त होने के कारण वह बहुत दीन हो गया। गन्धर्व और यवनो ने बलात पूर्वक पुरंजन का सारा ऐश्वर्य लूट लिया। गन्धर्व और यवनो ने उसे घेर लिया, कालकन्या ने पुरंजन को अपने पैरो से कुचल दिया।

⇒ जब अन्त समय पुरंजन का आया तो भी उसका स्त्री, पुत्रादि के प्रति जो मोह था वह नही हटा। जाते-जाते भी उनकी याद करके रोने लगा हाय। मेरी भार्या तो बहुत घर-गृहस्थी वाली है; जब मै परलोक को चला जाऊगा, तब यह असहाय होकर किस प्रकार अपना निर्वाह करेगी ? जब यवनलोग उसे पशु के समान बाँधकर अपने स्थान को ले चले, तब उसके अनुचरगण अत्यन्त आतुर और शोकाकुल होकर उसके साथ चल दिए।



72

⇒ इस प्रकार महाबली यवनराज के बलपूर्वक खींचने पर भी राजा पुरंजन ने अपने अज्ञानवश हितैषी मित्र अविज्ञात का स्मरण नहीं किया।

⇒ पुरंजन ने अज्ञानवश जिन पशुओ की यज्ञ मे बलि दी थी। वे उसकी दी हुई पीड़ा को याद करके उसे क्रोधपूर्वक कुठारो से काटने लगे। वह वर्षों तक विवेकहीन अवस्था मे अपार अन्धकार मे पड़ा निरन्तर कष्ट भोगता रहा। स्त्री की आसक्ति से उसकी यह दुर्गति हुई थी।

⇒ अन्त समय मे पुरंजन को अपनी पुरंजनी का चिन्तन बना हुआ था।

॥ अन्ते या मतिः सा गतिः॥

⇒ अन्त समय मे जिसका स्मरण करके प्राणो का त्याग करते है, अगले जन्म मे वही बनना पड़ता है। पुरंजन ने पुरंजनी का स्मरण करके प्राण त्यागे इसलिए पुरंजन को दूसरे जन्म मे नृपश्रेष्ठ विदर्भराज के यहा सुन्दरी कन्या का जन्म मिला। जब यह विदर्भनन्दनी बड़ी हो गई तो इनका विवाह मलयध्वज से हुआ।

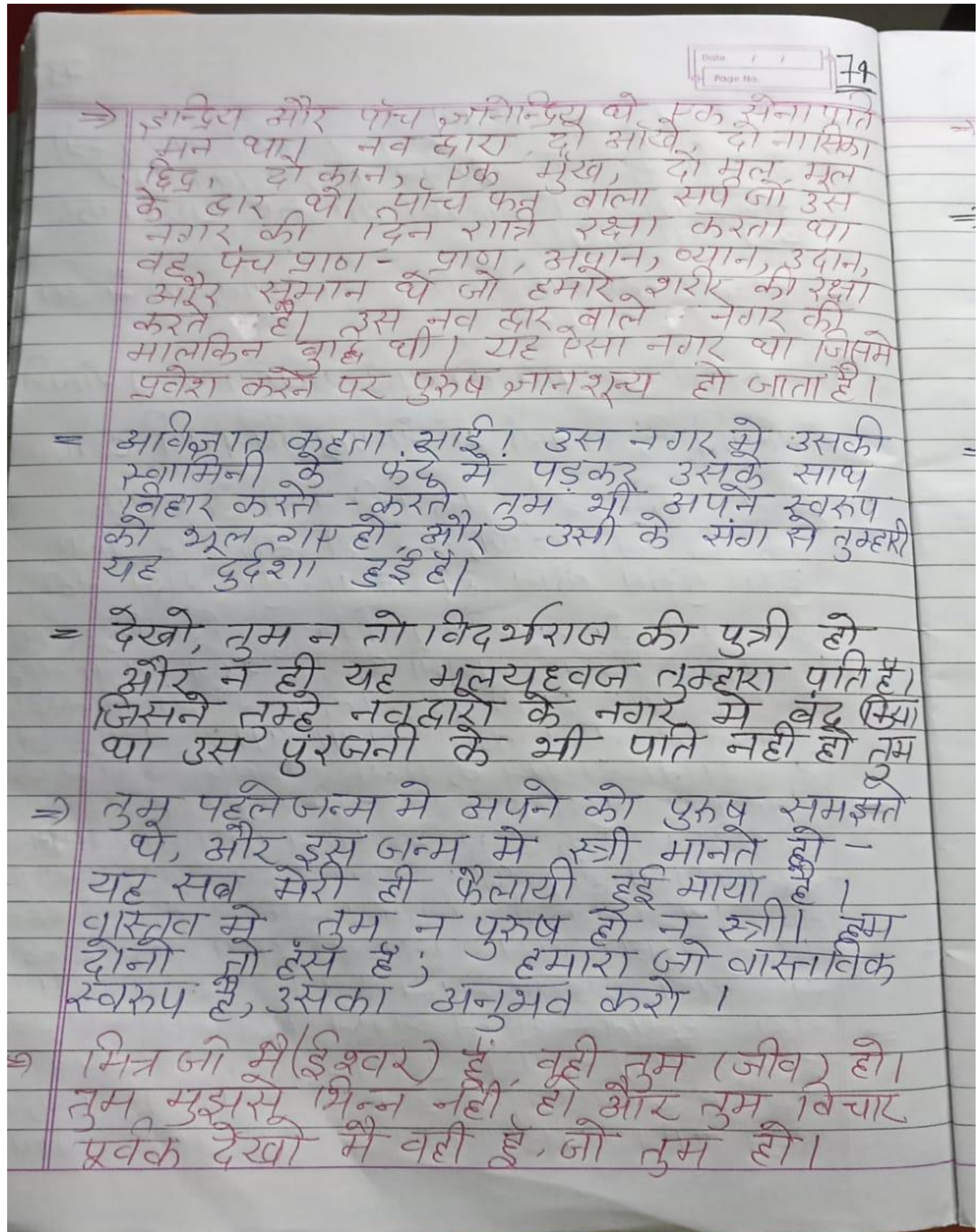
⇒ कुछ समय के बाद राजा मलयध्वज अपनी पत्नी के साथ तपस्या करने के लिए वन गए और वहा तपस्या करते-करते उनका शरीर शान्त हो गया। मलयध्वज की स्त्री ने लकड़ियो की चिता बनाई और पति का शव उस पर रखकर अग्नि को प्रकट करके स्वयं को भी उन्ही के साथ सती होने का

निश्चय कर लिया।
= नारद जी कहते- राजन। इसी समय स्त्री के रूप मे जो पुरंजन था, उसका मित्र अविज्ञात वहा ब्राह्मण का रूप धारण कर आ गया।

= ब्राह्मण रूप धारण किए हुए अविज्ञात ने उस स्त्री से कहा-

श्लोक- का त्वं कस्यासि को वायं शयानो यस्य शोचसि
जानासि किं सखायं मां येनाग्रे विचचर्थ ह ॥

अर्थ- तुम कौन हो? किसकी पुत्री हो? और किसके लिए शोक कर रही हो, यह सोया हुआ पुरुष कौन है? क्या तुम मुझे नही जानती? मै वही तेरा मित्र हूं, जिसके साथ तू पहले विचरा करती थी। सखे! क्या तुम्हे अपनी याद आती है, किसी समय मै तुम्हारा अविज्ञात नाम का सखा था? तुम पृथ्वी के भोग भोगने के लिए निवास स्थान की खोज मे मुझे छोड़कर चले गए थे, पहले हम दोनो एक दूसरे के परम मित्र और मानसरोवर निवासी हंस थे। हम दोनो सहस्रो वर्षो तक बिना किसी निवास-स्थान के ही रहे थे किन्तु मित्र! तुम विषयभोगो की इच्छा से मुझे छोड़कर यहा पृथ्वी पर चले आए।
=> यहा घूमते-घूमते तुमने एक स्त्री का रचा हुआ स्थान देखा। उसमे पांच बगीचे थे नौ दरवाजे थे, उसकी स्वामिनी एक स्त्री थी। मित्र दश सैनिक उसके पांच



74

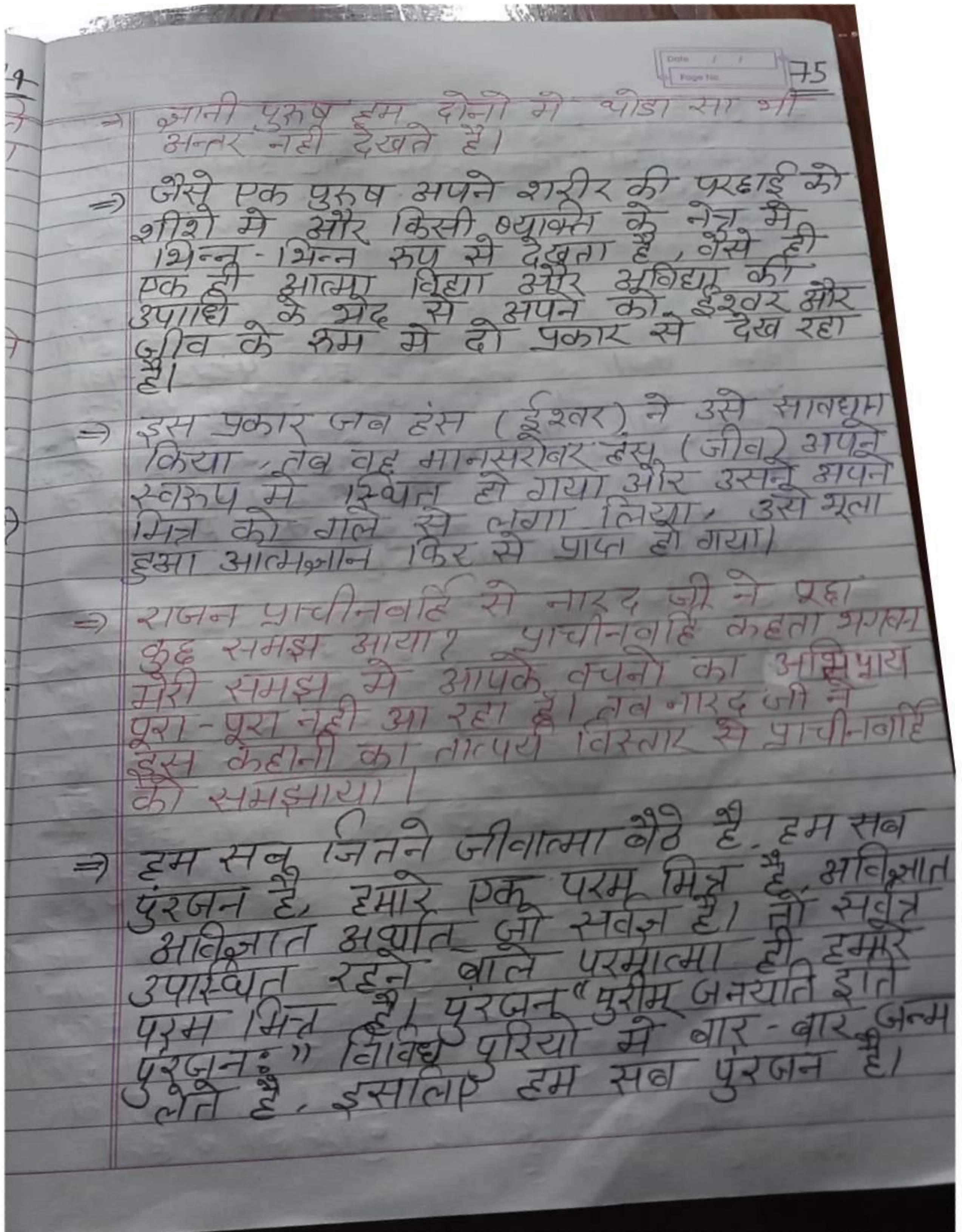
⇒ इन्द्रियां और पाँच ज्ञानेन्द्रिय थे, एक सेना पति मन था। नव द्वारा, दो आंखे, दो नासिका छिद्र, दो कान, एक मुख, दो मल, मूल के द्वार थी। पाँच फन वाला सर्प जो उस नगर की दिन रात्रि रक्षा करता था वह पंच प्राण - प्राण, अपान, व्यान, उदान, और समान थे जो हमारे शरीर की रक्षा करते है। उस नव द्वार वाले नगर की मालकिन बुद्धि थी। यह ऐसा नगर था जिसमे प्रवेश करने पर पुरुष ज्ञानशून्य हो जाता है।

= आविज्ञात कहता साई! उस नगर मे उसकी स्वामिनी के फंद मे पड़कर उसके साथ विहार करते - करते, तुम भी अपने स्वरुप को भूल गए हो, और उसी के संग से तुम्हरी यह दुर्दशा हुई है।

= देखो, तुम न तो विदर्भराज की पुत्री हो और न ही यह मलयध्वज तुम्हारा पति है। जिसने तुम्हे नवद्वारो के नगर मे बंद किया था उस पुरंजनी के भी पति नही हो तुम

⇒ तुम पहले जन्म मे अपने को पुरुष समझते थे, और इस जन्म मे स्त्री मानते हो - यह सब मेरी ही फैलायी हुई माया है। वास्तव मे तुम न पुरुष हो न स्त्री। हम दोनो तो हंस है; हमारा जो वास्तविक स्वरुप है, उसका अनुभव करो।

⇒ मित्र जो मै (ईश्वर) हूं, वही तुम (जीव) हो। तुम मुझसे भिन्न नही हो और तुम विचार पूर्वक देखो मै वही हूं, जो तुम हो।



75

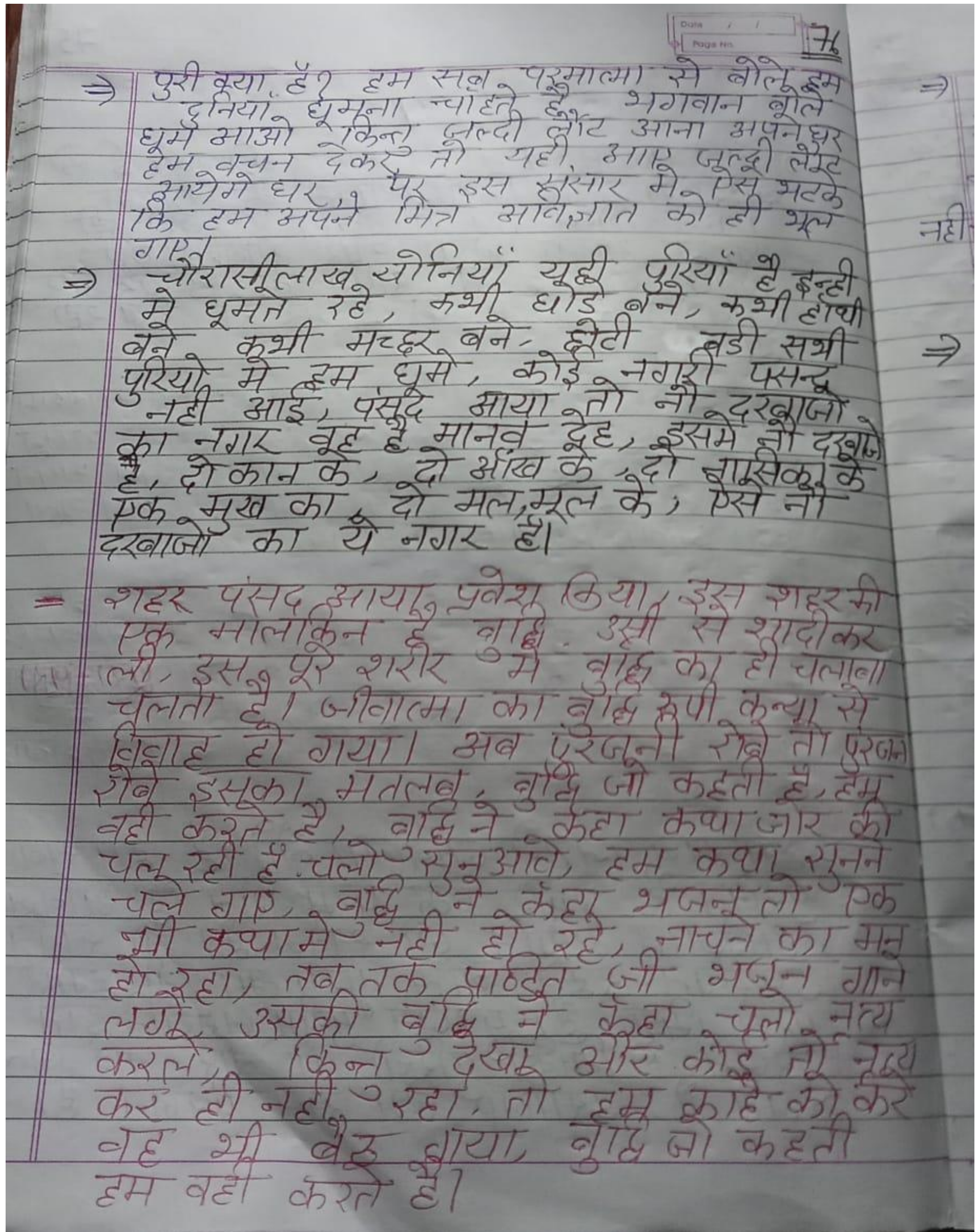
⇒ ज्ञानी पुरुष हम दोनों मे थोड़ा सा भी अन्तर नही देखते है।

⇒ जैसे एक पुरुष अपने शरीर की परछाई को शीशे मे और किसी व्यक्ति के नेत्र मे भिन्न-भिन्न रुप से देखता है, वैसे ही एक ही आत्मा विद्या और अविद्या की उपाधि के भेद से अपने को ईश्वर और जीव के रुप मे दो प्रकार से देख रहा है।

⇒ इस प्रकार जब हंस (ईश्वर) ने उसे सावधान किया, तब वह मानसरोवर हंस (जीव) अपने स्वरुप मे स्थित हो गया और उसने अपने मित्र को गले से लगा लिया, उसे भूला हुआ आत्मज्ञान फिर से प्राप्त हो गया।

⇒ राजन प्राचीनबर्हि से नारद जी ने पूछा कुछ समझ आया? प्राचीनबर्हि कहता भगवन मेरी समझ मे आपके वचनो का अभिप्राय पूरा-पूरा नही आ रहा है। तब नारद जी ने इस कहानी का तात्पर्य विस्तार से प्राचीनबर्हि को समझाया।

⇒ हम सब जितने जीवात्मा बैठे है, हम सब पुरंजन है, हमारे एक परम मित्र है अविज्ञात अविज्ञात अर्थात जो सर्वज्ञ है। तो सर्वत्र उपस्थित रहने वाले परमात्मा ही हमारे परम मित्र है। पुरंजन "पुरीम् जनयाति इति पुरंजनः" विविध पुरियो मे बार-बार जन्म लेते है, इसलिए हम सब पुरंजन है।



76

⇒ पुरी क्या है? हम सब परमात्मा से बोले हम दुनियां घूमना चाहते है, भगवान बोले घूम आओ किन्तु जल्दी लौट आना अपने घर हम वचन देकर तो यही आए जल्दी लौट आयेगे घर, पर इस संसार मे ऐसे भटके कि हम अपने मित्र अविज्ञात को ही भूल गए।

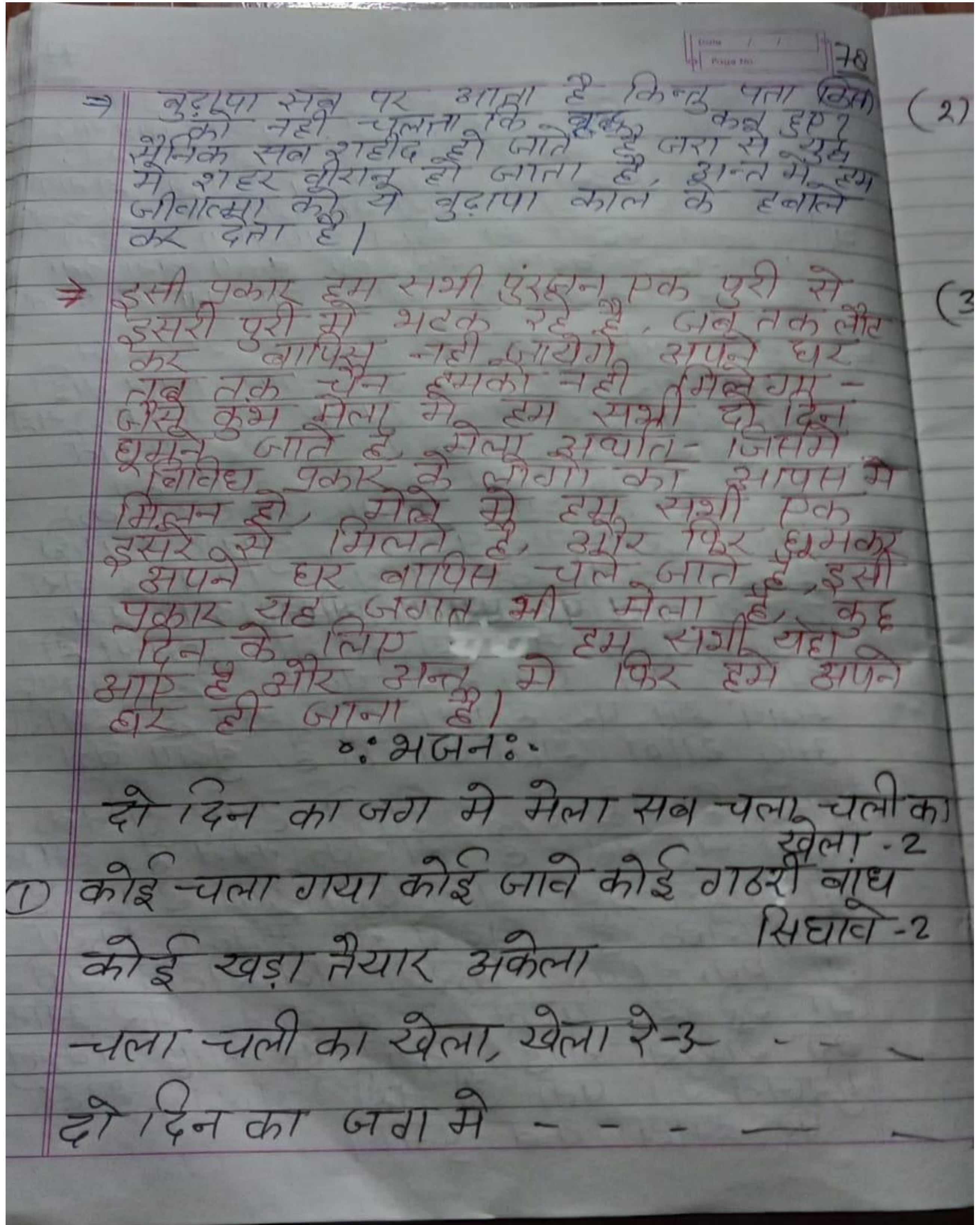
⇒ चौरासी लाख योनियां यही पुरियां है इन्ही मे घूमते रहे, कभी घोड़े बने, कभी हाथी बने, कभी मच्छर बने, छोटी बड़ी सभी पुरियो मे हम घूमे, कोई नगरी पसन्द नही आई, पसंद आया तो नौ दरवाजो का नगर वह है मानव देह, इसमे नौ दरवाजे है, दो कान के, दो आंख के, दो नासिका के एक मुख का, दो मल,मूत्र के, ऐसे नौ दरवाजो का ये नगर है।

= शहर पसंद आया, प्रवेश किया, इस शहर की एक मालकिन है बुद्धि, उसी से शादी कर ली, इस पूरे शरीर मे बुद्धि का ही चलावा चलता है। जीवात्मा का बुद्धि रूपी कन्या से विवाह हो गया। अब ऐरजनी रोवे तो ऐरजनी रोवे इसका मतलब, बुद्धि जो कहती है, हम वही करते है, बुद्धि ने कहा कथा जोर की चल रही है चलो सुन आवे, हम कथा सुनने चले गए, बुद्धि ने कहा भजन तो एक भी कथा मे नही हो रहे, नाचने का मन हो रहा, तब तक पण्डित जी भजन गाने लगे, उसकी बुद्धि ने कहा चलो नृत्य करले, किन्तु देखा और कोई तो नृत्य कर ही नही रहा, तो हम काहे को करे वह भी बैठ गया, बुद्धि जो कहती हम वही करते है।

77

⇒ अब पुरंजन तो पुरंजनी के साथ इस मानव पुरी मे रह रहा है, पुराना मित्र याद कर रहा है कब आयेगा मेरा मित्र लौट कर, इधर जरा देवी के चक्कर मे, हमला हो गया जरा माने बुढ़ापा, जरा से कोई विवाह करना नही चाहता। बुढ़ापे को कौन अपनाना चाहता कोई नही, बुढ़ापा शरीर को कुरूप बना देता इसलिए बुढ़ापे को कोई अपनाता नही चाहता

⇒ वृद्धावस्था दुखी हो गई तो यवनराज भय और चण्डवेगा के साथ मिल गई चण्डवेगा कौन है? संवत्सर (कालचक्र) यही चण्डवेगा है, इसके काले, गोरे गन्धर्व और गन्धर्वियाँ (दिन और रात है), यवनराज के भाई प्रज्वार ने जरा का साथ दिया, यह प्रज्वार, बुखार व्याधि है इन सभी के साथ मिलकर जरा देवी ने हमारी मानव पुरी पर हमला कर दिया, हम पुरंजनपुरी मे सोते ही रह गए, हमला हो गया, हमे पता नही चला, दिन, रात समय हम पर हमला कर रहा है, हमारी आयु क्षीण होती जा रही है, बुढ़ापे का हमला हो रहा है, हमले मे हमारे सैनिक मरते जा रहे है, सैनिक कौन है, हमारी पाँच ज्ञानेन्द्रिया, पाँच कर्मेन्द्रिया इस शहर के सैनिक है, बुढ़ापे ने हमला किया तो एक-एक करके सब शहीद होते जा रहे है, पहले श्वेत बाल, फिर आँखो की रोशनी गई, दाँत टूट गए, किन्तु पुरंजन को पता ही नही चला, शहर पर हमला कब हुआ।



78

⇒ बुढ़ापा सब पर आता है किन्तु पता किसको नही चलता कि वृद्ध कब हुए? क्योंकि सब शहीद हो जाते है जरा से युद्ध मे शहर वीरान हो जाता है, अन्त मे इस जीवात्मा को ये बुढ़ापा काल के हवाले कर देता है।

⇒ इसी प्रकार हम सभी पुरंजन एक पुरी से दूसरी पुरी मे भटक रहे है, जब तक लौट कर वापिस नही जायेगे अपने घर तब तक चैन हमको नही मिलेगा - जैसे कुंभ मेला मे हम सभी दो दिन घूमने जाते है मेला अर्थात - जिसमे विविध प्रकार के लोगो का आपस मे मिलन हो, मेले मे हम सभी एक दूसरे से मिलते है, और फिर घूमकर अपने घर वापिस चले जाते है, इसी प्रकार यह जगत भी मेला है, कुछ दिन के लिए हम सभी यहां आए है और अन्त मे फिर हमे अपने घर ही जाना है।

ॐ भजन ॐ

दो दिन का जग मे मेला सब चला चली का खेला - 2

(1) कोई चला गया कोई जावे कोई गठरी बांध सिधावे - 2

कोई खड़ा तैयार अकेला

चला चली का खेला, खेला रे - 3 - - -

दो दिन का जग मे - - - -

मात-पिता-सुत नारी भाई अंत सहायक नाही-2
फिर क्यो भरता, पाप का ठेला रे-2
चला-चली का खेला रे खेला रे -2

ये तो है नश्वर संसारा भजन को करले ईश का प्यारा-2
ब्रह्मानंद कहे सुन चेला रे - 2
चली चली का खेला - - - -
दो दिन का जग मे - -

मैत्रेयमुनि बिदुर जी से कहते - विदुर जी! भक्तश्रेष्ठ श्री नारद जी ने राजा प्राचीन बर्हि को जीव और ईश्वर के स्वरूप का दिग्दर्शन कराया। फिर वे उनसे विदा लेकर सिद्ध लोक को चले गए। इसके उपरान्त राजर्षि प्राचीनबर्हि भी प्रजापालन का भार अपने पुत्रो को सौपकर तपस्या करने के लिए कपिलाश्रम को चले गए।

वहा उन वीरवर ने समस्त विषयो की आसक्ति छोड़ एकाग्र मन से भक्तिपूर्वक श्री हरि के चरणकमलो का चिन्तन करते हुए सारूप्यपद प्राप्त किया।

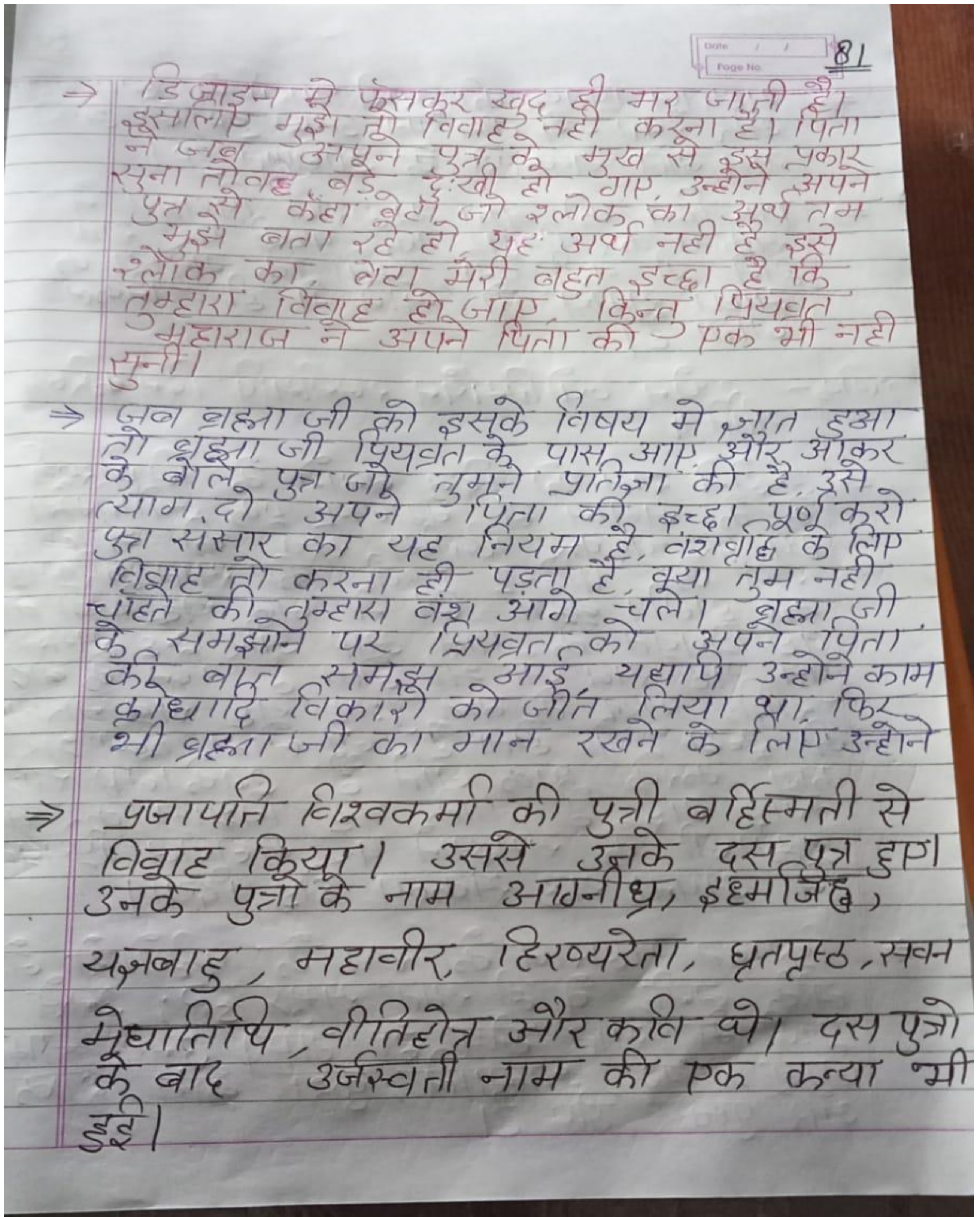
आचार्य शुकदेव कहते है - परीक्षित, श्री मैत्रेय मुनि के मुँह से इन समस्त प्रसंगो को सुनकर विदुर जी को परमानन्द की अनुभूति हुई और विदुर जी मैत्रेय जी को प्रणाम कर वहा से चले गए।

पञ्चमः स्कन्धः
Day-4 80

⇒ राजा परीक्षित ने पूछा - मुने! महाराज मनु के दूसरे पुत्र प्रियव्रत के विषय मे बताकर आपने उनके वंशवृद्धि के विषय मे कुछ नही बताया, हमने सुना है कि मनुनन्दन महाराज प्रियव्रत बचपन से ही बैरागी थे फिर उन्होने गृहस्थाश्रम मे कैसे प्रवेश किया?

⇒ श्री शुकदेवजी ने कहा - राजन्! तुम्हारी जिज्ञासा उत्तम है, महाराज प्रियव्रत बचपन से ही बैरागी थे, एक दिन उनके पिता महाराज मनु ने उनसे कहा पुत्र मैं चाहता हूं तुम विवाह के पवित्र बन्धन मे बंध जाओ तब प्रियव्रत ने अपने पिता को एक श्लोक सुनाया उसका अर्थ यह था हे पिता जी! मै विवाह नहीं करुगा, अभी हम अकेले है, विवाह के बाद पत्नी आ जायेगी तो दो पैर मेरे दो पत्नी के चार पैर हो जायेगे, चार तो पशुओ के पैर होते है, मुझे भी पशुओ जैसे कार्य करने पड़ेगे

⇒ विवाह के बाद एक सन्तान हो जायेगी तो छः पैर हो जायेगे छः पैर तो मधुमक्खी के होते है, जीवन भर मधुमक्खी की तरह एकत्रित करते रहेगे, फिर एक दिन बच्चे के भी बच्चा हो जायेगा, आठ पैर हो जायेगे, आठ पैर तो मकड़ी के होते है, अपनी बेव

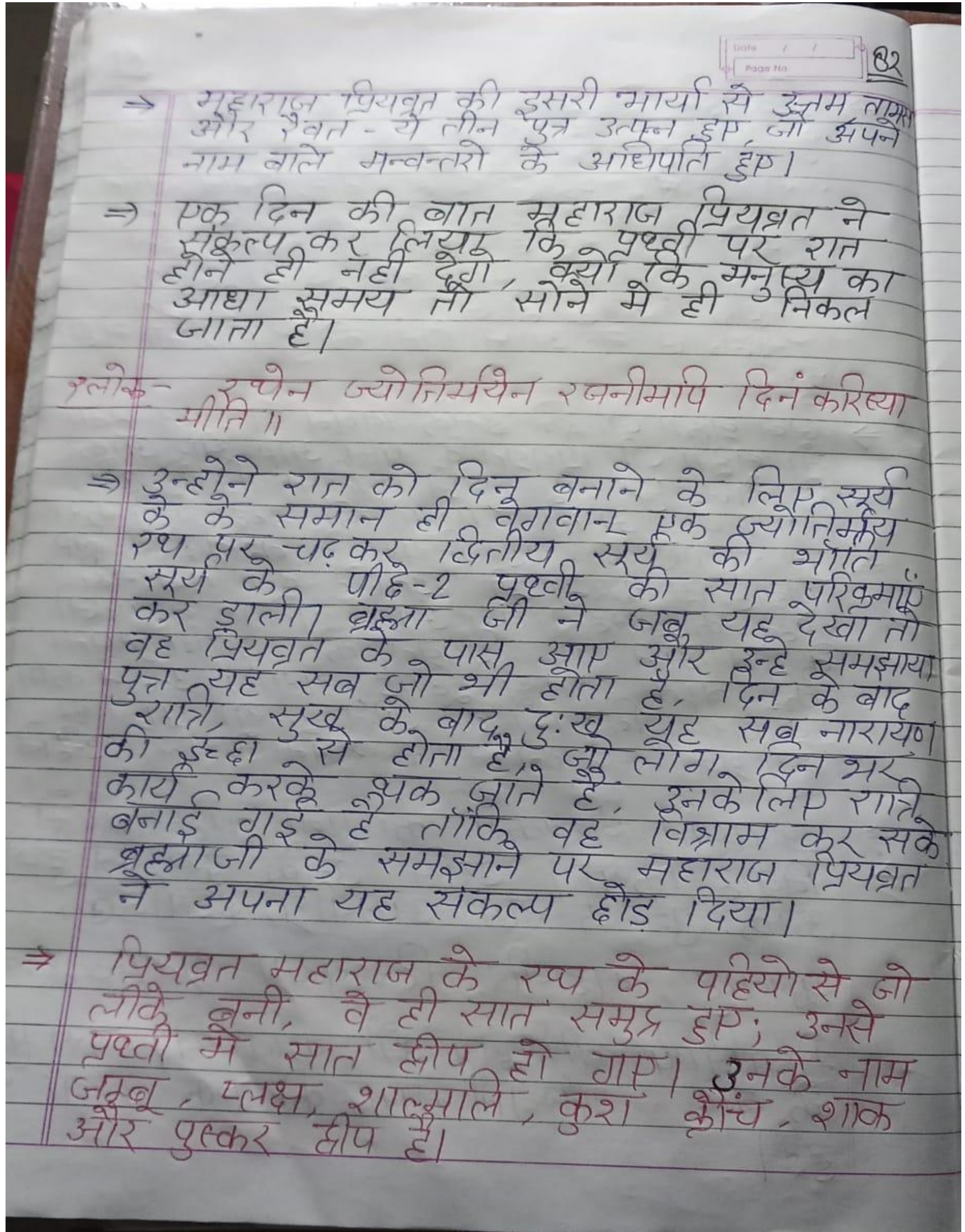


81

⇒ डिजाइन से फंसकर खुद ही मर जाती है। इसलिए मुझे तो विवाह नही करना है। पिता ने जब अपने पुत्र के मुख से इस प्रकार सुना तो वह बड़े दुःखी हो गए, उन्होने अपने पुत्र से कहा बेटा जो श्लोक का अर्थ तुम मुझे बता रहे हो यह अर्थ नही है इस श्लोक का, बेटा मेरी बहुत इच्छा है कि तुम्हारा विवाह हो जाए, किन्तु प्रियव्रत महाराज ने अपने पिता की एक भी नही सुनी।

⇒ जब ब्रह्मा जी को इसके विषय मे ज्ञात हुआ तो ब्रह्मा जी प्रियव्रत के पास आए और आकर के बोले, पुत्र जो तुमने प्रतिज्ञा की है, उसे त्याग दो अपने पिता की इच्छा पूर्ण करो पुत्र संसार का यह नियम है, वंशवृद्धि के लिए विवाह तो करना ही पड़ता है, क्या तुम नही चाहते की तुम्हारा वंश आगे चले। ब्रह्मा जी के समझाने पर प्रियव्रत को अपने पिता की बात समझ आई यद्यपि उन्होने काम क्रोधादि विकारो को जीत लिया था, फिर भी ब्रह्मा जी का मान रखने के लिए उन्होने

⇒ प्रजापति विश्वकर्मा की पुत्री बर्हिस्मती से विवाह किया। उससे उनके दस पुत्र हुए। उनके पुत्रो के नाम आग्नीध्र, इध्मजिह्व, यज्ञबाहु, महावीर, हिरण्यरेता, घृतपृष्ठ, सवन मेधातिथि, वीतिहोत्र और कवि थे। दस पुत्रो के बाद उर्जस्वती नाम की एक कन्या भी हुई।



82

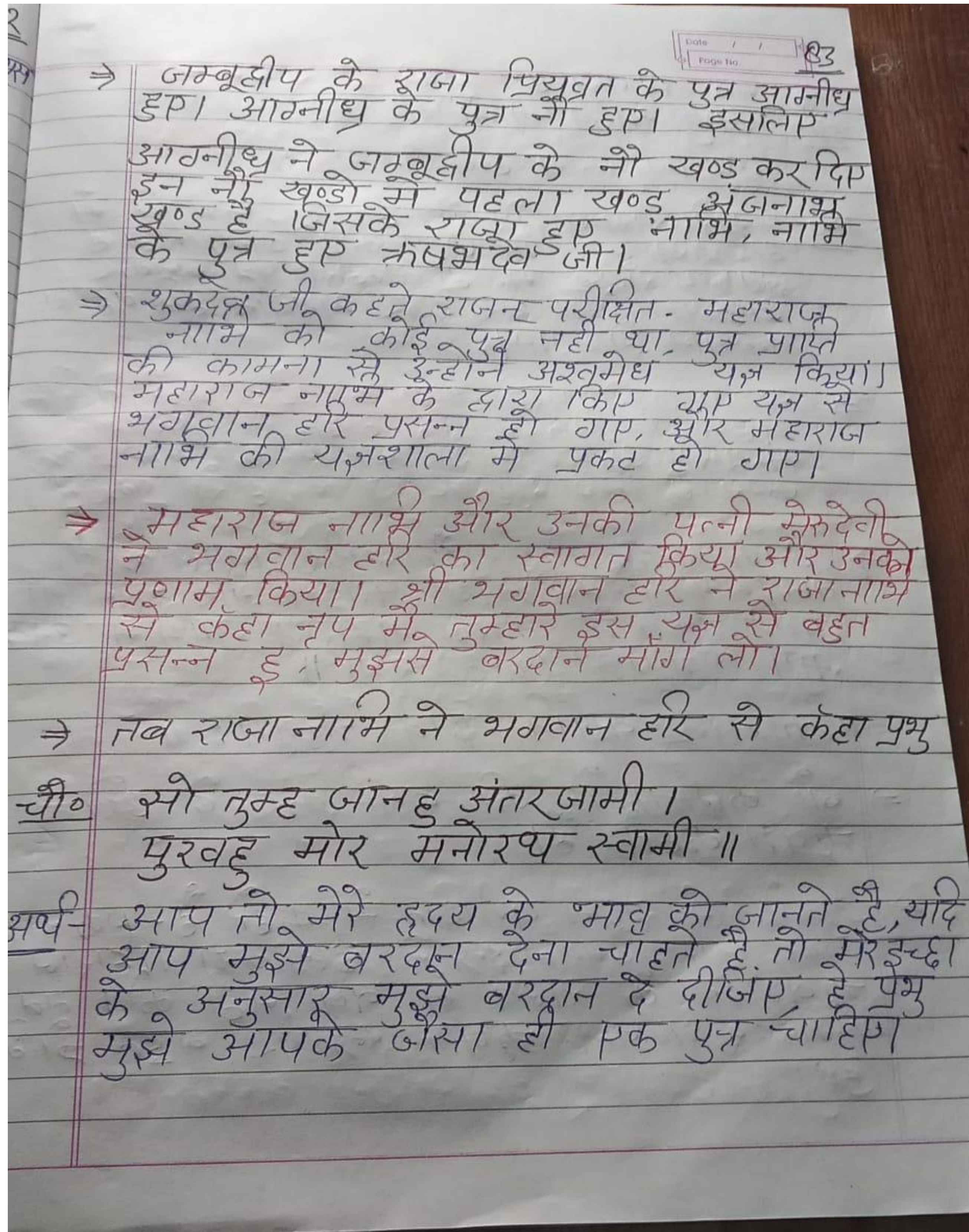
⇒ महाराज प्रियव्रत की दूसरी भार्या से उत्तम, तामस और रैवत - ये तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जो अपने नाम वाले मन्वन्तरो के अधिपति हुए।

⇒ एक दिन की बात महाराज प्रियव्रत ने संकल्प कर लिया कि पृथ्वी पर रात होने ही नहीं दूंगा, क्यों कि मनुष्य का आधा समय तो सोने मे ही निकल जाता है।

श्लोक- रथेन ज्योतिर्मयेन रजनीमपि दिनं करिष्यामीति ॥

⇒ उन्होने रात को दिन बनाने के लिए सूर्य के के समान ही वेगवान एक ज्योतिर्मय रथ पर चढ़कर द्वितीय सूर्य की भांति सूर्य के पीछे-2 पृथ्वी की सात परिक्रमाएँ कर डाली। ब्रह्मा जी ने जब यह देखा तो वह प्रियव्रत के पास आए और उन्हे समझाया पुत्र यह सब जो भी होता है, दिन के बाद रात्रि, सुख के बाद दुःख यह सब नारायण की इच्छा से होता है, जो लोग दिन भर कार्य करके थक जाते है, उनके लिए रात्रि बनाई गई है ताकि वह विश्राम कर सके ब्रह्माजी के समझाने पर महाराज प्रियव्रत ने अपना यह संकल्प छोड़ दिया।

⇒ प्रियव्रत महाराज के रथ के पहियो से जो लीके बनी, वे ही सात समुद्र हुए; उनसे पृथ्वी मे सात द्वीप हो गए। उनके नाम जम्बू, प्लक्ष, शाल्मलि, कुश, क्रौंच, शाक और पुष्कर द्वीप है।



83

⇒ जम्बूद्वीप के राजा प्रियव्रत के पुत्र आग्नीध्र हुए। आग्नीध्र के पुत्र नौ हुए। इसलिए आग्नीध्र ने जम्बूद्वीप के नौ खण्ड कर दिए इन नौ खण्डो मे पहला खण्ड अंजनाभ खण्ड है जिसके राजा हुए नाभि, नाभि के पुत्र हुए ऋषभदेव जी।

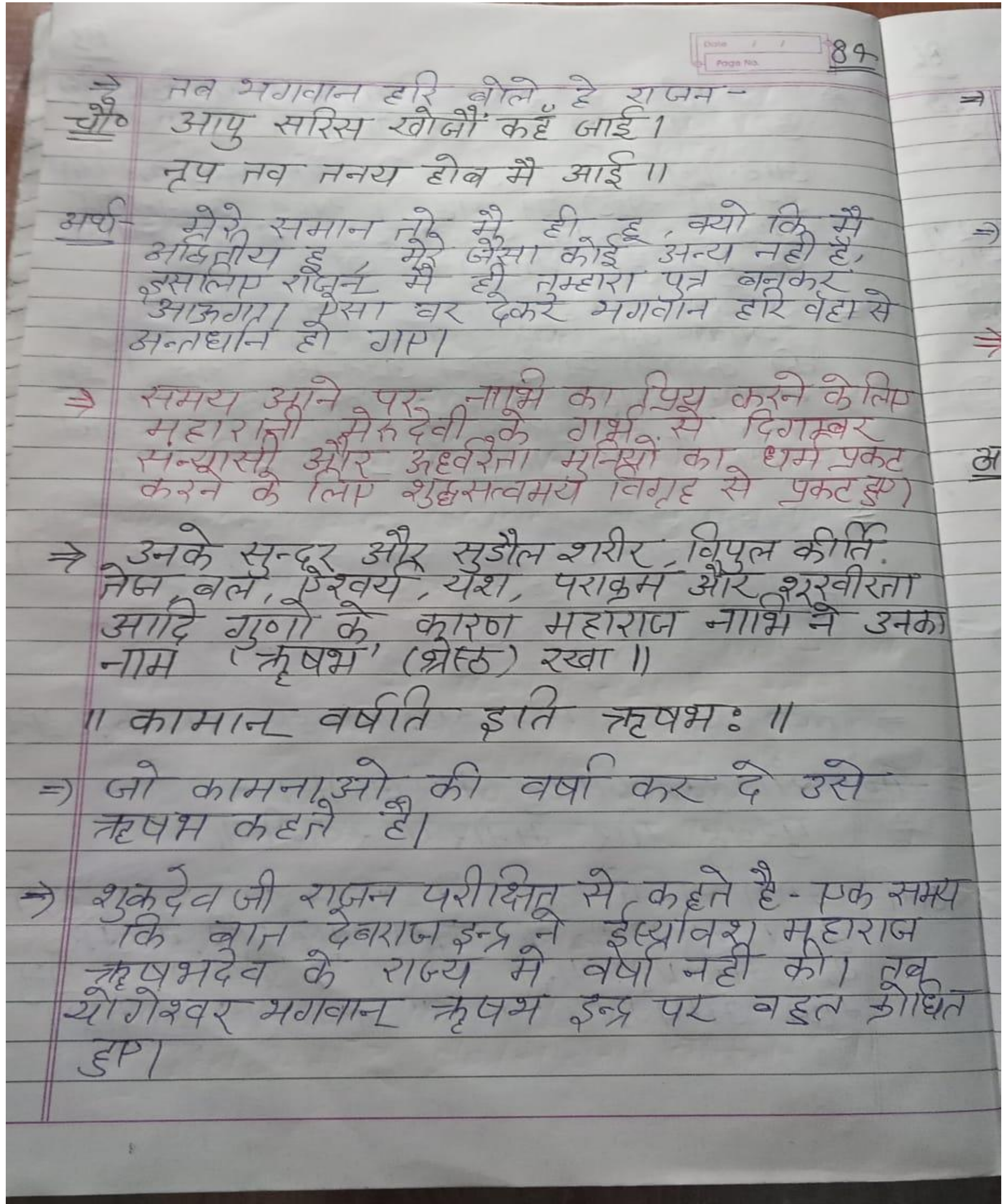
⇒ शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित- महाराज नाभि को कोई पुत्र नही था, पुत्र प्राप्ति की कामना से उन्होंने अश्वमेध यज्ञ किया। महाराज नाभि के द्वारा किए हुए यज्ञ से भगवान हरि प्रसन्न हो गए, और महाराज नाभि की यज्ञशाला मे प्रकट हो गए।

⇒ महाराज नाभि और उनकी पत्नी मेरुदेवी ने भगवान हरि का स्वागत किया और उनको प्रणाम किया। श्री भगवान हरि ने राजा नाभि से कहा नृप मैं तुम्हारे इस यज्ञ से बहुत प्रसन्न हूं। मुझसे वरदान माँग लो।

⇒ तब राजा नाभि ने भगवान हरि से कहा प्रभु

चौ० सो तुम्ह जानहु अंतरजामी।
पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी॥

अर्थ- आप तो मेरे हृदय के भाव को जानते है, यदि आप मुझे वरदान देना चाहते है तो मेरे इच्छा के अनुसार मुझे वरदान दे दीजिए हे प्रभु मुझे आपके जैसा ही एक पुत्र चाहिए



84

⇒ तब भगवान हरि बोले, हे राजन -

चौ० आपु सरिस खोजौं कहँ जाई।
नृप तव तनय होब मै आई।।

अर्थ- मेरे समान तो मै ही हू, क्यो कि मै अद्वितीय हू, मेरे जैसा कोई अन्य नही है, इसलिए राजर्षि मै ही तुम्हारा पुत्र बनकर आऊंगा। ऐसा वर देकर भगवान हरि वहा से अन्तर्धान हो गए।

⇒ समय आने पर नाभि का प्रिय करने के लिए महारानी मेरुदेवी के गर्भ से दिगम्बर सन्यासी और ऊर्ध्वरेता मुनियो का धर्म प्रकट करने के लिए शुद्धसत्वमय विग्रह से प्रकट हुए।

⇒ उनके सुन्दर और सुडौल शरीर, विपुल कीर्ति, तेज, बल, ऐश्वर्य, यश, पराक्रम और शूरवीरता आदि गुणो के कारण महाराज नाभि ने उनका नाम 'ऋषभ' (श्रेष्ठ) रखा।।

।। कामान् वर्षति इति ऋषभः ।।

⇒ जो कामनाओ की वर्षा कर दे उसे ऋषभ कहते है।

⇒ शुकदेव जी राजन परीक्षित से कहते है- एक समय कि बात देवराज इन्द्र ने ईर्ष्यावश महाराज ऋषभदेव के राज्य मे वर्षा नही की। तब योगेश्वर भगवान ऋषभ इन्द्र पर बहुत क्रोधित हुए।

85

⇒ तस्य ह वा इत्थं वर्ष्मणा वरीयसा बृहच्छ्लोकेनौजसा बलेन श्रिया यशसा तस्य हीन्द्रः स्पर्धमानो भगवान् वर्षे न ववर्ष ॥

⇒ देवराज इन्द्र ने कहा यदि ऋषभदेव महाराज स्वयं भगवान है तो वह अपने राज्य में वर्षा कर दे।

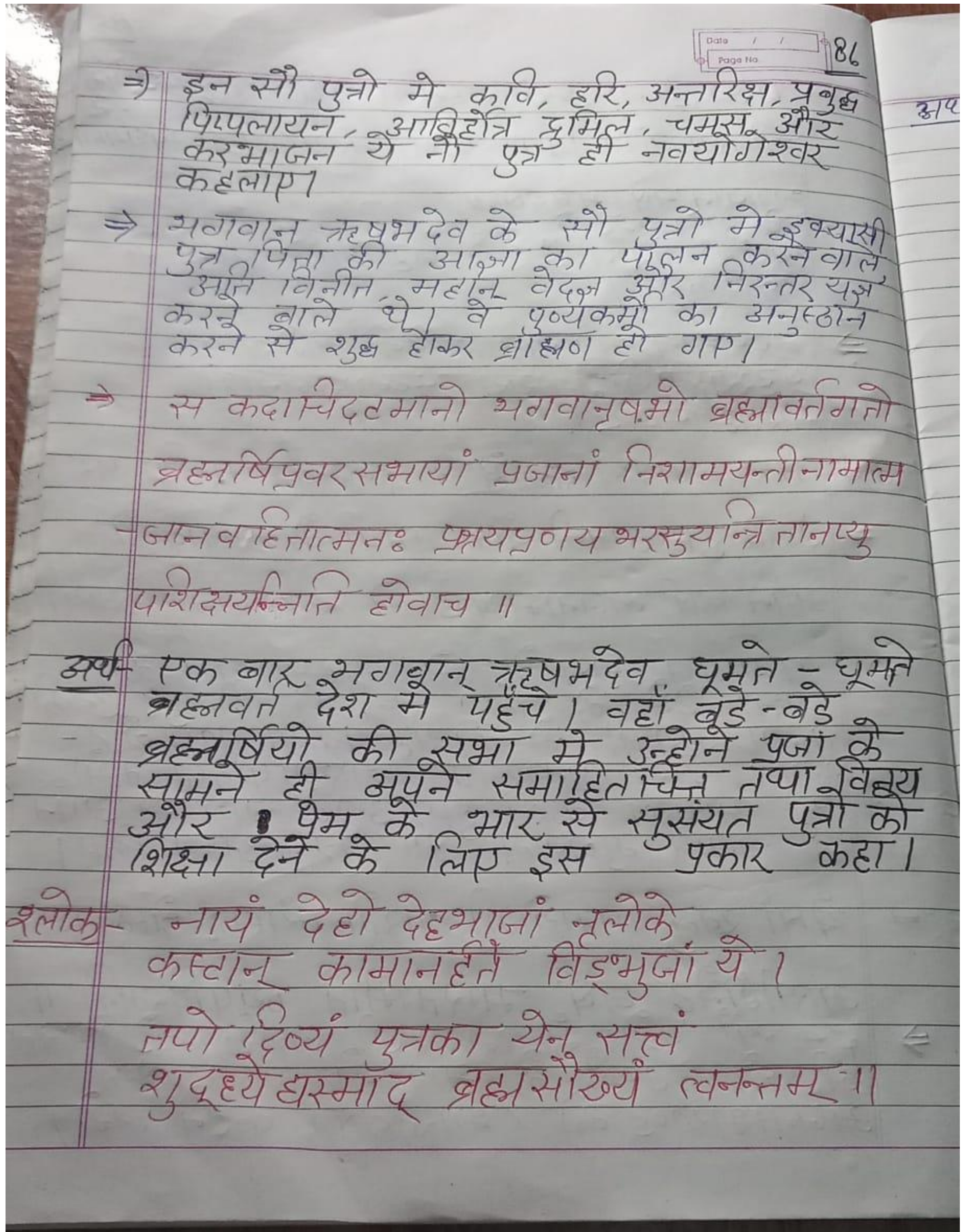
⇒ तदवधार्य भगवानृषभदेवो योगेश्वरः प्रहस्यात्म योगमायया स्ववर्षमजनाभं नामाभ्यवर्षत ॥

अर्थ- तब भगवान ऋषभ ने इन्द्र की मूर्खता पर हँसते हुए अपनी योग माया के प्रभाव से अपने वर्ष अजनाभखण्ड मे खूब जल बरसाया।

⇒ महाराज ऋषभदेव ने गृहस्थ धर्म की शिक्षा देने के लिए इन्द्र की दी हुई उनकी कन्या जयन्ती से विवाह किया तथा श्रौत-स्मार्त दोनों प्रकार के शास्त्रोपदिष्ट कर्मो का आचरण करते हुए उसके गर्भ से अपने ही समान गुणवाले सौ पुत्र उत्पन्न किए।

⇒ येषां खलु महायोगी भरतो ज्येष्ठः श्रेष्ठगुण आसीद्येनेदं वर्षं भारतमिति व्यपदिशन्ति ॥

⇒ इन सौ पुत्रो में भरत जी सबसे बड़े भरत जी थे, उन्ही के नाम से लोग इस अजनाभखण्ड को (भारतवर्ष) कहने लगे।



Date / / Page No 86

⇒ इन सौ पुत्रो मे कवि, हरि, अन्तरिक्ष, प्रबुद्ध पिप्पलायन, आविर्होत्र द्रुमिल, चमस, और करभाजन ये नौ पुत्र ही नवयोगेश्वर कहलाए।

⇒ भगवान ऋषभदेव के सौ पुत्रो मे इक्यासी पुत्र पिता की आज्ञा का पालन करने वाले अति विनीत, महान् वेदज्ञ और निरन्तर यज्ञ करने वाले थे। वे पुण्यकर्मों का अनुष्ठान करने से शुद्ध होकर ब्राह्मण हो गए।

⇒ स कदाचिदटमानो भगवानृषभो ब्रह्मावर्तगतो ब्रह्मर्षिप्रवरसभायां प्रजानां निशामयन्तीनामात्मजानवहितात्मनः प्रश्रयप्रणयभरसुयन्त्रितानप्युपशिक्षयन्निति होवाच ॥

अर्थ- एक बार भगवान् ऋषभदेव घूमते - घूमते ब्रह्मावर्त देश मे पहुँचे। वहाँ बड़े-बड़े ब्रह्मर्षियो की सभा मे उन्होंने प्रजा के सामने ही अपने समाहितचित्त तथा विनय और प्रेम के भार से सुसंयत पुत्रो को शिक्षा देने के लिए इस प्रकार कहा।

श्लोक- नायं देहो देहभाजां नृलोके
कष्टान् कामानर्हते विड्भुजां ये।
तपो दिव्यं पुत्रका येन सत्त्वं
शुद्ध्येद्यस्माद् ब्रह्मसौख्यं त्वनन्तम् ॥

87

अर्थ- श्री ऋषभदेव जी ने कहा - पुत्रो! इस मृत्यु लोक मे यह मनुस्यशरीर दुःखमय विषयभोग प्राप्त करने के लिए ही नही है, ये भोग तो विस्ठाभोजी सूकर कूकरादि को भी मिलते ही है। इस शरीर से दिव्य तप करना चाहिए जिससे अन्तःकरण शुद्ध हो, क्यो कि इसी से अनन्त ब्रह्मानन्द की प्राप्ति होती है।

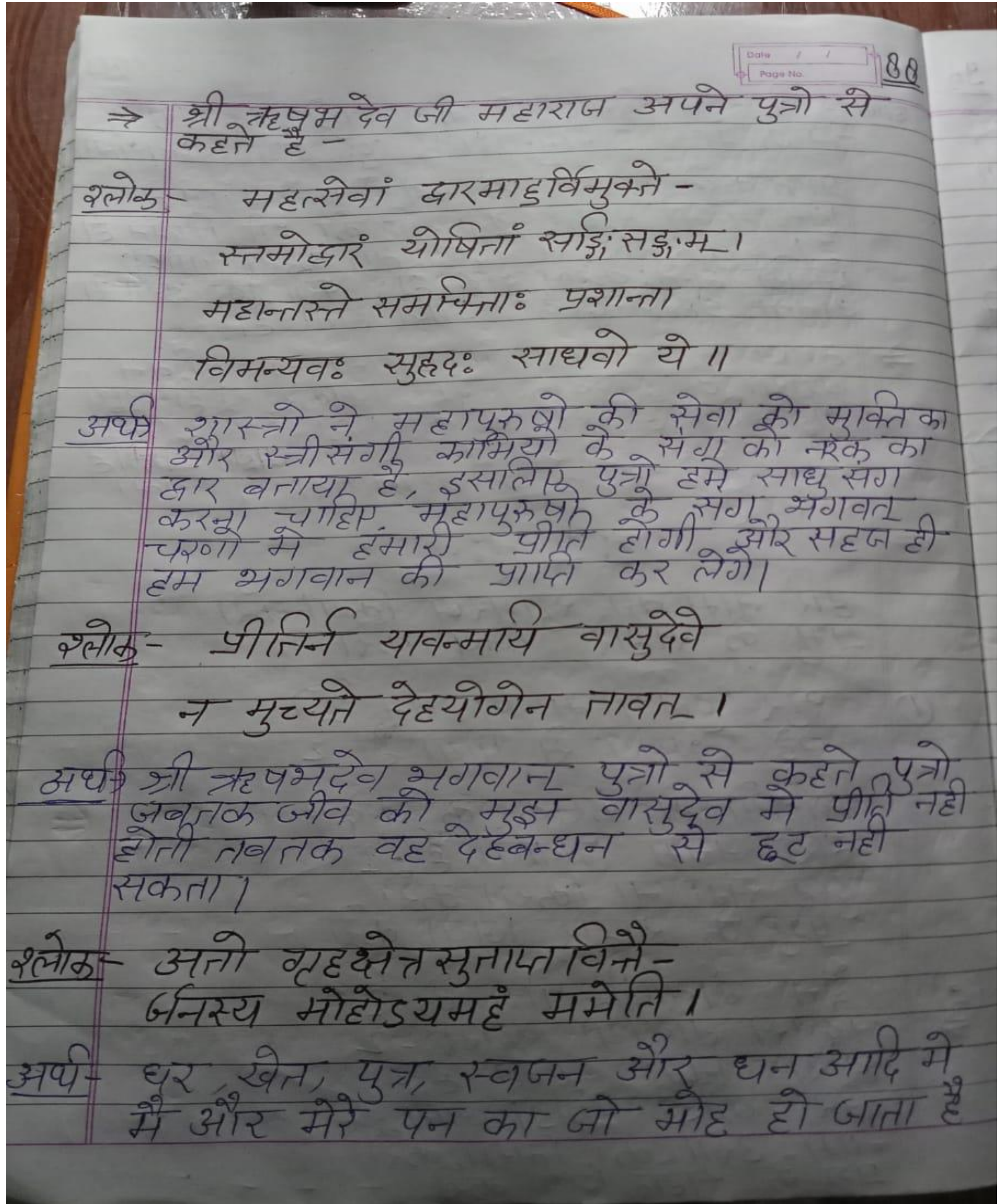
→ आज का मनुष्य तो अपना साराजीवन माया के चक्कर मे फंसकर यू ही व्यर्थ गवा देता है, मनुस्य का दिन खाने, पीने और धन एकत्रित करने मे चला जाता है और रात्रि सोने, भोगाविलास मे चली जाती है।

:: भजन ::

हरि नाम का सुमिरन किया करो
प्रभु के सहारे जिया करो

(1) सुर दुर्लभ मानव तन तूने
बड़े भाग्य से पाया है -2
विषयो मे फँसकर के बन्दे
हीरा जनम गवाया है -2
दुस्ट संग ना किया करो
प्रभु के सहारे जिया करो - - -

(2) रैन गंवायी सोय के -2
दिवस गंवायो खाय -2
हीरा जनम पाया है -2
तेरा कौड़ी-कौड़ी जाय -2
नाम उसी का लिया करो
प्रभु के सहारे जिया करो - - -



88

⇒ श्री ऋषभ देव जी महाराज अपने पुत्रो से कहते है –

श्लोक – महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्ते-
स्तमोद्वारं योषितां सङ्गिसङ्गम्।
महान्तस्ते समचित्ताः प्रशान्ता
विमन्यवः सुहृदः साधवो ये॥

अर्थ – शास्त्रो ने महापुरुषो की सेवा को मुक्ति का और स्त्रीसंगी कामियो के संग को नरक का द्वार बताया है, इसलिए पुत्रो हमे साधु संग करना चाहिए महापुरुषो के संग भगवत् चरणो मे हमारी प्रीति होगी और सहज ही हम भगवान की प्राप्ति कर लेगे।

श्लोक – प्रीतिर्न यावन्मयि वासुदेवे
न मुच्यते देहयोगेन तावत्।

अर्थ – श्री ऋषभदेव भगवान पुत्रो से कहते पुत्रो जबतक जीव को मुझ वासुदेव मे प्रीति नही होती तबतक वह देहबन्धन से छूट नही सकता।

श्लोक – अतो गृहक्षेत्रसुताप्तवित्तै-
र्जनस्य मोहोऽयमहं ममेति।

अर्थ – घर, खेत, पुत्र, स्वजन और धन आदि मे मैं और मेरे पन का जो मोह हो जाता है

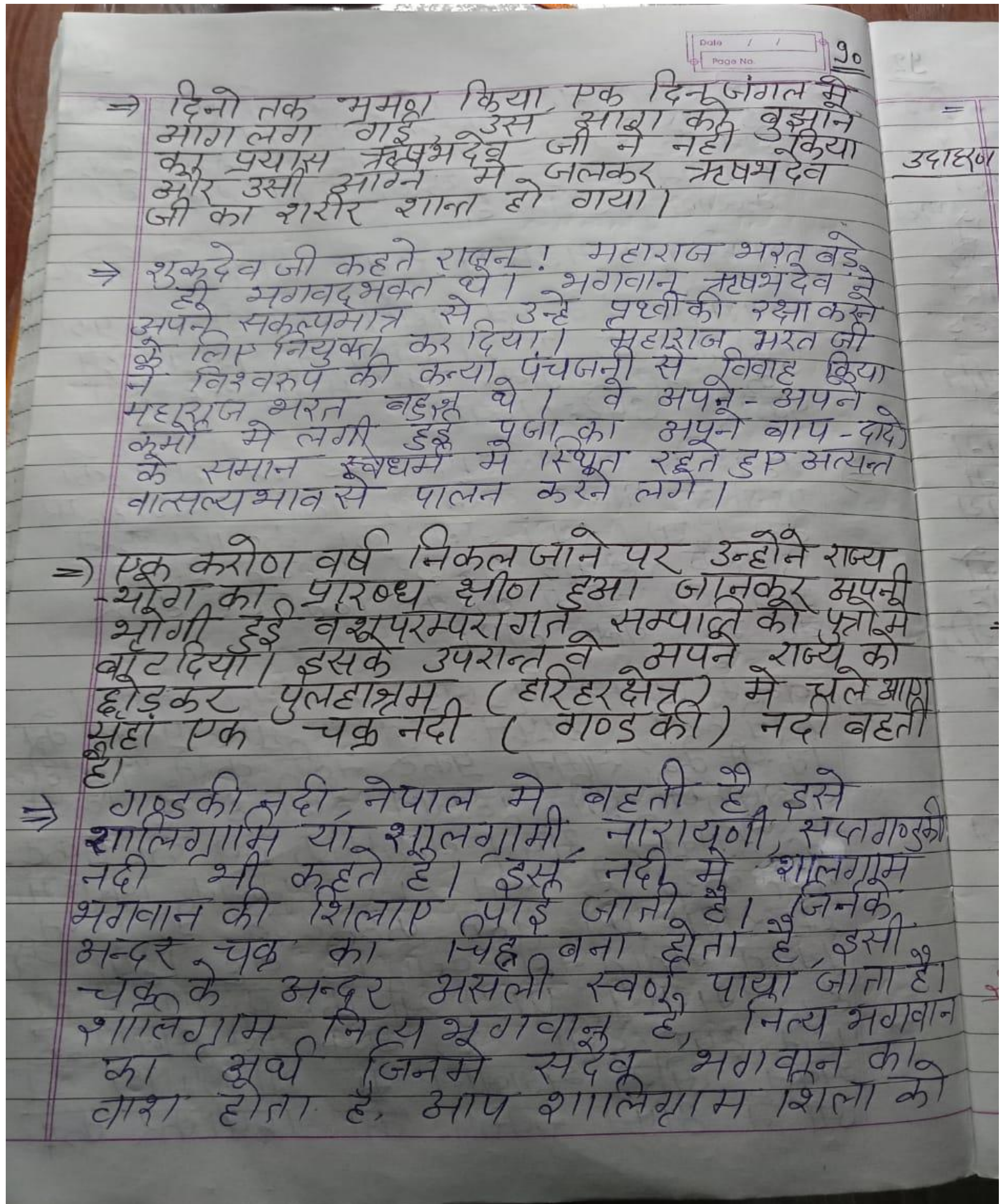
89

⇒ यही बन्धन का कारण है, जब किसी महापुरुष के द्वारा उसे जगत का वास्तविक ज्ञान होता है, तब वह जीव संसार से विरक्त होकर भगवान की प्राप्ति करके अपने जीवन का कल्याण कर लेता है।

⇒ शुकदेव जी महाराज राजन परीक्षित से कहते- ऋषभदेव जी के पुत्र यद्यपि स्वयं ही सब प्रकार सुशिक्षित थे, तो भी लोगो को शिक्षा देने के लिए भगवान ऋषभ ने उन्हे इस प्रकार उपदेश दिया।

⇒ ऋषभदेव जी ने अपने बड़े पुत्र भरत को पृथ्वी का पालन करने के लिए राजगद्दी पर बैठा दिया। स्वयं जगत का कल्याण करने के लिए सबकुछ छोड़कर विरक्त हो गए वस्त्रो का त्याग करके दिगम्बर होकर वन मे चले गए।

⇒ वन मे जाकर वे जड़ की भाँति विचरण करने लगे अपने स्वरुप और प्रभाव को किसी के सामने प्रकट नही करते थे, यही महापुरुषो की पहचान होती है, वे किसी के सामने अपने वास्तविक रुप को प्रकट नही करते है संत और भगवंत बिना मांगे हम सभी को बहुत कुछ दे देते है, किन्तु किन्तु बताते नही, क्यों कि वह छिपा लेते है मनुष्य थोड़ा भी कुछ करता है तो पहले छपा देता है, बस यही अन्तर है भक्त और भगवान मे, श्री ऋषभ देव जी ने अपने स्वरुप को छिपाकर कई



90

⇒ दिनो तक भ्रमण किया, एक दिन जंगल मे आग लग गई उस आग को बुझाने का प्रयास ऋषभदेव जी ने नहीं किया और उसी अग्नि मे जलकर ऋषभदेव जी का शरीर शान्त हो गया।

⇒ शुकदेव जी कहते राजन! महाराज भरत बड़े ही भगवद्‌भक्त थे। भगवान् ऋषभदेव ने अपने संकल्पमात्र से उन्हे पृथ्वी की रक्षा करने के लिए नियुक्त कर दिया। महाराज भरत जी ने विश्वरूप की कन्या पंचजनी से विवाह किया महाराज भरत बहुज्ञ थे। वे अपने-अपने कर्मो मे लगी हुई प्रजा का अपने बाप-दादे के समान स्वधर्म मे स्थित रहते हुए अत्यन्त वात्सल्यभाव से पालन करने लगे।

⇒ एक करोड वर्ष निकल जाने पर उन्होंने राज्य भोग का प्रारब्ध क्षीण हुआ जानकर अपनी भोगी हुई वंशपरम्परागत सम्पत्ति को पुत्रों मे बाँट दिया। इसके उपरान्त वे अपने राज्य को छोड़कर पुलहाश्रम (हरिहरक्षेत्र) मे चले आए। यहां एक चक्र नदी (गण्डकी) नदी बहती है।

⇒ गण्डकी नदी, नेपाल मे बहती है इसे शालिग्रामि या शालग्रामी, नारायणी, सप्तगण्डकी नदी भी कहते है। इस नदी मे शालग्राम भगवान की शिलाए पाई जाती है। जिनके अन्दर चक्र का चिह्न बना होता है, इसी चक्र के अन्दर असली स्वर्ण पाया जाता है। शालिग्राम नित्य भगवान् है, नित्य भगवान का अर्थ जिनमे सदैव भगवान का वास होता है, आप शालिग्राम शिला को

90

91

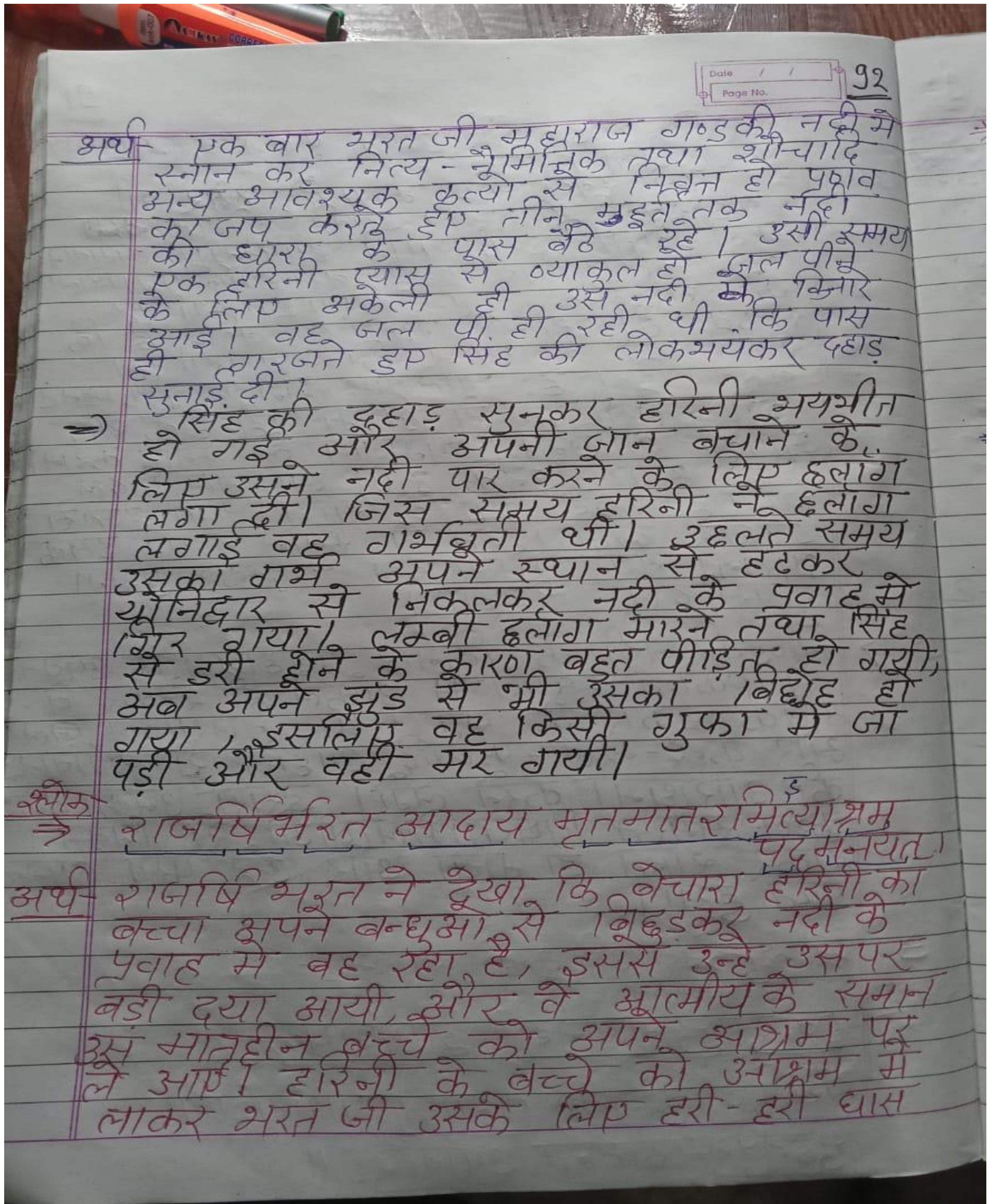
= घर ले आइए और उनका पूजन करना प्रारम्भ कर दीजिए।

उदाहरण – जैसे स्वर्ण को गला दो, फिर भी वह स्वर्ण ही रहता उसकी कीमत कम नहीं होती, इसी भाँति शालिग्राम भगवान भी नित्य भगवान है बस शालिग्रामशिला को घर लाकर पूजन करना प्रारम्भ कर सकते हो। शास्त्रों मे ऐसा वर्णन है कि शालिग्राम भगवान को तुलसी दल बहुत प्रिय है, शालिग्राम भगवान एक मिनट भी तुलसी दल से अलग नहीं होते, यदि आपको शालिग्राम भगवान को स्नान कराना है, तो आप उनके ऊपर जो तुलसीदल चढ़ा हुआ है उसी के साथ वाम हस्त से उठाकर दक्षिण हस्त से स्नान कराए, इसके उपरान्त नया तुलसी दल चढ़ाकर पुराना तुलसीदल हटाए।

⇒ गण्डकी नदी के किनारे पुलहाश्रम के उपवन मे एकान्त स्थान मे अकेले ही रहकर वे अनेक प्रकार के पत्र, पुष्प, तुलसीदल, जल और कन्द-मूल-फलादि उपहारो से भगवान की आराधना करने लगे। इससे उनका अन्तःकरण समस्त विषयाभिलाषाओ से निवृत्त होकर शान्त हो गया और उन्हे परम आनन्द प्राप्त हुआ।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते राजन –

श्लोक – एकदा तु महानद्यां कृताभिषेक-
नैयमिकावश्यको ब्रह्माक्षरमभिगृणानो
मुहूर्तत्रयमुदकान्त उपविवेश। ॥



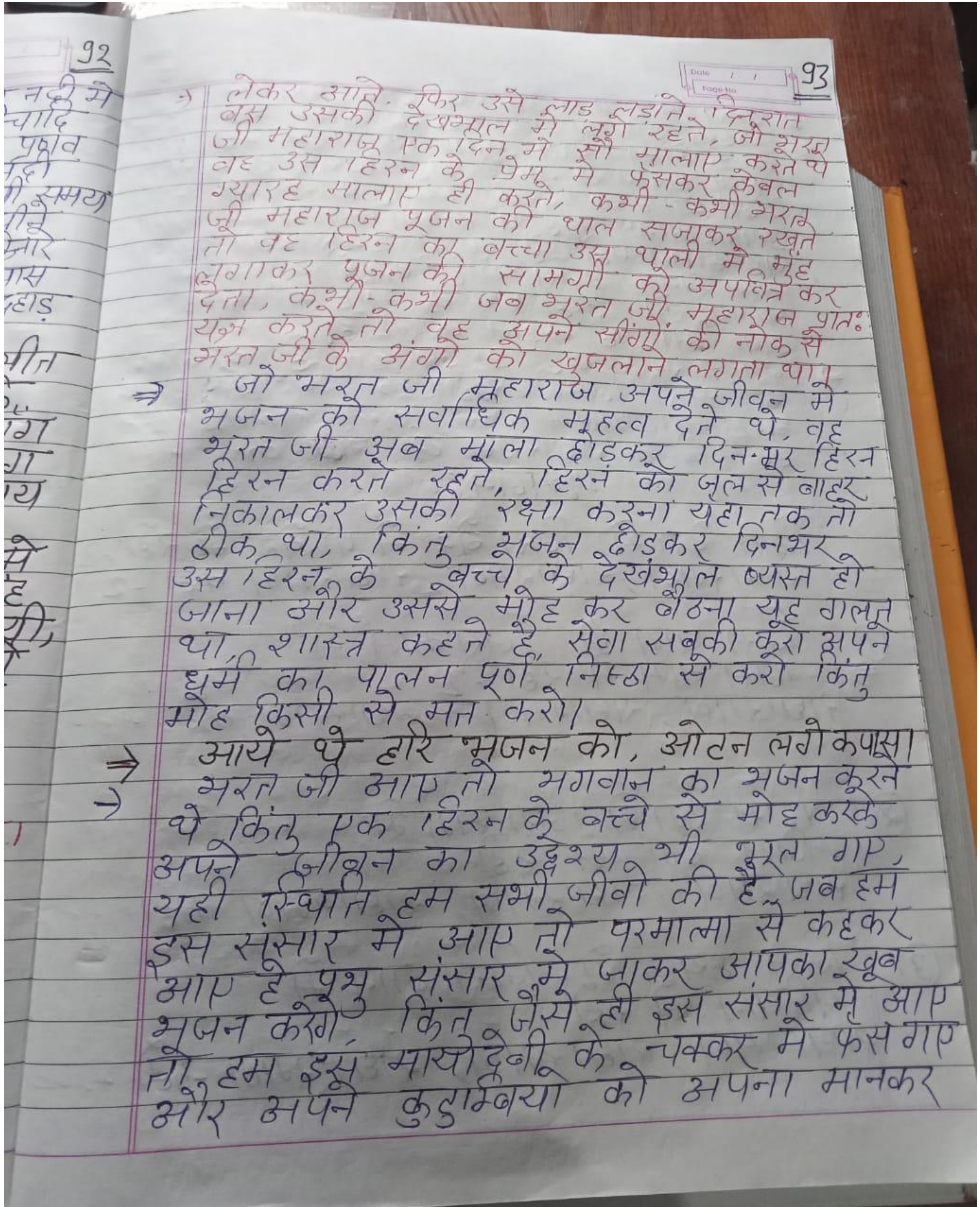
92

अर्थ- एक बार भरत जी महाराज गण्डकी नदी मे स्नान कर नित्य-नैमित्तिक तथा शौचादि अन्य आवश्यक कृत्यों से निवृत्त हो प्रणव का जप करते हुए तीन मुहूर्त तक नदी की धारा के पास बैठे रहे। उसी समय एक हरिनी प्यास से व्याकुल हो जल पीने के लिए अकेली ही उस नदी के किनारे आई। वह जल पी ही रही थी कि पास ही गरजते हुए सिंह की लोकभयंकर दहाड़ सुनाई दी।

=> सिंह की दहाड़ सुनकर हरिनी भयभीत हो गई और अपनी जान बचाने के लिए उसने नदी पार करने के लिए छलांग लगा दी। जिस समय हरिनी ने छलांग लगाई वह गर्भवती थी। उछलते समय उसका गर्भ अपने स्थान से हटकर योनिद्वार से निकलकर नदी के प्रवाह मे गिर गया। लम्बी छलांग मारने तथा सिंह से डरी होने के कारण बहुत पीड़ित हो गयी, अब अपने झुंड से भी उसका बिछोह हो गया, इसलिए वह किसी गुफा मे जा पड़ी और वहीं मर गयी।

श्लोक => राजर्षिर्भरत आदाय मृतमातरमित्याश्रमपदमनयत।

अर्थ- राजर्षि भरत ने देखा कि बेचारा हरिनी का बच्चा अपने बन्धुओं से बिछुड़कर नदी के प्रवाह मे बह रहा है, इससे उन्हें उस पर बड़ी दया आयी, और वे आत्मीय के समान उस मातृहीन बच्चे को अपने आश्रम पर ले आए। हरिनी के बच्चे को आश्रम मे लाकर भरत जी उसके लिए हरी-हरी घास



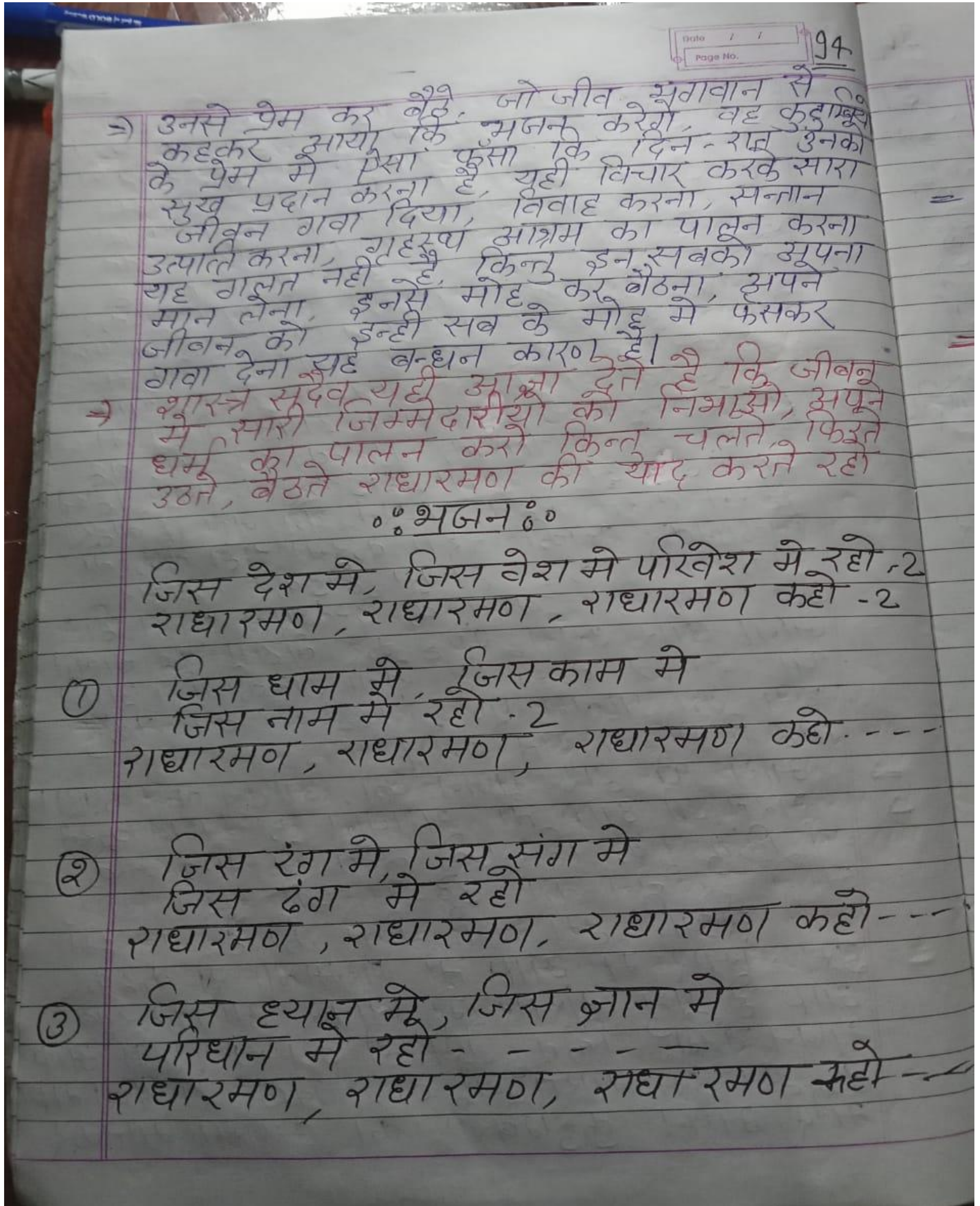
93

लेकर आते. फिर उसे लाड लड़ाते, भरत बस उसकी देखभाल मे लगे रहते, जो भरत जी महाराज एक दिन मे सौ मालाए करते थे वह उस हिरन के प्रेम मे फसकर केवल ग्यारह मालाए ही करते, कभी-कभी भरत जी महाराज पूजन की थाल सजाकर रखते तो वह हिरन का बच्चा उस थाली मे मुह लगाकर पूजन की सामग्री को अपवित्र कर देता, कभी-कभी जब भरत जी महाराज प्रातः यज्ञ करते तो वह अपने सींगो की नोक से भरत जी के अंगो को खुजलाने लगता था।

⇒ जो भरत जी महाराज अपने जीवन मे भजन को सर्वाधिक महत्व देते थे, वह भरत जी अब माला छोड़कर दिन-भर हिरन हिरन करते रहते, हिरन को जल से बाहर निकालकर उसकी रक्षा करना यहा तक तो ठीक था, किंतु भजन छोड़कर दिनभर उस हिरन के बच्चे के देखभाल व्यस्त हो जाना और उससे मोह कर बैठना यह गलत था, शास्त्र कहते है, सेवा सबकी करो अपने धर्म का पालन पूर्ण निष्ठा से करो किंतु मोह किसी से मत करो।

⇒ आये थे हरि भजन को, ओटन लगे कपास।

→ भरत जी आए तो भगवान का भजन करने थे किंतु एक हिरन के बच्चे से मोह करके अपने जीवन का उद्देश्य भी भूल गए, यही स्थिति हम सभी जीवो की है, जब हम इस संसार मे आए तो परमात्मा से कहकर आए है प्रभु संसार मे जाकर आपका खूब भजन करेंगे, किंतु जैसे ही इस संसार मे आए तो हम इस मायादेवी के चक्कर मे फस गए और अपने कुटुम्बियो को अपना मानकर



94

→ जो जीव भगवान से कहकर आया कि भजन करेगा, वह कुटुम्ब के प्रेम मे ऐसा फँसा कि दिन-रात उनको सुख प्रदान करना है, यही विचार करके सारा जीवन गवा दिया, विवाह करना, सन्तान उत्पत्ति करना, गृहस्थ आश्रम का पालन करना यह गलत नही है, किन्तु इन सबको अपना मान लेना, इनसे मोह कर बैठना, अपने जीवन को इन्ही सब के मोह मे फसकर गवा देना यह बन्धन कारण है।

→ शास्त्र सदैव यही आज्ञा देते है कि जीवन मे सारी जिम्मेदारीयो को निभाओ, अपने धर्म का पालन करो किन्तु चलते, फिरते उठते, बैठते राधारमण की याद करते रहो

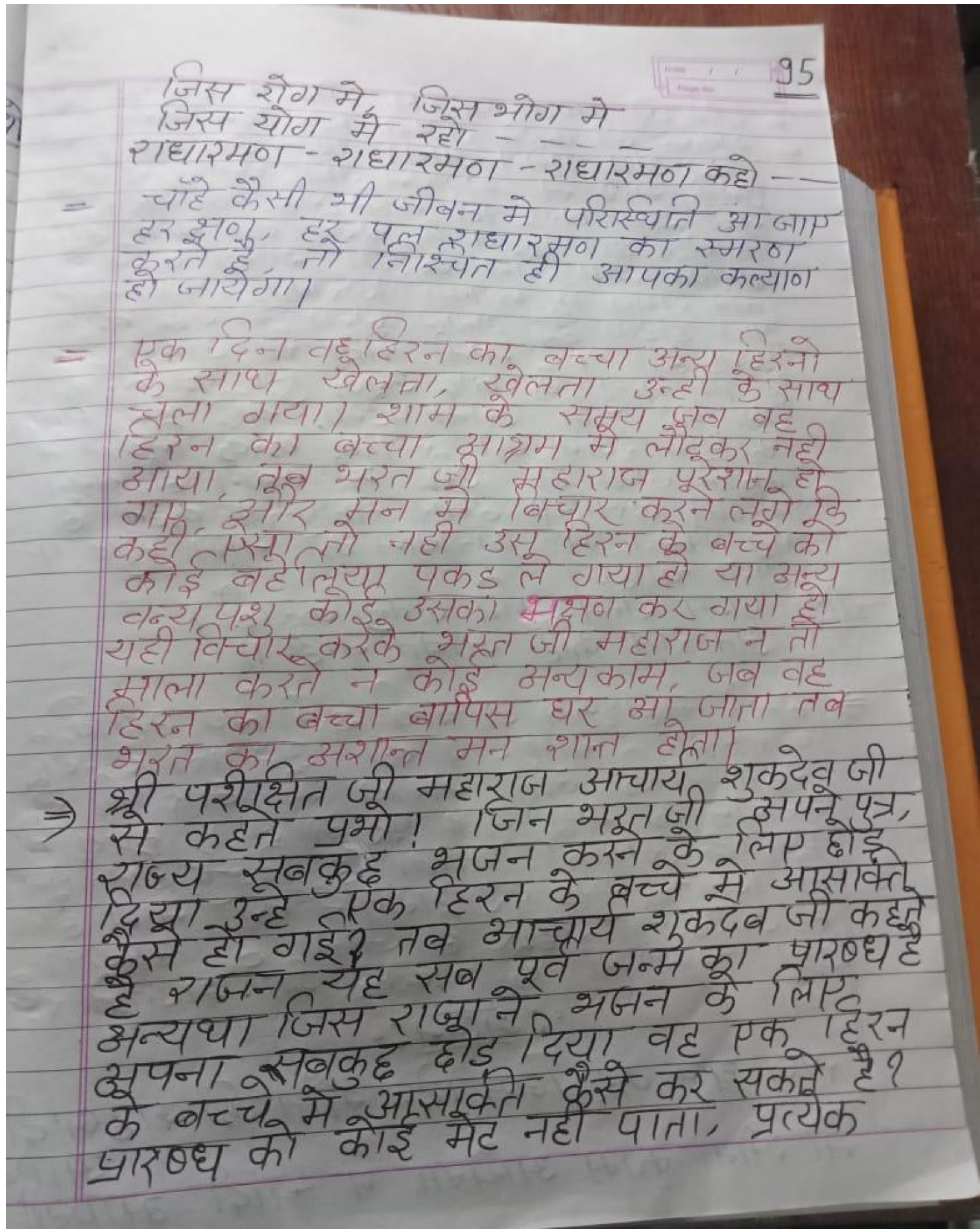
॰ भजन ॰

जिस देश मे, जिस वेश मे परिवेश मे रहो -2
राधारमण, राधारमण, राधारमण कहो -2

① जिस धाम मे, जिस काम मे
जिस नाम मे रहो -2
राधारमण, राधारमण, राधारमण कहो ---

② जिस रंग मे, जिस संग मे
जिस ढंग मे रहो
राधारमण, राधारमण, राधारमण कहो ---

③ जिस ध्यान मे, जिस ज्ञान मे
परिधान मे रहो - - - -
राधारमण, राधारमण, राधारमण कहो ---



95

जिस रोग मे, जिस भोग मे
जिस योग मे रहो - - -
राधारमण - राधारमण - राधारमण कहो - -

= चाँहे कैसी भी जीवन मे परिस्थिति आ जाए हर क्षण, हर पल राधारमण का स्मरण करते है तो निश्चित ही आपका कल्याण हो जायेगा।

= एक दिन वह हिरन का बच्चा अन्य हिरनो के साथ खेलता, खेलता उन्ही के साथ चला गया। शाम के समय जब वह हिरन का बच्चा आश्रम मे लौटकर नही आया, तब भरत जी महाराज परेशान हो गए, और मन मे विचार करने लगे कि कहीं ऐसा तो नही उस हिरन के बच्चे को कोई बहेलिया पकड ले गया हो या अन्य वन्य पशु कोई उसको भक्षण कर गया हो यही विचार करके भरत जी महाराज न तो माला करते न कोई अन्य काम, जब वह हिरन का बच्चा वापिस घर आ जाता तब भरत का अशान्त मन शान्त होता।

⇒ श्री परीक्षित जी महाराज आचार्य शुकदेव जी से कहते प्रभो! जिन भरत जी अपने पुत्र, राज्य सबकुछ भजन करने के लिए छोड़ दिया उन्हे एक हिरन के बच्चे से आसक्ति कैसे हो गई? तब आचार्य शुकदेव जी कहते है राजन यह सब पूर्व जन्म का प्रारब्ध है अन्यथा जिस राजा ने भजन के लिए अपना सबकुछ छोड दिया वह एक हिरन के बच्चे मे आसक्ति कैसे कर सकते है? प्रारब्ध को कोई मेट नही पाता, प्रत्येक

96

= जीव को अपना प्रारब्ध भोगना ही पड़ता है।
⇒ शुकदेव जी कहते राजन एक दिन भरत जी का अंत समय आया, किंतु उस समय भी उनके मुख से भगवान नाम का उच्चारण नहीं हुआ, बस यही कहते रहे कि मेरे जाने के बाद इस हिरन के बच्चे का क्या होगा इसकी रक्षा कौन करेगा, शास्त्र कहते है अंत समय में व्यक्ति जिसका स्मरण करके प्राण छोड़ता है अगले जन्म मे वही बनना पड़ता है, यदि नाती-पोतो से अधिक प्रेम है तो मृत्यु के बाद उनके पुत्र पुत्री बनकर उसी घर मे आना पडेगा, यदि किसी व्यक्ति के प्राण स्वान का स्मरण करके निकले तो अगले जन्म मे उसे भी स्वान ही बनना पड़ेगा। इसलिए हमारे महापुरुष कहते है अंत समय मे भगवान का नाम मुख पर होना चाहिए।

चौ० जन्म जन्म मुनि जतन कराहीं।
अंत राम कहि आवत नाही ॥

⇒ हमारे महापुरुष आचार्य इसीलिए आपको बार-बार नाम जप का अभ्यास करवाते रहते ताकि अंत समय मे आसानी से भगवान का नाम मुख पर आ जाए, मृत्यु तो एक दिन सबको आती है, किन्तु अंत समय मे जिनके मुख पर भगवान का नाम होता है, उनका तो उद्धार हो जाता है, अन्यथा इस चौरासी के चक्कर मे भटकते रहते है।

:: भजन ::

सज धज कर जिस दिन मौत की शहजादी आएगी
ना सोना काम आयेगा न चाँदी आएगी -2

(1) छोटा सा तू कितने बड़े अरमान है तेरे -2
मिट्टी का तू सोने के सब सामान है तेरे-2
मिट्टी की काया मिट्टी मे जिस दिन मिल जाएगी 2
ना सोना काम आएगा — — —

(2) अच्छे किए है कर्म तूने पाया मानव तन-2
हो अन्त समय भगवान का करले तू भजन
इस दास की ये वाणी एक दिन काम आएगी
ना सोना काम आएगा, न चाँदी आएगी-2
सजधजकर जिसदिन — — —

(3) पंछी है तू तो तोड़ के पिंजड़ा छोड़ के उड़जा रे
माया, महल के सारे बन्धन तोड़ के उड़जा रे 2
दिल की धड़कन मे, मौत जिस दिन गुनगुनाए-गी
न सोना काम आयेगा, न चाँदी आएगी
सज, धज कर जिस — — —

⇒ अन्त समय मे भरत जी को उस मृग का ही स्मरण रहा, इसलिए उन्हे अगले जन्म मे मृग बनकर आना पड़ा, उनकी साधना पूरी थी इसलिए भगवदाराधना के प्रभाव से उन्हे

⇒ अपने पूर्व जन्म का स्मरण बना रहा। इसलिए वह अपने अन्य (हिरन) साथियो को छोड़कर पुनः शालग्राम तीर्थ मे, जो भगवान का क्षेत्र है, वही आ गए, वहा रहकर भी वे काल की ही प्रतीक्षा करने लगे। अकेले रहकर वे सूखे पत्ते, घास और झाड़ियों द्वारा निर्वाह करते मृगयोनि की प्राप्ति कराने वाले प्रारब्ध के क्षय की बाट देखते रहे। अन्त मे उन्होने अपने शरीर का आधा भाग गण्डकी के जल में डुबाए रखकर उस मृग शरीर को छोड़ दिया।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते - राजन ! जब भरत जी महाराज ने अपना मृग शरीर छोड़ा तो उनका अगला जन्म आंगिरस गोत्र के पण्डित जी के घर हुआ, इस जन्म मे भी भगवान की कृपा से अपनी पूर्व जन्म परम्परा का स्मरण बना रहा। उन्हे यह ज्ञात था कि एकबार हिरन के बच्चे से मोह करके हिरन ही बनना पड़ा, यदि इसबार फिर से मायाजाल मे फँस गए तो फिर से भजन नही कर पाएगें और अंत में मृत्यु के बाद फिर किसी योनि मे जन्म लेकर आना पड़ेगा।

⇒ इसलिए भरत जी महाराज अपने परिवारीजनो के सामने मूर्ख बनकर रहते थे। भरत जी महाराज के पिता का उनके प्रति विशेष प्रेम था, इसलिए वह चाहते थे कि मेरा पुत्र मेरी ही तरह ब्राह्मण बने, हर पिता चाहते कि मेरा बेटा बड़ा होकर मेरे व्यापार को आगे बढ़ाए, भरत जी के पिता जी भी यही चाहते थे कि उनका बेटा उनके कार्य को आगे बढ़ाए, इसलिए भरत जी के पिता जी ने उनका उपनयन - संस्कार किया, आजकल तो लोग बस नाम के ही पण्डित है, द्विवेदी, त्रिवेदी, चतुर्वेदी

99

⇒ यज्ञोपवीत संस्कार के उपरान्त जनेऊ कैटा है? कई ब्राह्मणों को यह भी ज्ञात नहीं होता जनेऊ संस्कार तो बस नाममात्र के लिए करते हैं उसके उपरान्त भूल जाते हैं। ब्राह्मण क्षत्रीय, वैश्य तीनों को उपनयन संस्कार कराना चाहिए. यज्ञोपवीत धारण करने से कई प्रकार के लाभ होते हैं। जनेऊ को दाए कान पर धारण करने से कान की वह नस दबती है जिससे मस्तिष्क की कोई सोई हुई तंद्रा कार्य करती है। दाएकान की नस अंडकोष और गुप्तेन्द्रियो से जुड़ी होती है। मूत्र विसर्जन के समय दाएकान पर जनेऊ लपेटने से शुक्राणुओं की रक्षा होती है। कान पर जनेऊ लपेटने से मनुष्य में सूर्य नाड़ी का जागृण होता है। कान पर जनेऊ लपेटने से पेट संबधी रोग एवं रक्तचाप की समस्या से भी बचाव होता है।

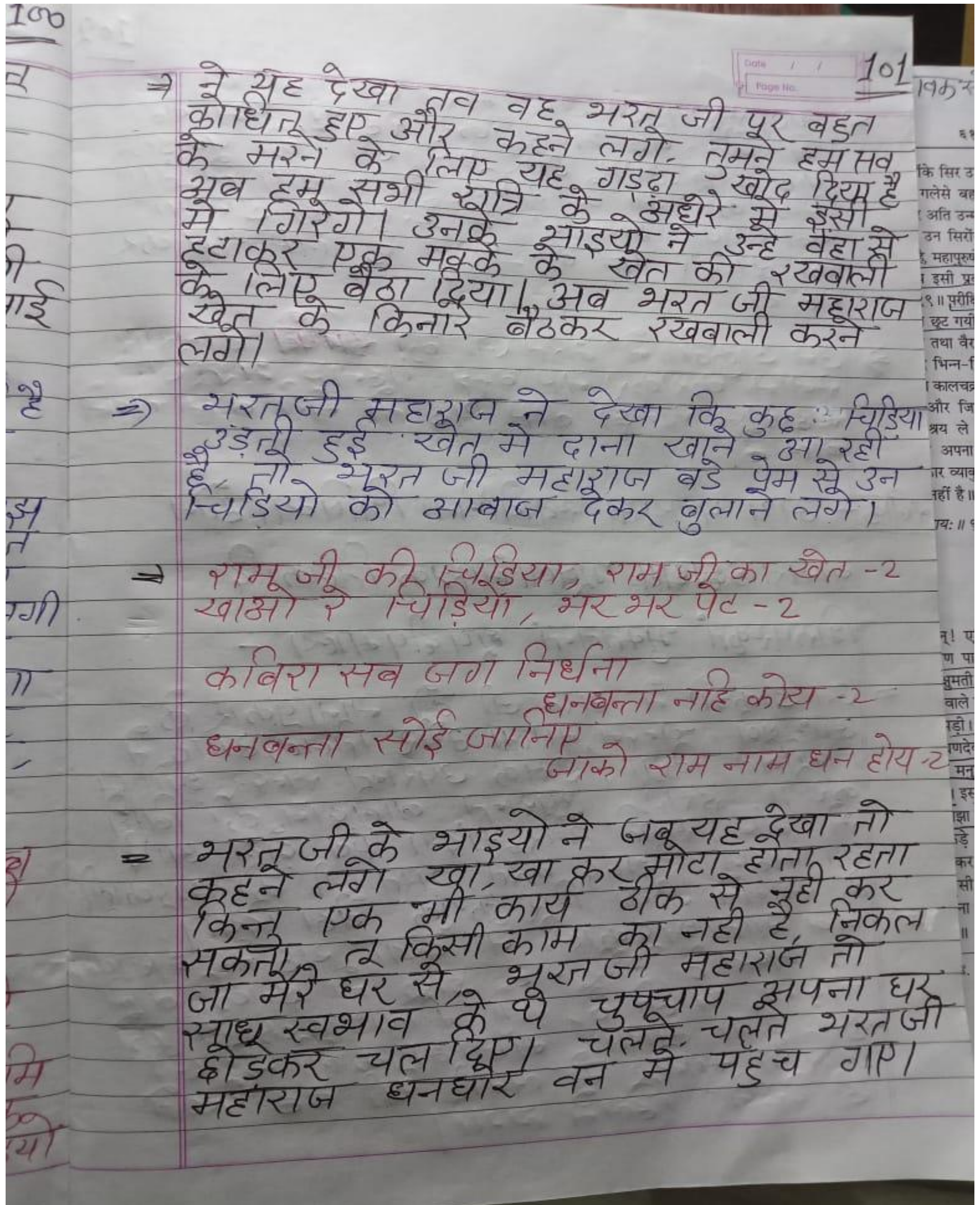
⇒ भरत जी महाराज का उपनयन संस्कार हुआ। हरपिता का कर्तव्य है कि पुत्र को शिक्षा दे' इस शास्त्राविधि के अनुसार उन्होंने इन्हे शौच - आचमन आदि आवश्यक कर्मो की शिक्षा दी। पिता जी चाहते थे कि उनका पुत्र वेदाध्ययन करे विद्वान बने. किन्तु भरत जी महाराज भलीभाँति जानते थे कि यदि मैने पिता जी की बात स्वीकार की तो मुझे भी पण्डित जी बनकर पिताजी की यजमानी में जाकर सत्यनारायण जी की कथा करनी पड़ेगी, और अंत में इन्ही सब में फसकर दुर्गति हो जाएगी, इसलिए भरत जी महाराज पिता के इच्छा के विपरीत सारे कार्य करते और सभी के सामने मूर्ख बनकर रहते पिता जी ने देखा यह तो मेरी इच्छा के विपरीत कार्य करता है, लगता है कोई मूर्ख मेरे घर में जन्म लेकर आ गया है।

100

⇒ पुत्र की चिन्ता करते-करते एक दिन भरत जी के पिता की मृत्यु हो गई। मूर्खों की भाँति व्यवहार करने के कारण इनका नाम लोगों ने जड़भरत रख दिया। पिता के जाने के पश्चात भरत जी महाराज चुपचाप घर मे एकान्त मे बैठे रहते, एक दिन जड़भरत जी की भाभी ने अपने पति से कहा स्वामी आपका भाई घर मे पड़ा-पड़ा खाता रहता है, इससे कोई शारीरिक श्रम कराया करिए।

⇒ भरत जी के भाई ने कहा हमारे भाई है और उनकी मनोस्थिति भी अभी ठीक नही है इसलिए उन्हे यही रहने दो कही काम के लिए मत भेजो, श्रीमती जी समझ गई कि अगर सीधे-सीधे कोई बात कहेगी तो वो इन्हे अनुचित लगेगी, इसलिए बात को घुमाकर बोलना चाहिए, वह कहने लगी देखो स्वामी यदि आपका भाई पड़ा-पड़ा खाता ही रहेगा, शारीरिक श्रम नही करेगा तो उसके शरीर मे रोग हो जायेगा, और अंत मे उपचार आपको ही कराना पड़ेगा, स्वस्थ शरीर के लिए थोड़ा बहुत श्रम करते रहना चाहिए।

⇒ श्रीमती जी ने जब इस प्रकार समझाया तब उन्हे समझ आ गया और उन्होने भरतजी को एक खेत के पास खड़ा कर दिया लेजाकर और उनसे कहा, यह जो खेत को जोतने के बाद किनारे की भूमि रह गई है जोतने को, उसको फावड़े से सही करो। भरत जी महाराज ने उस भूमि पर इतना फावड़ा चलाया कि वहा एक बड़ा गड्ढा कर दिया। जब भरत जी के भाइयो



101

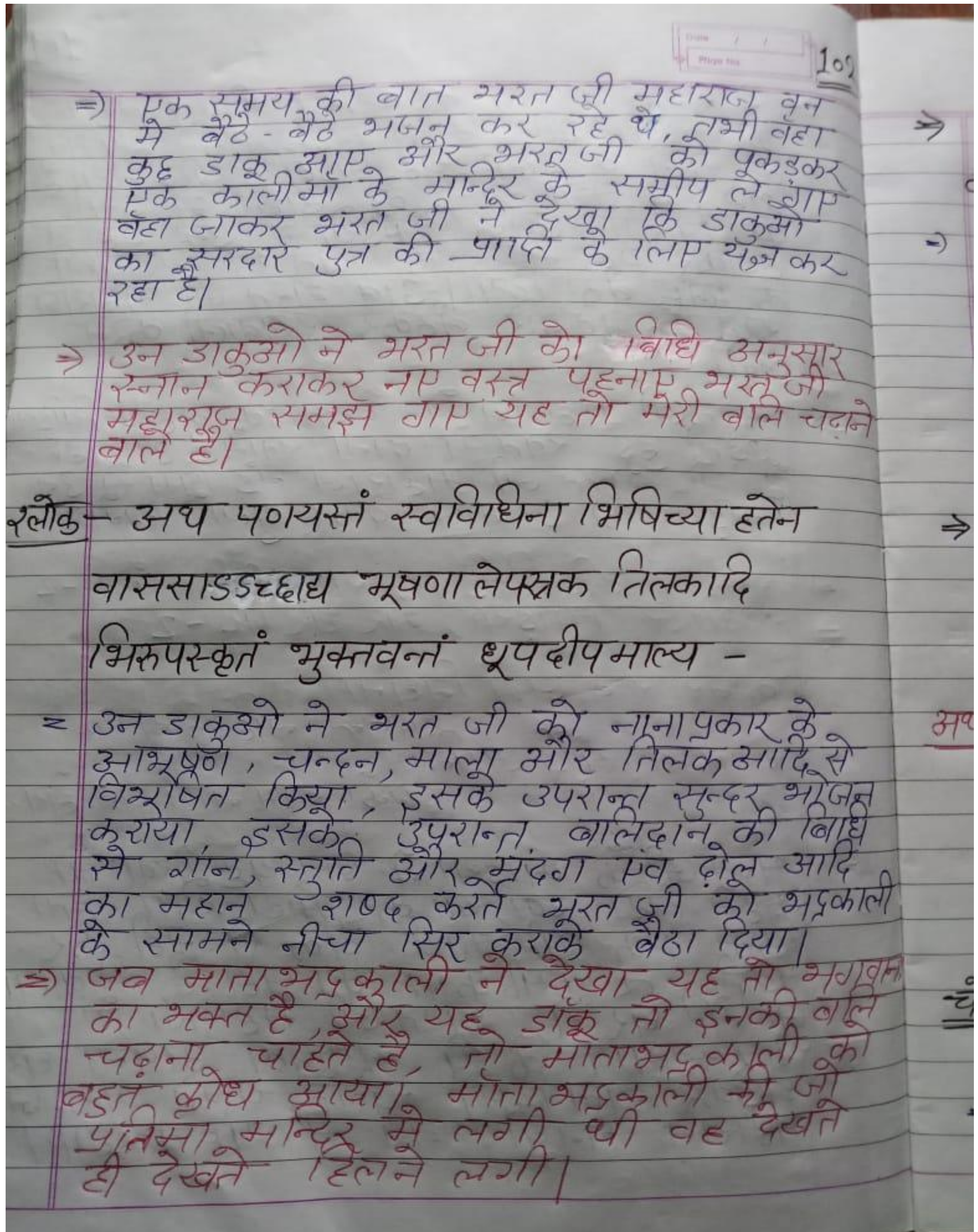
⇒ ने यह देखा तब वह भरत जी पर बहुत क्रोधित हुए और कहने लगे, तुमने हम सब के मरने के लिए यह गड्ढा खोद दिया है अब हम सभी रात्रि के अंधेरे में इसी मे गिरेगे। उनके भाइयो ने उन्हे वहा से हटाकर एक मक्के के खेत की रखवाली के लिए बैठा दिया। अब भरत जी महाराज खेत के किनारे बैठकर रखवाली करने लगे।

⇒ भरत जी महाराज ने देखा कि कुछ चिड़िया उड़ती हुई खेत मे दाना खाने आ रही है तो भरत जी महाराज बडे प्रेम से उन चिड़ियो को आवाज देकर बुलाने लगे।

⇒ राम जी की चिड़िया, राम जी का खेत -2
खाओ रे चिड़ियों, भर भर पेट -2

कबिरा सब जग निर्धना
धनवन्ता नहि कोय -2
धनवन्ता सोई जानिए
जाको राम नाम धन होय -2

= भरत जी के भाइयो ने जब यह देखा तो कहने लगे खा, खा कर मोटा होता रहता किन्तु एक भी कार्य ठीक से नही कर सकता, तू किसी काम का नही है, निकल जा मेरे घर से, भरत जी महाराज तो साधु स्वभाव के थे चुपचाप अपना घर छोड़कर चल दिए। चलते चलते भरत जी महाराज घनघोर वन मे पहुच गए।



102

⇒ एक समय की बात भरत जी महाराज वन मे बैठे-बैठे भजन कर रहे थे, तभी वहा कुछ डाकू आए और भरत जी को पकड़कर एक कालीमा के मन्दिर के समीप ले गए वहा जाकर भरत जी ने देखा कि डाकुओ का सरदार पुत्र की प्राप्ति के लिए यज्ञ कर रहा है।

⇒ उन डाकुओ ने भरत जी को विधि अनुसार स्नान कराकर नए वस्त्र पहनाए भरत जी महाराज समझ गए यह तो मेरी बलि चढ़ाने वाले है।

श्लोक – अथ पणयस्तं स्वविधिना भिषिच्या हतेन
वाससाऽऽच्छाद्य भूषणालेपस्त्रक तिलकादि
भिरुपस्कृतं भुक्तवन्तं धूपदीपमाल्य –

= उन डाकुओ ने भरत जी को नाना प्रकार के आभूषणों, चन्दन, माला और तिलक आदि से विभूषित किया, इसके उपरान्त सुन्दर भोजन कराया, इसके उपरान्त बलिदान की विधि से गान, स्तुति और मृदंग एवं ढोल आदि का महान शब्द करते भरत जी को भद्रकाली के सामने नीचा सिर कराके बैठा दिया।

⇒ जब माता भद्रकाली ने देखा यह तो भगवान का भक्त है, और यह डाकू तो इनकी बलि चढ़ाना चाहते है, तो माता भद्रकाली को बहुत क्रोध आया। माता भद्रकाली की जो प्रतिमा मन्दिर मे लगी थी वह देखते ही देखते हिलने लगी।

⇒ तदुपलभ्य ब्रह्मतेजसातिदुर्विषहेण दन्दह्यमानेन वपुषा सहसोच्चचाट सैव देवी भद्रकाली।

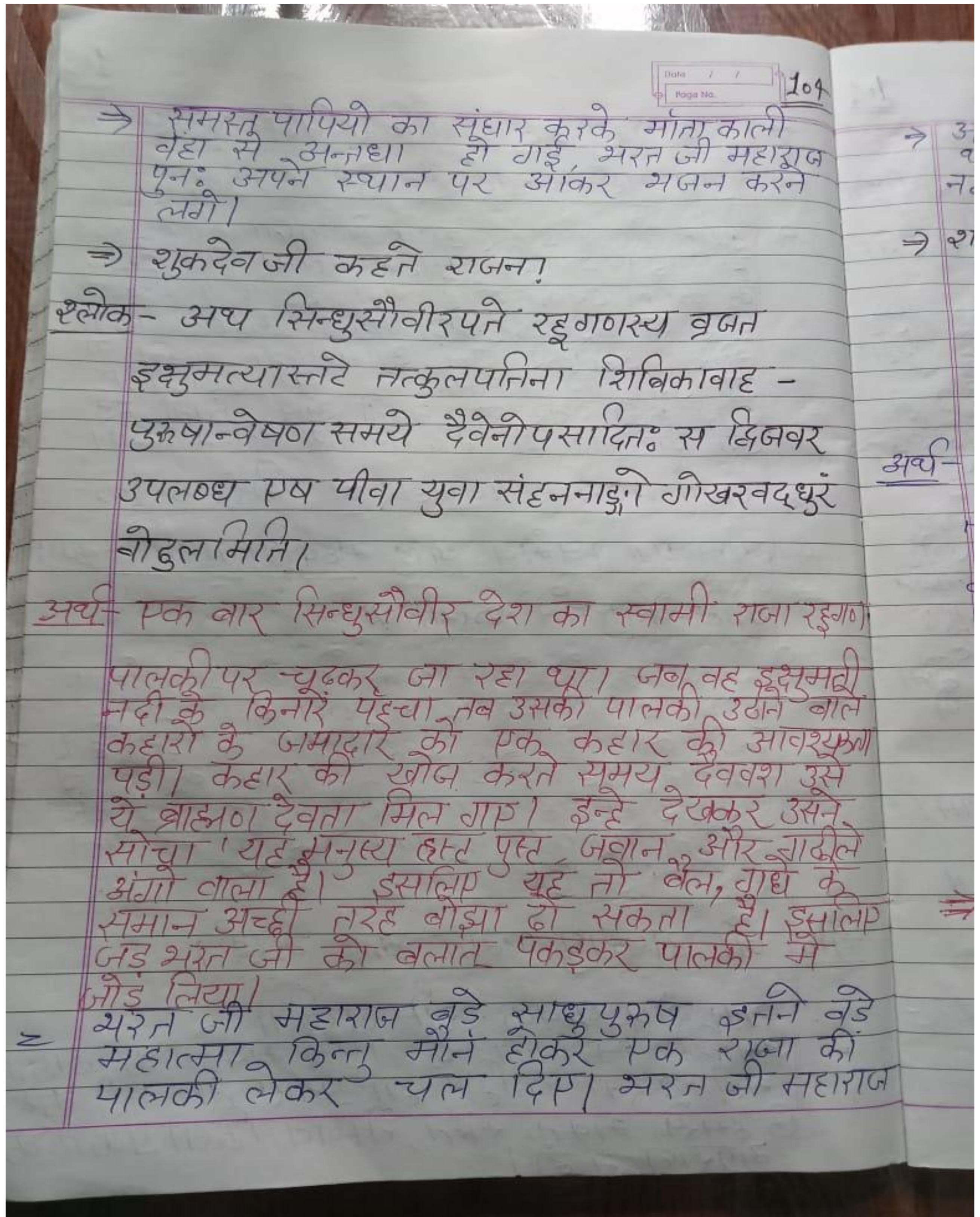
⇒ मूर्ति को फोड़कर उसमे से माता काली प्रकट हो गई। अत्यन्त असहनशीलता और क्रोध के कारण उनकी भौहे चढ़ी हुई थी। उन्होने क्रोध से तड़ककर बड़ा भीषण अट्टहास किया और उछलकर उस अभिमन्त्रित खड्ग से ही उन सारे पापियो के सिर उड़ा दिए और ऊँचे स्वर से गाती और नाचती हुई उन सिरो को ही गेंद बनाकर खेलने लगी।

⇒ जगौ ननर्त च विजहार च शिरः कन्दुक-लीलया॥ एवमेव खलु महदभिचारातिक्रमः कात्स्न्येनात्मने फलति॥

अर्थ- शास्त्र कहते है, महापुरुषो के प्रति किया हुआ अत्याचाररूप अपराध इसी प्रकार ज्यो का त्यो अपने ही ऊपर पड़ता है। भगवान कहते कोई मेरा अपराध करदे तो मुझे क्रोध नही आता, किन्तु यदि कोई मेरे भक्तो को कष्ट पहुँचाता है तो मैं उसे छोड़ता नही हूँ।

चौ॰ जो अपराधु भगत कर करई।
राम रोष पावक सो जरई॥

- इसलिए भगवान के प्रिय भक्तो का अपराध नही करना चाहिए, हमे प्रयास तो यही करे कि हमसे भक्त, सन्त, वैष्णव किसी प्रकार का अपराध न हो।



104

⇒ समस्त पापियो का संघार करके माता काली वहा से अन्तर्धा हो गई, भरत जी महाराज पुनः अपने स्थान पर आकर भजन करने लगे।

⇒ शुकदेव जी कहते राजन!

श्लोक- अथ सिन्धुसौवीरपते रहूगणस्य व्रजत इक्षुमत्यास्तटे तत्कुलपतिना शिबिकावाह - पुरुषान्वेषण समये दैवेनोपसादितः स द्विजवर उपलब्ध एष पीवा युवा संहननाङ्गो गोखरवद्धुरं वोढुमिति।

अर्थ- एक बार सिन्धुसौवीर देश का स्वामी राजा रहूगण पालकी पर चढ़कर जा रहा था। जब वह इक्षुमती नदी के किनारे पहुंचा तब उसकी पालकी उठाने वाले कहारो के जमादार को एक कहार की आवश्यकता पड़ी। कहार की खोज करते समय दैववश उसे ये ब्राह्मण देवता मिल गए। इन्हे देखकर उसने सोचा 'यह मनुष्य हृष्ट पुष्ट, जवान और गठीले अंगो वाला है। इसलिए यह तो बैल, गधे के समान अच्छी तरह बोझा ढो सकता है। इसलिए जड़ भरत जी को बलात पकड़कर पालकी मे जोड़ लिया।

⇒ भरत जी महाराज बड़े साधु पुरुष इतने बड़े महात्मा किन्तु मौन होकर एक राजा की पालकी लेकर चल दिए। भरत जी महाराज

104 105

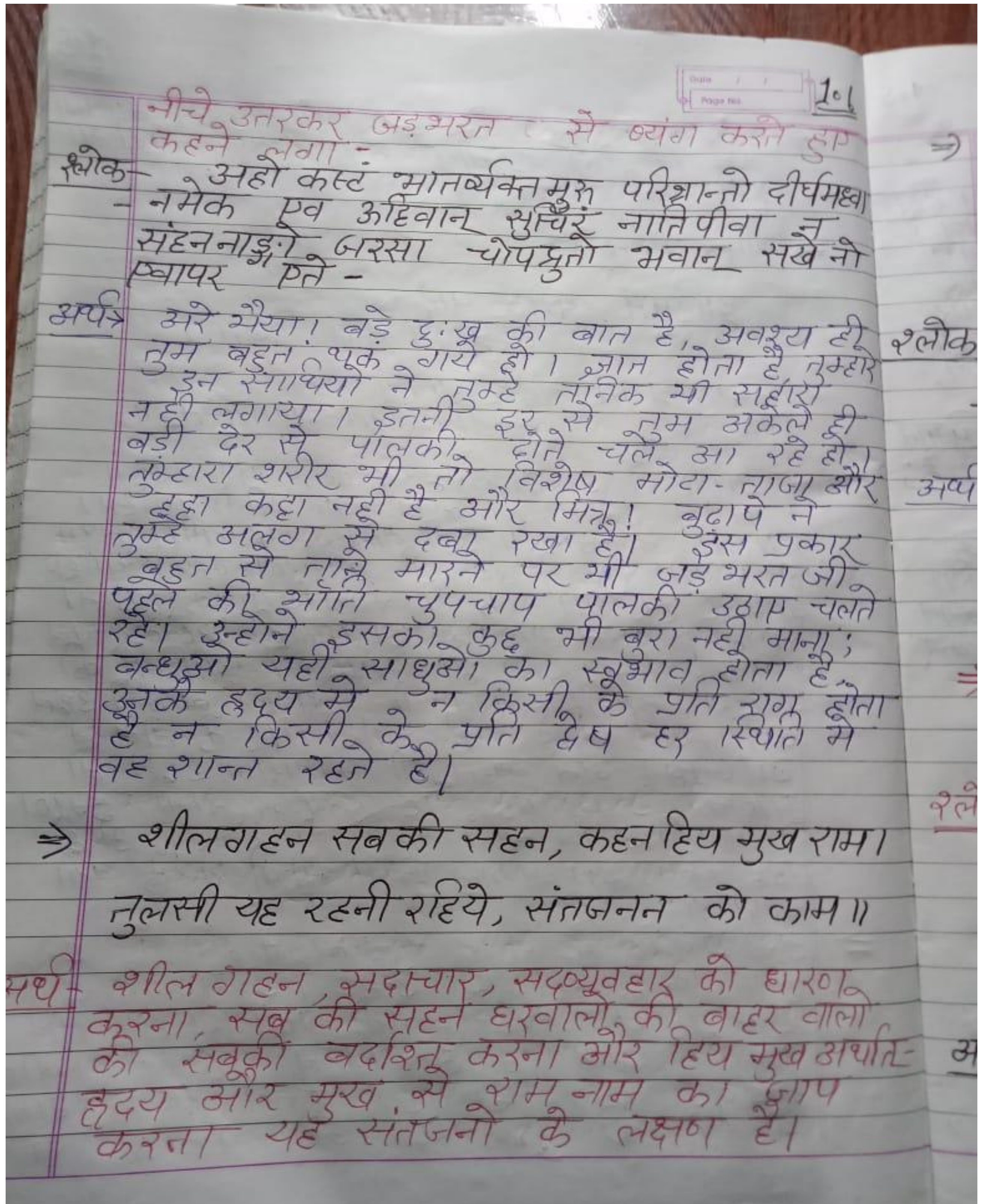
→ अहिंसा के बहुत बड़े पुजारी थे, उनका मानना था कि पैरों के नीचे आकर एक चींटी भी नहीं मरनी चाहिए।

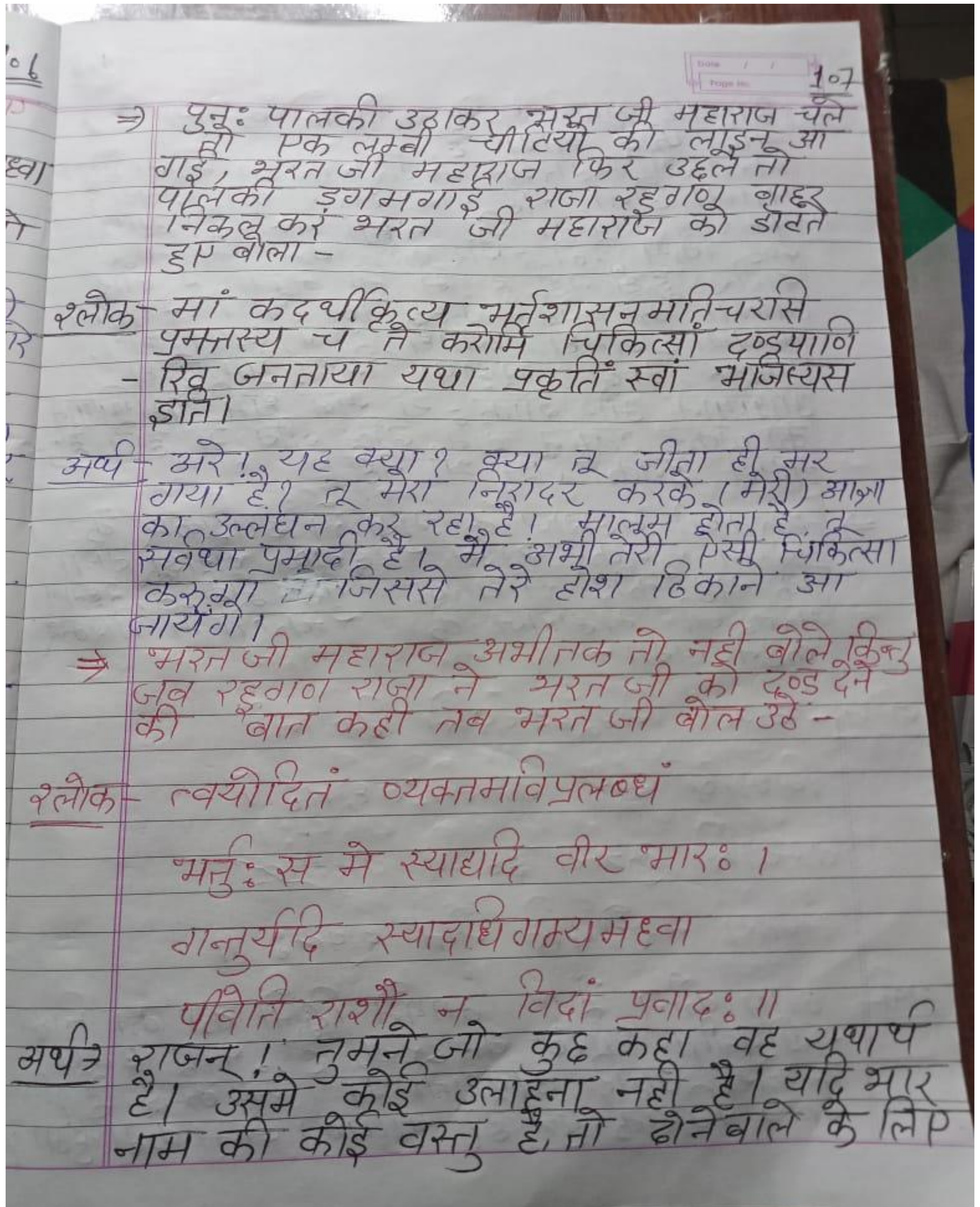
→ शास्त्र कहते है -

दृष्टिपूतं न्यसेत् पादं
वस्त्र पूतं जलं पिबेत्।
शास्त्रपूतं वदेद् वाक्यं
मनः पूतं समाचरेत्॥

अर्थ- आँख से अच्छी तरह देखकर पैर रखना चाहिए, वस्त्र से छानकर जल पीना चाहिए। शास्त्रों के अनुसार ही बात करनी चाहिए तथा मन को शुद्ध करके ही आचरण करना चाहिए अर्थात् हर बात ठीक से सोच विचारकर करनी चाहिए। भरत जी महाराज पालकी उठाकर चल तो दिए किन्तु जैसे ही मार्ग में चीटियों की लाइन आती, भरत जी महाराज ऊँचे उछल जाते ताकि कोई भी चींटी पैर के नीचे न आ जाए। जब भरत जी महाराज उछले तो पालकी डगमगाई, यह देखकर राजा रहूगण ने पालकी उठाने वाले कहारो से कहा। अच्छी तरह चलो, इस प्रकार ऊँची नीची करके क्यो चलते हो?

⇛ इस प्रकार के वचन सुनकर कहारो को डर लगा कि कहीं राजा उन्हे दण्ड न दे दे इसलिए वे राजा से कहने लगे महाराज हम सब तो ठीक चल रहे है, किन्तु यह नया वाला गड़बड़ कर रहा है, तब राजा रहूगण ने पालकी रुकवादी और पालकी से


101
नीचे उतरकर जड़भरत से व्यंग्य करते हुए कहने लगा -
श्लोक - अहो कष्टं भ्रातर्व्यक्तमुरु परिश्रान्तो दीर्घमध्वा नमेक एव ऊढिवान् सुचिरं नातिपीवा न संहननाङ्गो जरसा चोपद्रुतो भवान् सखे नो एवापर एते -
अर्थ - अरे भैया! बड़े दुःख की बात है, अवश्य ही तुम बहुत थक गये हो। ज्ञात होता है तुम्हारे इन साथियों ने तुम्हें तनिक भी सहारा नहीं लगाया। इतनी दूर से तुम अकेले ही बड़ी देर से पालकी ढोते चले आ रहे हो। तुम्हारा शरीर भी तो विशेष मोटा-ताजा और हट्टा कट्टा नहीं है और मित्र! बुढ़ापे ने तुम्हें अलग से दबा रखा है। इस प्रकार बहुत से ताने मारने पर भी जड़भरत जी पहले की भाँति चुपचाप पालकी उठाए चलते रहे। उन्होंने इसको कुछ भी बुरा नहीं माना; बन्धुओ यही साधुओं का स्वभाव होता है, उनके हृदय में न किसी के प्रति राग होता है न किसी के प्रति द्वेष हर स्थिति में वह शान्त रहते हैं।
⇒ शीलगहन सबकी सहन, कहन हिय मुख राम।
तुलसी यह रहनी रहिये, संतजनन को काम॥
अर्थ - शील गहन, सदाचार, सदव्यवहार को धारण करना, सब की सहन घरवालों की बाहर वालों की सबकी बर्दाश्त करना और हिय मुख अर्थात् हृदय और मुख से राम नाम का जाप करना यह संतजनों के लक्षण है।



106

107

⇒ पुनः पालकी उठाकर भरत जी महाराज चले ही एक लम्बी चींटियों की लाइन आ गई, भरत जी महाराज फिर उछले तो पालकी डगमगाई, राजा रहूगण बाहर निकल कर भरत जी महाराज को डांटते हुए बोला -

श्लोक- मां कदर्थीकृत्य मर्तृशासनमतिचरसि प्रमत्तस्य च ते करोमि चिकित्सां दण्डपाणि-रिव जनतायां यथा प्रकृतिं स्वां भाजिष्यसि इति।

अर्थ- अरे! यह क्या? क्या तू जीता ही मर गया है? तू मेरा निरादर करके (मेरी) आज्ञा का उल्लंघन कर रहा है! मालूम होता है तू सर्वथा प्रमादी है। मैं अभी तेरी ऐसी चिकित्सा करूंगा जिससे तेरे होश ठिकाने आ जायेंगे।

⇒ भरत जी महाराज अभी तक तो नहीं बोले किन्तु जब रहूगण राजा ने भरत जी को दण्ड देने की बात कही तब भरत जी बोल उठे -

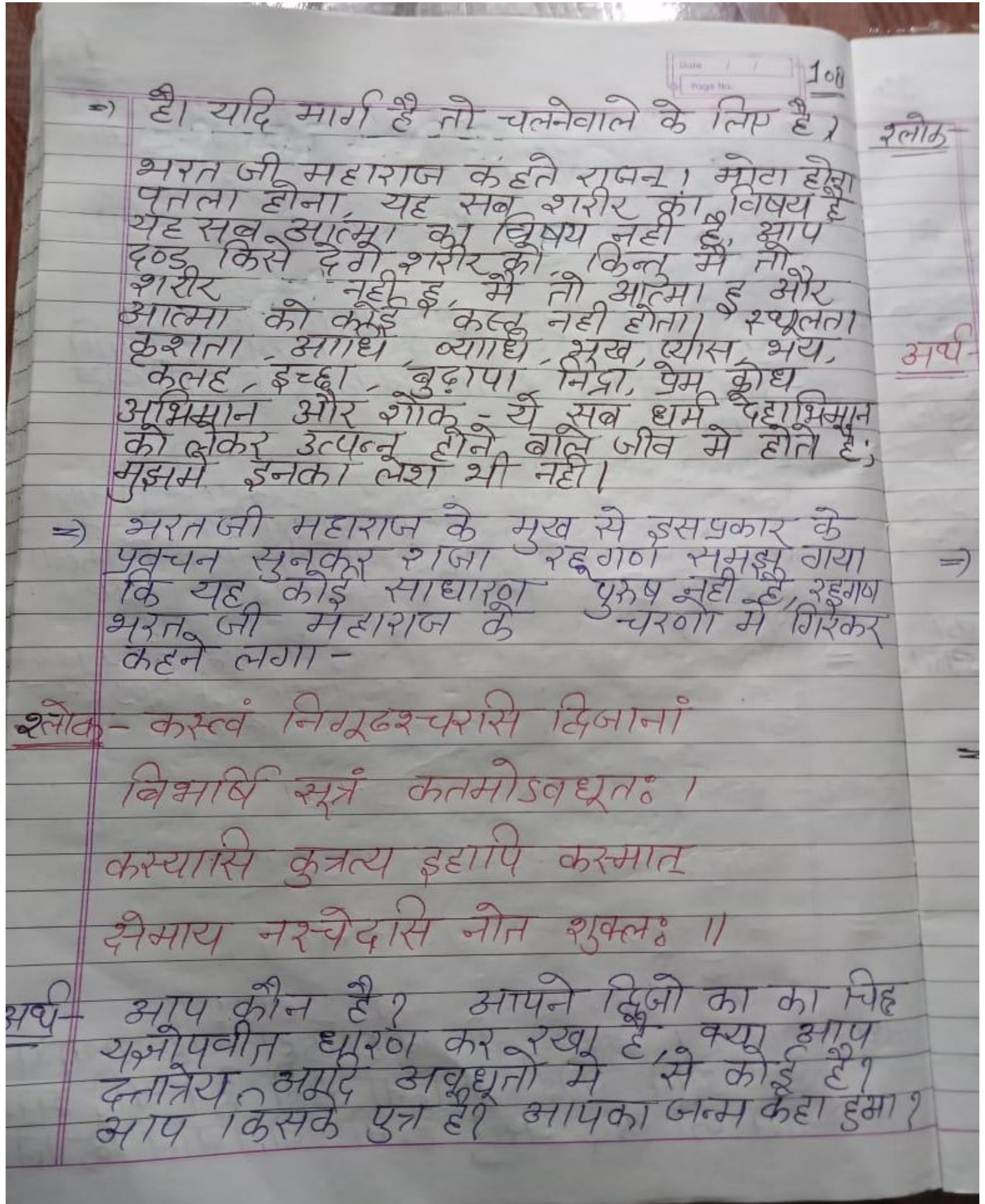
श्लोक- त्वयोदितं व्यक्तमविप्रलब्धं

भर्तुः स मे स्याद्यदि वीर भारः।

गन्तुर्यदि स्यादधिगम्यमध्वा

पीवेति राशौ न विदां प्रवादः॥

अर्थ- राजन्! तुमने जो कुछ कहा वह यथार्थ है। उसमे कोई उलाहना नहीं है। यदि भार नाम की कोई वस्तु है तो ढोनेवाले के लिए



108

⇒ हाँ यदि मार्ग है तो चलनेवाले के लिए है। श्लोक-

भरत जी महाराज कहते राजन! मोटा होना पतला होना, यह सब शरीर का विषय है यह सब आत्मा का विषय नहीं है, आप दण्ड किसे देंगे शरीर को, किन्तु मैं तो शरीर नहीं हूं, मैं तो आत्मा हूं और आत्मा को कोई कष्ट नहीं होता। स्थूलता कृशता, आधि, व्याधि, भूख, प्यास, भय, कलह, इच्छा, बुढ़ापा, निद्रा, प्रेम, क्रोध अभिमान और शोक - ये सब धर्म देहाभिमान को लेकर उत्पन्न होने वाले जीव मे होते हैं; मुझमे इनका लेश भी नहीं। अर्थ-

⇒ भरत जी महाराज के मुख से इस प्रकार के प्रवचन सुनकर राजा रहूगण समझ गया कि यह कोई साधारण पुरुष नहीं है, रहूगण भरत जी महाराज के चरणों में गिरकर कहने लगा -

श्लोक- कस्त्वं निगूढश्चरसि द्विजानां

बिभर्षि सूत्रं कतमोऽवधूतः।

कस्यासि कुत्रत्य इहापि कस्मात्

क्षेमाय नश्चेदसि नोत शुक्लः॥

अर्थ- आप कौन है? आपने द्विजो का का चिह्न यज्ञोपवीत धारण कर रखा है, क्या आप दत्तात्रेय आदि अवधूतों मे से कोई है? आप किसके पुत्र है? आपका जन्म कहा हुआ?

109

श्लोक- नाहं विशङ्के सुरराजवज्रा-
न्न त्र्यक्षशूलान्न यमस्य दण्डात्।
नाग्न्यर्कसोमानिलवित्तपास्त्रा-
च्छङ्के भृशं ब्रह्मकुलावमानात्॥

अर्थ- रहूगण राजा भरत जी महाराज से कहने लगा मुझे इन्द्र के वज्र का कोई डर नही है, न मैं, महादेव जी के त्रिशूल से डरता हूँ और न यमराज के दण्ड से, परन्तु मैं ब्राह्मण कुल के अपमान से बहुत ही डरता हूँ।

⇒ राजा रहूगण जड़भरत जी से कहने लगा महाराज मैं तो ज्ञान लेने के लिए कपिलजी के पास जा रहा था किन्तु भगवान ने कृपा करके मुझे आपसे मिलवा दिया, अब आप ही हमे कुछ सत्संग सुनाइए।

⇒ राजा रहूगण पढ़ा लिखा था, इसलिए वह भरतजी महाराज से तर्क करते हुए कहने लगा महाराज आप तो कहते है, मैं आत्मा हूँ मुझे कोई कष्ट नही होता, कष्ट शरीर को होता है, किन्तु जहाँ तक मेरा अनुभव है, कि बोझा ढोने से यदि कष्ट शरीर को होगा, तो आत्मा को भी होगा।

⇒ राजा रहूगण ने एक उदाहरण भी प्रस्तुत किया-

श्लोक- स्थाल्यग्नि तापात्पयसोऽभिताप-
स्तत्तापतस्तण्डुल गर्भरन्धिः।

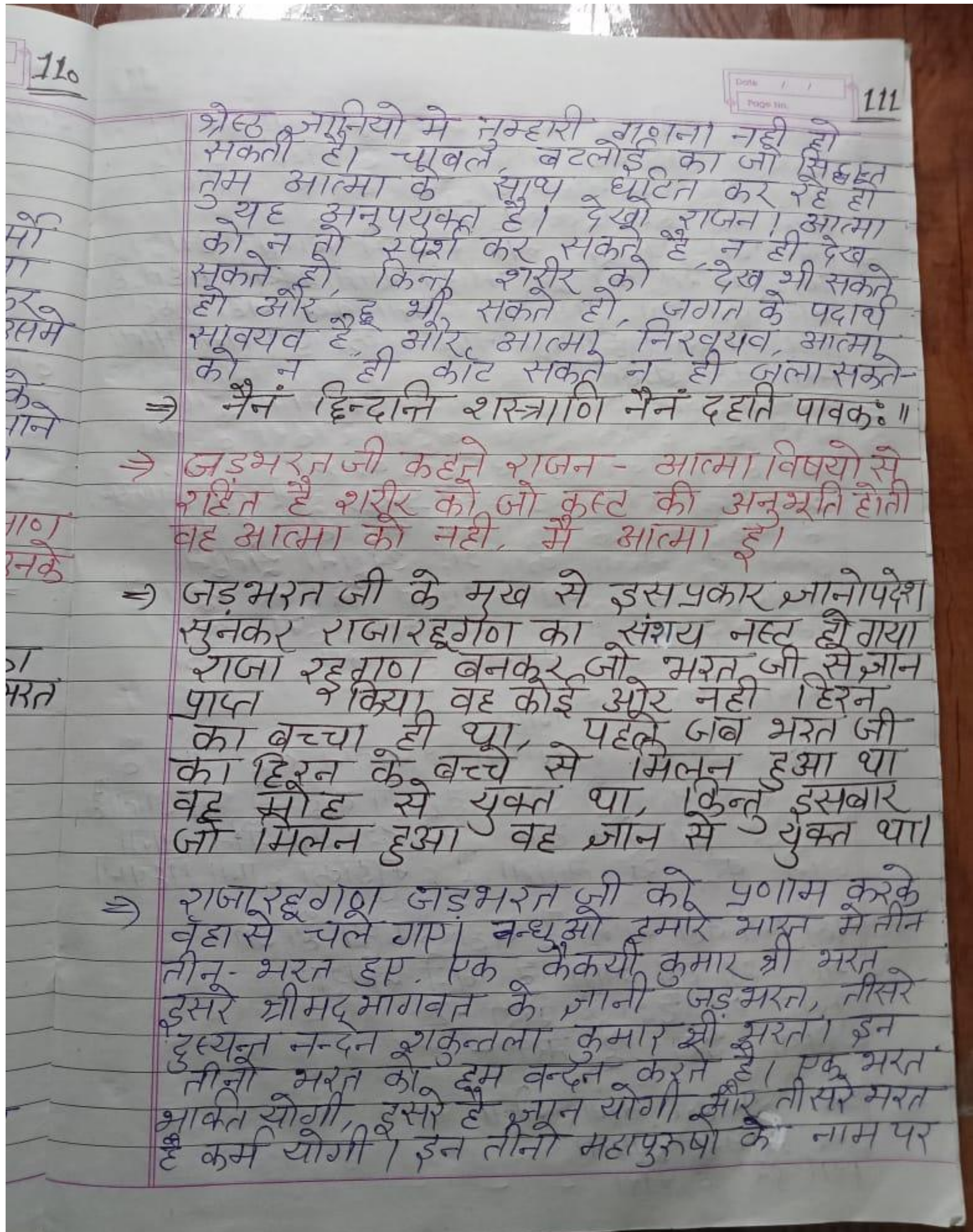
अर्थ- राजा रहूगण कहता महाराज देहादि धर्मों का आत्मापर कोई प्रभाव नही होता ऐसा भी नही है, यदि चूल्हे पर बटलोई रखकर आग जलाकर, बटलोई मे जलरखकर उसमे चावल डालते है, तो पहले तो अग्नि के प्रभाव से बटलोई गर्म होती है, इसके उपरान्त जल गर्म होता, जल के गर्म होजाने पर उसमे पड़े चावल भी पक जाते है।

⇒ इसी प्रकार अपनी उपाधि के धर्मों का अनुवर्तन करने के कारण देह, इन्द्रिय, प्राण और मनकी सन्निधि से आत्मा को भी उनके धर्म श्रमादि का अनुभव होता ही है।

⇒ शुकदेव जी कहते- परीक्षित। राजारहूगण का इस प्रकार तर्क सुनकर पहले तो जड़भरत जी ने बहुत डांटा-

श्लोक- अकोविदः कोविद वादवादान्
वदस्यथो नातिविदां वरिष्ठः।
न सूरयो हि व्यवहारमेनं
तत्त्वावमर्शेन सहामनन्ति॥

अर्थ- जडभरत ने कहा- राजन। तुम अज्ञानी होने पर भी पण्डितो के समान ऊपर- ऊपर की तर्क- वितर्कयुक्त बात कह रहे हो। इसलिए



111

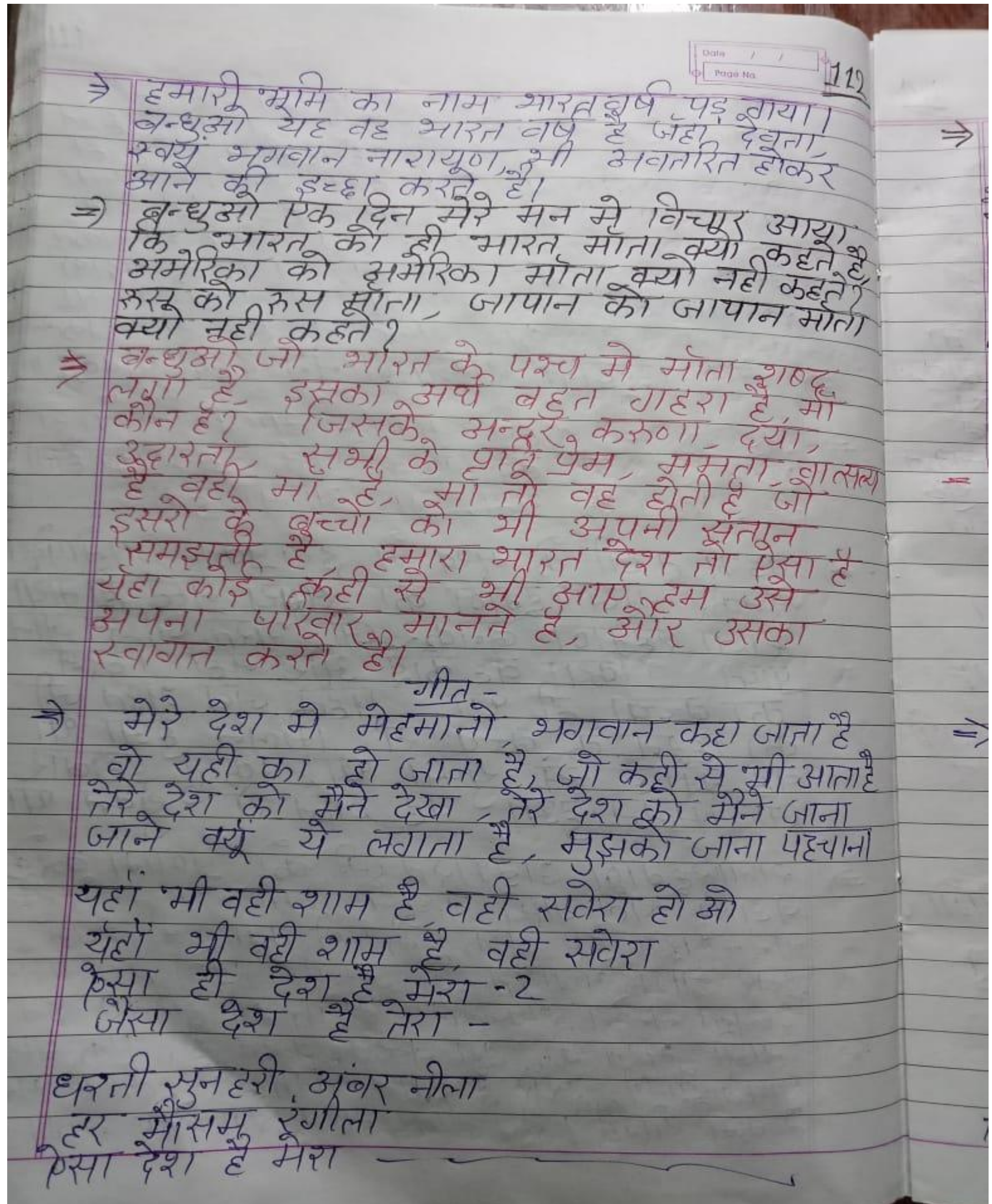
श्रेष्ठ ज्ञानियो मे तुम्हारी गणना नही हो सकती है। चूबले, बटलोई का जो सिद्धान्त तुम आत्मा के स्वरूप घटित कर रहे हो यह अनुपयुक्त है। देखो राजन! आत्मा को न तो स्पर्श कर सकते है न ही देख सकते हो, किन्तु शरीर को देख भी सकते हो और छू भी सकते हो, जगत के पदार्थ सावयव है और आत्मा निरवयव, आत्मा को न ही काट सकते न ही जला सकते-

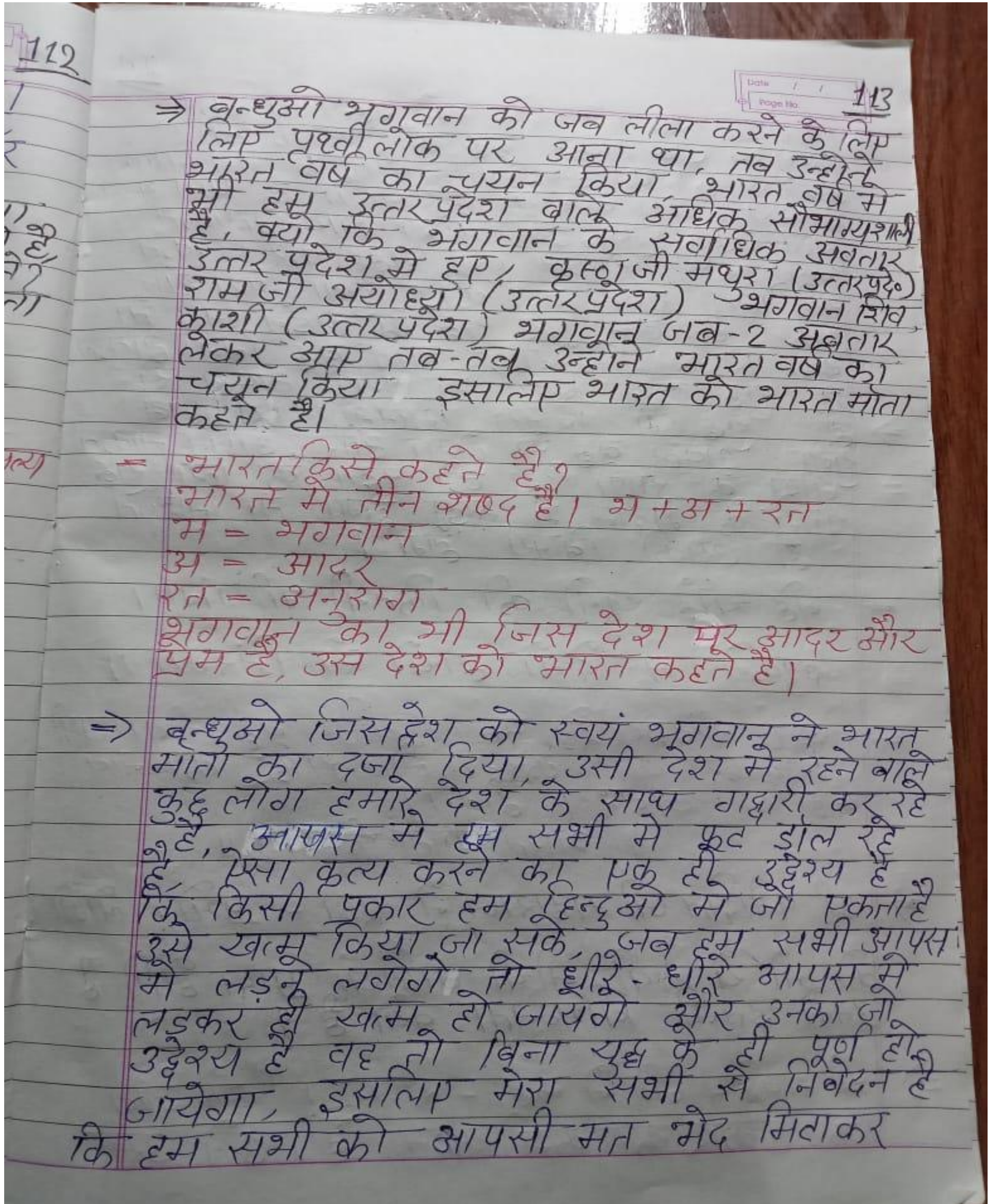
⇒ नैनं छिन्दान्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः॥

⇒ जड़भरत जी कहते राजन - आत्मा विषयो से रहित है शरीर को जो कष्ट की अनुभूति होती वह आत्मा को नही, मै आत्मा हूँ।

⇒ जड़भरत जी के मुख से इसप्रकार ज्ञानोपदेश सुनकर राजारहूगण का संशय नष्ट हो गया राजा रहूगण बनकर जो भरत जी से ज्ञान प्राप्त किया वह कोई और नही। हिरन का बच्चा ही था, पहले जब भरत जी का हिरन के बच्चे से मिलन हुआ था वह मोह से युक्त था, किन्तु इसबार जो मिलन हुआ वह ज्ञान से युक्त था।

⇒ राजारहूगण जड़भरत जी को प्रणाम करके वहा से चले गए। बन्धुओ हमारे भारत मे तीन तीन भरत हुए, एक कैकयी कुमार श्री भरत दूसरे श्रीमद्भागवत के ज्ञानी जड़भरत, तीसरे दुस्यन्त नन्दन शकुन्तला कुमार श्री भरत। इन तीनो भरत को हम वन्दन करते है। एक भरत भक्ति योगी, दूसरे है ज्ञान योगी और तीसरे भरत है कर्म योगी। इन तीनो महापुरुषो के नाम पर


112
⇒ हमारी भूमि का नाम भारतवर्ष पड़ गया। बन्धुओ यह वह भारत वर्ष है जहां देवता, स्वयं भगवान नारायण श्री अवतरित होकर आने की इच्छा करते है।
⇒ बन्धुओ एक दिन मेरे मन मे विचार आया कि भारत को ही भारत माता क्यों कहते है, अमेरिका को अमेरिका माता क्यो नही कहते? रुस को रुस माता, जापान को जापान माता क्यो नही कहते?
⇒ बन्धुओ जो भारत के पश्च मे माता शब्द लगा है इसका अर्थ बहुत गहरा है मां कौन है? जिसके अन्दर करुणा, दया, उदारता, सभी के प्रति प्रेम, ममता, वात्सल्य है वही मां है, मां तो वह होती है जो दूसरो के बच्चो को भी अपनी संतान समझती है हमारा भारत देश तो ऐसा है यहा कोई कहीं से भी आए हम उसे अपना परिवार मानते है, और उसका स्वागत करते है।
गीत-
⇒ मेरे देश मे मेहमानो भगवान कहा जाता है
वो यहीं का हो जाता है, जो कहीं से भी आता है
तेरे देश को मैने देखा, तेरे देश को मैने जाना
जाने क्यूं ये लगता है, मुझको जाना पहचाना
यहां भी वही शाम है वही सवेरा हो ओ
यहां भी वही शाम है वही सवेरा
ऐसा ही देश है मेरा -2
जैसा देश है तेरा -
धरती सुनहरी अंबर नीला
हर मौसम रंगीला
ऐसा देश है मेरा —



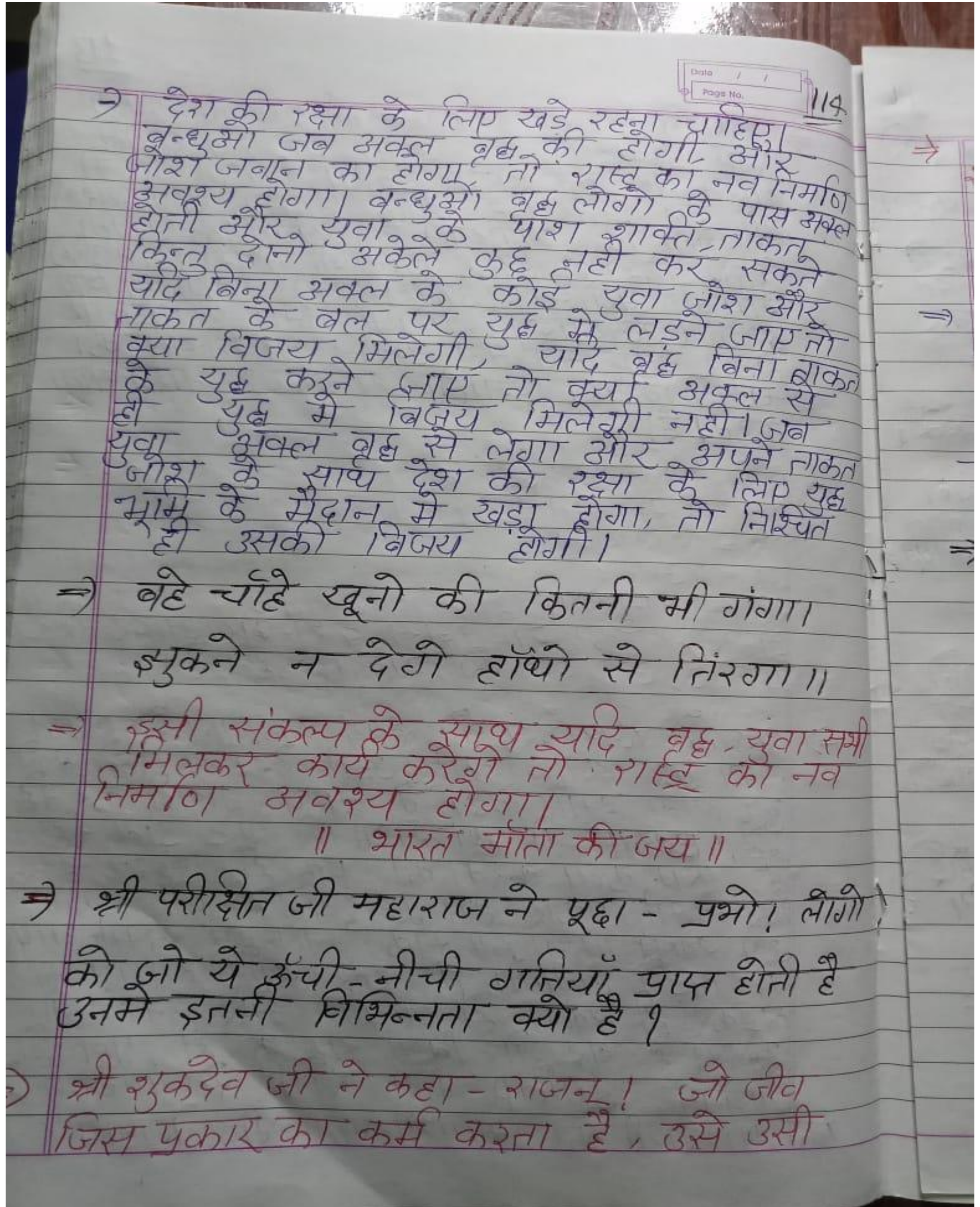
112

113

⇒ बन्धुओ भगवान को जब लीला करने के लिए लिए पृथ्वी लोक पर आना था, तब उन्होंने भारत वर्ष का चयन किया, भारत वर्ष मे भी हम उत्तरप्रदेश वाले अधिक सौभाग्यशाली है, क्यो कि भगवान के सर्वाधिक अवतार उत्तर प्रदेश मे हुए, कृष्णजी मथुरा (उत्तरप्रदे०) राम जी अयोध्या (उत्तरप्रदेश) भगवान शिव काशी (उत्तर प्रदेश) भगवान जब-2 अवतार लेकर आए तब-तब उन्होंने भारत वर्ष का चयन किया इसलिए भारत को भारत माता कहते है।

= भारत किसे कहते है?
भारत मे तीन शब्द है। भ + आ + रत
भ = भगवान
आ = आदर
रत = अनुराग
भगवान का भी जिस देश पर आदर और प्रेम है, उस देश को भारत कहते है।

⇒ बन्धुओ जिस देश को स्वयं भगवान ने भारत माता का दर्जा दिया, उसी देश मे रहने वाले कुछ लोग हमारे देश के साथ गद्दारी कर रहे है, आपस मे हम सभी मे फूट डाल रहे है ऐसा कृत्य करने का एक ही उद्देश्य है कि किसी प्रकार हम हिन्दुओ मे जो एकता है उसे खत्म किया जा सके, जब हम सभी आपस मे लड़ने लगेगे तो धीरे-धीरे आपस से लड़कर ही खत्म हो जायगे और उनका जो उद्देश्य है वह तो बिना युद्ध के ही पूर्ण हो जायेगा, इसलिए मेरा सभी से निवेदन है कि हम सभी को आपसी मत भेद मिटाकर



114

⇒ देश की रक्षा के लिए खड़े रहना चाहिए। बन्धुओ जब अक्ल वृद्ध की होगी और जोश जवान का होगा तो राष्ट्र का नव निर्माण अवश्य होगा। बन्धुओ वृद्ध लोगो के पास अक्ल होती और युवा के पाश शक्ति, ताकत किन्तु दोनो अकेले कुछ नही कर सकते यदि बिना अक्ल के कोई युवा जोश और ताकत के बल पर युद्ध मे लड़ने जाए तो क्या विजय मिलेगी, यदि वृद्ध बिना ताकत के युद्ध करने जाए तो क्या अक्ल से ही युद्ध मे विजय मिलेगी नही। जब युवा अक्ल वृद्ध से लेगा और अपने ताकत जोश के साथ देश की रक्षा के लिए युद्ध भूमि के मैदान मे खड़ा होगा, तो निश्चित ही उसकी विजय होगी।

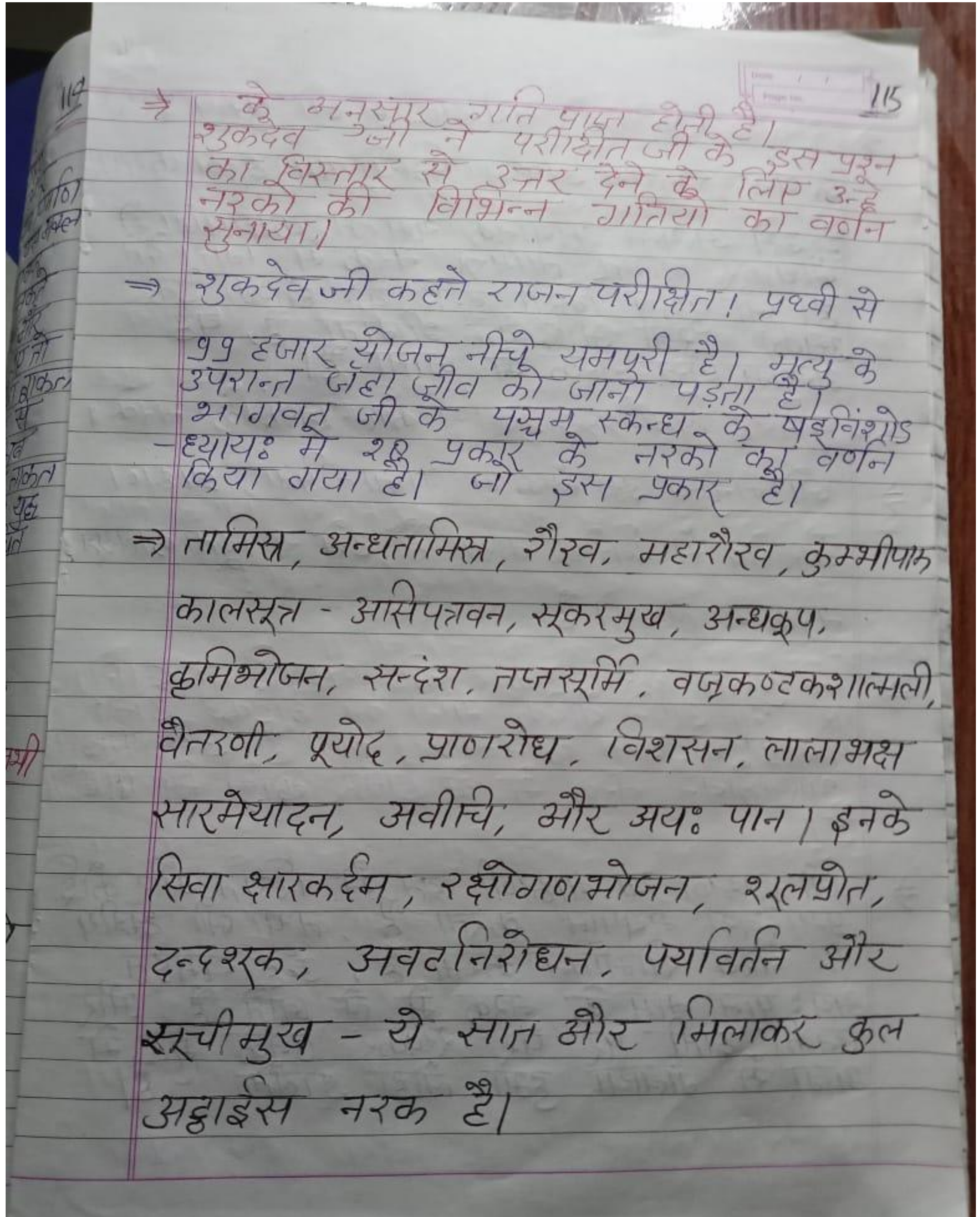
⇒ बहे चाँहे खूनो की कितनी भी गंगा।
झुकने न देगे हाँथो से तिंरगा॥

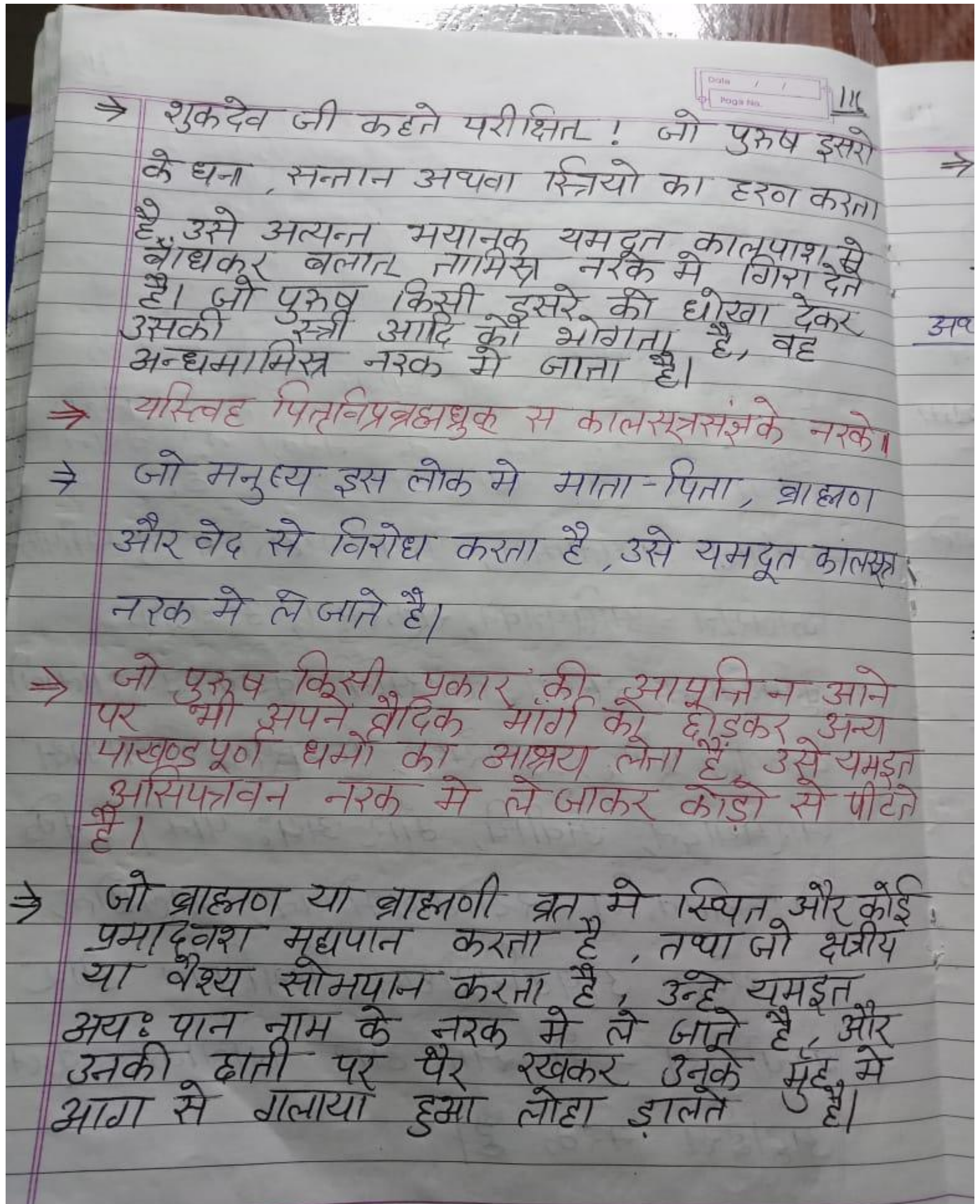
⇒ इसी संकल्प के साथ यदि वृद्ध, युवा सभी मिलकर कार्य करेगे तो राष्ट्र का नव निर्माण अवश्य होगा।

॥ भारत माता की जय ॥

⇒ श्री परीक्षित जी महाराज ने पूछा - प्रभो! लोगो को जो ये ऊँची-नीची गतियाँ प्राप्त होती है उनमे इतनी विभिन्नता क्यो है?

⇒ श्री शुकदेव जी ने कहा - राजन्! जो जीव जिस प्रकार का कर्म करता है, उसे उसी


115
⇒ के अनुसार गति प्राप्त होती है। शुकदेव जी ने परीक्षित जी के इस प्रश्न का विस्तार से उत्तर देने के लिए उन्हे नरको की विभिन्न गतियो का वर्णन सुनाया।
⇒ शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित। पृथ्वी से 99 हजार योजन नीचे यमपुरी है। मृत्यु के उपरान्त जहा जीव को जाना पड़ता है। भागवत जी के पञ्चम स्कन्ध के षड्विंशोऽध्यायः मे 28 प्रकार के नरको का वर्णन किया गया है। जो इस प्रकार है।
⇒ तामिस्र, अन्धतामिस्र, रौरव, महारौरव, कुम्भीपाक कालसूत्र - असिपत्रवन, सूकरमुख, अन्धकूप, कृमिभोजन, सन्दंश, तप्तसूर्मि, वज्रकण्टकशाल्मली, वैतरणी, पूयोद, प्राणरोध, विशसन, लालाभक्ष सारमेयादन, अवीचि, और अयः पान। इनके सिवा क्षारकर्दम, रक्षोगणभोजन, शूलप्रोत, दन्दशूक, अवटनिरोधन, पर्यावर्तन और सूचीमुख - ये सात और मिलाकर कुल अट्ठाईस नरक है।



115

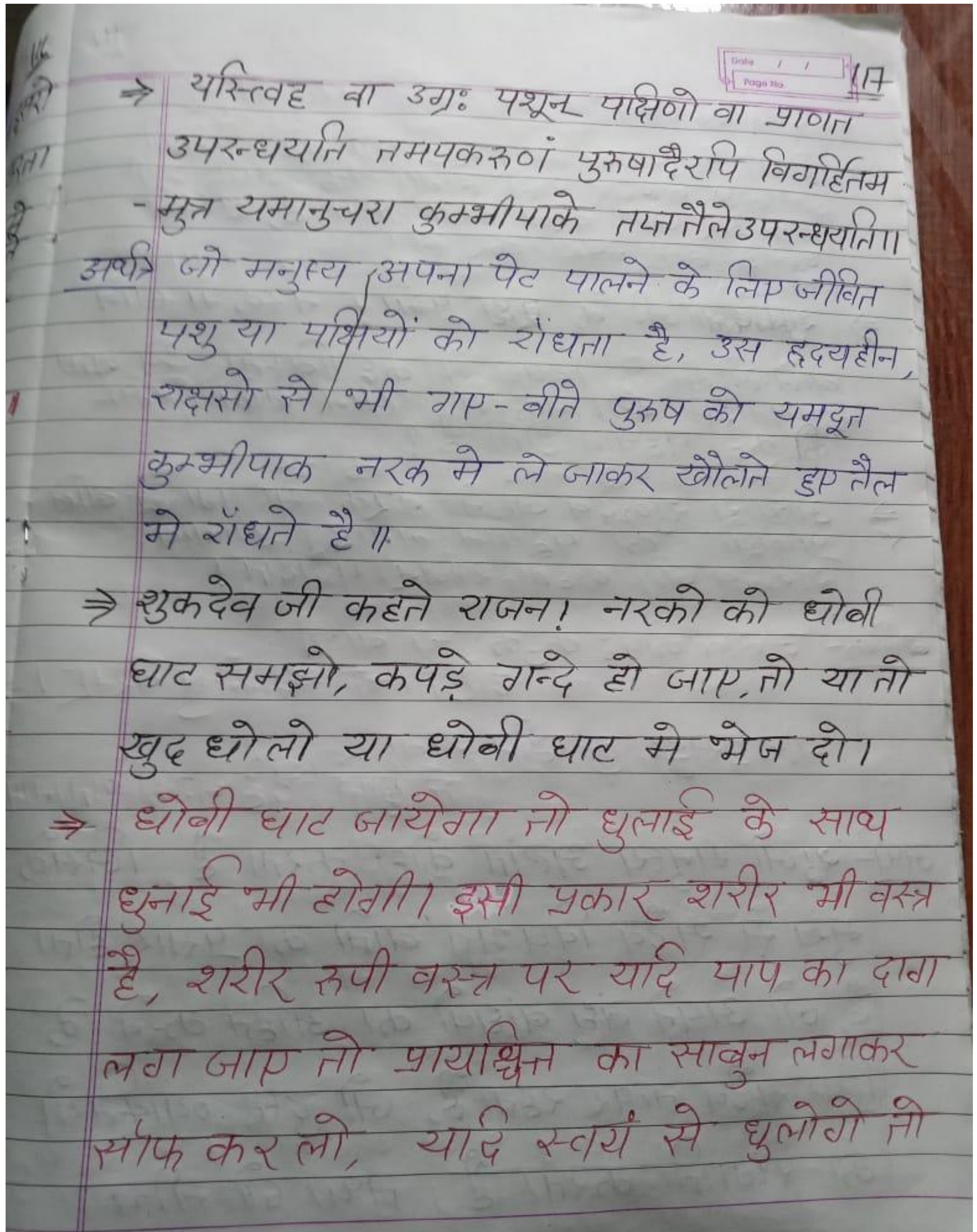
⇒ शुकदेव जी कहते परीक्षित ! जो पुरुष दूसरो के धन , सन्तान अथवा स्त्रियो का हरण करता है, उसे अत्यन्त भयानक यमदूत कालपाश से बाँधकर बलात् तामिस्त्र नरक मे गिरा देते है। जो पुरुष किसी दूसरे को धोखा देकर उसकी स्त्री आदि को भोगता है, वह अन्धतामिस्त्र नरक मे जाता है।

⇒ यस्त्विह पितृविप्रब्रह्मध्रुक स कालसूत्रसंज्ञके नरके।

⇒ जो मनुष्य इस लोक मे माता-पिता, ब्राह्मण और वेद से विरोध करता है, उसे यमदूत कालसूत्र नरक मे ले जाते है।

⇒ जो पुरुष किसी प्रकार की आपत्ति न आने पर भी अपने वैदिक मार्ग को छोड़कर अन्य पाखण्डपूर्ण धर्मो का आश्रय लेता है, उसे यमदूत असिपत्रवन नरक मे ले जाकर कोड़ो से पीटते है।

⇒ जो ब्राह्मण या ब्राह्मणी व्रत मे स्थित और कोई प्रमादवश मद्यपान करता है, तथा जो क्षत्रीय या वैश्य सोमपान करता है, उन्हे यमदूत अयःपान नाम के नरक मे ले जाते है, और उनकी छाती पर पैर रखकर उनके मुँह मे आग से गलाया हुआ लोहा डालते है।



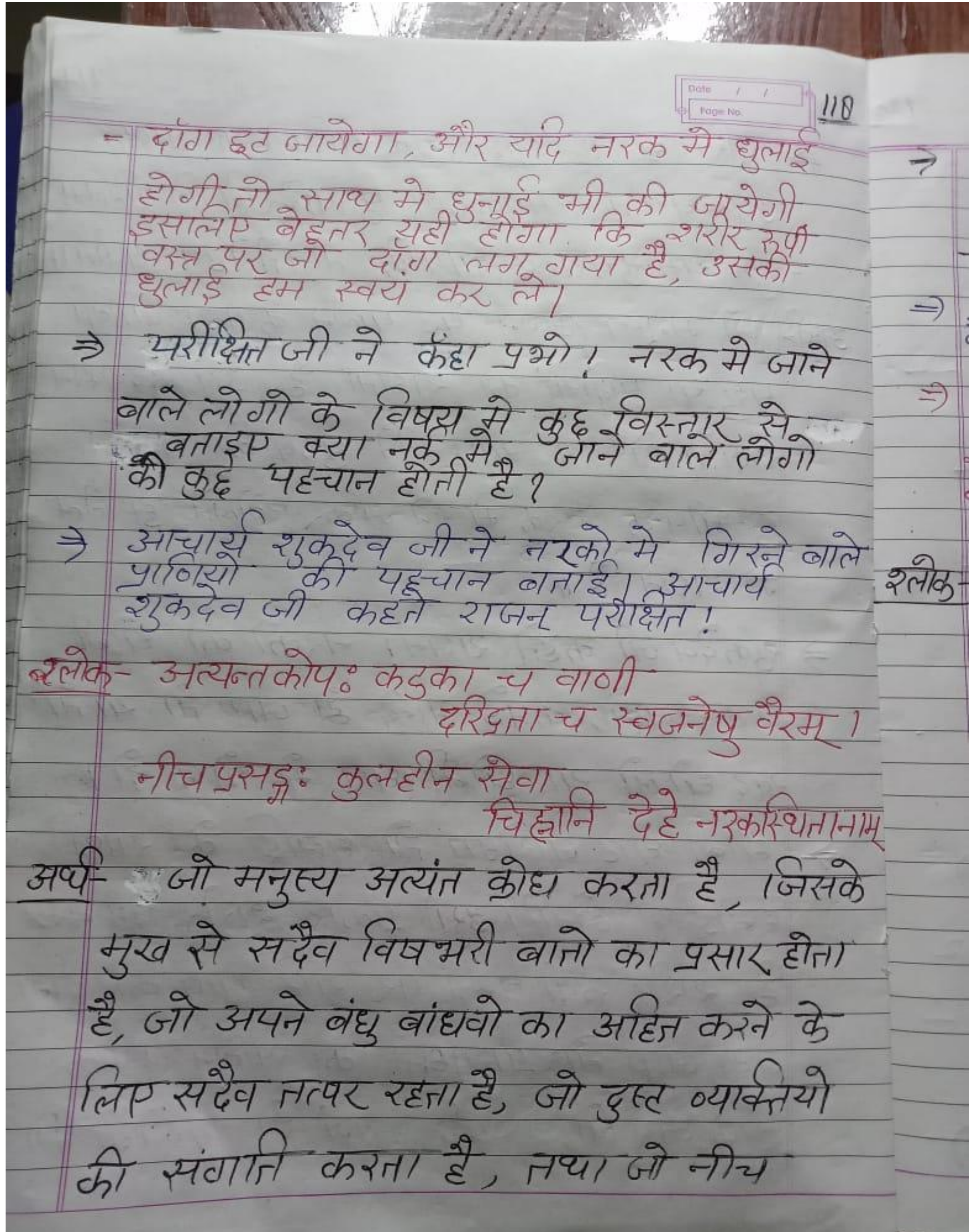
117

⇒ यस्त्विह वा उग्रः पशून् पक्षिणो वा प्राणत उपरन्धयति तमपकरुणं पुरुषादैरपि विगर्हितम -मुत्र यमानुचरा कुम्भीपाके तप्ततैले उपरन्धयति॥

अर्थात् जो मनुष्य अपना पेट पालने के लिए जीवित पशु या पक्षियों को रोंधता है, उस हृदयहीन, राक्षसो से भी गए-बीते पुरुष को यमदूत कुम्भीपाक नरक मे ले जाकर खौलते हुए तैल मे राँधते है॥

⇒ शुकदेव जी कहते राजन! नरको को धोबी घाट समझो, कपड़े गन्दे हो जाए, तो या तो खुद धो लो या धोबी धाट मे भेज दो।

⇒ धोबी घाट जायेगा तो धुलाई के साथ धुनाई भी होगी। इसी प्रकार शरीर भी वस्त्र है, शरीर रुपी वस्त्र पर यदि पाप का दाग लग जाए तो प्रायश्चित्त का साबुन लगाकर साफ कर लो, यदि स्वयं से धुलोगे तो



118

- दाग छूट जायेगा, और यदि नरक मे धुलाई होगी तो साथ मे धुनाई भी की जायेगी इसलिए बेहतर यही होगा कि शरीर रूपी वस्त्र पर जो दाग लग गया है, उसकी धुलाई हम स्वयं कर ले।

⇒ परीक्षित जी ने कहा प्रभो! नरक मे जाने वाले लोगो के विषय मे कुछ विस्तार से बताइए क्या नर्क मे जाने वाले लोगो की कुछ पहचान होती है?

⇒ आचार्य शुकदेव जी ने नरको मे गिरने वाले प्राणियो की पहचान बताई। आचार्य शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित!

श्लोक- अत्यन्तकोपः कटुका च वाणी
दरिद्रता च स्वजनेषु वैरम्।
नीचप्रसङ्गः कुलहीन सेवा
चिह्नानि देहे नरकस्थितानाम्

अर्थ- जो मनुष्य अत्यंत क्रोध करता है, जिसके मुख से सदैव विषभरी बातो का प्रसार होता है, जो अपने बंधु बांधवो का अहित करने के लिए सदैव तत्पर रहता है, जो दुष्ट व्यक्तियो की संगति करता है, तथा जो नीच

118

Date / /
Page No. 119

⇒ व्यक्ति की चाकरी करता है, वह व्यक्ति दुर्जन कहलाता है। ऐसा मनुष्य नरको की घोर यातनाएँ भोगता है। दरिद्रता एवं चरित्रहीनता उनके अन्य अवगुण होते है।

⇒ परीक्षित जी ने कहा प्रभो! इन नरको के दुःखो से बचने का उपाय क्या है?

⇒ श्री शुकदेव जी महाराज कहते राजन!

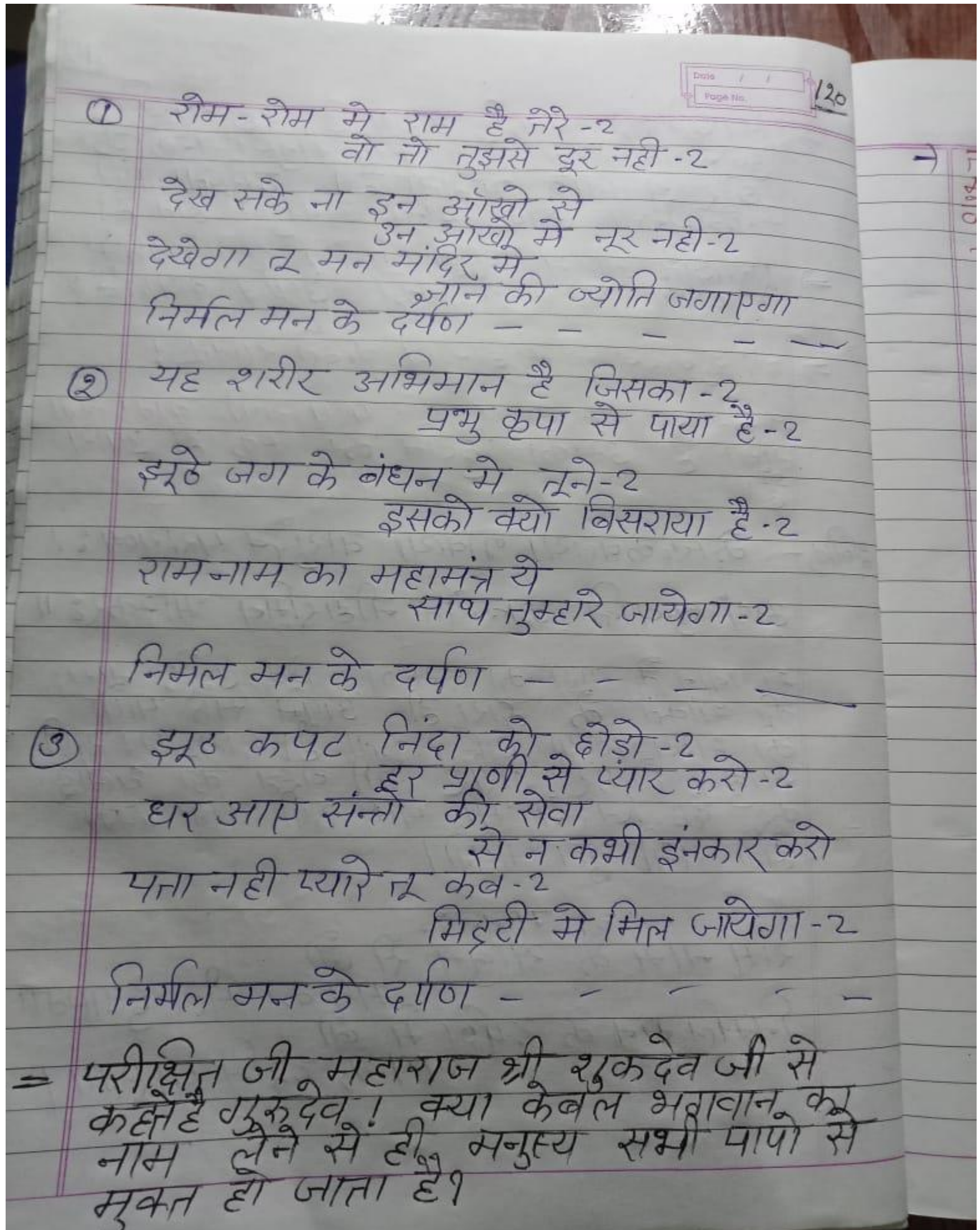
शरीर रुपी वस्त्र पर जो पाप रुपी दाग लग गया है उसको हटाने का एक ही उपाय है।

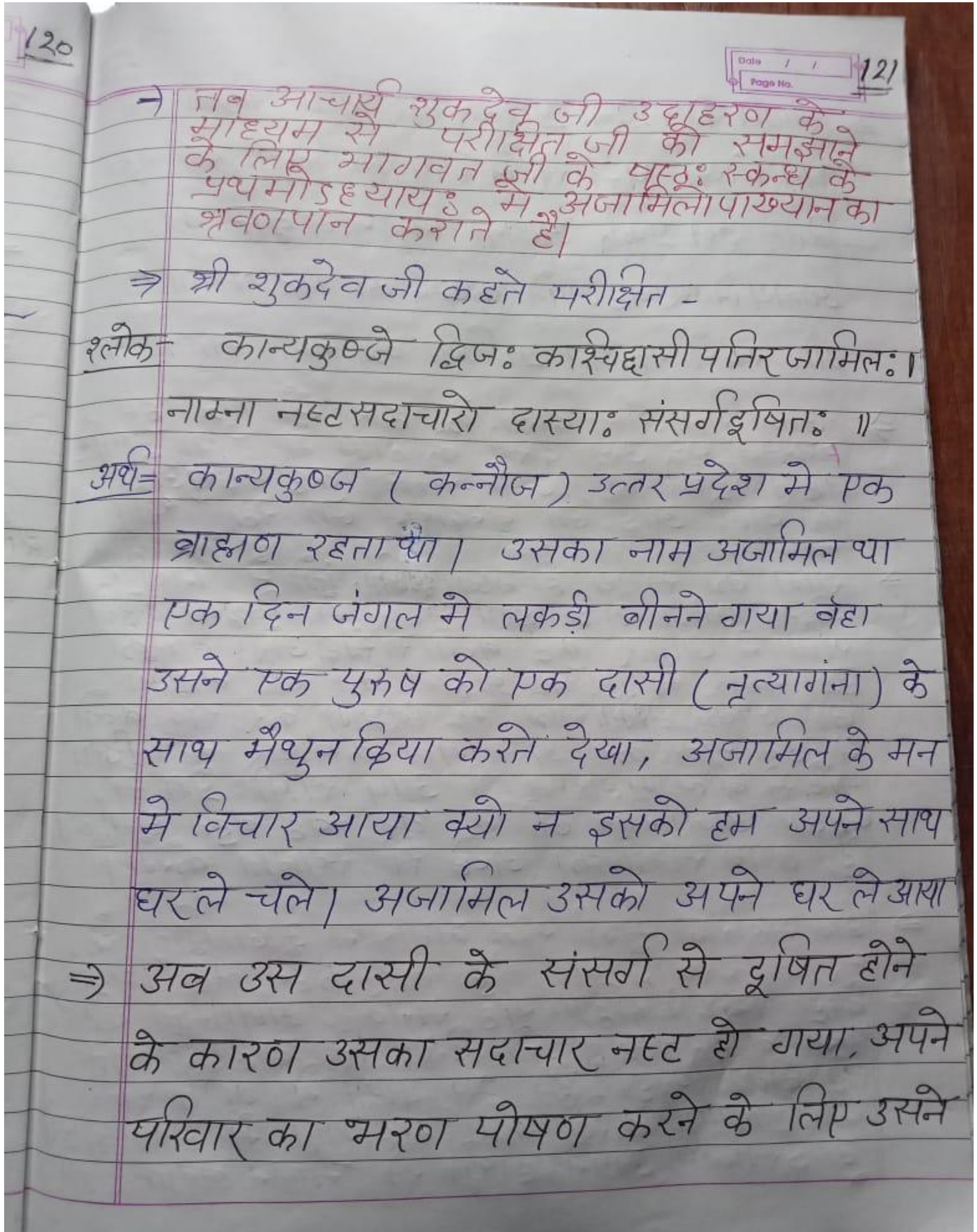
श्लोक– केचित्केवलया भक्त्या वासुदेव परायणाः।
अघं धुन्वन्ति कार्त्स्न्येन नीहारमिव भास्करः॥

भगवान के नाम का स्मरण, एवं उनके नाम की भक्ति के द्वारा ही अपने सारे पापो को भस्म किया जा सकता है। रामनाम रुपी साबुन लेकर शरीर रुपी वस्त्र की धुलाई कर दो जितने भी पाप रुपी दाग लगे होगे सभी धुल जायेगे।

ॐ भजनः

राम नाम के साबुन से जो
मन का मैल हटाएगा।
निर्मल मन के दर्पण मे वो
राम के दर्शन पाएगा।


Date / /
Page No.
120
(1) रोम-रोम मे राम है तेरे -2
वो तो तुझसे दूर नही -2
देख सके ना इन आँखो से
उन आँखो मे नूर नही-2
देखेगा तू मन मंदिर मे
ज्ञान की ज्योति जगाएगा
निर्मल मन के दर्पण — — — — —
(2) यह शरीर अभिमान है जिसका -2
प्रभु कृपा से पाया है -2
झूठे जग के बंधन मे तूने-2
इसको क्यो बिसराया है -2
रामनाम का महामंत्र ये
साथ तुम्हारे जायेगा -2
निर्मल मन के दर्पण — — — —
(3) झूठ कपट निंदा को छोड़ो -2
हर प्राणी से प्यार करो -2
घर आए संन्तो की सेवा
से न कभी इंनकार करो
पता नही प्यारे तू कब -2
मिट्टी मे मिल जायेगा -2
निर्मल मन के दर्पण — — — — —
= परीक्षित जी महाराज श्री शुकदेव जी से कहते है गुरुदेव! क्या केवल भगवान का नाम लेने से ही मनुष्य सभी पापो से मुक्त हो जाता है?



120

Date / / Page No. 121

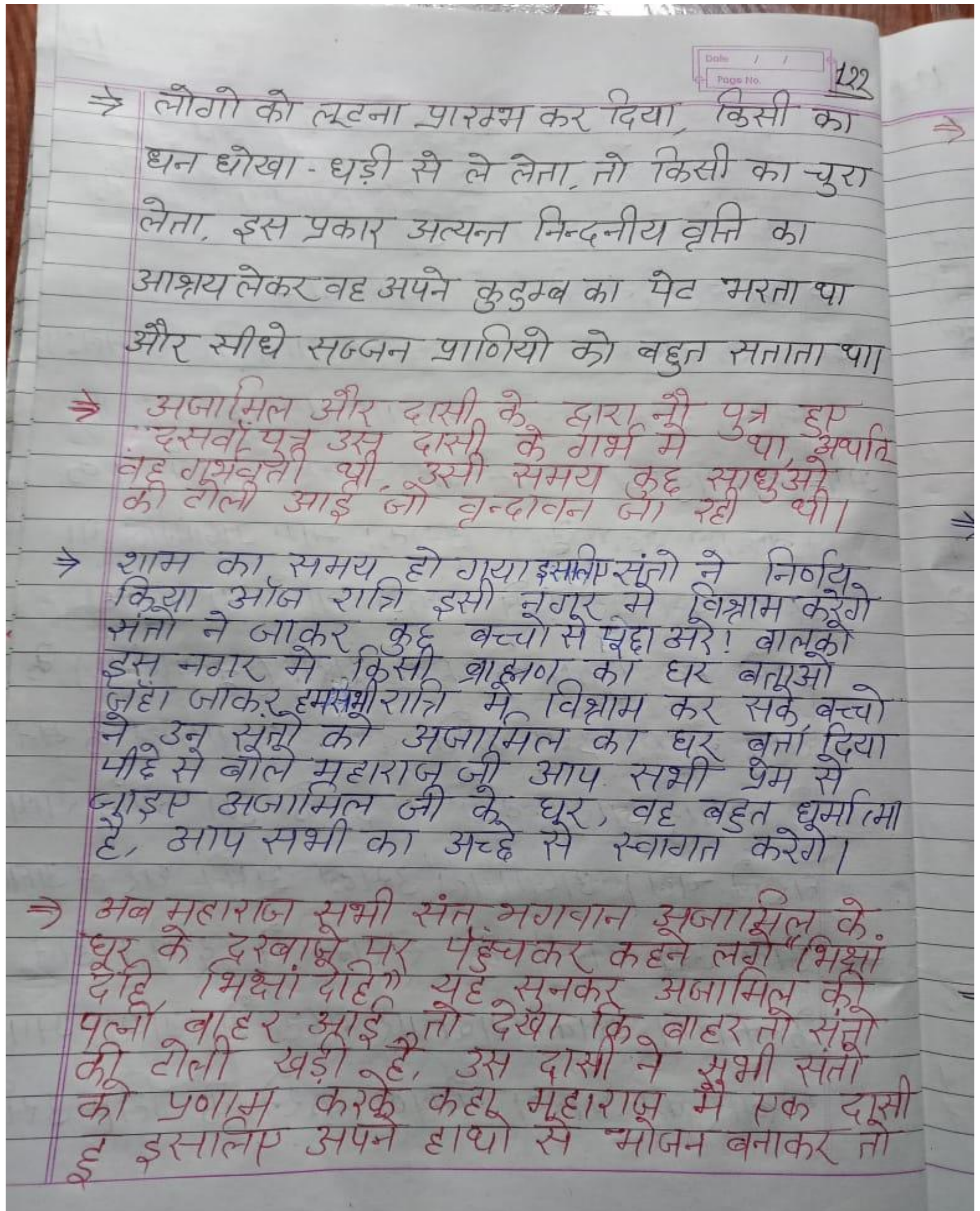
→ तब आचार्य शुकदेव जी उदाहरण के माध्यम से परीक्षित जी को समझाने के लिए भागवत जी के षष्ठः स्कन्ध के प्रथमोऽध्याय: में अजामिलोपाख्यान का श्रवणपान कराते है।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते परीक्षित -

श्लोक- कान्यकुब्जे द्विजः कश्चिद्दासीपतिरजामिलः।
नाम्ना नष्टसदाचारो दास्याः संसर्गदूषितः ॥

अर्थ= कान्यकुब्ज (कन्नौज) उत्तर प्रदेश मे एक ब्राह्मण रहता था। उसका नाम अजामिल था एक दिन जंगल मे लकड़ी बीनने गया वहा उसने एक पुरुष को एक दासी (नृत्यागंना) के साथ मैथुन क्रिया करते देखा, अजामिल के मन मे विचार आया क्यो न इसको हम अपने साथ घर ले चले। अजामिल उसको अपने घर ले आया

⇒ अब उस दासी के संसर्ग से दूषित होने के कारण उसका सदाचार नष्ट हो गया, अपने परिवार का भरण पोषण करने के लिए उसने



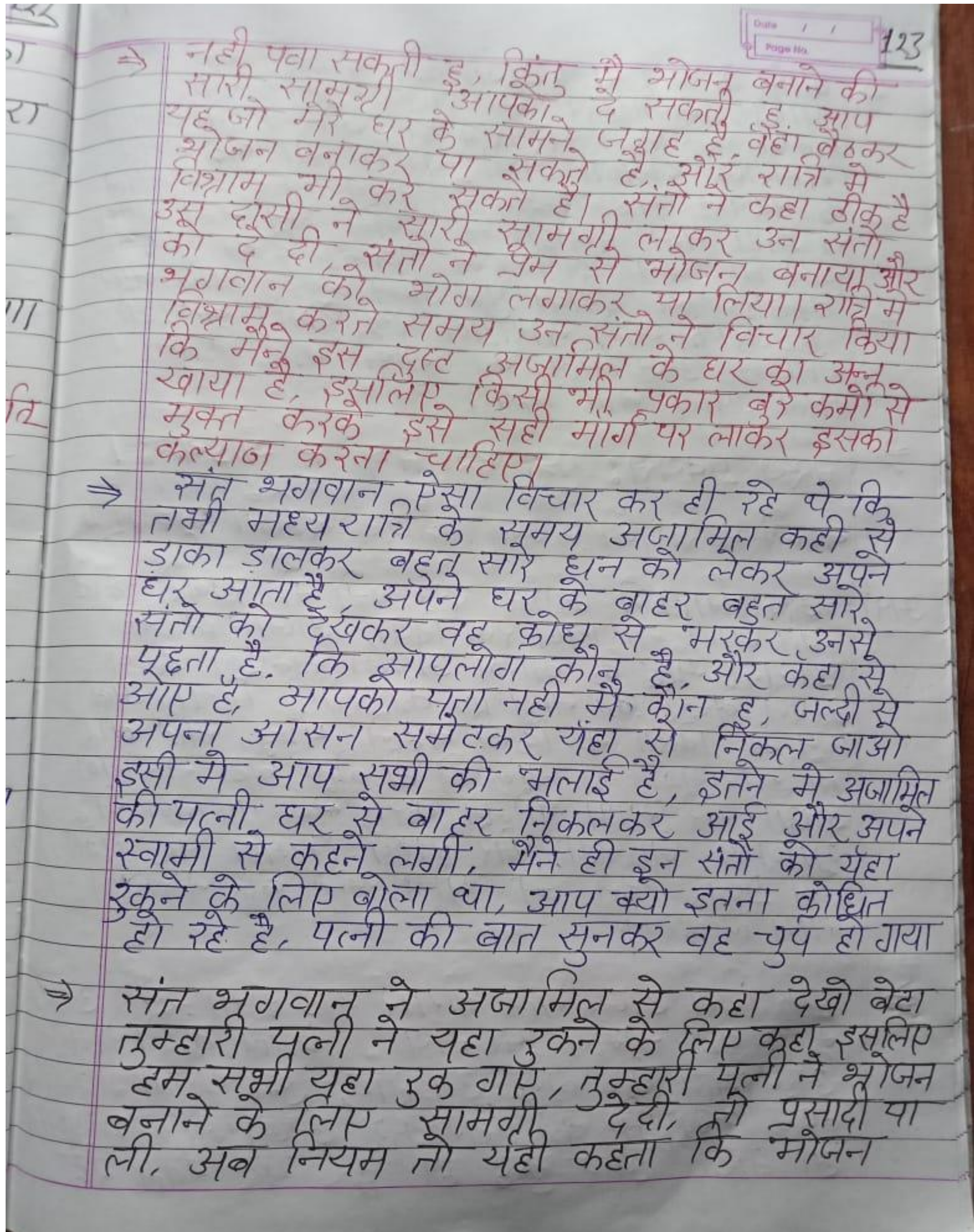
122

⇒ लोगो को लूटना प्रारम्भ कर दिया, किसी का धन धोखा-धड़ी से ले लेता, तो किसी का चुरा लेता, इस प्रकार अत्यन्त निन्दनीय वृत्ति का आश्रय लेकर वह अपने कुटुम्ब का पेट भरता था और सीधे सज्जन प्राणियो को बहुत सताता था

⇒ अजामिल और दासी के द्वारा नौ पुत्र हुए दसवाँ पुत्र उस दासी के गर्भ मे था, अर्थात वह गर्भवती थी, उसी समय कुछ साधुओं की टोली आई जो वृन्दावन जा रही थी।

⇒ शाम का समय हो गया इसलिए संतो ने निर्णय किया आज रात्रि इसी नगर मे विश्राम करेंगे संतो ने जाकर कुछ बच्चो से पूछा अरे! बालको इस नगर मे किसी ब्राह्मण का घर बताओ जहाँ जाकर हम सभी रात्रि मे विश्राम कर सके बच्चो ने उन संतो को अजामिल का घर बता दिया पीछे से बोले महाराज जी आप सभी प्रेम से जाइए अजामिल जी के घर, वह बहुत धर्मात्मा है, आप सभी का अच्छे से स्वागत करेगे।

⇒ अब महाराज सभी संत भगवान अजामिल के घर के दरवाजे पर पहुँचकर कहने लगे "भिक्षां देहि भिक्षां देहि" यह सुनकर अजामिल की पत्नी बाहर आई तो देखा कि बाहर तो संतो की टोली खड़ी है, उस दासी ने सभी संतो को प्रणाम करके कहा महाराज मै एक दासी हू इसलिए अपने हाथो से भोजन बनाकर तो



123

⇒ नही पका सकती हू, किंतु मै भोजन बनाने की सारी सामग्री आपको दे सकती हू, आप यह जो मेरे घर के सामने जगह है, वहां बैठकर भोजन बनाकर पा सकते है, और रात्रि मे विश्राम भी कर सकते है। संतो ने कहा ठीक है उस दासी ने सारी सामग्री लाकर उन संतो को दे दी, संतो ने प्रेम से भोजन बनाया और भगवान को भोग लगाकर पा लिया। रात्रि मे विश्राम करते समय उन संतो ने विचार किया कि मैने इस दुष्ट अजामिल के घर का अन्न खाया है, इसलिए किसी भी प्रकार बुरे कर्मो से मुक्त करके इसे सही मार्ग पर लाकर इसका कल्याण करना चाहिए।

⇒ संत भगवान ऐसा विचार कर ही रहे थे कि तभी मध्यरात्रि के समय अजामिल कही से डाका डालकर बहुत सारे धन को लेकर अपने घर आता है, अपने घर के बाहर बहुत सारे संतो को देखकर वह क्रोध से भरकर उनसे पूछता है. कि आपलोग कौन है, और कहा से आए है, आपको पता नही मै कौन हू, जल्दी से अपना आसन समेटकर यहा से निकल जाओ इसी मे आप सभी की भलाई है, इतने मे अजामिल की पत्नी घर से बाहर निकलकर आई और अपने स्वामी से कहने लगी, मैने ही इन संतो को यहा रुकने के लिए बोला था, आप क्यो इतना क्रोधित हो रहे है, पत्नी की बात सुनकर वह चुप हो गया

⇒ संत भगवान ने अजामिल से कहा देखो बेटा तुम्हारी पत्नी ने यहा रुकने के लिए कहा इसलिए हम सभी यहा रुक गए, तुम्हारी पत्नी ने भोजन बनाने के लिए सामग्री देदी, तो प्रसादी पा ली, अब नियम तो यही कहता कि भोजन

124

→ कराने के बाद महात्माओ को दक्षिणा भी देनी चाहिए, अजामिल ने तलवार निकालकर संतजी के गर्दन पर रख दी और कहने लगा महाराज दक्षिणा अभी चाहिए या कुछ समय के पश्चात महात्माओ ने मुस्कुराकर अजामिल से कहा मुझे दक्षिणा मे तुमसे धन नही चाहिए मुझे तो बस दक्षिणा मे इतना दे दो, कि जो तुम्हारे यहा दशवा पुत्र जन्म लेकर आने वाला है, उसका नाम नारायण रख देना। बन्धुओ संतो ने अजामिल को मुक्ति का कितना सरल उपाय बता दिया।

⇒ तस्य प्रवयसः पुत्रा दश तेषां तु योऽवमः।
बालो नारायणो नाम्ना पित्रोश्च दयितो भृशम्॥

अर्थ→ अजामिल ने अपने दस पुत्रो मे सबसे छोटे का नाम नारायण रख दिया, अजामिल ने अत्यन्त मोह के कारण अपना सम्पूर्ण ह्रदय अपने बच्चे नारायण को सौंप दिया, अब दिन मे किसी न किसी बहाने पांच, सात बार तो नारायण का नाम ले ही लेता बेटा नारायण आओ मेरे साथ भोजन करो, बेटा नारायण मैं भ्रमण पर जा रहा, मेरे साथ भ्रमण पर चलो इस प्रकार दिन मे पांच, सात बार नारायण नाम ले लेता।

⇒ एक दिन अजामिल बीमार पड़ गया, और उसके मृत्यु का समय आ गया, काले, काले यमदूत अजामिल को लेने आ गए, उन भयंकर स्वरूप वाले यमदूतो को देखकर अजामिल भयभीत हो गया, और कुछ ही दूर पर खेल रहे

अपने पुत्र नारायण को बुलाने लगा -

श्लोक - दूरे क्रीडनकासक्तं पुत्रं नारायणाह्वयम् ।
प्लावितेन स्वरेणोच्चैराजुहाव कुलेन्द्रियः ॥

नारायण ओ बेटा नारायण मुझे बचाओ अजामिल की आवाज उसके पुत्र नारायण ने तो नहीं सुनी किंतु प्रभु पार्षदो ने सुन ली-

श्लोक - निशम्य म्रियमाणस्य ब्रुवतो हरिकीर्तनम् ।
भर्तुर्नाम महाराज पार्षदाः सहसाऽपतन् ॥

⇒ भगवान के पार्षदो ने देखा कि यह मरते समय हमारे स्वामी भगवान नारायण का नाम ले रहा है अतः वे बडे वेग से झटपट वहा आ पहुंचे उस समय यमराज के दूत दासीपति अजामिल के शरीर मे से सूक्ष्म शरीर को खीच रहे थे। विष्णुदूतो ने यमदूतो को जोर का धक्का मारा यमदूत दूर गिरे जाकर, उन्हे रोकने पर यमदूतो ने उनसे कहा, इनका अंत समय आ गया है इसलिए यमराज की आज्ञा से हम इन्हे लेने आए है।

⇒ तब प्रभुपार्षदो ने उन यमदूतो से कहा इसने अंत समय मे हमारे प्रभु नारायण का नाम लिया है इसलिए तुम इसे नही ले जा सकते हो, यमदूतो ने प्रभु पार्षदो से कहा इसने नारायण का नाम नही, इसने अपने पुत्र नारायण का नाम लिया है। इसलिए इस अधर्मी को हम अपने साथ ले जाएंगे।

126

⇒ श्री शुकदेव जी कहते - परीक्षित ! प्रभुपार्षदो ने यमदूतो की बात सुनकर उनसे कहा यदि तुम लोग सचमुच में धर्मराज के आज्ञाकारी हो तो हमे धर्म का लक्षण और धर्म का तत्व सुनाओ।

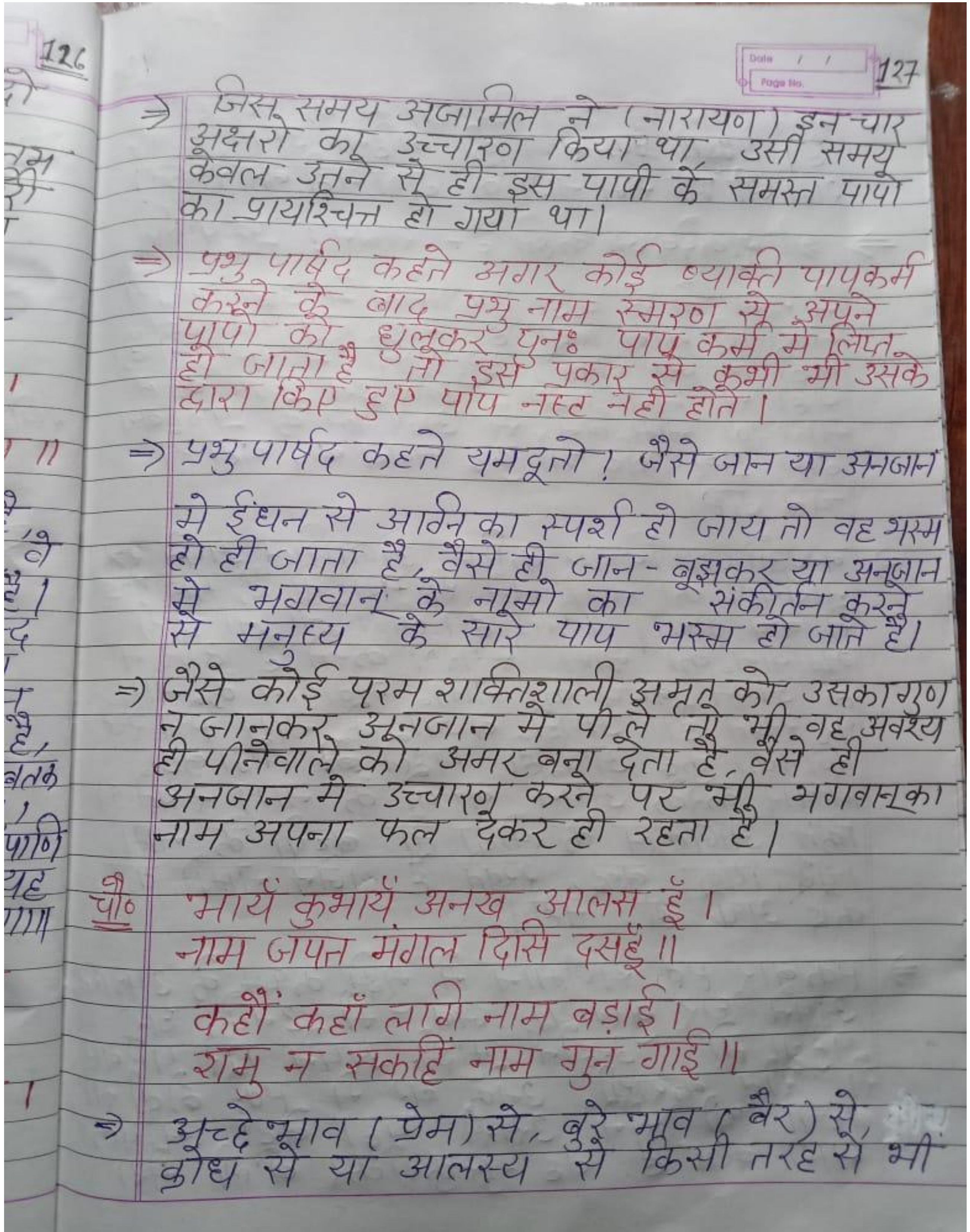
⇒ तब उन यमदूतो ने प्रभु पार्षदो से कहा -

श्लोक- वेदप्रणिहितो धर्मो ह्यधर्मस्तद्विपर्ययः।
वेदो नारायणः साक्षात्स्वयम्भूरिति शुश्रुम ॥

अर्थ- वेदो ने जिन कर्मों का विधान किया है वे धर्म है और जिनका निषेध किया है वे अधर्म है। वेद स्वयं भगवान के स्वरुप है। इस पापी ने शास्त्राज्ञा उल्लंघन करके स्वच्छन्द आचरण किया है। यह सत्पुरुषो द्वारा निन्दित है, इसने बहुत दिनो तक वेश्या के मल-समान अपवित्र अन्न से अपना जीवन व्यतीत किया है, इसका सारा जीवन ही पापमय है॥ इसने अबतक अपने पापो का प्रायश्चित्त भी नही किया है। इसलिए अब हम इस पापी अजामिल को दण्डपाणि भगवान यमराज के पास ले जायेगे। वहा यह अपने पापो का दण्ड भोगकर शुद्ध हो जाएगा॥

⇒ यमदूतो के मुख से इस प्रकार श्रवण करके प्रभुपार्षदो ने यमदूतो से कहा -

श्लोक- एतेनैव ह्यघोनोऽस्य कृतं स्यादघनिष्कृतम्।
यदा नारायणायेति जगाद चतुरक्षरम्॥



127

⇒ जिस समय अजामिल ने (नारायण) इन चार अक्षरो का उच्चारण किया था, उसी समय केवल उतने से ही इस पापी के समस्त पापो का प्रायश्चित्त हो गया था।

⇒ प्रभु पार्षद कहते अगर कोई व्यक्ति पापकर्म करने के बाद प्रभु नाम स्मरण से अपने पापो को धुलकर पुनः पाप कर्म मे लिप्त हो जाता है तो इस प्रकार से कभी भी उसके द्वारा किए हुए पाप नष्ट नही होते।

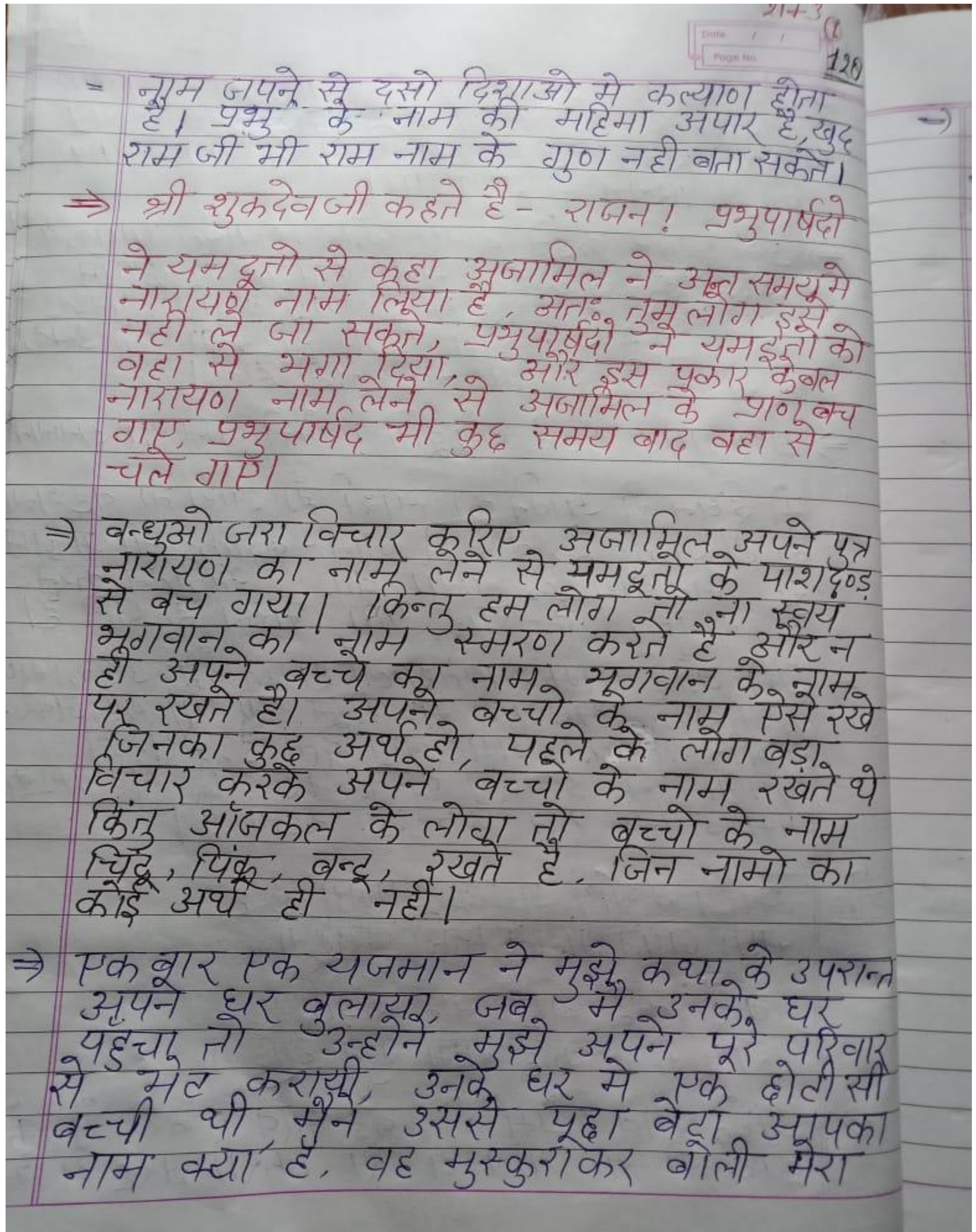
⇒ प्रभु पार्षद कहते यमदूतो! जैसे जान या अनजान मे ईंधन से अग्नि का स्पर्श हो जाय तो वह भस्म हो ही जाता है, वैसे ही जान-बूझकर या अनजान से भगवान के नामो का संकीर्तन करने से मनुष्य के सारे पाप भस्म हो जाते है।

⇒ जैसे कोई परम शक्तिशाली अमृत को उसका गुण न जानकर अनजान मे पी ले तो भी वह अवश्य ही पीनेवाले को अमर बना देता है, वैसे ही अनजान मे उच्चारण करने पर भी भगवान का नाम अपना फल देकर ही रहता है।

चौ० भायँ कुभायँ अनख आलस हूँ।
नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ॥

कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई।
रामु न सकहिं नाम गुन गाई॥

⇒ अच्छे भाव (प्रेम) से, बुरे भाव (बैर) से, क्रोध से या आलस्य से किसी तरह से भी



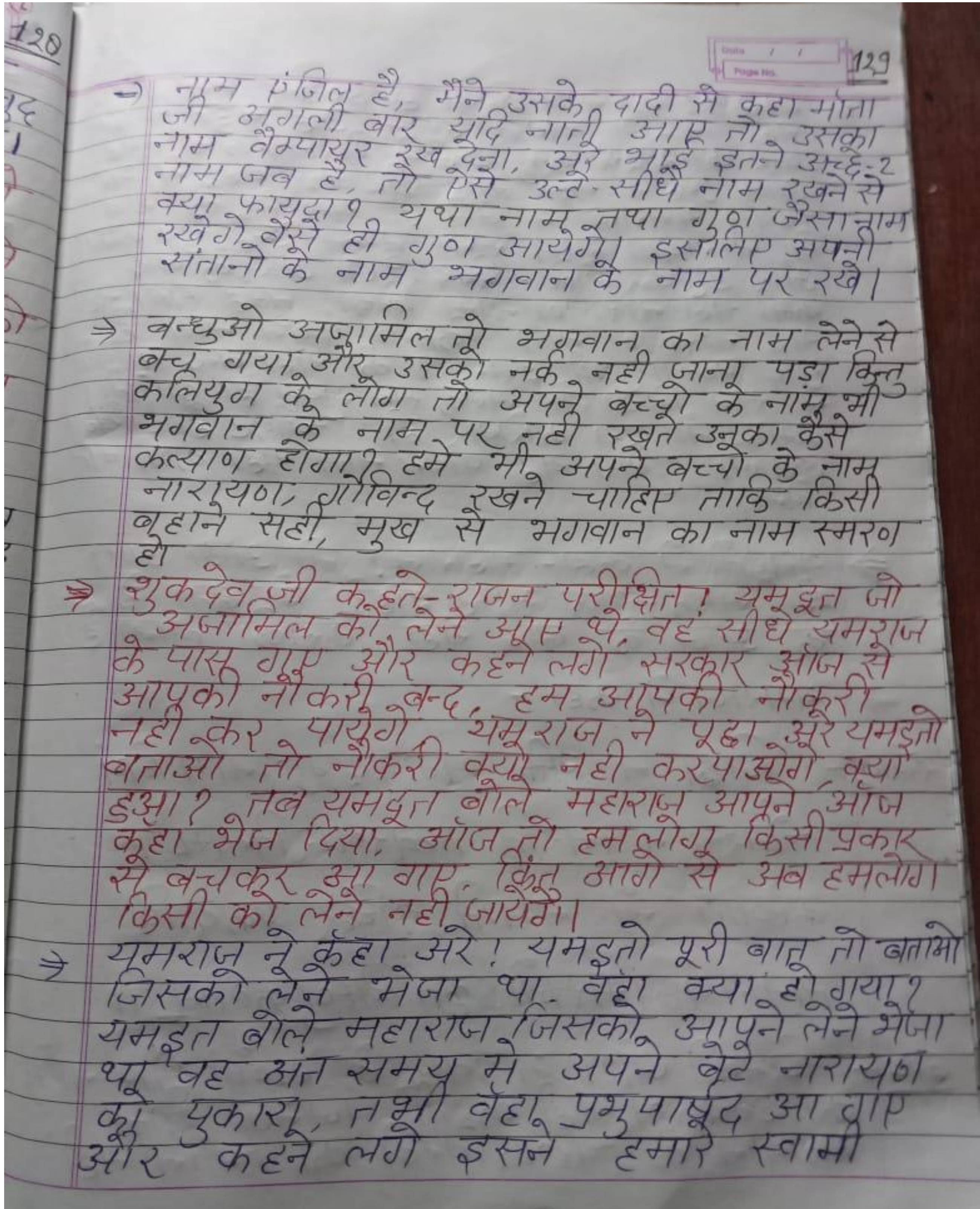
128

= नाम जपने से दसो दिशाओ मे कल्याण होता है। प्रभु के नाम की महिमा अपार है, खुद राम जी भी राम नाम के गुण नही बता सकते।

⇒ श्री शुकदेवजी कहते है- राजन! प्रभुपार्षदो ने यमदूतो से कहा अजामिल ने अन्त समय मे नारायण नाम लिया है, अतः तुम लोग इसे नही ले जा सकते, प्रभुपार्षदो ने यमदूतो को वहा से भगा दिया, और इस प्रकार केवल नारायण नाम लेने से अजामिल के प्राण बच गए, प्रभुपार्षद भी कुछ समय बाद वहा से चले गए।

⇒ बन्धुओ जरा विचार करिए, अजामिल अपने पुत्र नारायण का नाम लेने से यमदूतो के पाशदण्ड से बच गया। किन्तु हम लोग तो ना स्वयं भगवान का नाम स्मरण करते है और न ही अपने बच्चे का नाम भगवान के नाम पर रखते है। अपने बच्चो के नाम ऐसे रखे जिनका कुछ अर्थ हो, पहले के लोग बड़ा विचार करके अपने बच्चो के नाम रखते थे किंतु आजकल के लोग तो बच्चो के नाम चिंटू, पिंकू, बन्टू, रखते है, जिन नामो का कोई अर्थ ही नही।

⇒ एक बार एक यजमान ने मुझे कथा के उपरान्त अपने घर बुलाया, जब मै उनके घर पहुचा तो उन्होने मुझे अपने पूरे परिवार से भेट करायी, उनके घर मे एक छोटी सी बच्ची थी मैने उससे पूछा बेटा आपका नाम क्या है, वह मुस्कुराकर बोली मेरा



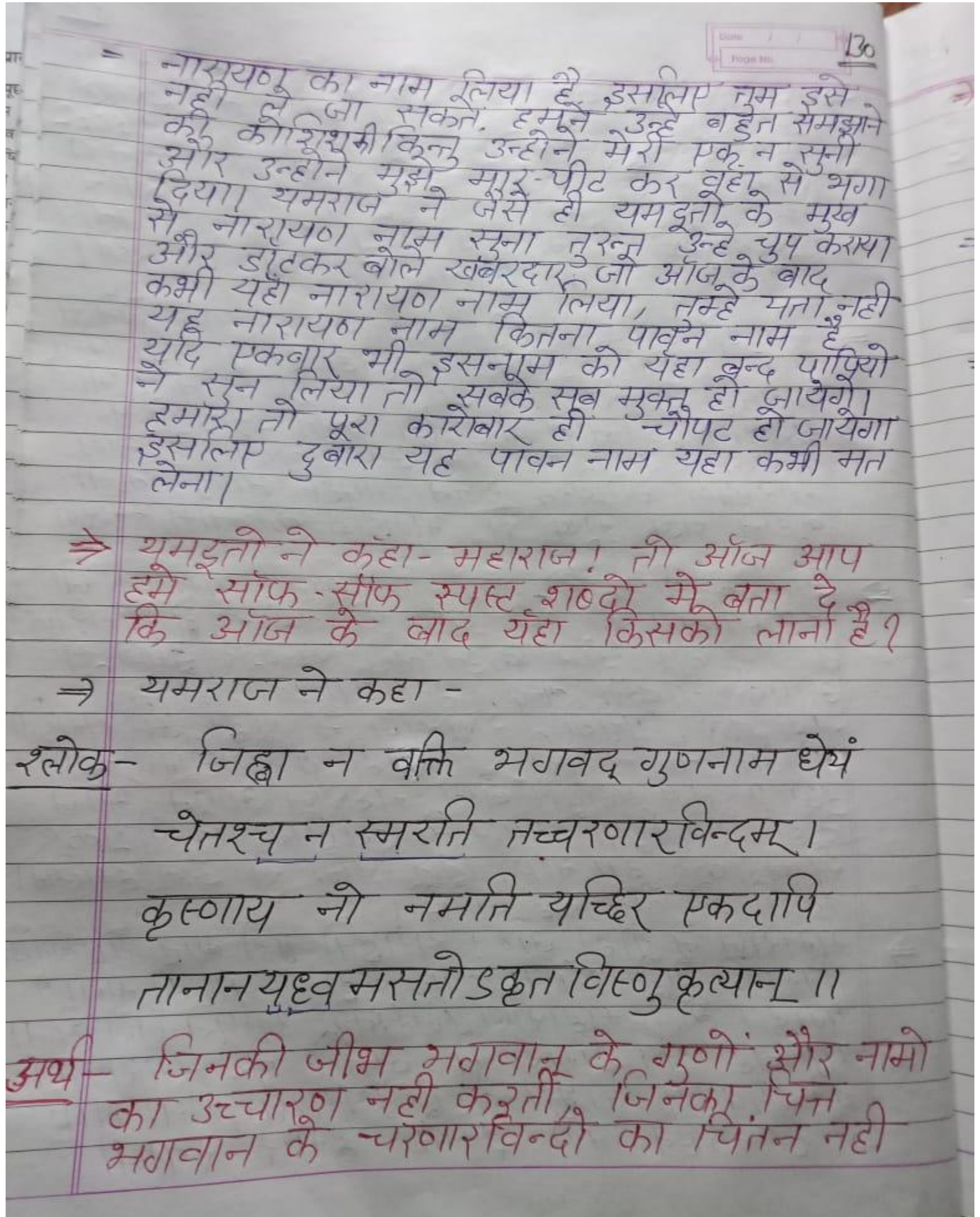
129

→ नाम पिंजिल है, मैने उसके दादी से कहा माता जी अगली बार यदि नाती आए तो उसका नाम वैम्पायर रख देना, अरे भाई इतने अच्छे-2 नाम जब है, तो ऐसे उल्टे-सीधे नाम रखने से क्या फायदा? यथा नाम तथा गुण जैसा नाम रखेगे वैसे ही गुण आयेगे। इसलिए अपनी संतानो के नाम भगवान के नाम पर रखे।

⇒ बन्धुओ अजामिल तो भगवान का नाम लेने से बच गया और उसको नर्क नही जाना पड़ा किन्तु कलियुग के लोग तो अपने बच्चो के नाम भी भगवान के नाम पर नही रखते उनका कैसे कल्याण होगा? हमे भी अपने बच्चो के नाम नारायण, गोविन्द रखने चाहिए ताकि किसी बहाने सही, मुख से भगवान का नाम स्मरण हो

⇒ शुकदेव जी कहते- राजन परीक्षित! यमदूत जो अजामिल को लेने आए थे, वह सीधे यमराज के पास गए और कहने लगे सरकार आज से आपकी नौकरी बन्द, हम आपकी नौकरी नही कर पायेगे, यमराज ने पूछा अरे यमदूतो बताओ तो नौकरी क्यो नही कर पाओगे, क्या हुआ? तब यमदूत बोले महाराज आपने आज कहा भेज दिया, आज तो हमलोग किसी प्रकार से बचकर आ गए, किंतु आगे से अब हमलोग किसी को लेने नही जायेगे।

⇒ यमराज ने कहा अरे! यमदूतो पूरी बात तो बताओ जिसको लेने भेजा था वहा क्या हो गया? यमदूत बोले महाराज जिसको आपने लेने भेजा था वह अंत समय मे अपने बेटे नारायण को पुकारा, तभी वहा प्रभुपार्षद आ गए और कहने लगे इसने हमारे स्वामी



130

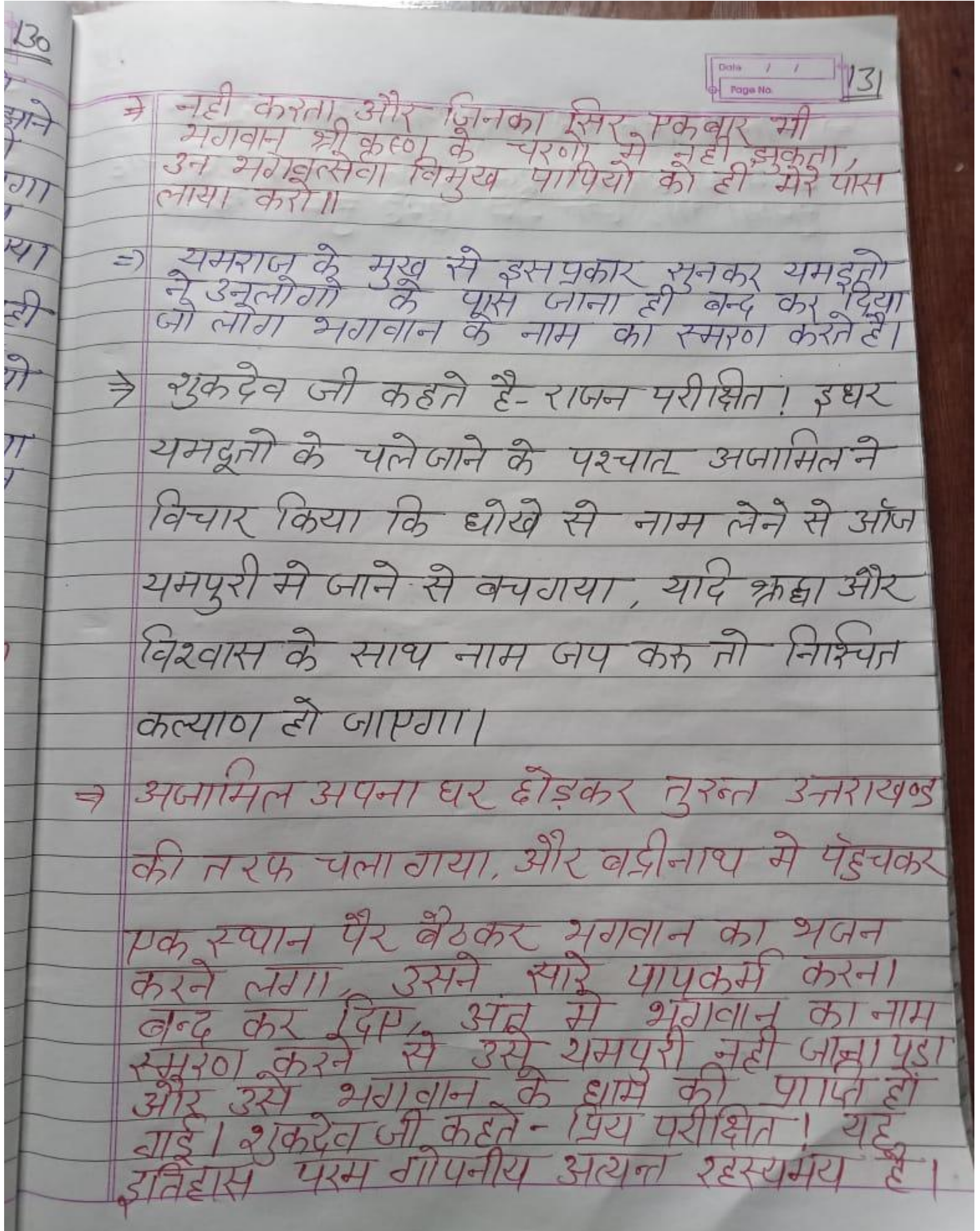
= नारायण का नाम लिया है इसलिए तुम इसे नही ले जा सकते. हमने उन्हें बहुत समझाने की कोशिश की किन्तु उन्होने मेरी एक न सुनी और उन्होने मुझे मार-पीट कर वहा से भगा दिया। यमराज ने जैसे ही यमदूतो के मुख से नारायण नाम सुना तुरन्त उन्हे चुप कराया और डांटकर बोले खबरदार जो आज के बाद कभी यहा नारायण नाम लिया, तुम्हे पता नही यह नारायण नाम कितना पावन नाम है यदि एकबार भी इस नाम को यहा बन्द पापियो ने सुन लिया तो सबके सब मुक्त हो जायेगे। हमारा तो पूरा कारोबार ही चौपट हो जायेगा इसलिए दुबारा यह पावन नाम यहा कभी मत लेना।

⇒ यमदूतो ने कहा- महाराज! तो आज आप हमे साफ-साफ स्पष्ट शब्दो मे बता दे कि आज के बाद यहा किसको लाना है?

⇒ यमराज ने कहा -

श्लोक- जिह्वा न वक्ति भगवद् गुणनाम धेयं
चेतश्च न स्मरति तच्चरणारविन्दम्।
कृष्णाय नो नमति यच्छिर एकदापि
तानानयध्वमसतोऽकृत विष्णु कृत्यान्॥

अर्थ- जिनकी जीभ भगवान् के गुणो और नामो का उच्चारण नही करती, जिनका चित्त भगवान के चरणारविन्दो का चिंतन नही



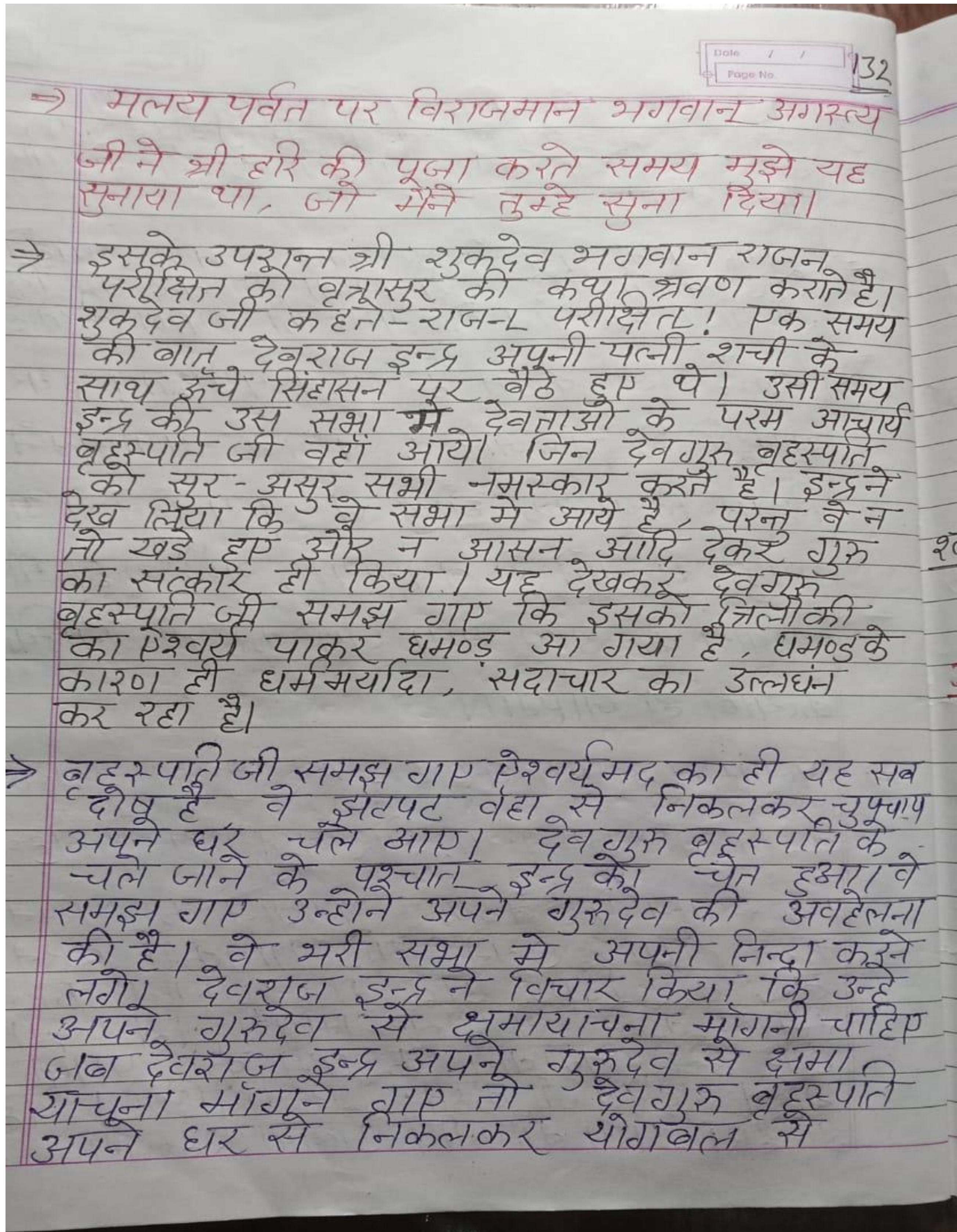
131

⇒ नही करता और जिनका सिर एकबार भी भगवान श्री कृष्ण के चरणो मे नही झुकता, उन भगवत्सेवा विमुख पापियो को ही मेरे पास लाया करो॥

⇒ यमराज के मुख से इस प्रकार सुनकर यमदूतो ने उन लोगो के पास जाना ही बन्द कर दिया जो लोग भगवान के नाम का स्मरण करते है।

⇒ शुकदेव जी कहते है- राजन परीक्षित! इधर यमदूतो के चले जाने के पश्चात अजामिल ने विचार किया कि धोखे से नाम लेने से आज यमपुरी मे जाने से बच गया, यदि श्रद्धा और विश्वास के साथ नाम जप करू तो निश्चित कल्याण हो जाएगा।

⇒ अजामिल अपना घर छोड़कर तुरन्त उत्तराखण्ड की तरफ चला गया, और बद्रीनाथ मे पहुचकर एक स्थान पैर बैठकर भगवान का भजन करने लगा, उसने सारे पापकर्म करना बन्द कर दिए, अंत मे भगवान का नाम स्मरण करने से उसे यमपुरी नही जाना पड़ा और उसे भगवान के धाम की प्राप्ति हो गई। शुकदेव जी कहते - प्रिय परीक्षित! यह इतिहास परम गोपनीय अत्यन्त रहस्यमय है।



Date / /
Page No. 132

⇒ मलय पर्वत पर विराजमान भगवान् अगस्त्य जी ने श्री हरि की पूजा करते समय मुझे यह सुनाया था, जो मैंने तुम्हे सुना दिया।

⇒ इसके उपरान्त श्री शुकदेव भगवान राजन् परीक्षित को वृत्रासुर की कथा श्रवण कराते है। शुकदेव जी कहते- राजन् परीक्षित! एक समय की बात, देवराज इन्द्र अपनी पत्नी शची के साथ ऊँचे सिंहासन पर बैठे हुए थे। उसी समय इन्द्र की उस सभा मे देवताओ के परम आचार्य बृहस्पाति जी वहाँ आये। जिन देवगुरु बृहस्पाति को सुर-असुर सभी नमस्कार करते हैं। इन्द्र ने देख लिया कि वे सभा मे आये है, परन्तु वे न तो खडे हुए और न आसन आदि देकर गुरु का सत्कार ही किया। यह देखकर देवगुरु बृहस्पाति जी समझ गए कि इसको त्रिलोकी का ऐश्वर्य पाकर घमण्ड आ गया है, घमण्ड के कारण ही धर्ममर्यादा, सदाचार का उल्लघंन कर रहा है।

⇒ बृहस्पाति जी समझ गए ऐश्वर्यमद का ही यह सब दोष है वे झटपट वहा से निकलकर चुपचाप अपने घर चले आए। देवगुरु बृहस्पाति के चले जाने के पश्चात इन्द्र को चेत हुआ। वे समझ गए उन्होने अपने गुरुदेव की अवहेलना की है। वे भरी सभा मे अपनी निन्दा करने लगे। देवराज इन्द्र ने विचार किया कि उन्हे अपने गुरुदेव से क्षमायाचना मांगनी चाहिए जब देवराज इन्द्र अपने गुरुदेव से क्षमा याचना मांगने गए तो देवगुरु बृहस्पाति अपने घर से निकलकर योगबल से

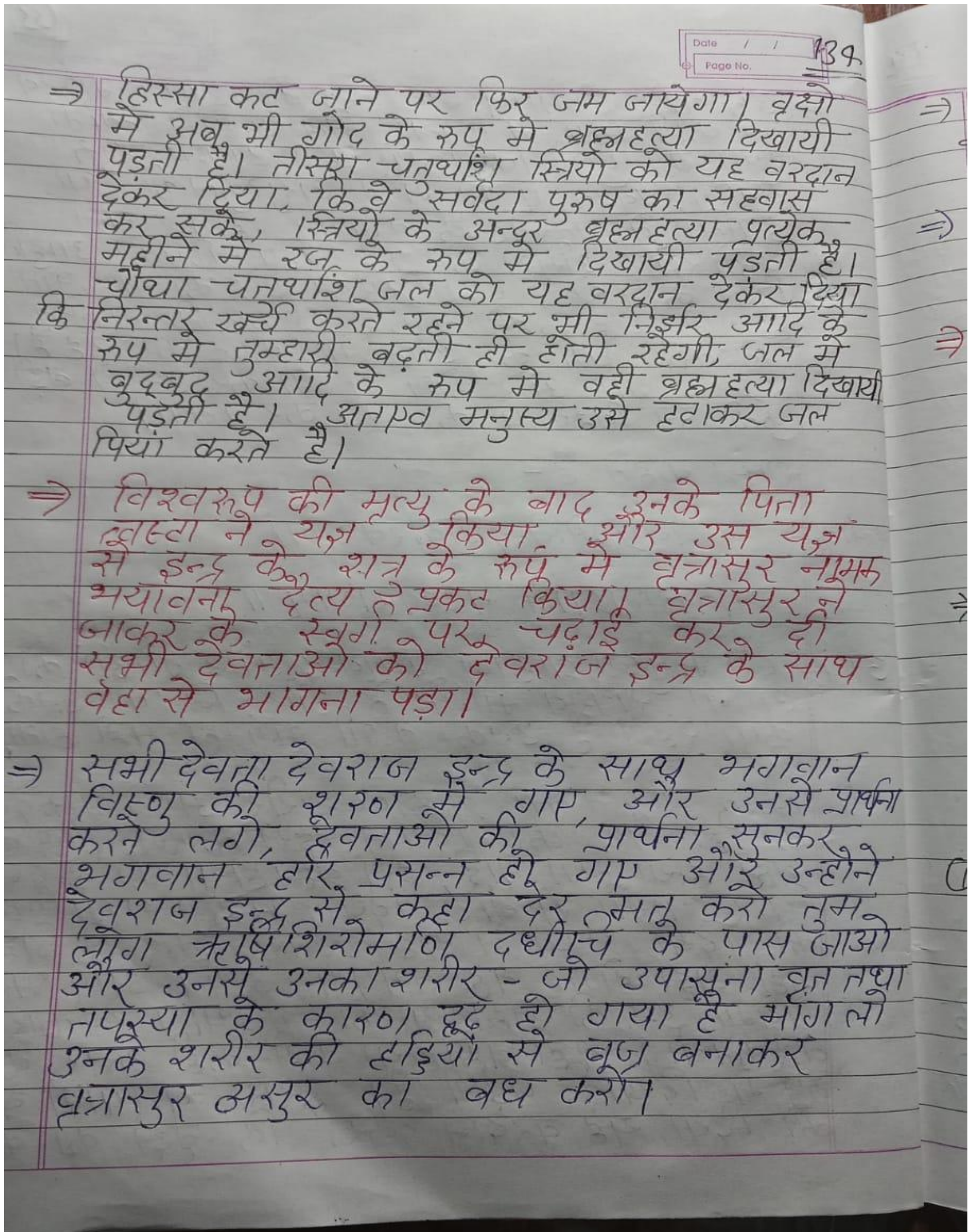
अन्तर्धान हो गए। जब इन्द्र को अपने गुरुदेव का कहीं पता न चला, तब उन्होंने त्वस्टा मुनि के पुत्र विश्वरूप को अपना गुरु बनाया, विश्वरूप की माता असुरकुल की थी इसलिए वे मातृस्नेह के वशीभूत होकर यज्ञ करते समय असुरो को भी छिप-छिपकर आहुति दिया करते थे। जब देवराज इन्द्र को यह ज्ञात हुआ तो वह कहने लगे, इस प्रकार तो गुरुदेव विश्वरूप धर्म की ओट मे कपट कर रहे है, इन्द्र डर गए और क्रोध मे भरकर उन्होंने बड़ी फुर्ती से विश्वरूप का बध कर दिया।

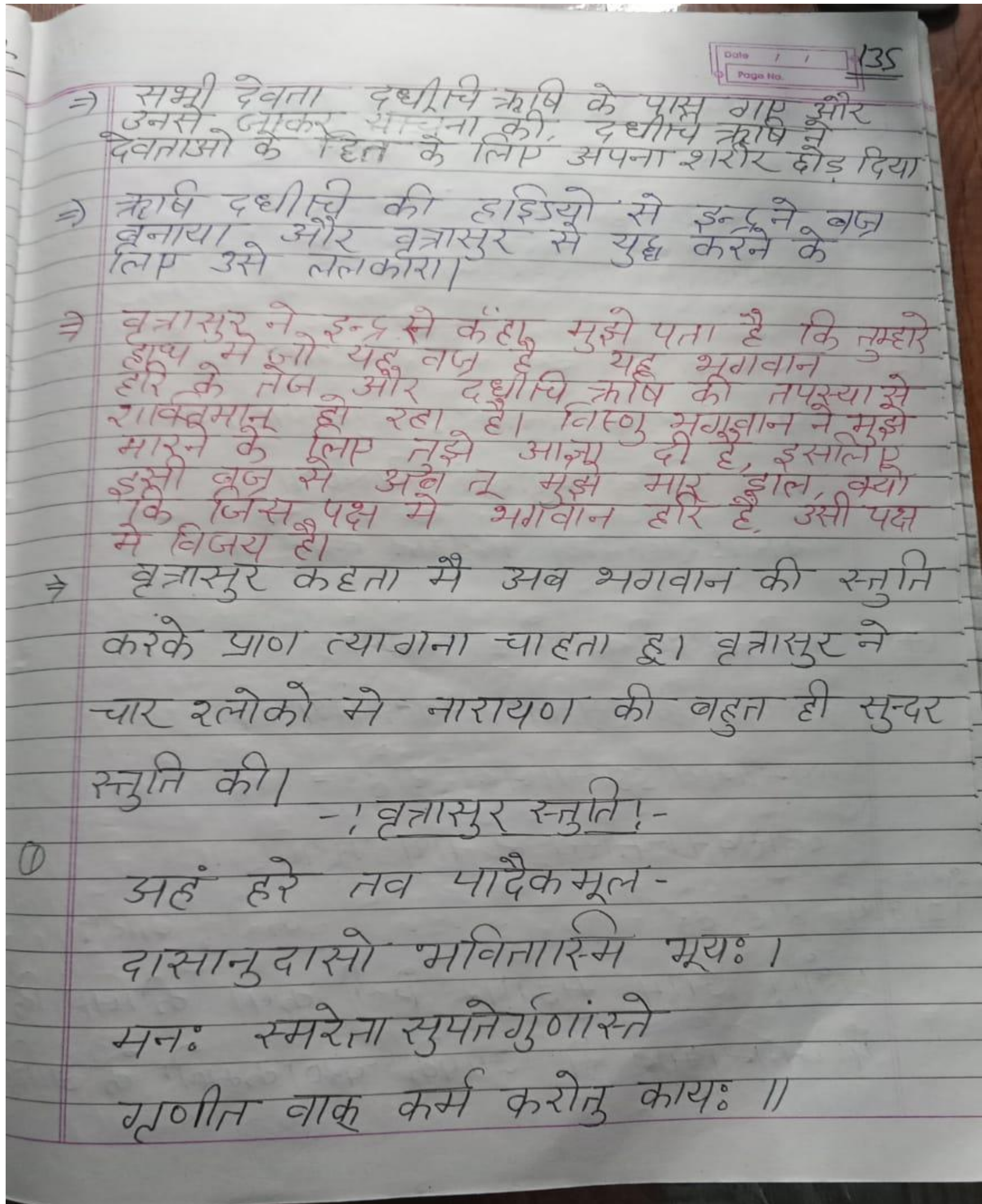
शास्त्र कहते है -

श्लोक - न विप्रगोविन्द गवीश्वराणां
भवन्त्यमद्राणि नरेश्वराणाम् ॥

अर्थ - जो मनुस्य ब्राह्मण, गोविन्द और गौओं को अपना सर्वस्व मानते है और जिनपर उनकी कृपा रहती है उनका कभी अमंगल नही होता

⇒ किन्तु इन्द्र ने तो ब्राह्मण शरीर अपने गुरुदेव का ही बध कर दिया। इस कारण इन्द्र को ब्रह्म हत्या लग गई, इस ब्रह्महत्या को इन्द्र ने चार भागो मे बाँट दिया, पहला भाग पृथ्वी को दिया, पृथ्वी ने यह वरदान लेकर कि जहाँ कही गड्ढा होगा, वह समय पर अपने-आप भर जायेगा, इन्द्र की ब्रह्महत्या का चतुर्थांश स्वीकार कर लिया। वही ब्रह्महत्या कही-कही ऊसर के रूप मे दिखाई पड़ती है। इसरा चतुर्थांश वृक्षो को दिया, यह वरदान देकर, कि वृक्ष का कोई


134
⇒ हिस्सा कट जाने पर फिर जम जायेगा। वृक्षो मे अब भी गोंद के रूप मे ब्रह्महत्या दिखायी पड़ती है। तीसरा चतुर्थांश स्त्रियो को यह वरदान देकर दिया, कि वे सर्वदा पुरुष का सहवास कर सके, स्त्रियो के अन्दर ब्रह्महत्या प्रत्येक महीने मे रज के रूप मे दिखायी पड़ती है। चौथा चतुर्थांश जल को यह वरदान देकर दिया कि निरन्तर खर्च करते रहने पर भी निर्झर आदि के रूप मे तुम्हारी बढ़ती ही होती रहेगी, जल मे बुदबुद आदि के रूप मे वही ब्रह्महत्या दिखायी पड़ती है। अतएव मनुष्य उसे हटाकर जल पिया करते है।
⇒ विश्वरूप की मृत्यु के बाद उनके पिता त्वष्टा ने यज्ञ किया, और उस यज्ञ से इन्द्र के शत्रु के रूप मे वृत्रासुर नामक भयावना दैत्य प्रकट किया। वृत्रासुर ने जाकर के स्वर्ग पर चढ़ाई कर दी सभी देवताओ को देवराज इन्द्र के साथ वहा से भागना पड़ा।
⇒ सभी देवता देवराज इन्द्र के साथ भगवान विष्णु की शरण मे गए, और उनसे प्रार्थना करने लगे, देवताओ की प्रार्थना सुनकर भगवान हरि प्रसन्न हो गए और उन्होने देवराज इन्द्र से कहा देर मत करो तुम लोग ऋषिशिरोमणि दधीचि के पास जाओ और उनसे उनका शरीर - जो उपासना व्रत तथा तपस्या के कारण दृढ हो गया है मांग लो उनके शरीर की हड्डियो से वज्र बनाकर वृत्रासुर असुर का वध करो।



135

⇒ सभी देवता दधीचि ऋषि के पास गए और उनसे जाकर याचना की, दधीचि ऋषि ने देवताओ के हित के लिए अपना शरीर छोड़ दिया

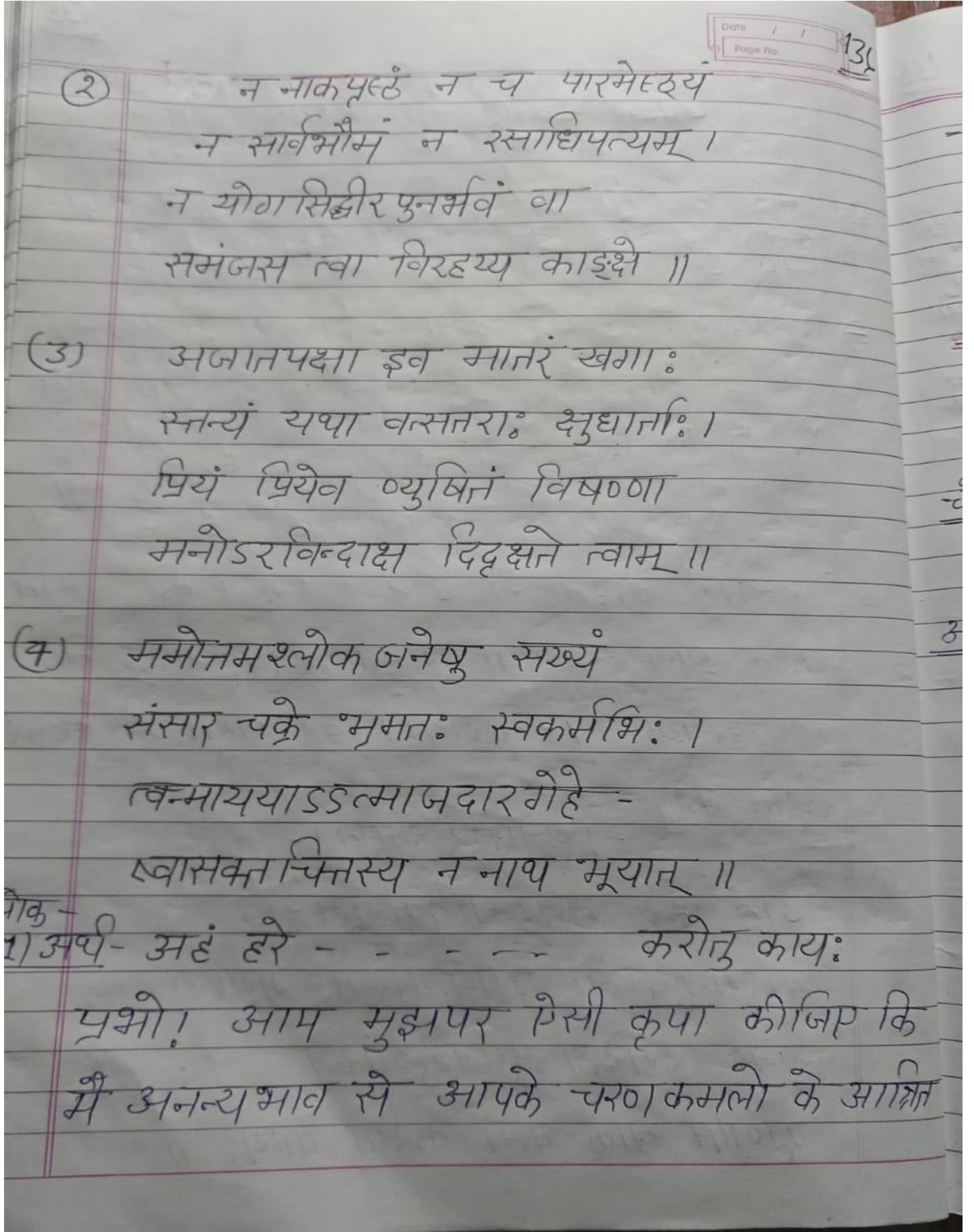
⇒ ऋषि दधीचि की हड्डियो से इन्द्र ने वज्र बनाया और वृत्रासुर से युद्ध करने के लिए उसे ललकारा।

⇒ वृत्रासुर ने इन्द्र से कहा मुझे पता है कि तुम्हारे हाथ मे जो यह वज्र है यह भगवान हरि के तेज और दधीचि ऋषि की तपस्या से शक्तिमान हो रहा है। विष्णु भगवान ने मुझे मारने के लिए तुझे आज्ञा दी है, इसलिए इसी वज्र से अब तू मुझे मार डाल, क्योकि जिस पक्ष मे भगवान हरि है, उसी पक्ष मे विजय है।

⇒ वृत्रासुर कहता मै अब भगवान की स्तुति करके प्राण त्यागना चाहता हू। वृत्रासुर ने चार श्लोको से नारायण की बहुत ही सुन्दर स्तुति की।

-। वृत्रासुर स्तुति ।-

(1) अहं हरे तव पादैकमूल-
दासानुदासो भवितास्मि भूयः।
मनः स्मरेतासुपतेर्गुणांस्ते
गृणीत वाक् कर्म करोतु कायः ॥


135
(2) न नाकपृष्ठं न च पारमेष्ठ्यं
न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम् ।
न योगसिद्धीर पुनर्भवं वा
समंजस त्वा विरहय्य काङ्क्षे ॥
(3) अजातपक्षा इव मातरं खगाः
स्तन्यं यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः ।
प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा
मनोऽरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम् ॥
(4) ममोत्तमश्लोक जनेषु सख्यं
संसार चक्रे भ्रमतः स्वकर्मभिः ।
त्वन्मायया‌ऽऽत्मात्मजदारगेहे -
ष्वासक्त चित्तस्य न नाथ भूयात् ॥
श्लोक - 1) अर्थ - अहं हरे - - - - करोतु कायः
प्रभो! आप मुझपर ऐसी कृपा कीजिए कि
मैं अनन्य भाव से आपके चरणकमलो के आश्रित

Date / / 137
Page No.

दासो के दासो का दास बन जाऊ
- दासानुदासो भवितास्मि भूयः।
वृत्रासुर कहता दासानुदासो, मैं आपके दासो के दासो का दास बन जाऊ, कहने का भाव मैं छोटा बन जाऊ, क्यो कि छोटा बन कर के ही भगवान की कृपा प्राप्त की जा सकती है बड़ा बनकर नही।

⇒ श्री हनुमान जी सरकार जब श्री राम जी के कार्य को सिद्ध करने चले, (सजीवनी बूटी - लाने गए) तब वह अपने बल से नही रामजी के बलसे गए -

चौ० जिमि अमोघ रघुपति कर बाना।
एही भाँति चलेउ हनुमाना॥

अर्थ जैसे बाण चलता तो है, किन्तु बाण के पैर किसी ने नही देखे, कुछ चीजे बिना पैरो के चलती है आपके घर कोई व्यक्ति या रिश्तेदार आए तो सबसे पहले आप उससे क्या पूछते है? ठण्डा चलेगा या गर्म? ठण्डा, गर्म तो नही चलता किन्तु उनको आपतक लाने के लिए व्यक्ति माध्यम बनता है तब चाय या नीबू पानी आपतक आता है इसी प्रकार बाण तो चलता है किन्तु चलाने वाले के शक्ति और वेग से, हनुमान जी जब चले, सजीवनी बूटी लेने तो, राम जी के शक्ति और वेग से चले, राम जी के बल पर चलने वाले सदैव अपने आप को छोटा बनाकर प्रस्तुत करते है, हनुमान जी ने जब लंका मे प्रवेश किया, तो अपने आपको छोटा बनाकर प्रस्तुत किया।

Date / /
Page No. 138

चौ० मसक समान रुप कपि धरी।
लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी॥

अर्थ- मसक समान रुप हनुमान जी ने बना लिया ऐसा विद्वान कहते हैं, किन्तु यदि हनुमान जी ने मसक समान रुप धारण किया तो हनुमान जी ने वो मुद्रिका कैसे पकडी जो राम जी ने उन्हे दी थी, बन्धुओ हनुमान जी ने मसक समान रुप नही, मसक समान (छोटा) स्वभाव बना लिया, क्यो कि रामजी के चरणो के सेवक सदैव अपने आपको छोटा बनाकर ही प्रस्तुत करते है।

⇒ संसार मे जितने छोटे बनकर रहेगे उतने ही राम जी के प्यारे बनकर रहेंगे, वृत्रासुर ठाकुर जी से उनके चरणो के दासो के दासो का दास बनने के लिए क्यो कह रहा क्यो कि उसे पता है, जब किसी व्यक्ति का विवाह होता है, तो पुत्र प्राप्ति के उपरान्त उसे अपने पुत्र से प्रेम हो जाता है और जब उसके पुत्र का विवाह होने के बाद नाती आ जाता है तो पिता को पुत्र से अधिक नाती से प्रेम हो जाता है। वृत्रासुर जानता है यदि मै भगवान के दासो के दासो का दास बन जाऊगा तो भगवान का विशेष स्नेह और प्रेम मुझे प्राप्त होगा।

⇒ वृत्रासुर कहता - प्रभो! मेरा मन आपके चरण कमलो के आश्रित सेवको की सेवा करने मे लगा रहे, मेरी वाणी आपके मंगलमय गुणो

139

का स्मरण करती रहे, मेरा शरीर सदैव आपकी सेवा में संलग्न रहे।

श्लोक(४) न नाक पृष्ठं - - - - - विरहय्य काङ्क्षे
अर्थ- वृत्रासुर कहता मै आपको छोड़कर, न स्वर्ग चाहता है, न ब्रह्मलोक, न भूमण्डल का साम्राज्य, न योग सिद्धि - यहाँ तक कि मोक्ष भी नही चाहता।

⇒ भगवान बोले तो क्या चाँहते हो, तब वृत्रासुर ने कहा -

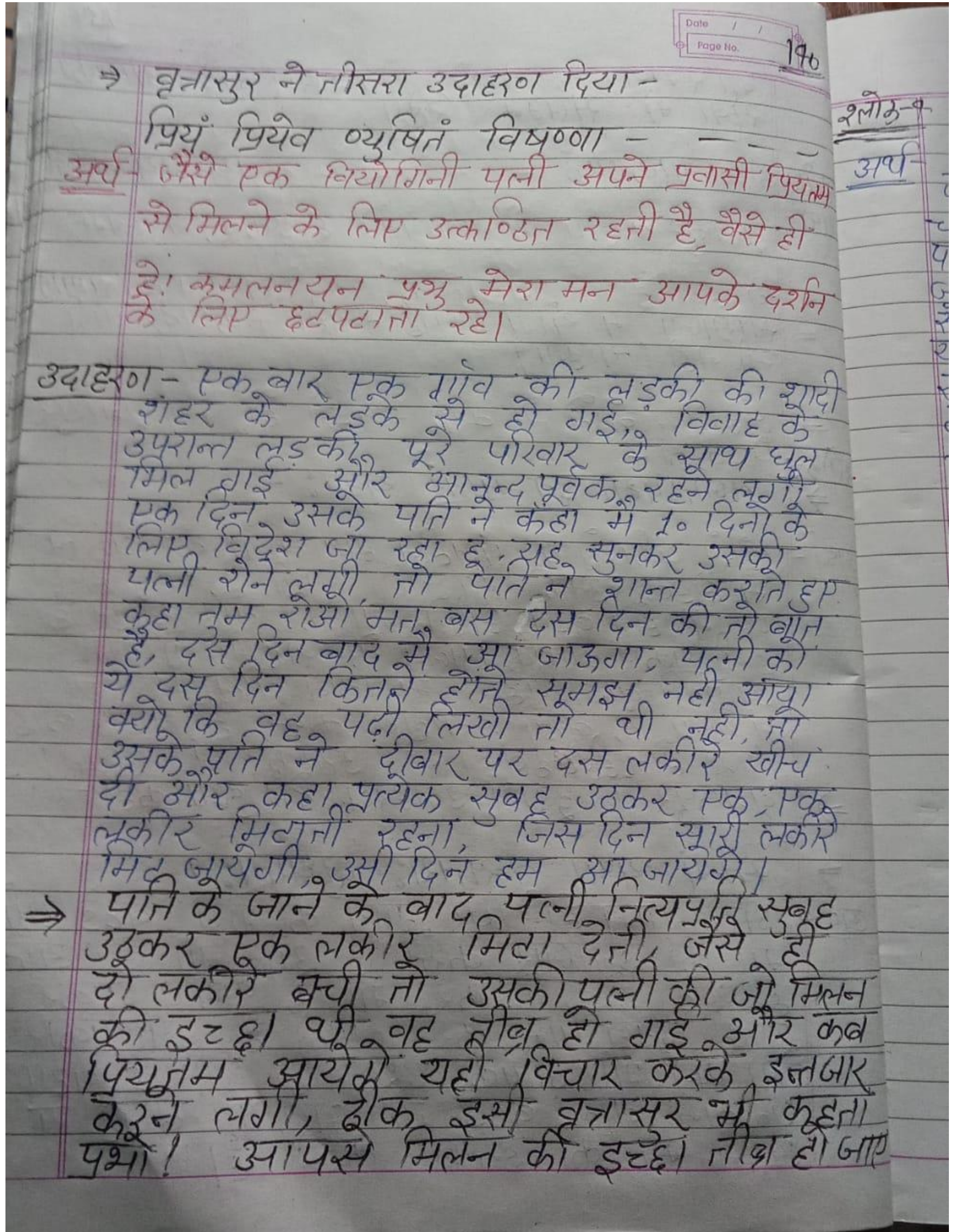
श्लोक-5 ⇒ अजातपक्षा इव मातरं खगाः - - - -

अर्थ- जैसे पक्षियो के पंखहीन हीन बच्चो को घोंसले मे छोड़कर उनकी माँ चली जाती है, शाम होने पर पंखहीन बच्चे अपने मा की बाट जोहते है इसी प्रकार आपके मिलन के राह मे मै भी आपकी बाट निहारु, भगवान बोले ऐसा तो पक्षियो के बच्चे इसलिए करते है ताकि कोई रात्रि होते ही उन्हे वहा से उठाकर न ले जाए।

⇒ वृत्रासुर ने दूसरा उदाहरण देते हुए कहा -

⇒ स्तन्यं यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः।

अर्थ- जैसे शाम होने पर गाय के भूखे बछडे अपने माँ का इन्तजार करते है और माँ के आते ही खूटे तोड़, तोड़कर माँ के समीप जाकर उसके दुग्ध पान करने लगाते है, इसी प्रकार मेरा मन भी आपके दर्शन के लिए छटपटाए भगवान बोले बछडे तो भूख की वजह से अपनी माँ का इन्तजार करते है।



Date / /
Page No. 140

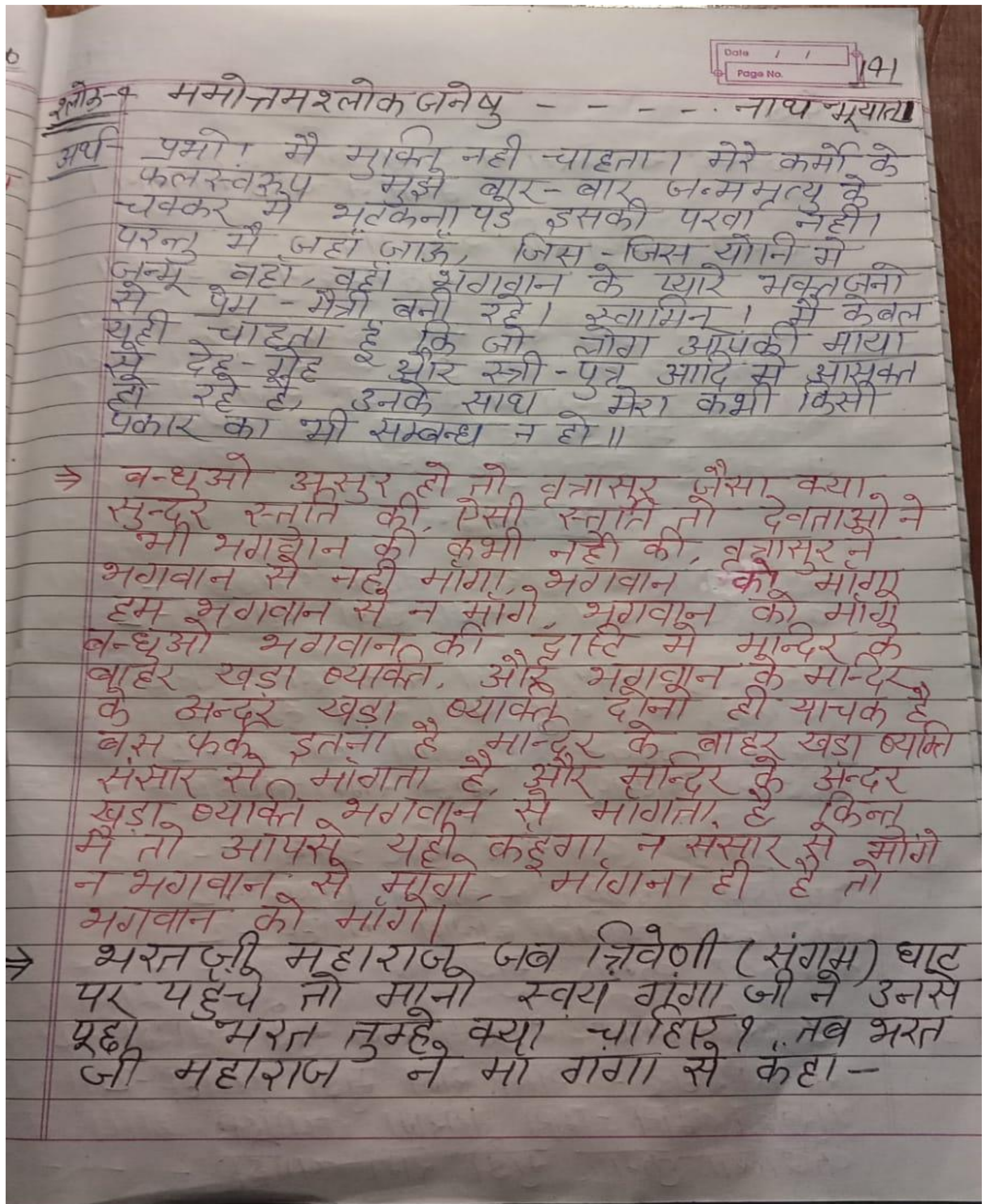
⇒ वृत्रासुर ने तीसरा उदाहरण दिया-

प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा - - - -

अर्थ- जैसे एक वियोगिनी पत्नी अपने प्रवासी प्रियतम से मिलने के लिए उत्कण्ठित रहती है, वैसे ही हे! कमलनयन प्रभु मेरा मन आपके दर्शन के लिए छटपटाता रहे।

उदाहरण- एक बार एक गाँव की लड़की की शादी शहर के लड़के से हो गई, विवाह के उपरान्त लड़की पूरे परिवार के साथ घुल मिल गई और आनन्द पूर्वक रहने लगी। एक दिन उसके पति ने कहा मैं 10 दिनों के लिए विदेश जा रहा हूं, यह सुनकर उसकी पत्नी रोने लगी, तो पति ने शान्त कराते हुए कहा तुम रोओ मत, बस दस दिन की तो बात है, दस दिन बाद मैं आ जाऊगा, पत्नी को ये दस दिन कितने होते समझ नहीं आया क्योंकि वह पढ़ी लिखी तो थी नहीं, तो उसके पति ने दीवार पर दस लकीरें खींच दी और कहा प्रत्येक सुबह उठकर एक-एक लकीर मिटाती रहना, जिस दिन सारी लकीरें मिट जायेंगी, उसी दिन हम आ जायेंगे।

⇒ पति के जाने के बाद पत्नी नित्यप्रति सुबह उठकर एक लकीर मिटा देती, जैसे ही दो लकीरें बची तो उसकी पत्नी की जो मिलन की इच्छा थी वह तीव्र हो गई और कब प्रियतम आयेंगे यही विचार करके इन्तजार करने लगी, ठीक इसी वृत्रासुर भी कहता प्रभो! आपसे मिलन की इच्छा तीव्र हो जाए

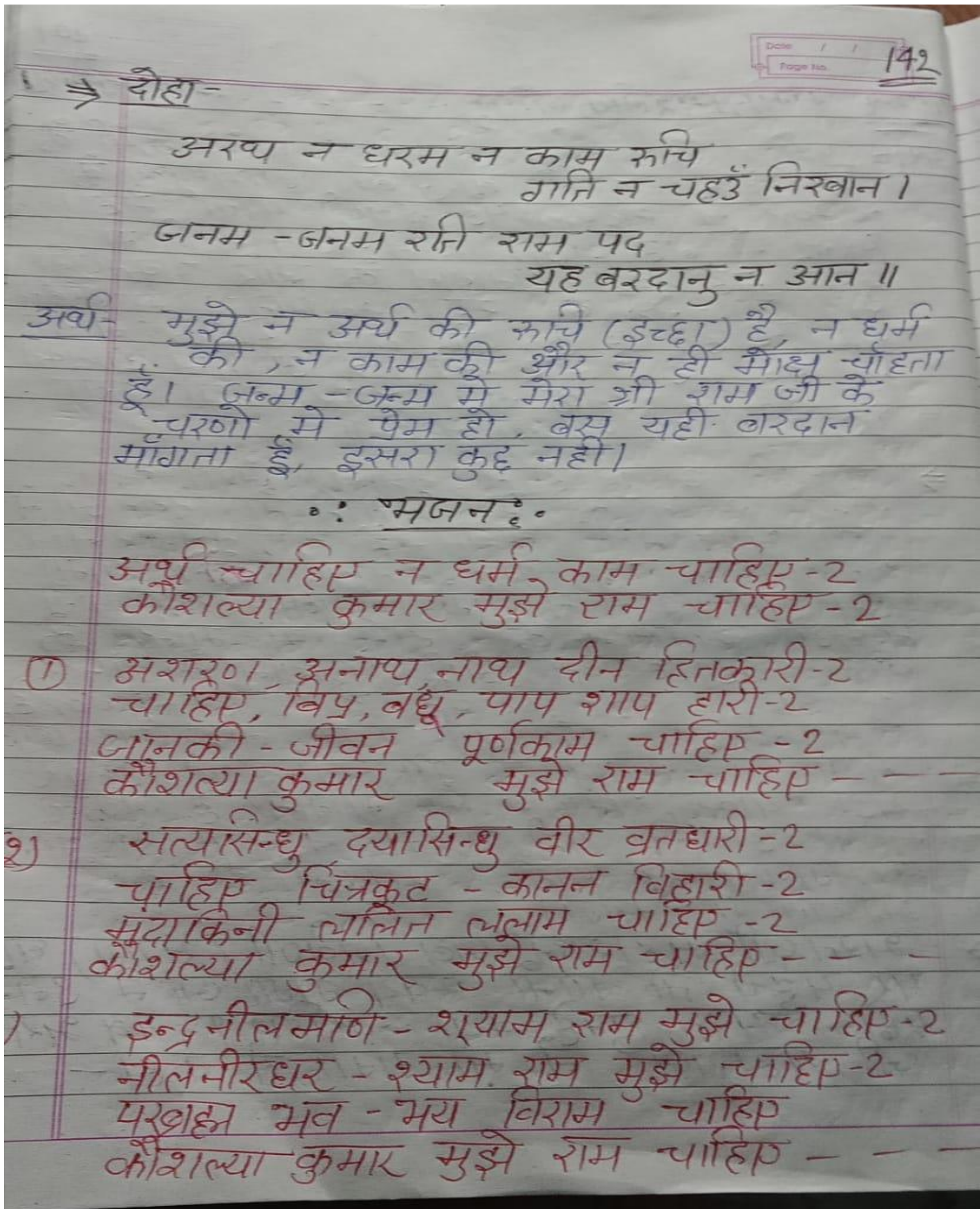

Date / / Page No. 141

श्लोक-4 ममोत्तमश्लोकजनेषु - - - - - नाथ भूयात्।

अर्थ- प्रभो! मैं मुक्ति नहीं चाहता। मेरे कर्मों के फलस्वरूप मुझे बार-बार जन्ममृत्यु के चक्कर में भटकना पड़े इसकी परवा नहीं। परन्तु मैं जहाँ जाऊँ, जिस-जिस योनि में जन्मूं वहाँ, वहाँ भगवान के प्यारे भक्तजनों से प्रेम-मैत्री बनी रहे। स्वामिन्! मैं केवल यही चाहता हूँ कि जो लोग आपकी माया से देह-गेह और स्त्री-पुत्र आदि से आसक्त हो रहे हैं, उनके साथ मेरा कभी किसी प्रकार का भी सम्बन्ध न हो॥

⇒ बन्धुओ असुर हो तो वृत्रासुर जैसा क्या सुन्दर स्तुति की, ऐसी स्तुति तो देवताओ ने भी भगवान की कभी नहीं की, वृत्रासुर ने भगवान से नहीं मांगा, भगवान को मांगा हम भगवान से न मांगे, भगवान को मांगे बन्धुओ भगवान की द्रष्टि मे मन्दिर के बाहर खड़ा ब्यक्ति, और भगवान के मन्दिर के अन्दर खड़ा ब्यक्ति दोनो ही याचक है बस फर्क इतना है मन्दिर के बाहर खड़ा ब्यक्ति संसार से मांगता है, और मन्दिर के अन्दर खड़ा ब्यक्ति भगवान से मांगता है किन्तु मैं तो आपसे यही कहूंगा, न संसार से मांगो न भगवान से मांगो, मांगना ही है तो भगवान को मांगो।

⇒ भरत जी महाराज जब त्रिवेणी (संगम) घाट पर पहुंचे तो मानो स्वयं गंगा जी ने उनसे पूछा, भरत तुम्हे क्या चाहिए? तब भरत जी महाराज ने माँ गंगा से कहा-



142

⇒ दोहा-

अरथ न धरम न काम रुचि
गति न चहउँ निरबान।
जनम-जनम रति राम पद
यह बरदानु न आन॥

अर्थ- मुझे न अर्थ की रुचि (इच्छा) है, न धर्म की, न काम की और न ही मोक्ष चाहता हूं। जन्म-जन्म मे मेरा श्री राम जी के चरणो मे प्रेम हो, बस यही वरदान माँगता हूं, दूसरा कुछ नही।

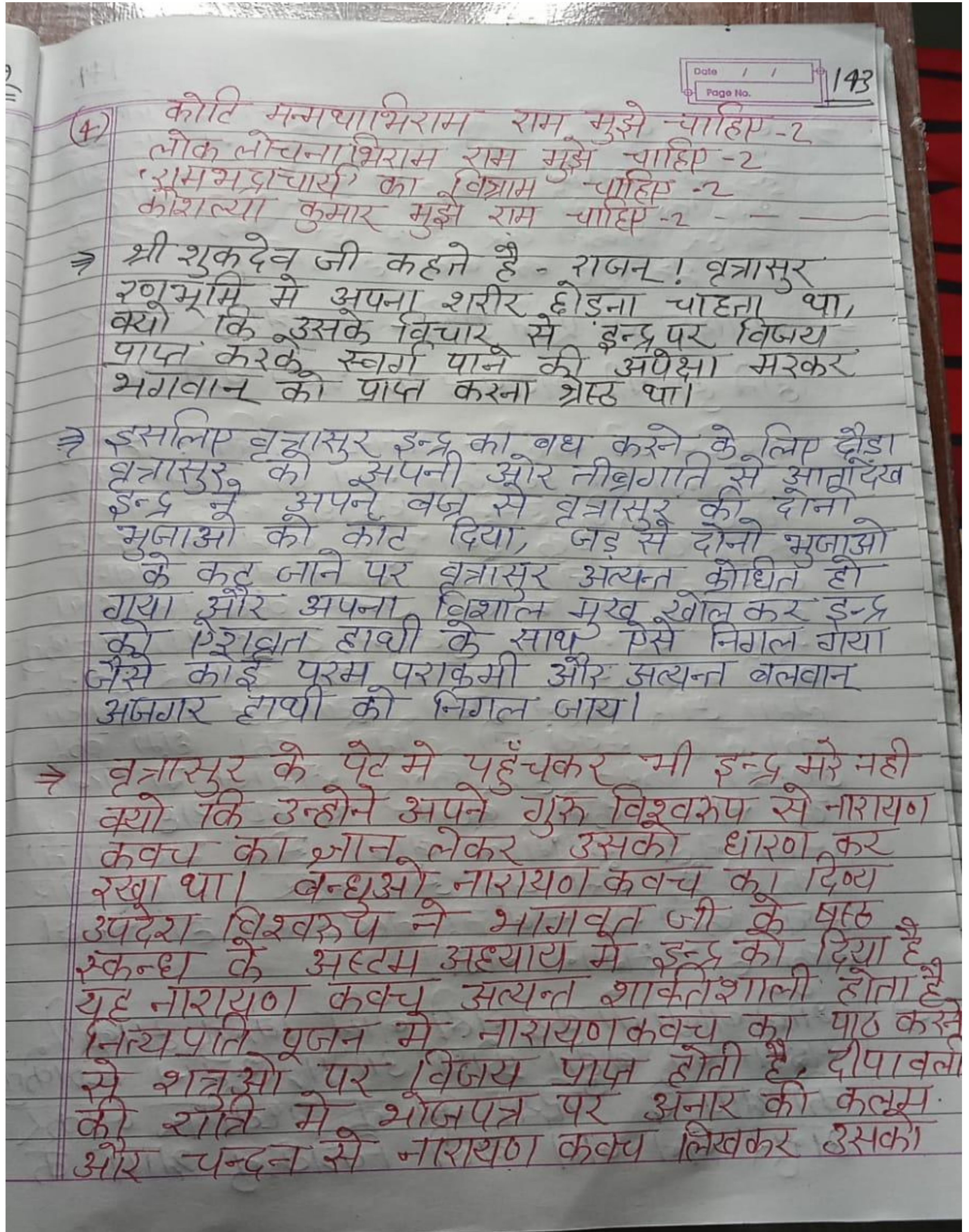
: भजन :

अर्थ चाहिए न धर्म, काम चाहिए-2
कौशल्या कुमार मुझे राम चाहिए-2

(1) अशरण, अनाथ, नाथ दीन हितकारी-2
चाहिए, विप्र, बंधु, पाप शाप हारी-2
जानकी-जीवन पूर्णकाम चाहिए-2
कौशल्या कुमार मुझे राम चाहिए---

(2) सत्यसिन्धु दयासिन्धु वीर व्रतधारी-2
चाहिए चित्रकूट-कानन विहारी-2
मंदाकिनी ललित ललाम चाहिए-2
कौशल्या कुमार मुझे राम चाहिए---

(3) इन्द्रनीलमणि-श्याम राम मुझे चाहिए-2
नीलनीरधर-श्याम राम मुझे चाहिए-2
परब्रह्म भव-भय विराम चाहिए
कौशल्या कुमार मुझे राम चाहिए---



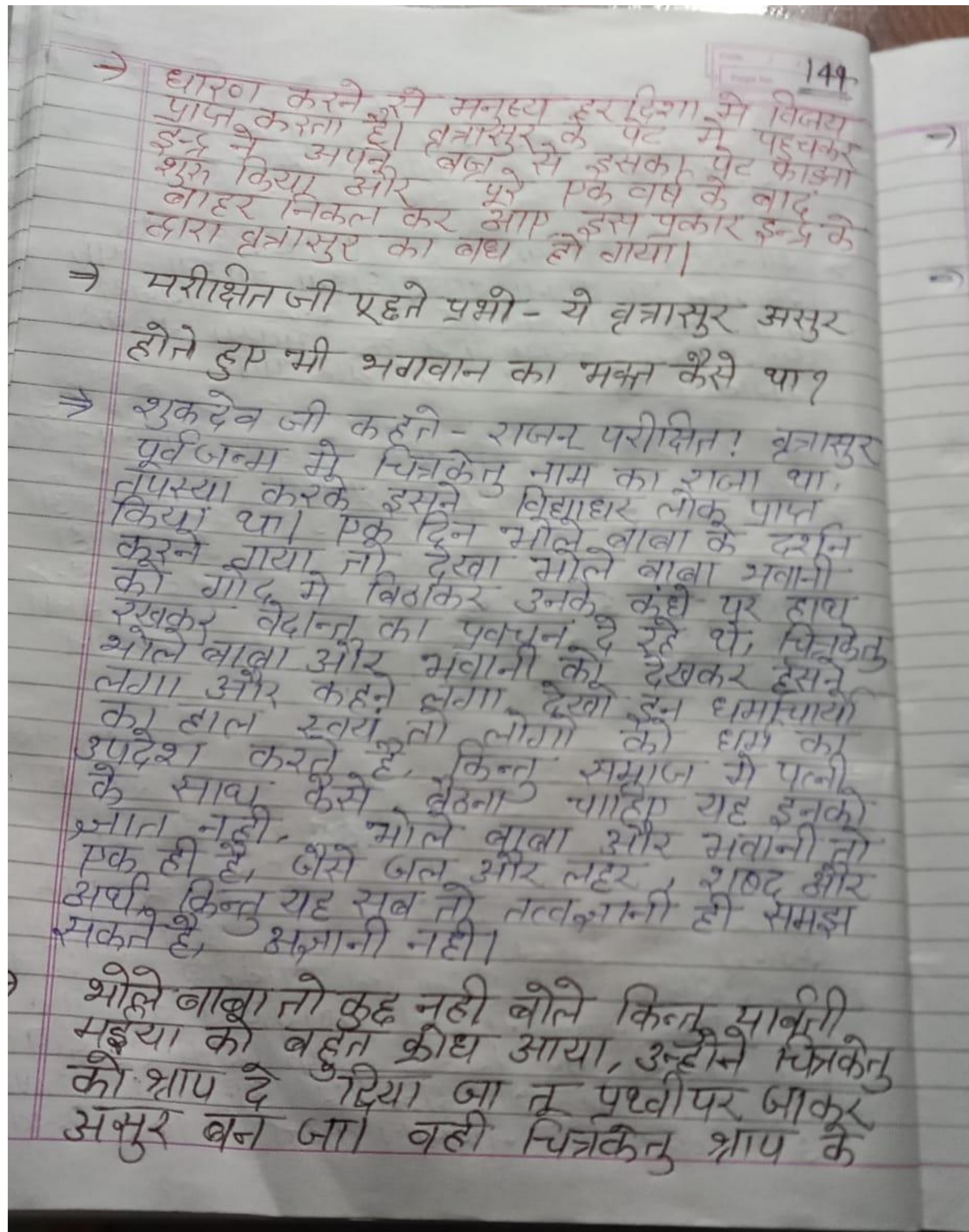
143

(4) कोटि मन्मथाभिराम राम मुझे चाहिए -2
लोक लोचनाभिराम राम मुझे चाहिए -2
'रामभद्राचार्य' को विश्राम चाहिए -2
कौशल्या कुमार मुझे राम चाहिए -2 — —

⇒ श्री शुकदेव जी कहते है - राजन! वृत्रासुर रणभूमि मे अपना शरीर छोड़ना चाहता था, क्यो कि उसके विचार से इन्द्र पर विजय प्राप्त करके स्वर्ग पाने की अपेक्षा मरकर भगवान को प्राप्त करना श्रेष्ठ था।

⇒ इसलिए वृत्रासुर इन्द्र का बध करने के लिए दौड़ा वृत्रासुर को अपनी ओर तीव्रगति से आता देख इन्द्र ने अपने बज्र से वृत्रासुर की दोनो भुजाओ को काट दिया, जड़ से दोनो भुजाओ के कट जाने पर वृत्रासुर अत्यन्त क्रोधित हो गया और अपना विशाल मुख खोलकर इन्द्र को ऐरावत हाथी के साथ ऐसे निगल गया जैसे कोई परम पराक्रमी और अत्यन्त बलवान अजगर हाथी को निगल जाय।

→ वृत्रासुर के पेट मे पहुँचकर भी इन्द्र मरे नही क्यो कि उन्होने अपने गुरु विश्वरूप से नारायण कवच का ज्ञान लेकर उसको धारण कर रखा था। बन्धुओ नारायण कवच का दिव्य उपदेश विश्वरूप ने भागवत जी के षष्ठ स्कन्ध के अष्टम अध्याय मे इन्द्र को दिया है यह नारायण कवच अत्यन्त शक्तिशाली होता है नित्य प्रति पूजन मे नारायण कवच का पाठ करने से शत्रुओ पर विजय प्राप्त होती है, दीपावली की रात्रि मे भोजपत्र पर अनार की कलम और चन्दन से नारायण कवच लिखकर उसको



144

→ धारण करने से मनुष्य हर दिशा मे विजय प्राप्त करता है। वृत्रासुर के पेट मे पहुचकर इन्द्र ने अपने बज्र से इसका पेट फाड़ना शुरु किया और पूरे एक वर्ष के बाद बाहर निकल कर आए इस प्रकार इन्द्र के द्वारा वृत्रासुर का बध हो गया।

→ परीक्षित जी पूछते प्रभो - ये वृत्रासुर असुर होते हुए भी भगवान का भक्त कैसे था?

→ शुकदेव जी कहते - राजन परीक्षित! वृत्रासुर पूर्वजन्म मे चित्रकेतु नाम का राजा था, तपस्या करके इसने विद्याधर लोक प्राप्त किया था। एक दिन भोले बाबा के दर्शन करने गया, तो देखा भोले बाबा भवानी को गोद मे बिठाकर उनके कंधे पर हाथ रखकर वेदान्त का प्रवचन दे रहे थे, चित्रकेतु भोले बाबा और भवानी को देखकर हँसने लगा और कहने लगा, देखो इन धर्माचार्यो का हाल स्वयं तो लोगो को धर्म का उपदेश करते है, किन्तु समाज मे पत्नी के साथ कैसे बैठना चाहिए यह इनको ज्ञात नही, भोले बाबा और भवानी तो एक ही है, जैसे जल और लहर, शब्द और अर्थ, किन्तु यह सब तो तत्वज्ञानी ही समझ सकते है, अज्ञानी नही।

→ भोले बाबा तो कुछ नही बोले किन्तु पार्वती मइया को बहुत क्रोध आया, उन्होने चित्रकेतु को श्राप दे दिया जा तू पृथ्वीपर जाकर असुर बन जा। वही चित्रकेतु श्राप के

← सप्तमः स्कन्धः →

145

⇒ कारण वृत्रासुर बना, जब माता पार्वती ने इसे श्राप दिया तो यह उनके चरणो मे गिरकर रोने लगा, तब माता पार्वती ने इससे कहा असुर होने पर भी तेरी भक्ति बनी रहेगी।

⇒ शुकदेव जी कहते - राजन् परीक्षित इसी कारण वृत्रासुर असुर होते हुए भी भगवान का इतना बड़ा भक्त था। हे परीक्षित तुम्हारे पूछने पर मैने तुम्हे वृत्रासुर का वृत्तान्त विस्तारपूर्वक श्रवण कराया।

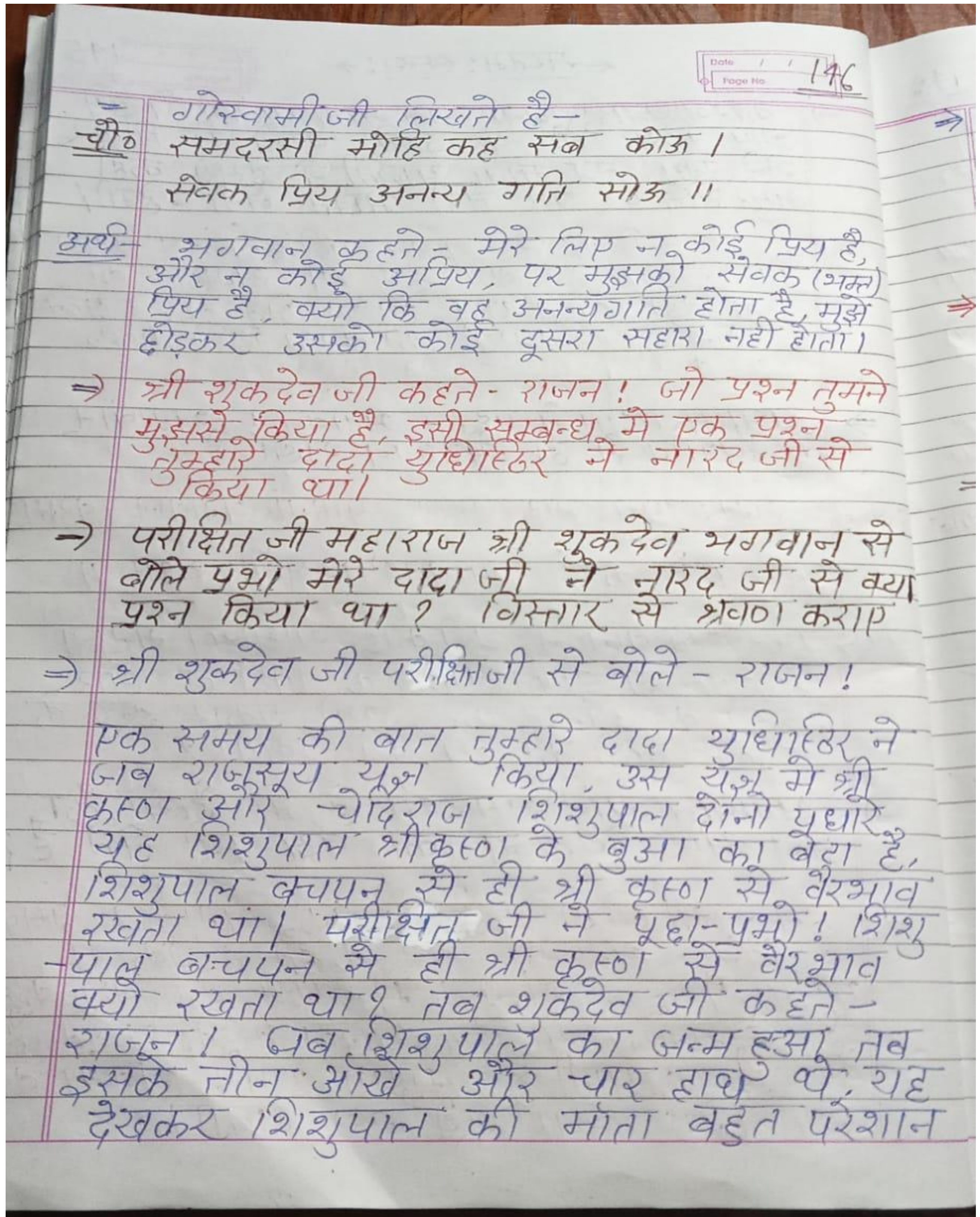
⇒ राजा परीक्षित ने पूछा - भगवन् ! भगवान तो स्वभाव से ही भेदभाव रहित है-

श्लोक - समः प्रियः सुहृद्ब्रह्मन् भूतानां भगवान् स्वयम्
इन्द्रस्यार्थे कथं दैत्यानवधीद्विषमो यथा ॥

अर्थ - फिर भगवान ने, जैसे कोई साधारण मनुष्य भेदभाव से अपने मित्र का पक्ष ले और शत्रुओ का अनिष्ट करे, उसी प्रकार इन्द्र के लिए दैत्यो का वध क्यो किया ?

⇒ भगवान यदि समदर्शी है, तो दैत्यो का वध और देवताओ का पक्ष क्यो लेते है ?

⇒ हम सभी लोग कहते है कि भगवान समदर्शी है किंतु भगवान स्वयं कहते है, कि मै पक्षपाती हू, संस्कृत मे पंख को पक्ष कहते है, भगवान मोरपंख धारण करके कहते है कि मै पक्षपाती हू, मुझसे अपने भक्तो का पक्ष लिए बिना नही रहा जाता।



146

= गोस्वामी जी लिखते है-

चौ० समदरसी मोहि कह सब कोऊ।
सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ॥

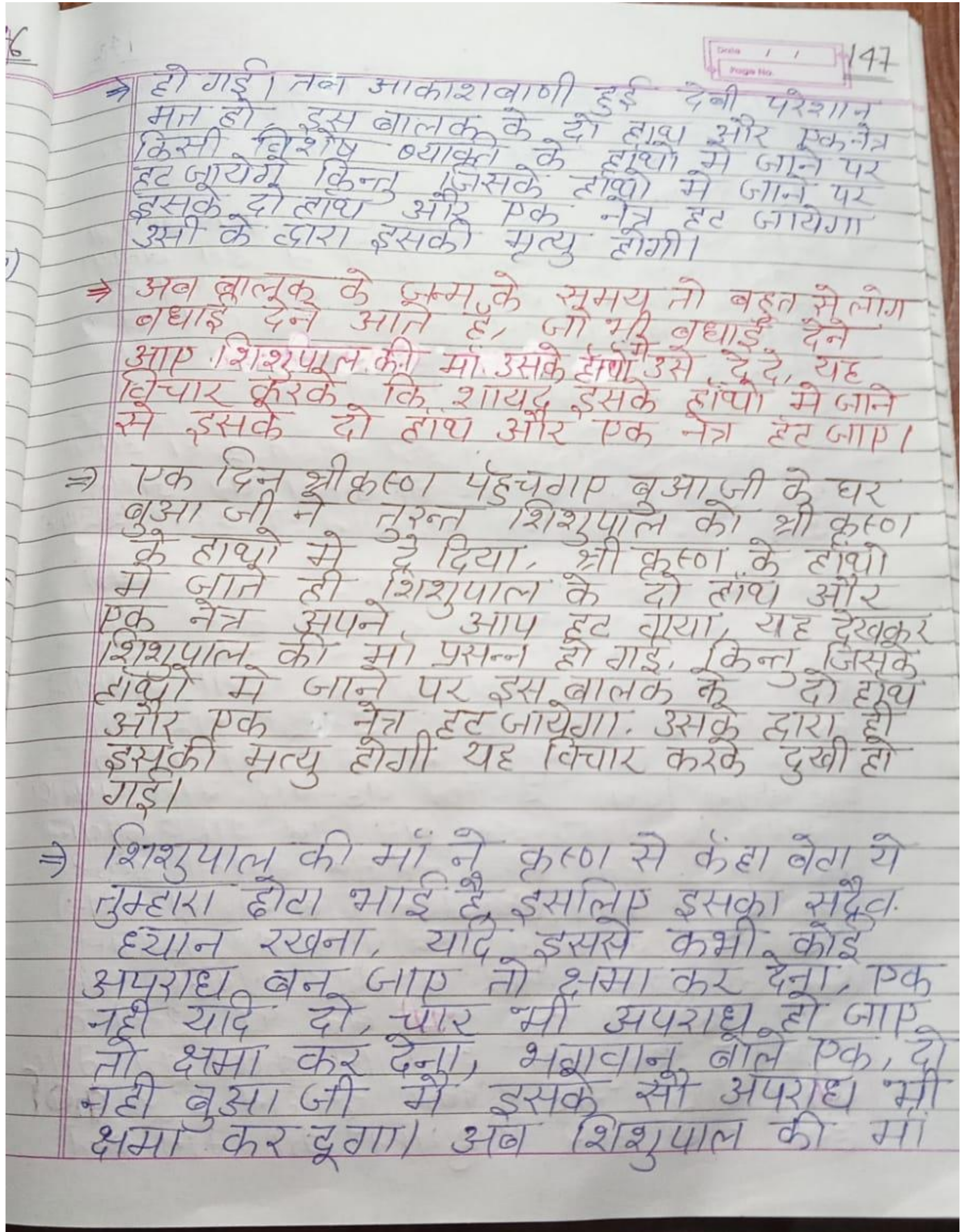
अर्थ- भगवान् कहते- मेरे लिए न कोई प्रिय है, और न कोई अप्रिय, पर मुझको सेवक (भक्त) प्रिय है, क्यो कि वह अनन्यगति होता है, मुझे छोड़कर उसको कोई दूसरा सहारा नही होता।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते- राजन! जो प्रश्न तुमने मुझसे किया है, इसी सम्बन्ध मे एक प्रश्न तुम्हारे दादा युधिष्ठिर ने नारद जी से किया था।

→ परीक्षित जी महाराज श्री शुकदेव भगवान से बोले प्रभो मेरे दादा जी ने नारद जी से क्या प्रश्न किया था? विस्तार से श्रवण कराए

⇒ श्री शुकदेव जी परीक्षितजी से बोले- राजन!

एक समय की बात तुम्हारे दादा युधिष्ठिर ने जब राजसूय यज्ञ किया, उस यज्ञ मे श्री कृष्ण और चेदिराज शिशुपाल दोनो पधारे, यह शिशुपाल श्रीकृष्ण के बुआ का बेटा है, शिशुपाल बचपन से ही श्री कृष्ण से वैरभाव रखता था। परीक्षित जी ने पूछा- प्रभो! शिशुपाल बचपन से ही श्री कृष्ण से वैरभाव क्यो रखता था? तब शुकदेव जी कहते- राजन! जब शिशुपाल का जन्म हुआ, तब इसके तीन आंखे और चार हाथ थे, यह देखकर शिशुपाल की माता बहुत परेशान



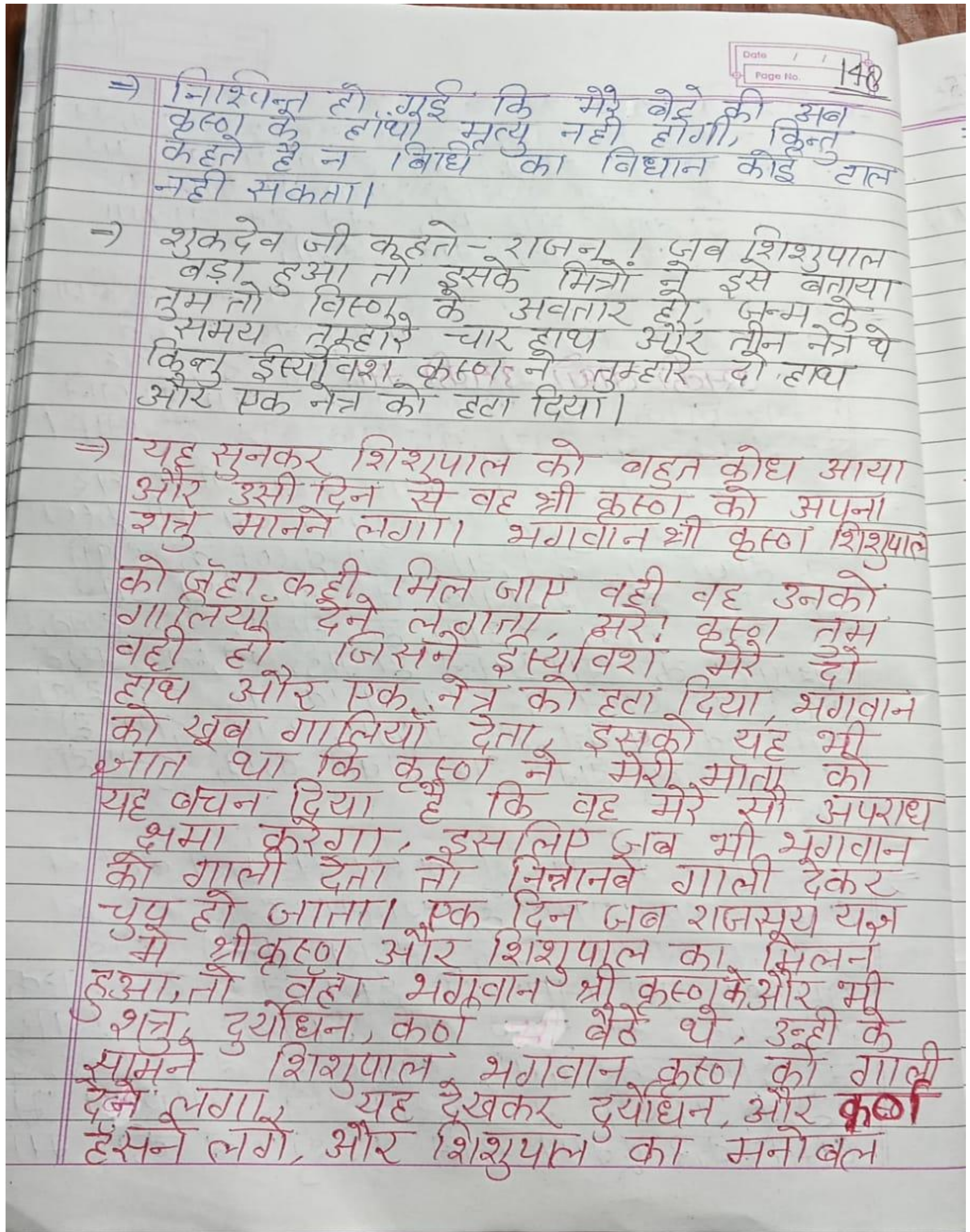
147

⇒ हो गई। तब आकाशवाणी हुई देवी परेशान मत हो, इस बालक के दो हाथ और एक नेत्र किसी विशेष व्यक्ति के हाथों मे जाने पर हट जायेगा किन्तु जिसके हाथों मे जाने पर इसके दो हाथ और एक नेत्र हट जायेगा उसी के द्वारा इसकी मृत्यु होगी।

⇒ अब बालक के जन्म के समय तो बहुत से लोग बधाई देने आते है, जो भी बधाई देने आए शिशुपाल की माँ उसके हाथों उसे दे दे, यह विचार करके कि शायद इसके हाथों मे जाने से इसके दो हाथ और एक नेत्र हट जाए।

⇒ एक दिन श्रीकृष्ण पहुँचगए बुआ जी के घर बुआ जी ने तुरन्त शिशुपाल को श्री कृष्ण के हाथों मे दे दिया, श्री कृष्ण के हाथों मे जाते ही शिशुपाल के दो हाथ और एक नेत्र अपने आप हट गया, यह देखकर शिशुपाल की माँ प्रसन्न हो गई, किन्तु जिसके हाथों मे जाने पर इस बालक के दो हाथ और एक नेत्र हट जायेगा, उसके द्वारा ही इसकी मृत्यु होगी यह विचार करके दुखी हो गई।

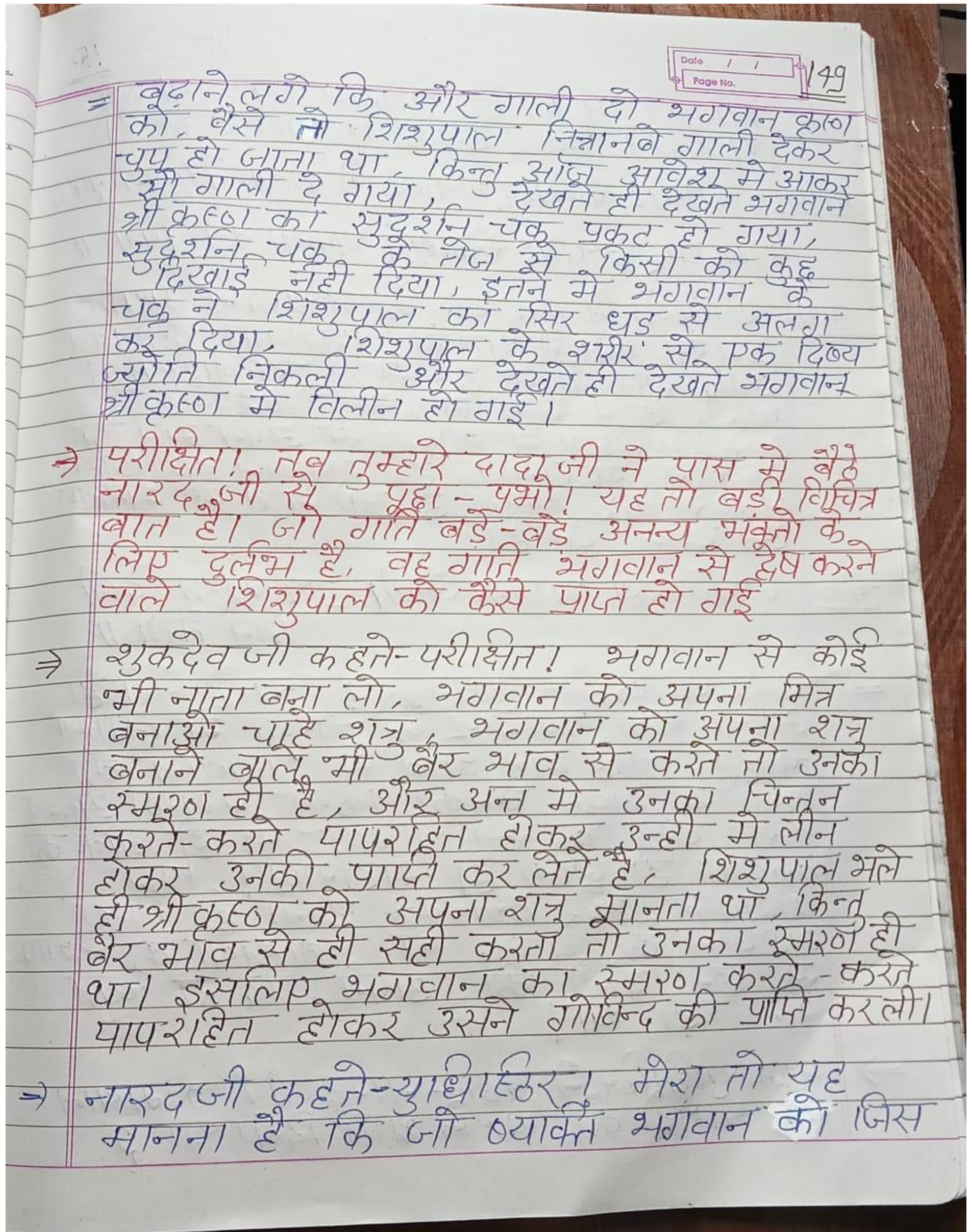
⇒ शिशुपाल की माँ ने कृष्ण से कहा बेटा ये तुम्हारा छोटा भाई है इसलिए इसका सदैव ध्यान रखना, यदि इससे कभी कोई अपराध बन जाए तो क्षमा कर देना, एक नही यदि दो, चार भी अपराध हो जाए तो क्षमा कर देना, भगवान बोले एक, दो नही बुआ जी मैं इसके सौ अपराध भी क्षमा कर दूगा। अब शिशुपाल की माँ


Date / / Page No. 148

⇒ निश्चिन्त हो गई कि मेरे बेटे की अब कृष्ण के हाथों मृत्यु नही होगी, किन्तु कहते है न। विधी का विधान कोई टाल नही सकता।

⇒ शुकदेव जी कहते - राजन्! जब शिशुपाल बड़ा हुआ तो इसके मित्रों ने इसे बताया तुम तो विष्णु के अवतार हो, जन्म के समय तुम्हारे चार हाथ और तीन नेत्र थे किन्तु ईर्ष्यावश कृष्ण ने तुम्हारे दो हाथ और एक नेत्र को हटा दिया।

⇒ यह सुनकर शिशुपाल को बहुत क्रोध आया और उसी दिन से वह श्री कृष्ण को अपना शत्रु मानने लगा। भगवान श्री कृष्ण शिशुपाल को जहां कहीं मिल जाए वही वह उनको गालियां देने लगता, अरे! कृष्ण तुम वही हो जिसने ईर्ष्यावश मेरे दो हाथ और एक नेत्र को हटा दिया, भगवान को खूब गालियाँ देता, इसको यह भी ज्ञात था कि कृष्ण ने मेरी माता को यह वचन दिया है कि वह मेरे सौ अपराध क्षमा करेगा, इसलिए जब भी भगवान को गाली देता तो निन्नानबे गाली देकर चुप हो जाता। एक दिन जब राजसूय यज्ञ मे श्रीकृष्ण और शिशुपाल का मिलन हुआ, तो वहाँ भगवान श्री कृष्ण के और भी शत्रु, दुर्योधन, कर्ण बैठे थे, उन्ही के सामने शिशुपाल भगवान कृष्ण को गाली देने लगा, यह देखकर दुर्योधन और कर्ण हँसने लगे, और शिशुपाल का मनोबल



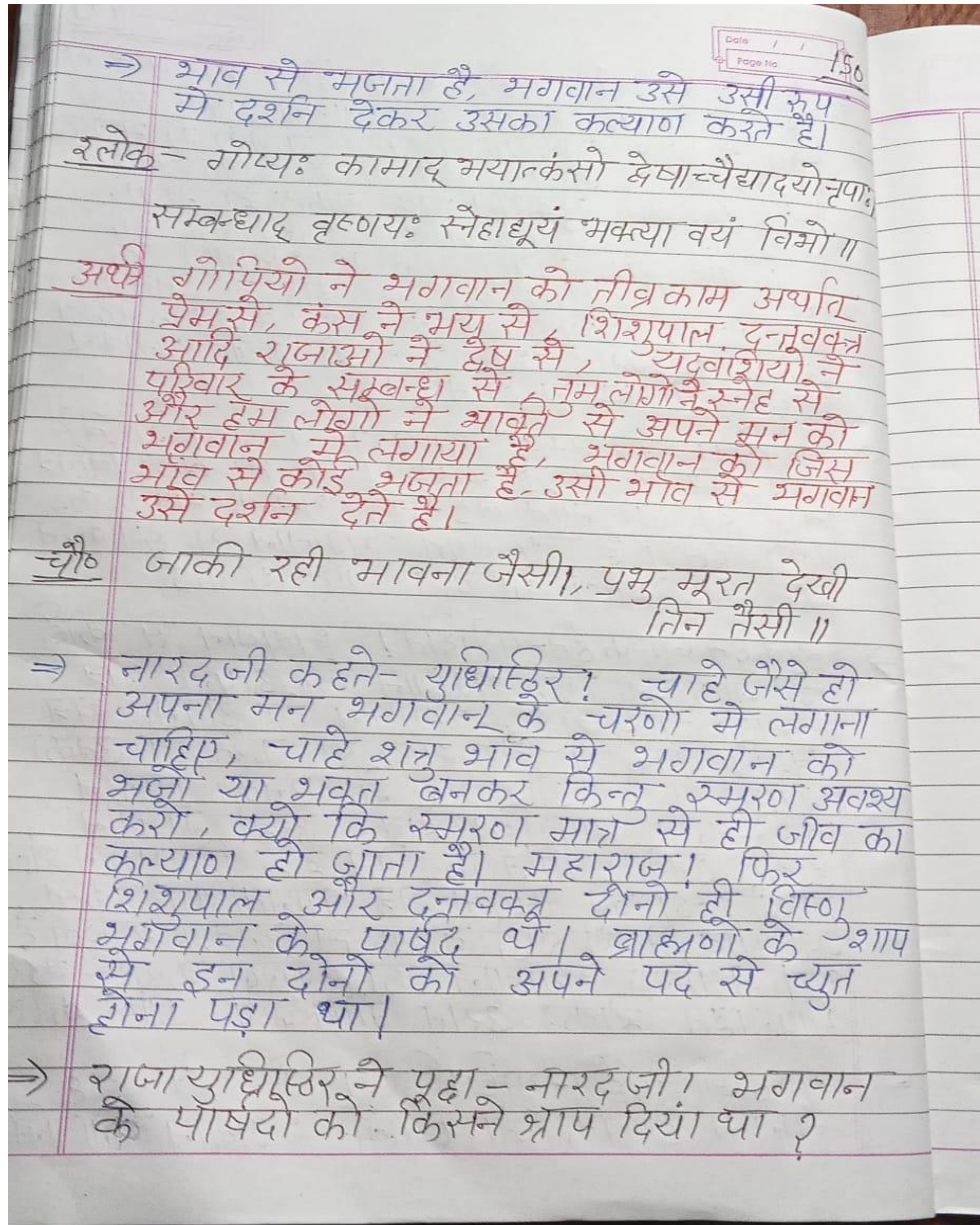
149

⇒ बुदाने लगे कि और गाली दो भगवान कृष्ण को, वैसे तो शिशुपाल निन्नानबे गाली देकर चुप हो जाता था, किन्तु आज आवेश मे आकर सौ गाली दे गया, देखते ही देखते भगवान श्री कृष्ण का सुदर्शन चक्र प्रकट हो गया, सुदर्शन चक्र के तेज से किसी को कुछ दिखाई नही दिया, इतने मे भगवान के चक्र ने शिशुपाल का सिर धड से अलग कर दिया, शिशुपाल के शरीर से एक दिव्य ज्योति निकली और देखते ही देखते भगवान श्री कृष्ण मे विलीन हो गई।

⇒ परीक्षित! तब तुम्हारे दादा जी ने पास मे बैठे नारद जी से पूछा - प्रभो! यह तो बड़ी विचित्र बात है। जो गति बड़े-बड़े अनन्य भक्तो के लिए दुर्लभ है, वह गति भगवान से द्वेष करने वाले शिशुपाल को कैसे प्राप्त हो गई

⇒ शुकदेव जी कहते- परीक्षित! भगवान से कोई भी नाता बना लो, भगवान को अपना मित्र बनाओ चाहे शत्रु, भगवान को अपना शत्रु बनाने वाले भी बैर भाव से करते तो उनका स्मरण ही है, और अन्त मे उनका चिन्तन करते- करते पापरहित होकर उन्ही मे लीन होकर उनकी प्राप्ति कर लेते है, शिशुपाल भले ही श्री कृष्ण को अपना शत्रु मानता था, किन्तु बैर भाव से ही सही करता तो उनका स्मरण ही था। इसलिए भगवान का स्मरण करते - करते पापरहित होकर उसने गोविन्द की प्राप्ति कर ली।

⇒ नारद जी कहते- युधिष्ठिर! मेरा तो यह मानना है कि जो व्यक्ति भगवान को जिस



Date / / Page No. 150

⇒ भाव से भजता है, भगवान उसे उसी रूप मे दर्शन देकर उसका कल्याण करते है।

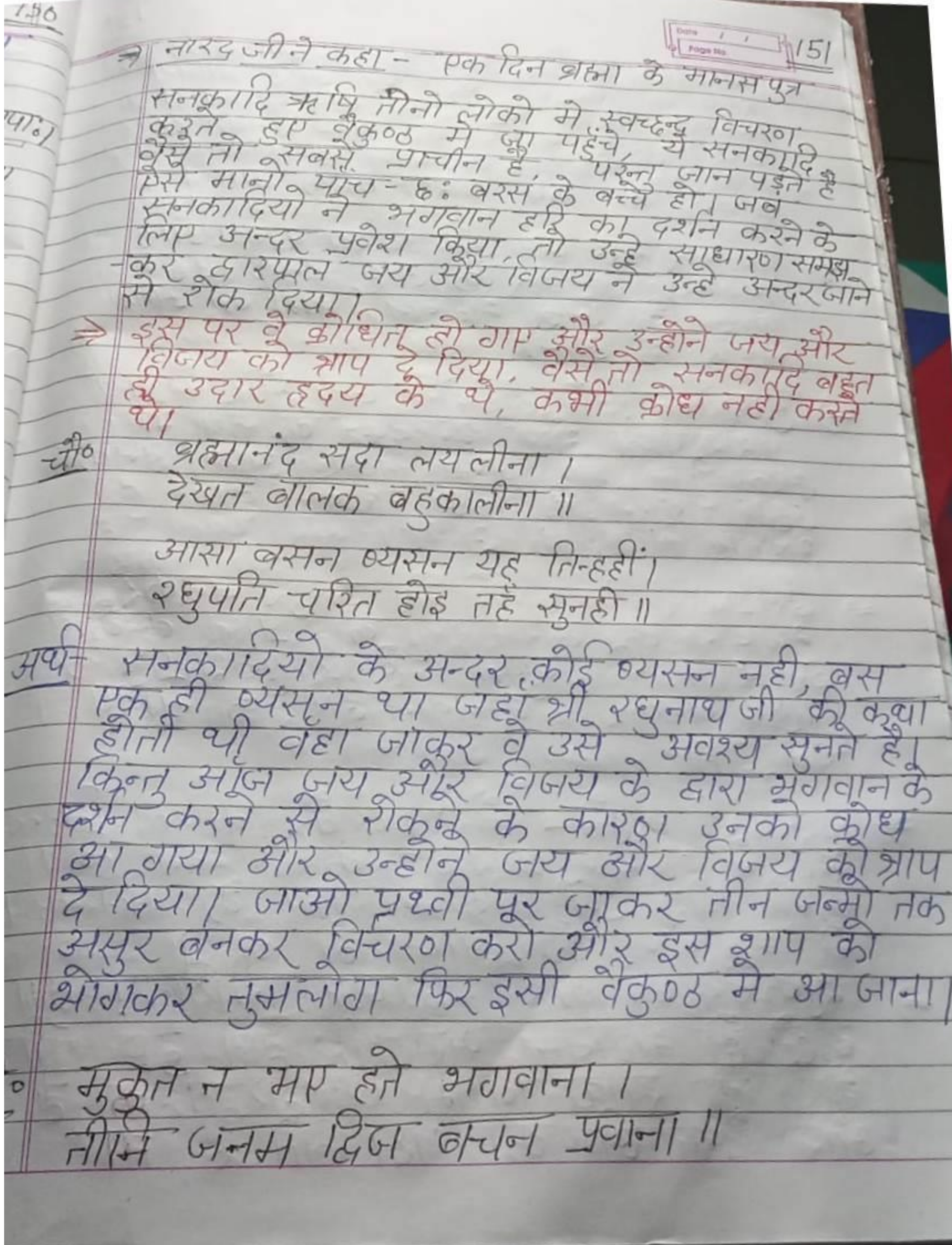
श्लोक– गोप्यः कामाद् भयात्कंसो द्वेषाच्चैद्यादयो नृपाः
सम्बन्धाद् वृष्णयः स्नेहाद्यूयं भक्त्या वयं विभो॥

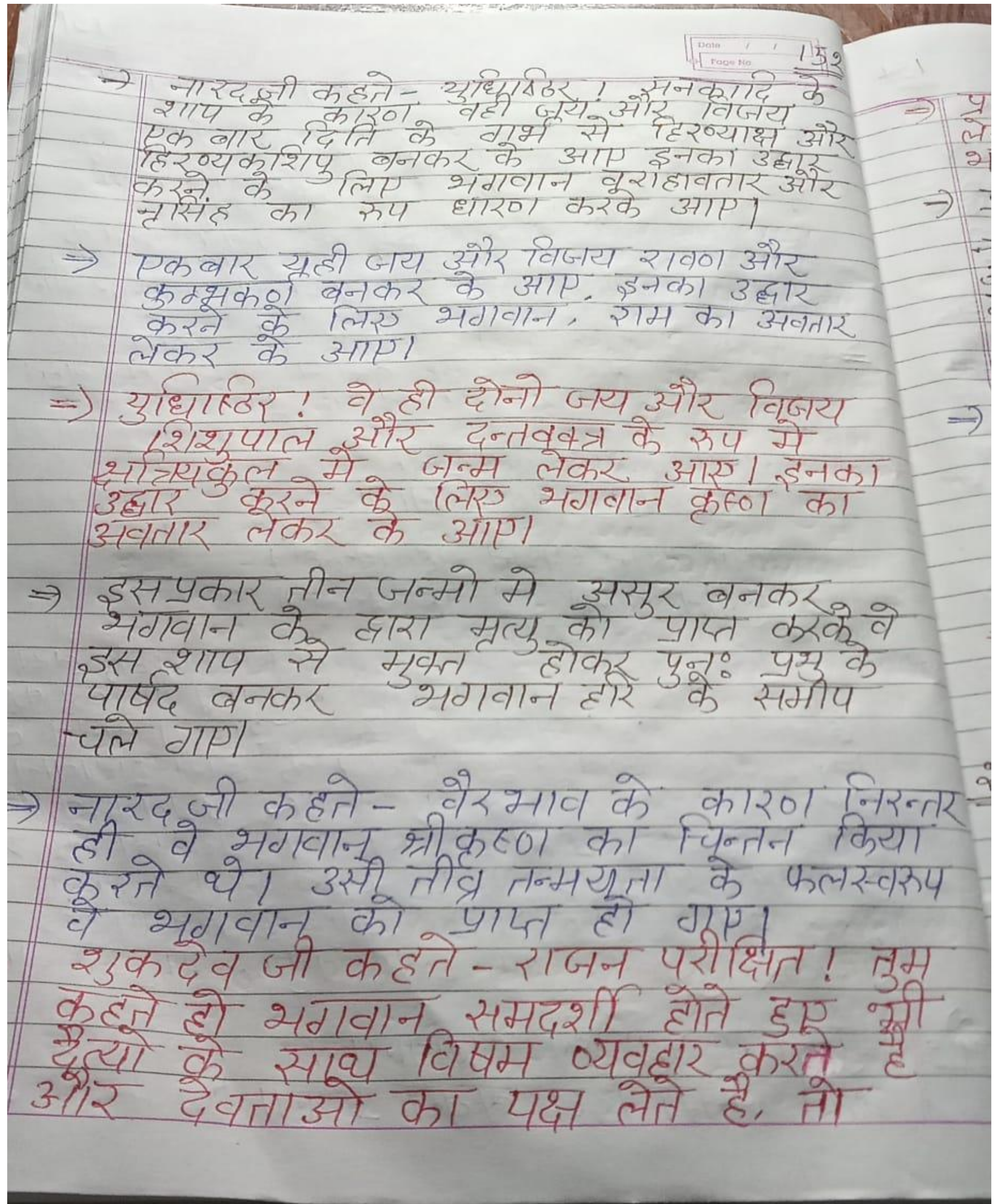
अर्थ– गोपियो ने भगवान को तीव्र काम अर्थात प्रेम से, कंस ने भय से, शिशुपाल दन्तवक्त्र आदि राजाओ ने द्वेष से, यदुवंशियो ने परिवार के सम्बन्ध से, तुम लोगो ने स्नेह से और हम लोगो ने भक्ति से अपने मन को भगवान मे लगाया है, भगवान को जिस भाव से कोई भजता है उसी भाव से भगवान उसे दर्शन देते है।

चौ० जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी॥

⇒ नारद जी कहते– युधिष्ठिर! चाहे जैसे हो अपना मन भगवान के चरणो मे लगाना चाहिए, चाहे शत्रु भाव से भगवान को भजो या भक्त बनकर किन्तु स्मरण अवश्य करो, क्यो कि स्मरण मात्र से ही जीव का कल्याण हो जाता है। महाराज! फिर शिशुपाल और दन्तवक्त्र दोनो ही विष्णु भगवान के पार्षद थे। ब्राह्मणो के शाप से इन दोनो को अपने पद से च्युत होना पड़ा था।

⇒ राजा युधिष्ठिर ने पूछा– नारद जी! भगवान के पार्षदो को किसने श्राप दिया था?


151
⇒ नारद जी ने कहा - एक दिन ब्रह्मा के मानस पुत्र सनकादि ऋषि तीनो लोको मे स्वच्छन्द विचरण करते हुए वैकुण्ठ मे जा पहुँचे, ये सनकादि वैसे तो सबसे प्राचीन है, परन्तु जान पड़ते है ऐसे मानो पाँच - छः बरस के बच्चे हो। जब सनकादियो ने भगवान हरि का दर्शन करने के लिए अन्दर प्रवेश किया, तो उन्हे साधारण समझ कर द्वारपाल जय और विजय ने उन्हे अन्दर जाने से रोक दिया।
⇒ इस पर वे क्रोधित हो गए और उन्होने जय और विजय को श्राप दे दिया, वैसे तो सनकादि बहुत ही उदार हृदय के थे, कभी क्रोध नही करते थे।
चौ० ब्रह्मानंद सदा लयलीना।
देखत बालक बहुकालीना॥
आसा बसन ब्यसन यह तिन्हहीं।
रघुपति चरित होइ तहँ सुनहीं॥
अर्थ सनकादियो के अन्दर कोई व्यसन नही, बस एक ही व्यसन था जहाँ श्री रघुनाथ जी की कथा होती थी वहा जाकर वे उसे अवश्य सुनते है। किन्तु आज जय और विजय के द्वारा भगवान के दर्शन करने से रोकने के कारण उनको क्रोध आ गया और उन्होने जय और विजय को श्राप दे दिया। जाओ पृथ्वी पर जाकर तीन जन्मो तक असुर बनकर विचरण करो और इस श्राप को भोगकर तुमलोग फिर इसी वैकुण्ठ मे आ जाना।
मुकुत न भए हते भगवाना।
तीनि जनम द्विज बचन प्रवाना॥


152
⇒ नारद जी कहते- युधिष्ठिर ! सनकादि के शाप के कारण वही जय और विजय एक बार दिति के गर्भ से हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु बनकर के आए इनका उद्धार करने के लिए भगवान वराहावतार और नृसिंह का रूप धारण करके आए।
⇒ एकबार यही जय और विजय रावण और कुम्भकर्ण बनकर के आए, इनका उद्धार करने के लिए भगवान, राम का अवतार लेकर के आए।
⇒ युधिष्ठिर ! वे ही दोनो जय और विजय शिशुपाल और दन्तवक्त्र के रूप मे क्षत्रियकुल मे जन्म लेकर आए। इनका उद्धार करने के लिए भगवान कृष्ण का अवतार लेकर के आए।
⇒ इस प्रकार तीन जन्मो मे असुर बनकर भगवान के द्वारा मृत्यु को प्राप्त करके वे इस शाप से मुक्त होकर पुनः प्रभु के पार्षद बनकर भगवान हरि के समीप चले गए।
⇒ नारद जी कहते- वैरभाव के कारण निरन्तर ही वे भगवान् श्रीकृष्ण का चिन्तन किया करते थे। उसी तीव्र तन्मयता के फलस्वरुप वे भगवान् को प्राप्त हो गए।
शुकदेव जी कहते - राजन परीक्षित ! तुम कहते हो भगवान समदर्शी होते हुए भी दैत्यो के साथ विषम व्यवहार करते है और देवताओ का पक्ष लेते है, तो

153

⇒ प्रह्लाद तो दैत्य (असुर) कुल मे ही जन्म लेकर के आए हिरण्यकशिपु के घर किन्तु भगवान ने उन पर तो विशेष कृपा किे।

⇒ प्रह्लाद का नाम सुनते ही युधिष्ठिर जी ने नारद जी से पूछा भगवन! हिरण्यकशिपु ने अपने स्नेहभाजन पुत्र प्रह्लाद से से इतना द्वेष क्यो किया? साथ ही यह भी बतलाइये कि किस साधन से प्रह्लाद ने भगवान की प्राप्ति की।

⇒ नारद जी ने कहा – युधिष्ठिर! जब भगवान ने वराहावतार धारण करके हिरण्याक्ष को मार डाला तब भाई के इस प्रकार मारे जाने पर हिरण्यकशिपु ने यह संकल्प किया कि मै नारायण को मारकर उनके रक्त से अपने भाई को तिलांजलि दूंगा।

⇒ हिरण्याक्ष के वध के उपरान्त समस्त परिवार शोक मे डूब गया, तब हिरण्यकशिपु ने सभी को समझायो।

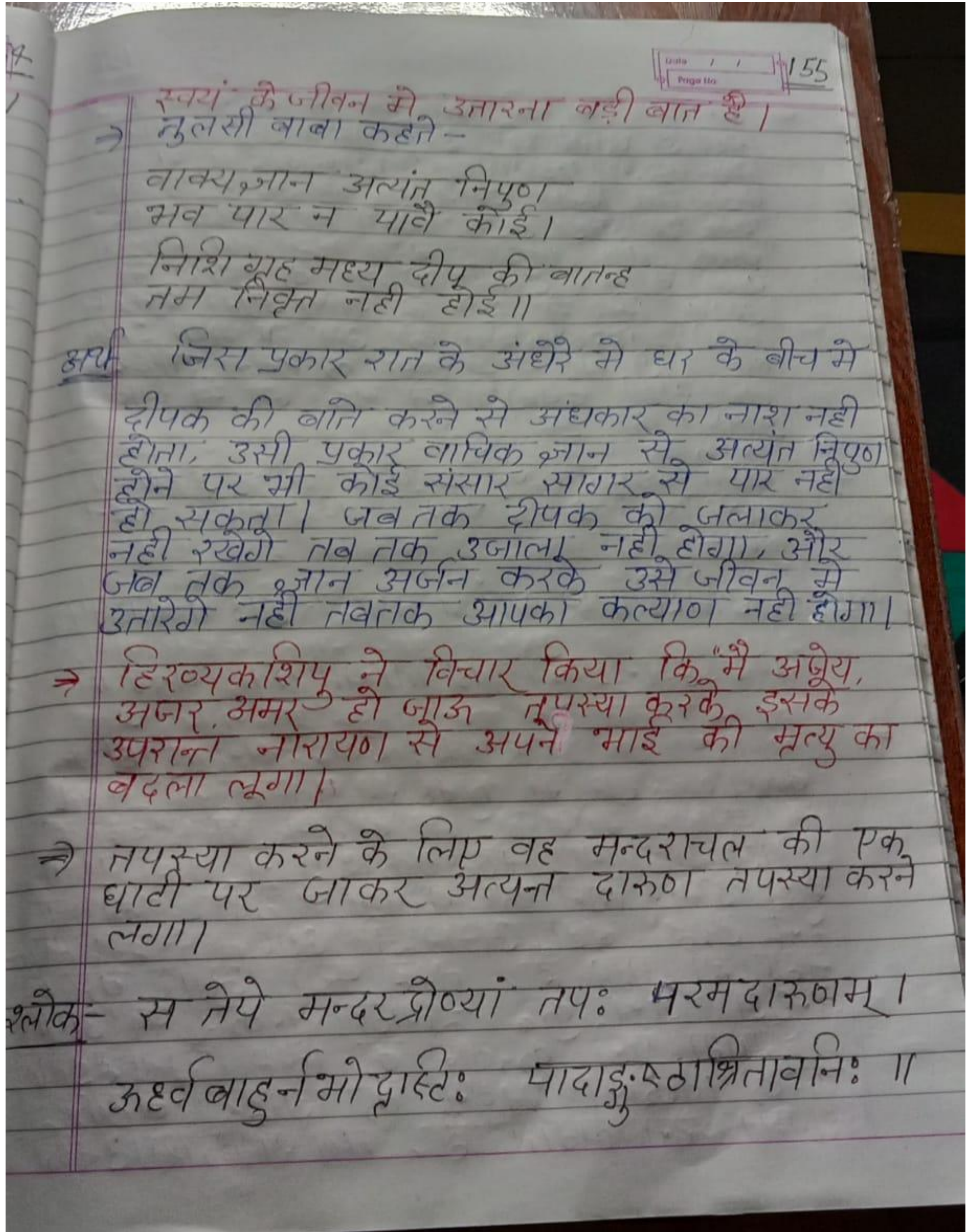
श्लोक – अम्बाम्ब हे वधूः पुत्रा वीरं माऽर्हथ शोचितुम्।
रिपोरभिमुखे श्लाघ्यः शूराणां वध ईप्सितः॥

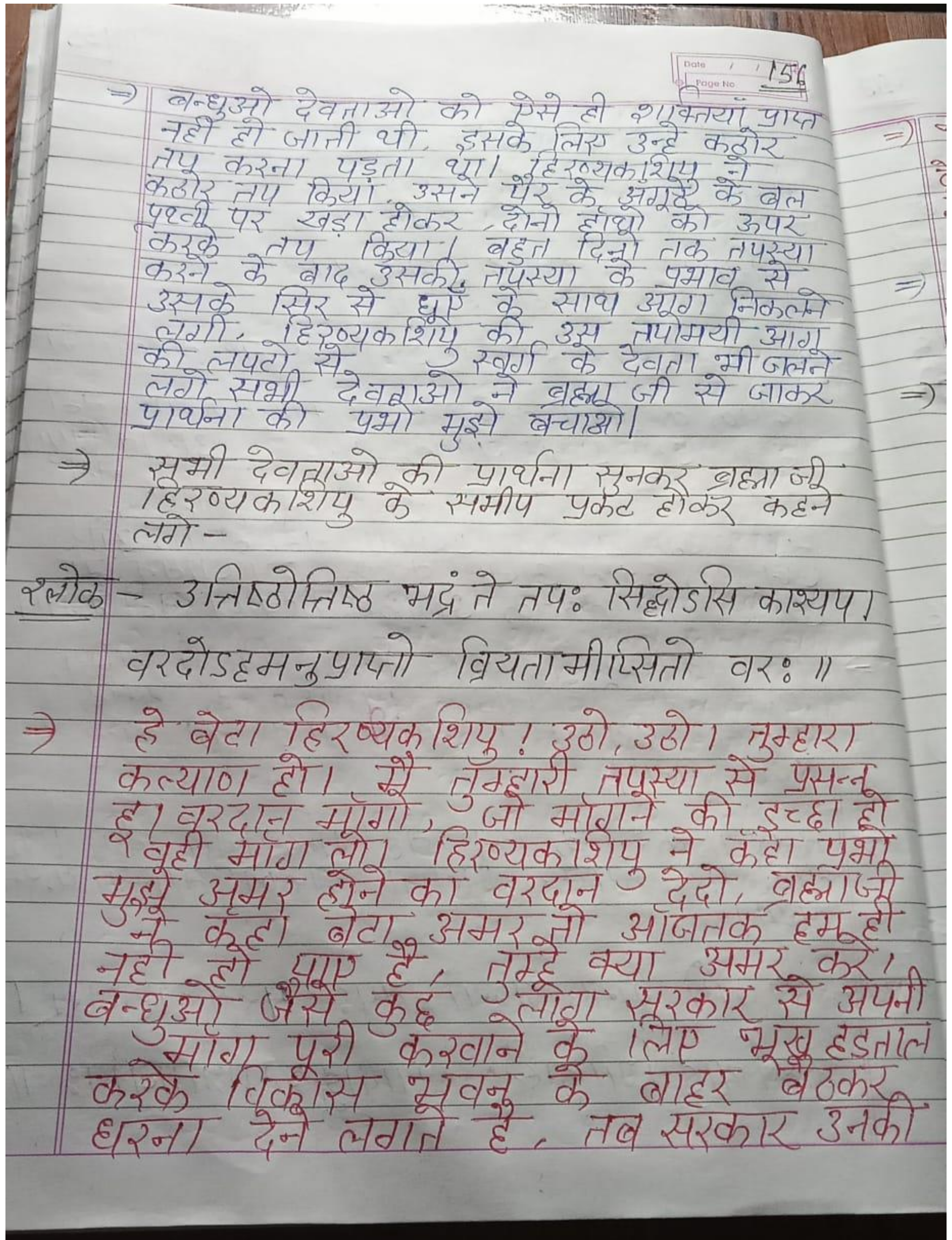
⇒ मेरी प्यारी माँ, बहू और पुत्रो! तुम्हे वीर हिरण्याक्ष के लिए किसी प्रकार का शोक नही करना चाहिए। युद्ध के मैदान मे शत्रुओ के दांत खट्टे करते प्राण त्यागने वाला वीर गति को प्राप्त होता है।

श्लोक - नित्य आत्माव्ययः शुद्धः सर्वगः सर्ववित्परः।
धत्तेऽसावात्मनो लिङ्गं मायया विसृजन्गुणान् ॥

⇒ देवि! जैसे प्याऊ पर बहुत-से लोग इकट्ठे हो जाते है परन्तु उनका मिलना-जुलना थोड़ी देर के लिए ही होता है - वैसे ही अपने कर्मों के फेर से दैववश जीव भी मिलते और बिछुड़ते है। शरीर तो सदैव से मृतक ही होता है, आत्मा के कारण हिलता, डुलता रहता है, वास्तव मे आत्मा नित्य अविनाशी, शुद्ध सर्वगत, सर्वज्ञ और देह - इन्द्रिय आदि से पृथक है। जैसे हिलते हुए पानी के साथ उसमें प्रतिबिम्बित होने वाला वृक्ष भी हिलता हुआ जान पड़ता है, और घुमाई जाती हुई आंख के आंख के साथ सारी पृथ्वी ही घूमती - सी दिखाई देती है, उसी प्रकार से विषयो के कारण मन भटकने लगता है और वास्तव मे निर्विकार होने पर भी उसी के समान आत्मा भी भटकता हुआ-सा जान पड़ता है। उसका स्थूल और सूक्ष्म शरीरो से कोई भी सम्बन्ध नही है।

⇒ इस प्रकार हिरण्यकशिपु ने ज्ञानोपदेश देकर अपने परिवारीजनो का दुःख दूर किया हिरण्यकशिपु ने प्रवचन देकर परिवार के लोगो को तो समझा दिया किन्तु स्वयं को नही समझा पाया, बन्धुओ प्रवचन देना कोई बड़ी बात नही है, रट कर प्रवचन तो कोई भी सुना सकता है, किन्तु ज्ञान को अर्जन करके उस ज्ञान को


155
स्वयं के जीवन मे उतारना बड़ी बात है।
⇒ तुलसी बाबा कहते -
वाक्य ज्ञान अत्यंत निपुण
भव पार न पावै कोई।
निशि गृह मध्य दीप की बातन्ह
तम निवृत्त नही होई॥
अर्थ जिस प्रकार रात के अंधेरे मे घर के बीच मे
दीपक की बाते करने से अंधकार का नाश नही
होता, उसी प्रकार वाचिक ज्ञान से अत्यंत निपुण
होने पर भी कोई संसार सागर से पार नही
हो सकता। जब तक दीपक को जलाकर
नही रखेगे तब तक उजाला नही होगा, और
जब तक ज्ञान अर्जन करके उसे जीवन मे
उतारेगे नही तबतक आपका कल्याण नही होगा।
⇒ हिरण्यकशिपु ने विचार किया कि "मै अजेय,
अजर, अमर" हो जाऊ तपस्या करके इसके
उपरान्त नारायण से अपने भाई की मृत्यु का
बदला लूगा।
⇒ तपस्या करने के लिए वह मन्दराचल की एक
घाटी पर जाकर अत्यन्त दारुण तपस्या करने
लगा।
श्लोक - स तेपे मन्दरद्रोण्यां तपः परमदारुणम्।
ऊर्ध्वबाहुर्नभोदृष्टिः पादाङ्गुष्ठाश्रितावनिः॥



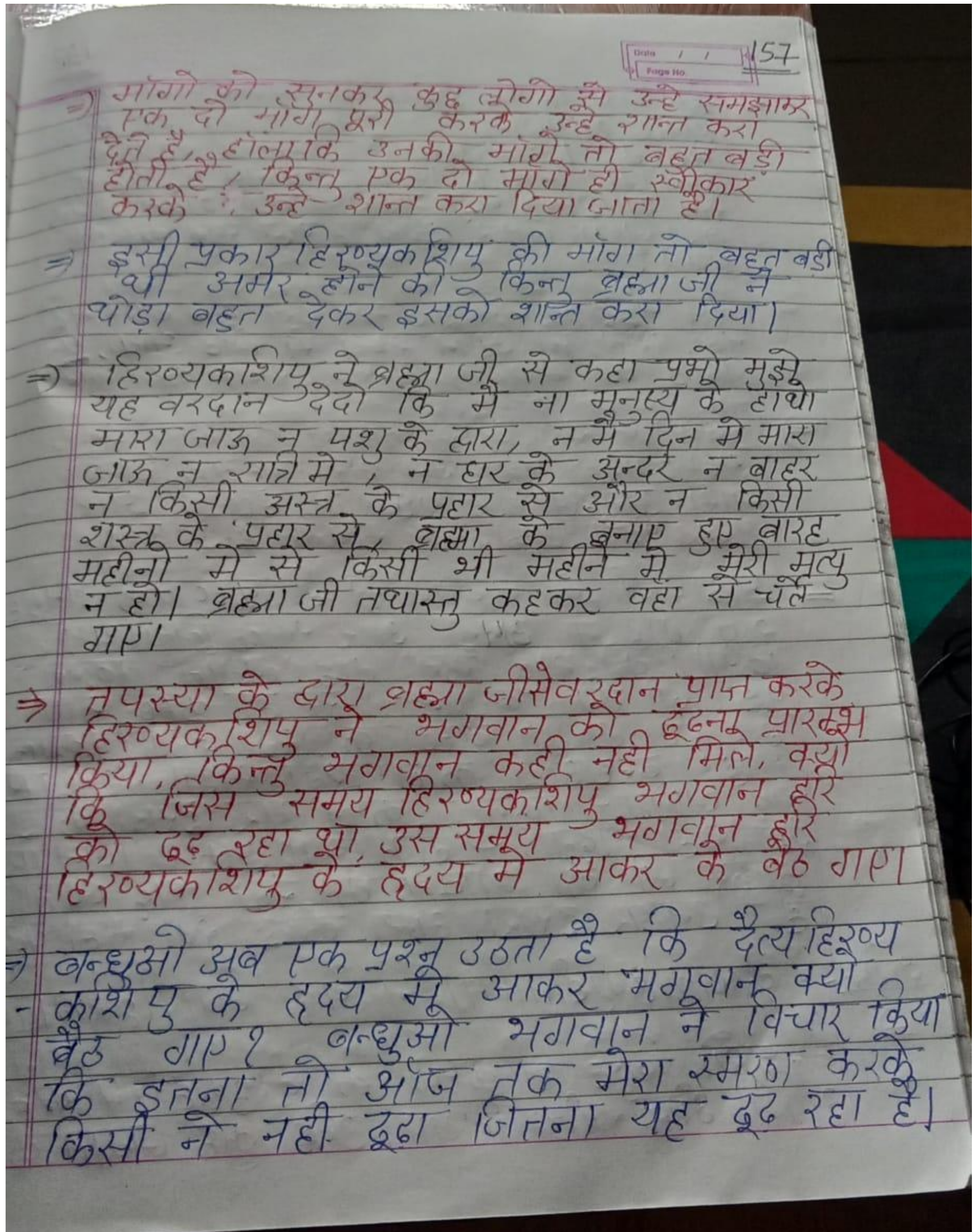
Page No. 156

⇒ बन्धुओ देवताओ को ऐसे ही शक्तियाँ प्राप्त नहीं हो जाती थी, इसके लिए उन्हे कठोर तप करना पड़ता था। हिरण्यकशिपु ने कठोर तप किया, उसने पैर के अंगूठे के बल पृथ्वी पर खड़ा होकर, दोनो हाथो को ऊपर करके तप किया। बहुत दिनो तक तपस्या करने के बाद उसकी तपस्या के प्रभाव से उसके सिर से धूएँ के साथ आग निकलने लगी, हिरण्यकशिपु की उस तापोमयी आग की लपटो से स्वर्ग के देवता भी जलने लगे सभी देवताओ ने ब्रह्मा जी से जाकर प्रार्थना की प्रभो मुझे बचाओ।

⇒ सभी देवताओ की प्रार्थना सुनकर ब्रह्मा जी हिरण्यकशिपु के समीप प्रकट होकर कहने लगे -

श्लोक - उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते तपः सिद्धोऽसि काश्यप।
वरदोऽहमनुप्राप्तो व्रियतामीप्सितो वरः॥

⇒ हे बेटा हिरण्यकशिपु ! उठो, उठो। तुम्हारा कल्याण हो। मै तुम्हारी तपस्या से प्रसन्न हूँ वरदान माँगो, जो माँगने की इच्छा हो वही माँग लो। हिरण्यकशिपु ने कहा प्रभो मुझे अमर होने का वरदान देदो, ब्रह्माजी ने कहा बेटा, अमर तो आजतक हम ही नहीं हो पाए है, तुम्हे क्या अमर करे। बन्धुओ जैसे कुछ लोग सरकार से अपनी माँग पूरी करवाने के लिए भूख हड़ताल करके विकास भवन के बाहर बैठकर धरना देने लगते है, तब सरकार उनकी


157

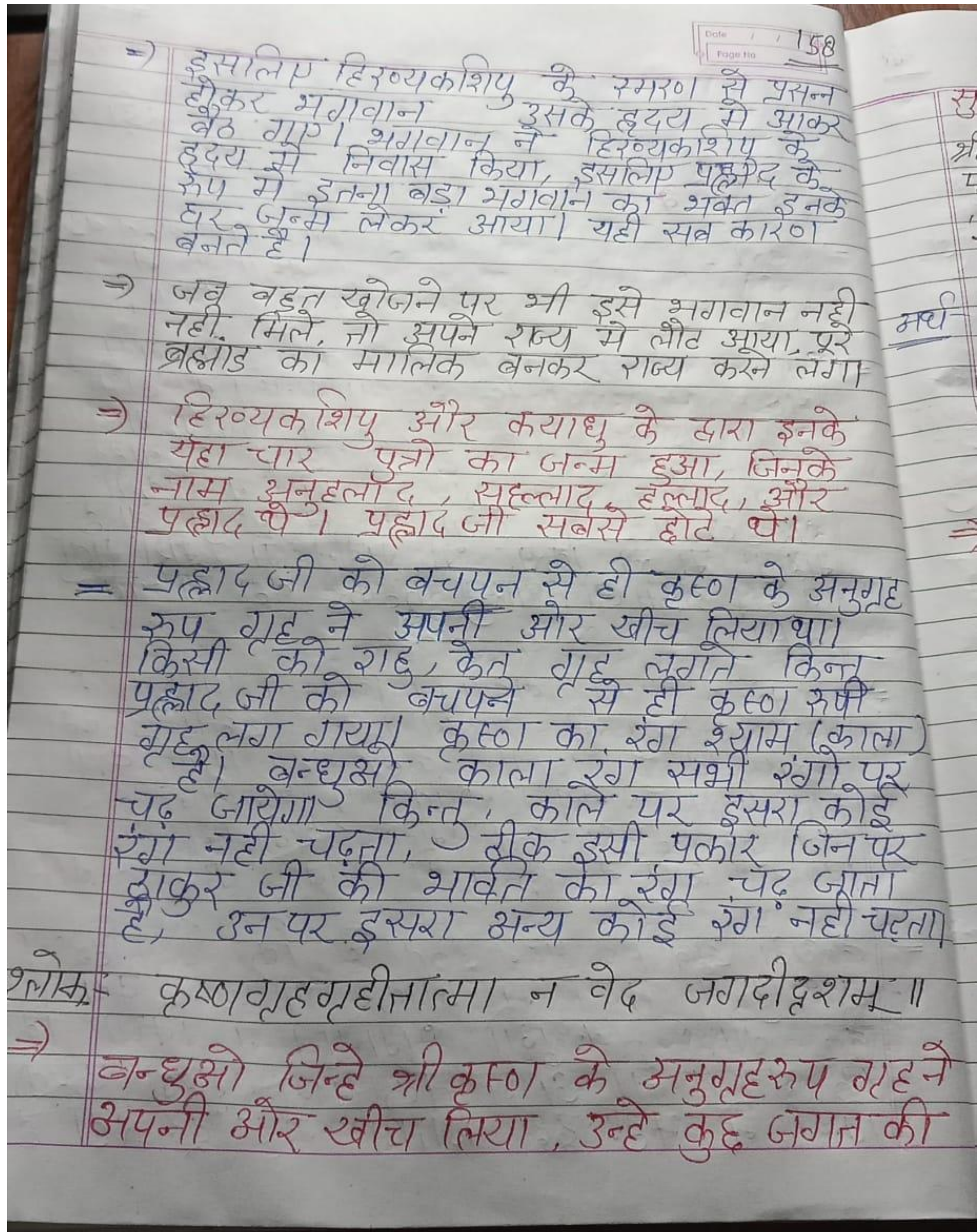
⇒ मांगो को सुनकर कुछ लोगो से उन्हे समझाकर एक दो मांग पूरी करके उन्हे शान्त करा देते है, हालांकि उनकी मांगे तो बहुत बड़ी होती है, किन्तु एक दो मांगे ही स्वीकार करके, उन्हे शान्त करा दिया जाता है।

⇒ इसी प्रकार हिरण्यकशिपु की मांग तो बहुत बड़ी थी अमर होने की किन्तु ब्रह्मा जी ने थोड़ा बहुत देकर इसको शान्त करा दिया।

⇒ हिरण्यकशिपु ने ब्रह्मा जी से कहा प्रभो मुझे यह वरदान देदो कि मै ना मनुष्य के हाथो मारा जाऊ न पशु के द्वारा, न मै दिन मे मारा जाऊ न रात्रि मे, न घर के अन्दर न बाहर न किसी अस्त्र के प्रहार से और न किसी शस्त्र के प्रहार से, ब्रह्मा के बनाए हुए बारह महीनो मे से किसी भी महीने मे मेरी मृत्यु न हो। ब्रह्मा जी तथास्तु कहकर वहा से चले गए।

⇒ तपस्या के द्वारा ब्रह्मा जी से वरदान प्राप्त करके हिरण्यकशिपु ने भगवान को ढूंढना प्रारम्भ किया, किन्तु भगवान कही नही मिले, क्यो कि जिस समय हिरण्यकशिपु भगवान हरि को ढूंढ रहा था, उस समय भगवान हरि हिरण्यकशिपु के हृदय मे आकर के बैठ गए।

⇒ बन्धुओ अब एक प्रश्न उठता है कि दैत्य हिरण्य-कशिपु के हृदय मे आकर भगवान क्यो बैठ गए? बन्धुओ भगवान ने विचार किया कि इतना तो आज तक मेरा स्मरण करके किसी ने नही ढूंढा जितना यह ढूंढ रहा है।



158

⇒ इसलिए हिरण्यकशिपु के स्मरण से प्रसन्न होकर भगवान उसके हृदय मे आकर बैठ गए। भगवान ने हिरण्यकशिपु के हृदय मे निवास किया, इसलिए प्रह्लाद के रूप मे इतना बड़ा भगवान का भक्त इनके घर जन्म लेकर आया। यही सब कारण बनते है।

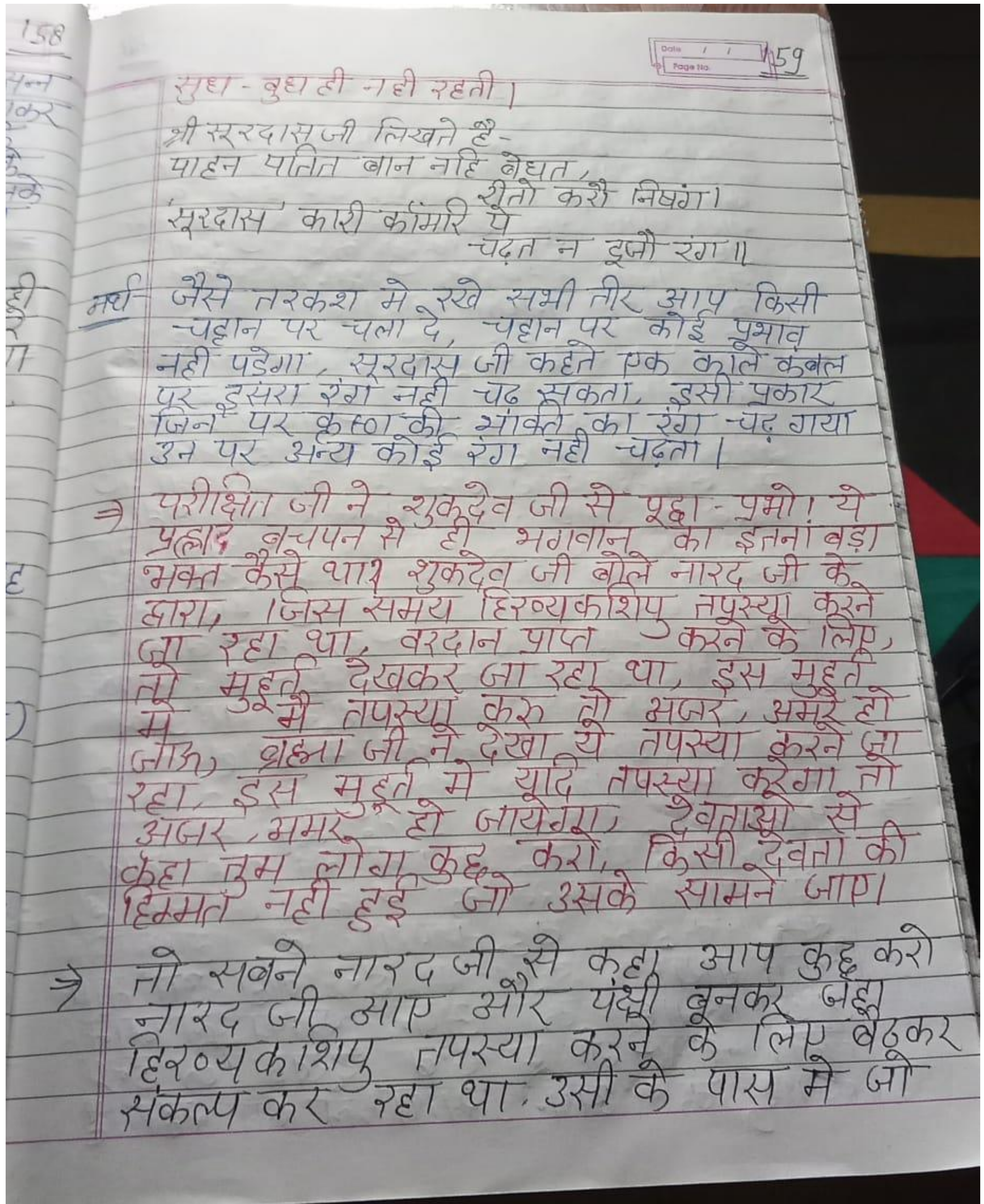
⇒ जब बहुत खोजने पर भी इसे भगवान नही नही मिले, तो अपने राज्य मे लौट आया, पूरे ब्रह्मांड का मालिक बनकर राज्य करने लगा।

⇒ हिरण्यकशिपु और कयाधु के द्वारा इनके यहा चार पुत्रो का जन्म हुआ, जिनके नाम अनुह्लाद, सह्लाद, ह्लाद, और प्रह्लाद थे। प्रह्लाद जी सबसे छोटे थे।

= प्रह्लाद जी को बचपन से ही कृष्ण के अनुग्रह रूप ग्रह ने अपनी ओर खीच लिया था। किसी को राहु, केतु ग्रह लगते किन्तु प्रह्लाद जी को बचपने से ही कृष्ण रुपी ग्रह लगा गया। कृष्ण का रंग श्याम (काला) है। बन्धुओ काला रंग सभी रंगो पर चढ़ जायेगा किन्तु, काले पर दूसरा कोई रंग नही चढ़ता, ठीक इसी प्रकार जिन पर ठाकुर जी की भक्ति का रंग चढ़ जाता है, उन पर दूसरा अन्य कोई रंग नही चढ़ता।

श्लोक: कृष्णग्रहगृहीतात्मा न वेद जगदीदृशम् ॥

⇒ बन्धुओ जिन्हे श्री कृष्ण के अनुग्रहरुप ग्रह ने अपनी और खीच लिया, उन्हे कुछ जगत की


159

सुधा - बुध ही नही रहती।

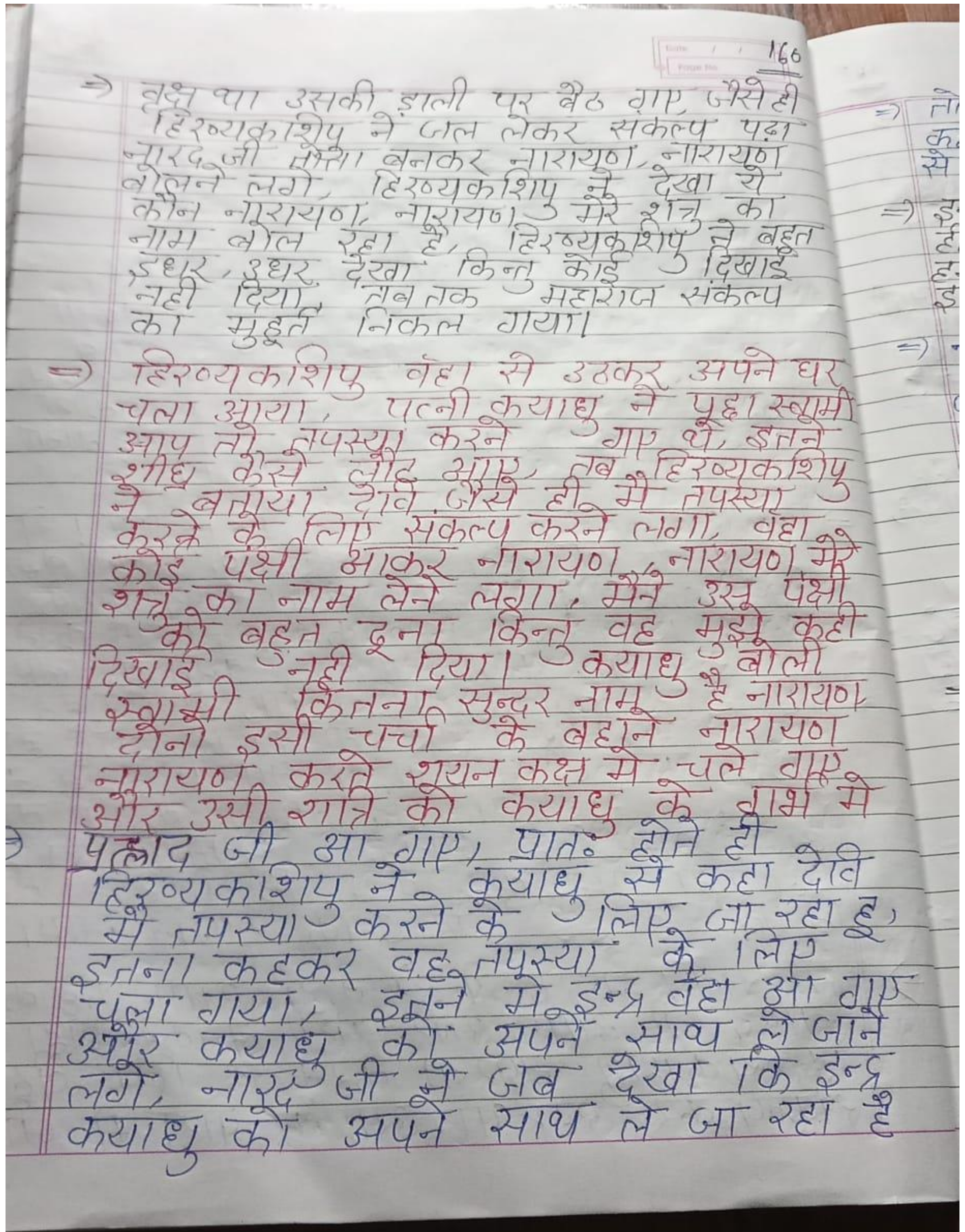
श्री सूरदास जी लिखते है-

पाहन पतित बान नहि बेधत,
रीतो करौ निषंग।
'सूरदास' कारी कॉमरि पे
चढ़त न दूजो रंग॥

अर्थ- जैसे तरकश मे रखे सभी तीर आप किसी चट्टान पर चला दे, चट्टान पर कोई प्रभाव नही पड़ेगा, सूरदास जी कहते एक काले कंबल पर दूसरा रंग नही चढ सकता, इसी प्रकार जिन पर कृष्ण की भक्ति का रंग चढ़ गया उन पर अन्य कोई रंग नही चढ़ता।

⇒ परीक्षित जी ने शुकदेव जी से पूछा - प्रभो! ये प्रह्लाद बचपन से ही भगवान का इतना बड़ा भक्त कैसे था? शुकदेव जी बोले नारद जी के द्वारा, जिस समय हिरण्यकशिपु तपस्या करने जा रहा था, वरदान प्राप्त करने के लिए, तो मुहूर्त देखकर जा रहा था, इस मुहूर्त मे मै तपस्या करु तो अजर, अमर हो जाऊ, ब्रह्मा जी ने देखा ये तपस्या करने जा रहा, इस मुहूर्त मे यदि तपस्या करेगा तो अजर, अमर हो जायेगा, देवताओ से कहा तुम लोग कुछ करो, किसी देवता की हिम्मत नही हुई जो उसके सामने जाए।

⇒ तो सबने नारद जी से कहा आप कुछ करो नारद जी आए और पंछी बनकर जहा हिरण्यकशिपु तपस्या करने के लिए बैठकर संकल्प कर रहा था, उसी के पास मे जो

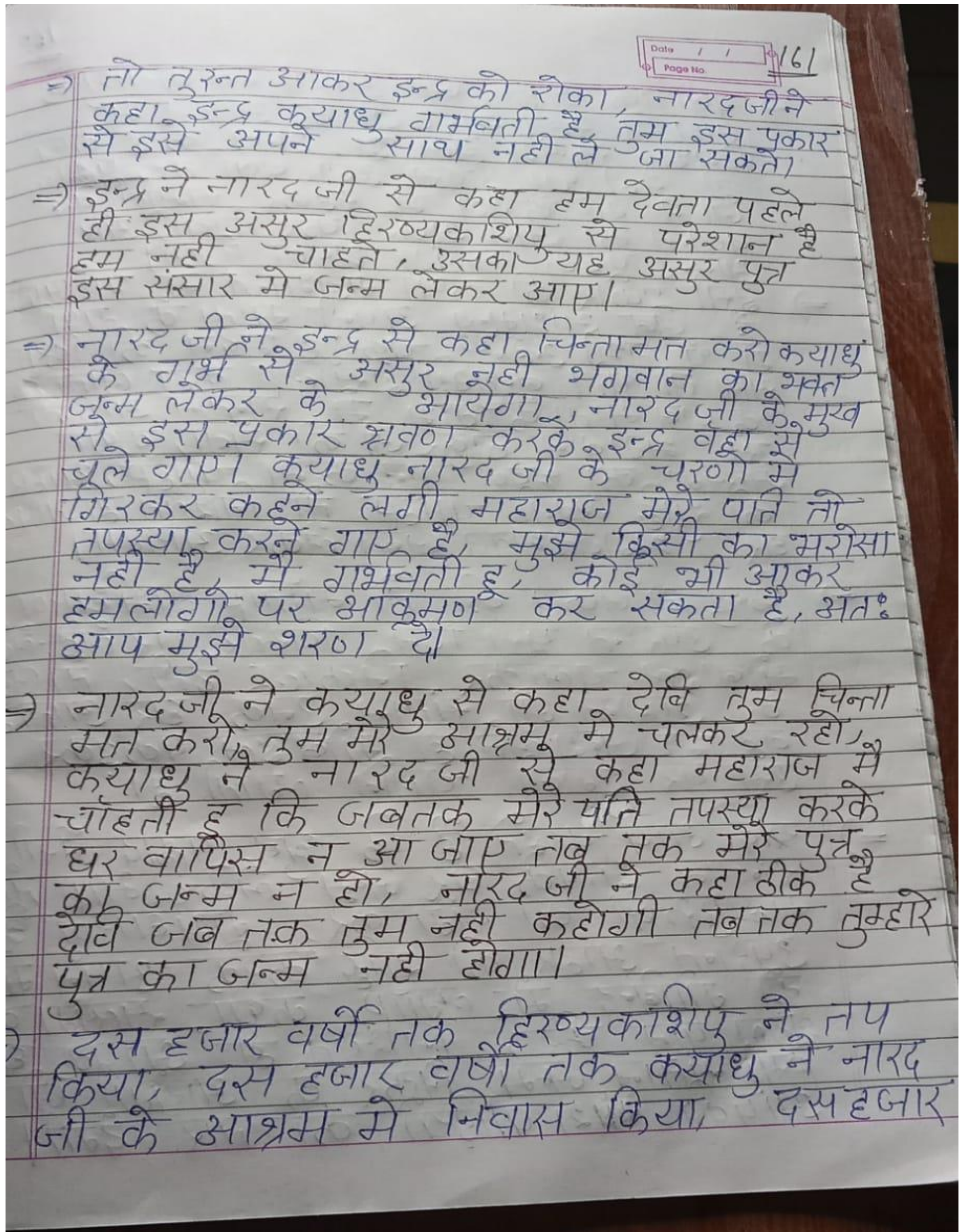


160

=> वृक्ष पा उसकी डाली पर बैठ गए, जैसे ही हिरण्यकशिपु ने जल लेकर संकल्प पढ़ा नारद जी तोता बनकर नारायण, नारायण बोलने लगे, हिरण्यकशिपु ने देखा ये कौन नारायण, नारायण मेरे शत्रु का नाम बोल रहा है, हिरण्यकशिपु ने बहुत इधर, उधर देखा किन्तु कोई दिखाई नही दिया, तब तक महाराज संकल्प का मुहूर्त निकल गया।

=> हिरण्यकशिपु वहा से उठकर अपने घर चला आया, पत्नी कयाधु ने पूछा स्वामी आप तो तपस्या करने गए थे, इतने शीघ्र कैसे लौट आए, तब हिरण्यकशिपु ने बताया देवि जैसे ही मै तपस्या करने के लिए संकल्प करने लगा, वहा कोई पक्षी आकर नारायण, नारायण मेरे शत्रु का नाम लेने लगा, मैने उस पक्षी को बहुत ढूंढा किन्तु वह मुझे कही दिखाई नही दिया। कयाधु बोली स्वामी कितना सुन्दर नाम है नारायण, दोनो इसी चर्चा के बहाने नारायण नारायण करते शयन कक्ष मे चले गए और उसी रात्रि को कयाधु के गर्भ मे

=> प्रह्लाद जी आ गए, प्रातः होते ही हिरण्यकशिपु ने कयाधु से कहा देवि मै तपस्या करने के लिए जा रहा हु, इतना कहकर वह तपस्या के लिए चला गया, इतने मे इन्द्र वहा आ गए और कयाधु को अपने साथ ले जाने लगे, नारद जी ने जब देखा कि इन्द्र कयाधु को अपने साथ ले जा रहा है



Date / / 161
Page No.

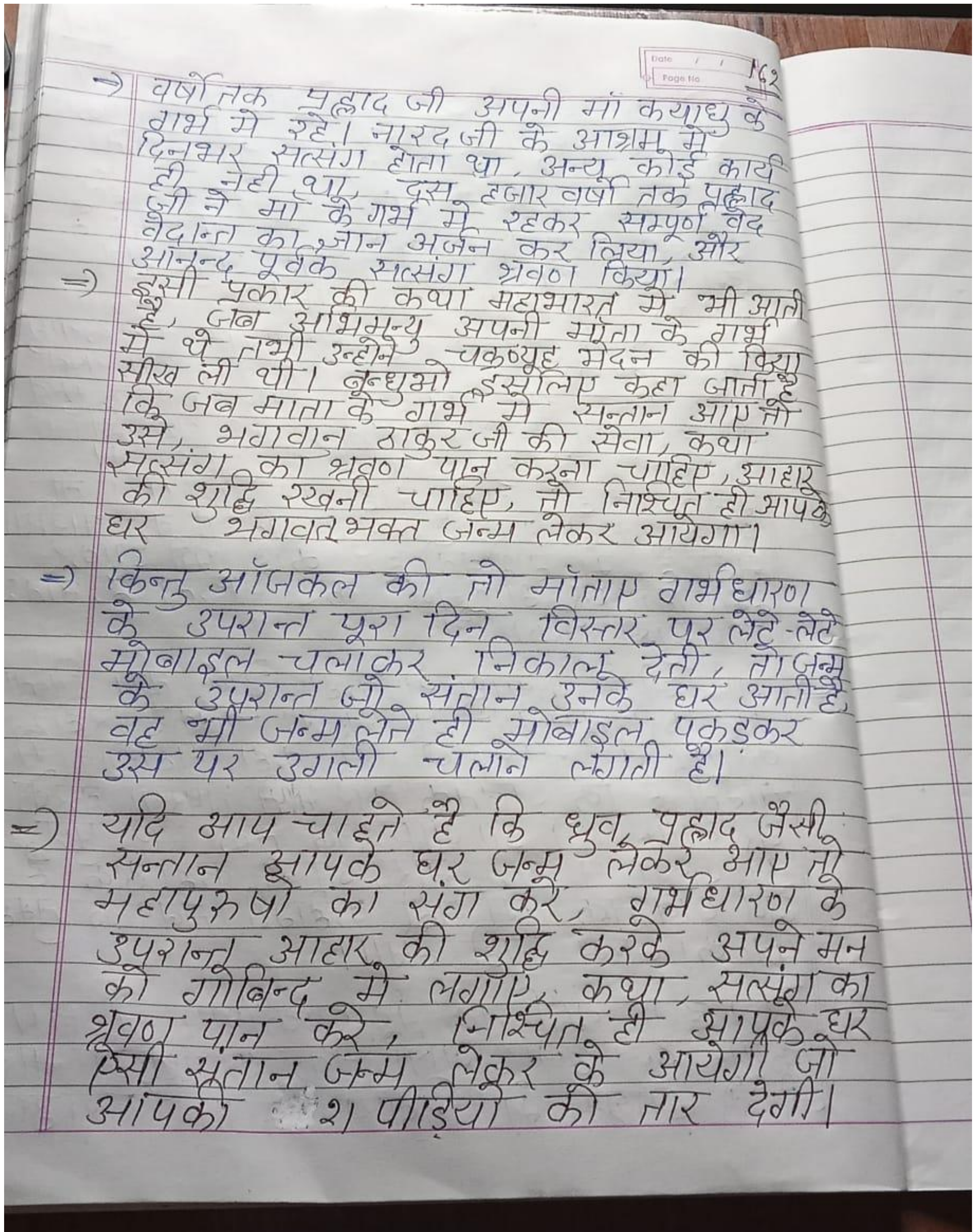
=) तो तुरन्त आकर इन्द्र को रोका, नारदजी ने कहा इन्द्र कयाधु गर्भवती है तुम इस प्रकार से इसे अपने साथ नही ले जा सकते।

=) इन्द्र ने नारद जी से कहा हम देवता पहले ही इस असुर हिरण्यकशिपु से परेशान है हम नही चाहते, उसका यह असुर पुत्र इस संसार मे जन्म लेकर आए।

=) नारद जी ने इन्द्र से कहा चिन्ता मत करो कयाधु के गर्भ से असुर नही भगवान का भक्त जन्म लेकर के आयेगा, नारद जी के मुख से इस प्रकार श्रवण करके इन्द्र वहा से चले गए। कयाधु नारद जी के चरणो मे गिरकर कहने लगी महाराज मेरे पति तो तपस्या करने गए है, मुझे किसी का भरोसा नही है, मै गर्भवती हू, कोई भी आकर हमलोगो पर आक्रमण कर सकता है, अतः आप मुझे शरण दो

=) नारद जी ने कयाधु से कहा देवि तुम चिन्ता मत करो, तुम मेरे आश्रम मे चलकर रहो, कयाधु ने नारद जी से कहा महाराज मै चाहती हू कि जबतक मेरे पति तपस्या करके घर वापिस न आ जाए तब तक मेरे पुत्र का जन्म न हो, नारद जी ने कहा ठीक है देवि जब तक तुम नही कहोगी तब तक तुम्हारे पुत्र का जन्म नही होगा।

=) दस हजार वर्षो तक हिरण्यकशिपु ने तप किया, दस हजार वर्षो तक कयाधु ने नारद जी के आश्रम मे निवास किया, दस हजार



162

⇒ वर्षों तक प्रह्लाद जी अपनी माँ कयाधु के गर्भ मे रहे। नारद जी के आश्रम मे दिनभर सत्संग होता था, अन्य कोई कार्य ही नही था, दस हजार वर्षो तक प्रह्लाद जी ने माँ के गर्भ मे रहकर सम्पूर्ण वेद वेदान्त का ज्ञान अर्जन कर लिया, और आनन्द पूर्वक सत्संग श्रवण किया।

⇒ इसी प्रकार की कथा महाभारत मे भी आती है, जब अभिमन्यु अपनी माता के गर्भ मे थे तभी उन्होंने चक्रव्यूह भेदन की क्रिया सीख ली थी। बन्धुओ इसलिए कहा जाता है कि जब माता के गर्भ मे सन्तान आए तो उसे, भगवान ठाकुर जी की सेवा, कथा सत्संग का श्रवण पान करना चाहिए, आहार की शुद्धि रखनी चाहिए, तो निश्चित ही आपके घर भगवत भक्त जन्म लेकर आयेगा।

⇒ किन्तु आजकल की तो माताए गर्भधारण के उपरान्त पूरा दिन बिस्तर पर लेटे-लेटे मोबाइल चलाकर निकाल देती, तो जन्म के उपरान्त जो संतान उनके घर आती है, वह भी जन्म लेते ही मोबाइल पकड़कर उस पर उगली चलाने लगती है।

⇒ यदि आप चाहते है कि ध्रुव, प्रह्लाद जैसी सन्तान आपके घर जन्म लेकर आए तो महापुरुषो का संग करे, गर्भधारण के उपरान्त आहार की शुद्धि करके अपने मन को गोबिन्द मे लगाए, कथा, सत्संग का श्रवण पान करे, निश्चित ही आपके घर ऐसी संतान जन्म लेकर के आयेगी जो आपको 21 पीढ़ियों को तार देगी।

162

Date / / Page No. 163

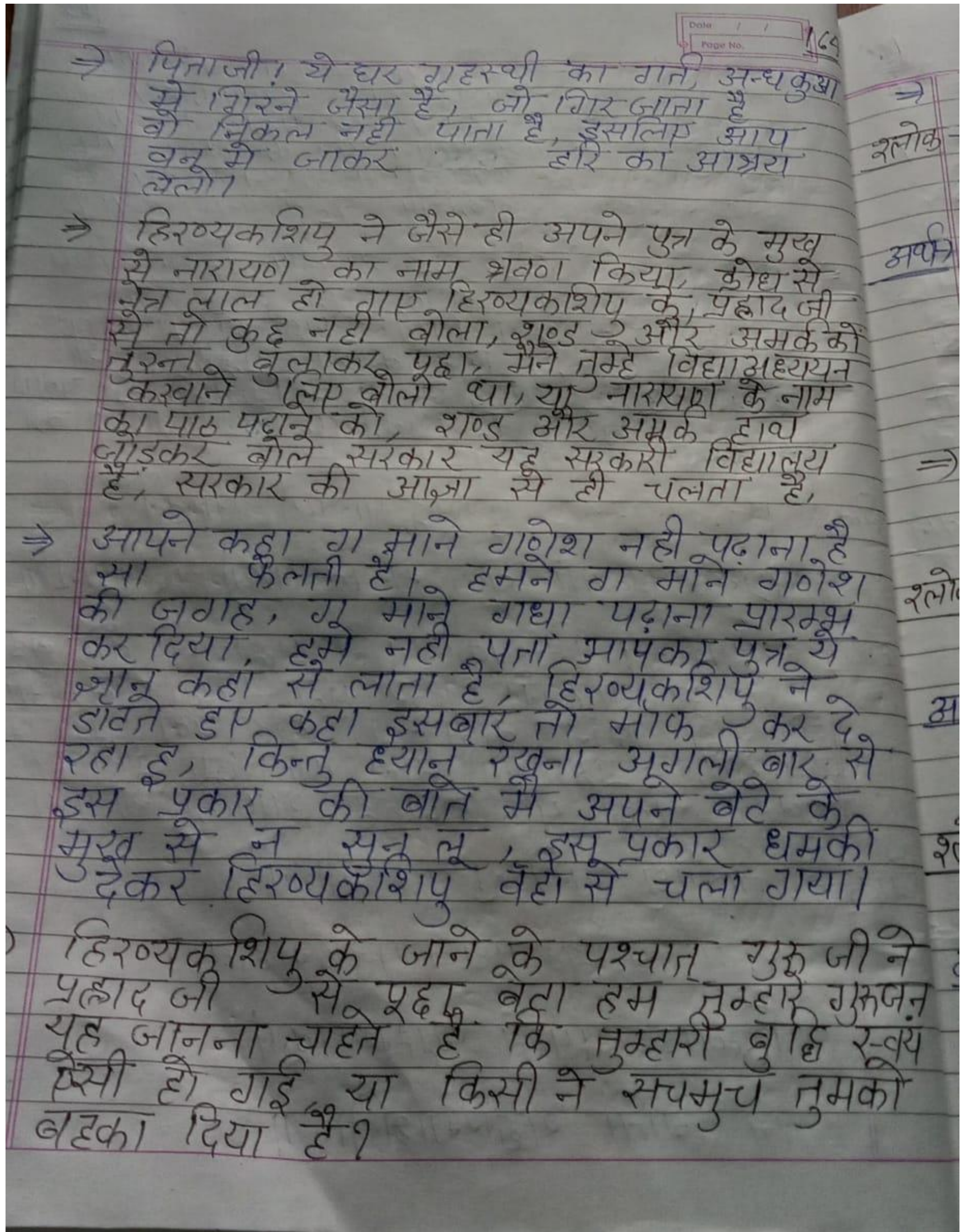
⇒ नारद जी कहते- युधिष्ठिर ! दस हजार वर्ष तक तप करने के उपरान्त जब हिरण्यकशिपु अपने घर लौट कर आया तब प्रह्लाद जी का जन्म हुआ कयाधु अपने पुत्र को लेकर अपने घर वापिस आ गई पुत्र का जन्म हुआ है ऐसा सुनकर हिरण्यकशिपु बहुत प्रसन्न हुआ।

⇒ जब प्रह्लाद जी थोड़े बड़े हुए तो हिरण्यकशिपु ने उन्हें शुक्राचार्य जी के पुत्र शण्ड और अमर्क के पास विद्या अध्ययन के लिए भेजा। एक दिन हिरण्यकशिपु प्रह्लाद जी से मिलने आए, प्रह्लाद जी ने पिताजी को प्रणाम किया, प्रेम से हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद जी को हृदय से लगा लिया।

श्लोक- एकदासुरराट् पुत्रमङ्कमारोप्य पाण्डव ।
पप्रच्छ कथ्यतां वत्स मन्यते साधु यद्भवान् ॥

अर्थ- युधिष्ठिर ! हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद जी को बड़े प्रेम से गोद मे लेकर पूछा - 'बेटा ! बताओ तो सही तुमने कौन सा पाठ पढ़ा, हमे भी सुनाओ, प्रह्लाद जी बोले पिता जी मैंने एक बहुत सुन्दर पाठ पढ़ा है, आपको सुनाता हूं।

श्लोक- तत्साधु मन्येऽसुरवर्य देहिनां
सदा समुद्विग्नधियामसद्ग्रहात् ।
हित्वाऽऽत्मपातं गृहमन्धकूपं
वनं गतो यद्धरिमाश्रयेत ॥



⇒ पिताजी! ये घर गृहस्थी का गर्त, अन्धकुआ से गिरने जैसा है, जो गिर जाता है वो निकल नही पाता है, इसलिए आप वन मे जाकर हरि का आश्रय लेलो।

⇒ हिरण्यकशिपु ने जैसे ही अपने पुत्र के मुख से नारायण का नाम श्रवण किया, क्रोध से नेत्र लाल हो गए हिरण्यकशिपु के, प्रह्लाद जी से तो कुछ नही बोला, शण्ड और अमर्क को तुरन्त बुलाकर पूछा, मैने तुम्हे विद्याअध्ययन करवाने लिए बोला था, या नारायण के नाम का पाठ पढ़ाने को, शण्ड और अमर्क हाथ जोड़कर बोले सरकार यह सरकारी विद्यालय है, सरकार की आज्ञा से ही चलता है,

⇒ आपने कहा ग माने गणेश नही पढ़ाना है सा फैलती है। हमने ग माने गणेश की जगह, ग माने गधा पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया, हमे नही पता आपका पुत्र ये ज्ञान कहां से लाता है, हिरण्यकशिपु ने डांटते हुए कहा इसबार तो माफ कर दे रहा हूं, किन्तु ध्यान रखना अगली बार से इस प्रकार की बाते मै अपने बेटे के मुख से न सुन लू, इस प्रकार धमकी देकर हिरण्यकशिपु वहां से चला गया।

⇒ हिरण्यकशिपु के जाने के पश्चात गुरु जी ने प्रह्लाद जी से पूछा बेटा हम तुम्हारे गुरुजन यह जानना चाहते है कि तुम्हारी बुद्धि स्वयं ऐसी हो गई या किसी ने सचमुच तुमको बहका दिया है?

165

⇒ तब प्रह्लाद जी ने गुरु जी से कहा –

श्लोक – यथा भ्राम्यत्ययो ब्रह्मन् स्वयमाकर्षसन्निधौ।
तथा मे भिद्यते चेतश्चक्रपाणेर्यदृच्छया ।।

अर्थ – गुरु जी! जैसे चुम्बक के पास लोहा स्वयं खिंचाकर आ जाता है, वैसे ही चक्रपाणि भगवान् की स्वच्छन्द इच्छाशक्ति से मेरा चित्त भी संसार से अलग होकर उनकी ओर बरबस खिंच जाता है, मुझे कोई कुछ भी नही सिखाता है।

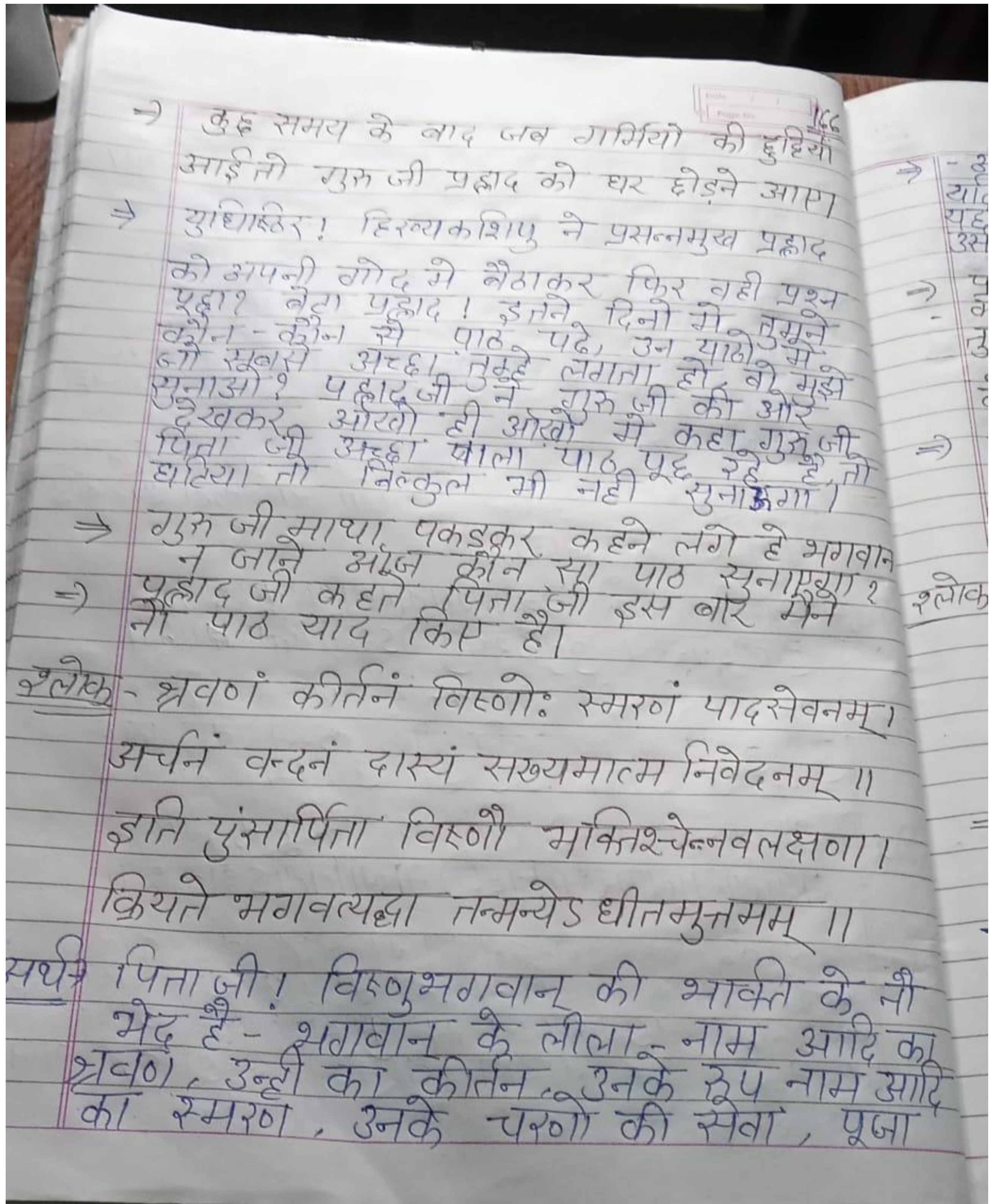
⇒ प्रह्लाद जी के मुख से इस प्रकार श्रवण करके गुरु जी ने अपने शिष्यो से कहा अरे कोई मेरा बेंत तो लाओ।

श्लोक – आनीयतामरे वेत्रमस्माकमयशस्करः।
कुलाङ्गारस्य दुर्बुद्धेश्चतुर्थोऽस्योदितो दमः ।।

अर्थ – यह हमारी कीर्ति मे कलंक लगा रहा है। इस दुर्बुद्धि कुलांगार को ठीक करने के लिए चौथा उपाय दण्ड ही उपयुक्त होगा।

श्लोक – दैतेयचन्दनवने जातोऽयं कण्टकद्रुमः।
यन्मूलोन्मूलपरशोर्विष्णोर्नालायितोऽर्भकः ।।

अर्थ – दैत्यवंश के चन्दनवन मे यह काँटेदार बबूल कहा से पैदा हो गया? जो विष्णु इस वन की जड़ काटने मे कुल्हाड़े का काम करते है, यह नादान बालक उन्ही को भज रहा है।



166

⇒ कुछ समय के बाद जब गर्मियो की छुट्टियाँ आई तो गुरु जी प्रह्लाद को घर छोड़ने आए।

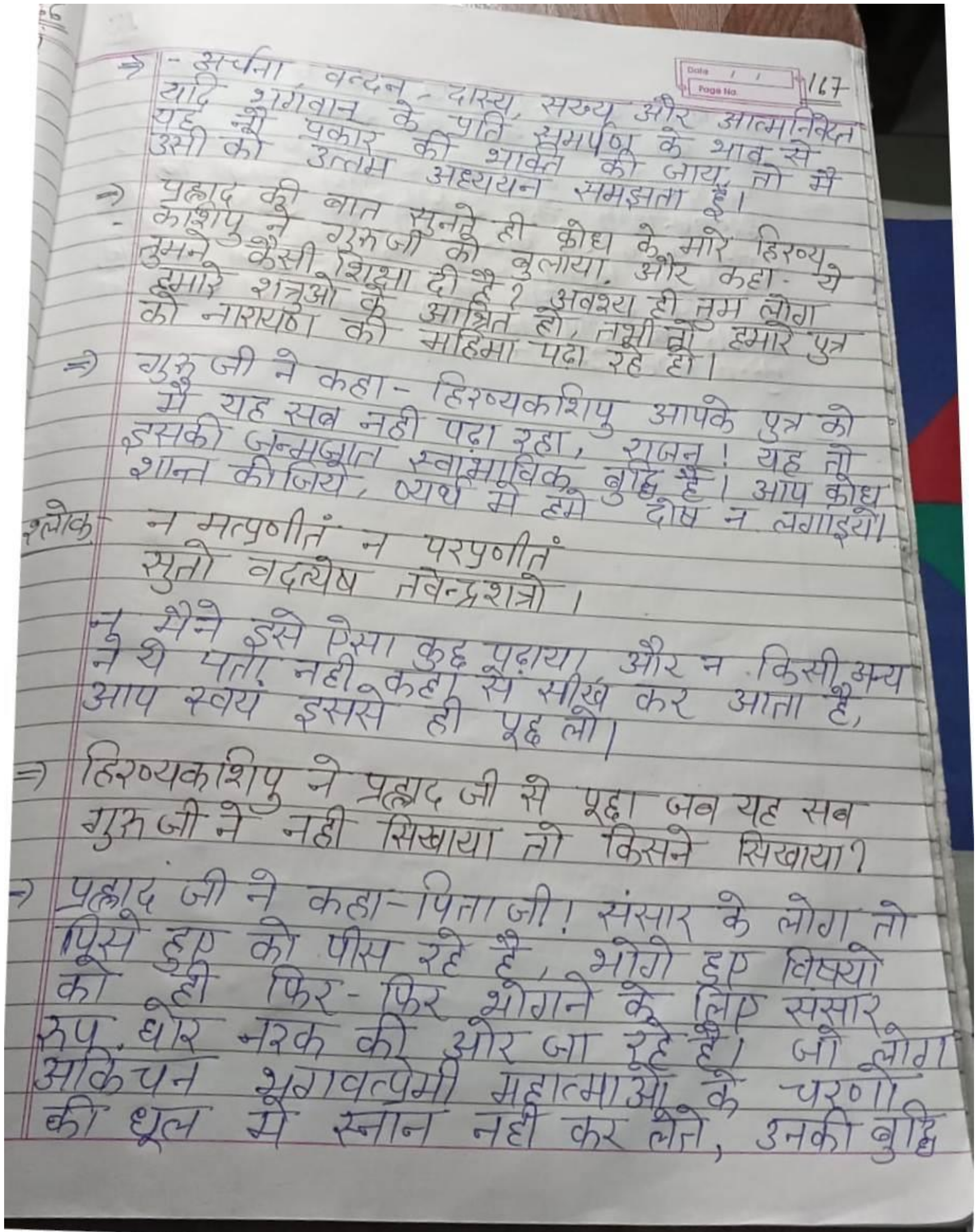
⇒ युधिष्ठिर! हिरण्यकशिपु ने प्रसन्नमुख प्रह्लाद को अपनी गोद मे बैठाकर फिर वही प्रश्न पूछा? बेटा प्रह्लाद! इतने दिनो मे तुमने कौन - कौन से पाठ पढे, उन पाठो मे जो सबसे अच्छा तुम्हे लगाता हो, वो मुझे सुनाओ? प्रह्लाद जी ने गुरु जी की ओर देखकर आँखो ही आँखो मे कहा गुरु जी पिता जी अच्छा वाला पाठ पूछ रहे है, तो घटिया तो बिल्कुल भी नही सुनाऊँगा।

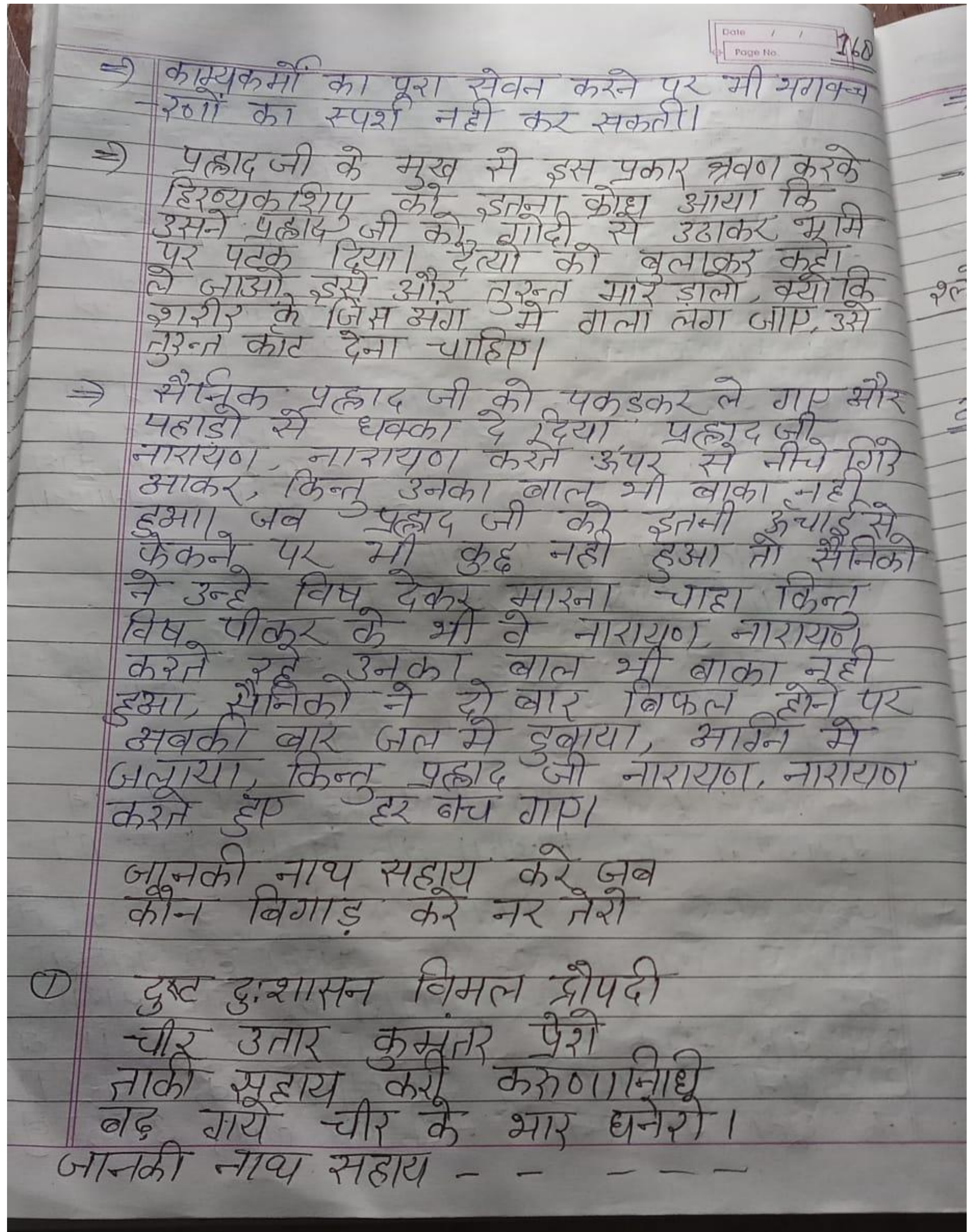
⇒ गुरु जी माथा पकड़कर कहने लगे हे भगवान न जाने आज कौन सा पाठ सुनाएगा?

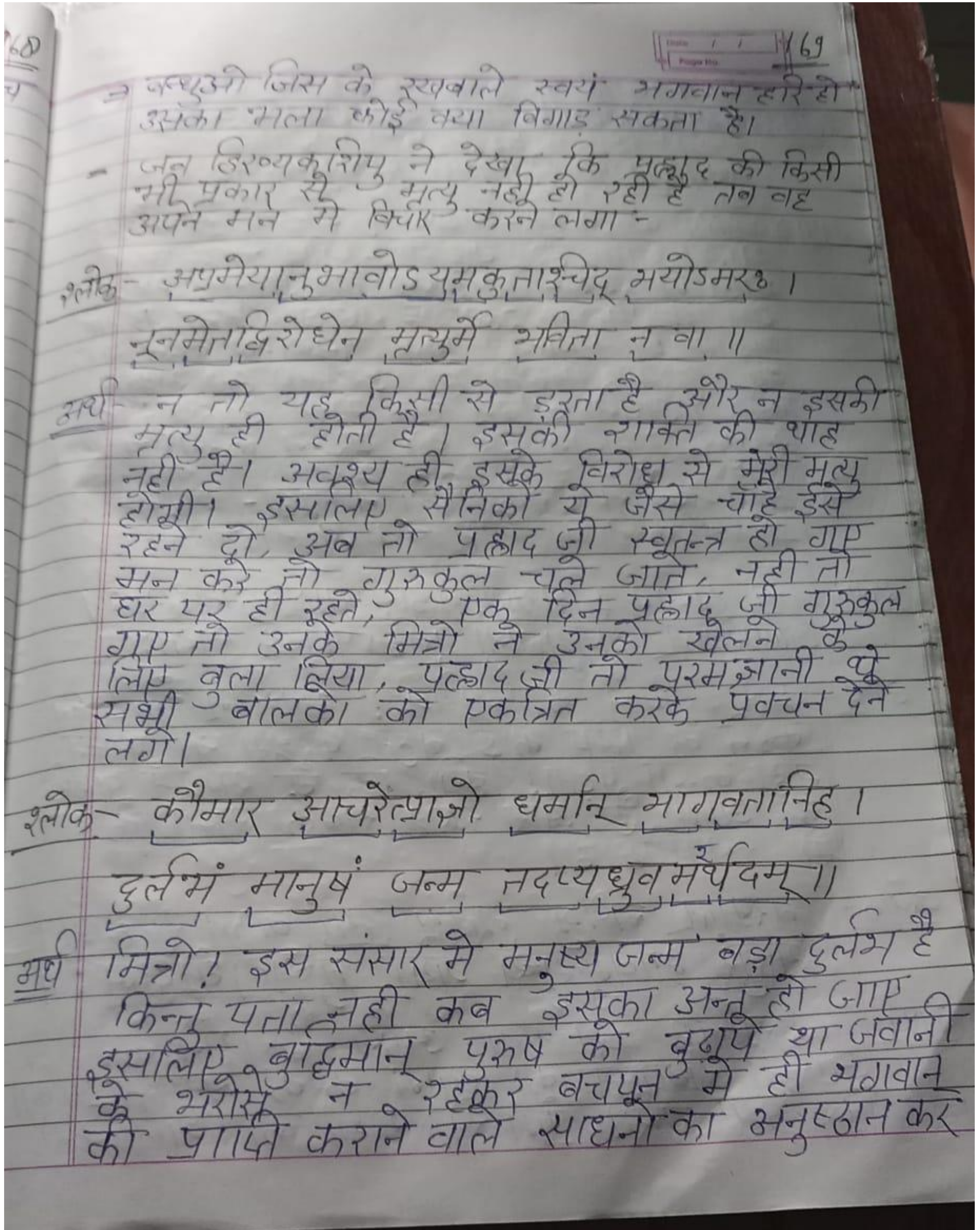
⇒ प्रह्लाद जी कहते पिता जी इस बार मैने नौ पाठ याद किए है

श्लोक - श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्म निवेदनम् ॥
इति पुंसार्पिता विष्णौ भक्तिश्चेन्नवलक्षणा।
क्रियते भगवत्यद्धा तन्मन्येऽधीतमुत्तमम् ॥

अर्थ - पिता जी! विष्णुभगवान् की भक्ति के नौ भेद है - भगवान के लीला, नाम आदि का श्रवण, उन्ही का कीर्तन, उनके रूप नाम आदि का स्मरण, उनके चरणो की सेवा, पूजा


167
⇒ - अर्चना वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन
यदि भगवान के प्रति समर्पण के भाव से
यह नौ प्रकार की भक्ति की जाय, तो मैं
उसी को उत्तम अध्ययन समझता हूँ।
⇒ प्रह्लाद की बात सुनते ही क्रोध के मारे हिरण्य-
कशिपु ने गुरुजी को बुलाया, और कहा- ये
तुमने कैसी शिक्षा दी है? अवश्य ही तुम लोग
हमारे शत्रुओं के आश्रित हो, तभी तो हमारे पुत्र
को नारायण की महिमा पढ़ा रहे हो।
⇒ गुरु जी ने कहा- हिरण्यकशिपु आपके पुत्र को
मैं यह सब नहीं पढ़ा रहा, राजन! यह तो
इसकी जन्मजात स्वाभाविक बुद्धि है। आप क्रोध
शान्त कीजिये, व्यर्थ में हमें दोष न लगाइये।
श्लोक - न मत्प्रणीतं न परप्रणीतं
सुतो वदत्येष तवेन्द्रशत्रो।
न मैंने इसे ऐसा कुछ पढ़ाया और न किसी अन्य
ने ये पता नहीं कहाँ से सीख कर आता है,
आप स्वयं इससे ही पूछ लो।
⇒ हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद जी से पूछा जब यह सब
गुरु जी ने नहीं सिखाया तो किसने सिखाया?
⇒ प्रह्लाद जी ने कहा- पिता जी! संसार के लोग तो
पिसे हुए को पीस रहे हैं, भोगे हुए विषयों
को ही फिर-फिर भोगने के लिए संसार
रूप घोर नरक की ओर जा रहे हैं। जो लोग
अकिंचन भगवत्प्रेमी महात्माओं के चरणों
की धूल में स्नान नहीं कर लेते, उनकी बुद्धि


168
⇒ काम्यकर्मों का पूरा सेवन करने पर भी भगवच्चरणों का स्पर्श नहीं कर सकती।
⇒ प्रह्लाद जी के मुख से इस प्रकार श्रवण करके हिरण्यकशिपु को इतना क्रोध आया कि उसने प्रह्लाद जी को गोदी से उठाकर भूमि पर पटक दिया। दैत्यों को बुलाकर कहा ले जाओ इसे और तुरन्त मार डालो, क्योंकि शरीर के जिस अंग में गाला लग जाए, उसे तुरन्त काट देना चाहिए।
⇒ सैनिक प्रह्लाद जी को पकड़कर ले गए और पहाड़ों से धक्का दे दिया प्रह्लाद जी नारायण, नारायण करते ऊपर से नीचे गिरे आकर, किन्तु उनका बाल भी बाका नहीं हुआ, जब प्रह्लाद जी को इतनी ऊंचाई से फेंकने पर भी कुछ नहीं हुआ तो सैनिकों ने उन्हें विष देकर मारना चाहा किन्तु विष पीकर के भी वे नारायण नारायण करते रहे उनका बाल भी बाका नहीं हुआ, सैनिकों ने दो बार विफल होने पर अबकी बार जल में डुबाया, अग्नि में जलाया, किन्तु प्रह्लाद जी नारायण, नारायण करते हुए हर बच गए।
जानकी नाथ सहाय करे जब
कौन बिगाड़ करे नर तेरो
⑦ दुष्ट दुःशासन विमल द्रौपदी
चीर उतार कुमंतर पैरो
ताकी सहाय करी करुणानिधि
बढ़ गये चीर के भार घनेरो।
जानकी नाथ सहाय - - - - -



169

→ जिसके रखवाले स्वयं भगवान हरि हो उसका भला कोई क्या बिगाड़ सकता है।

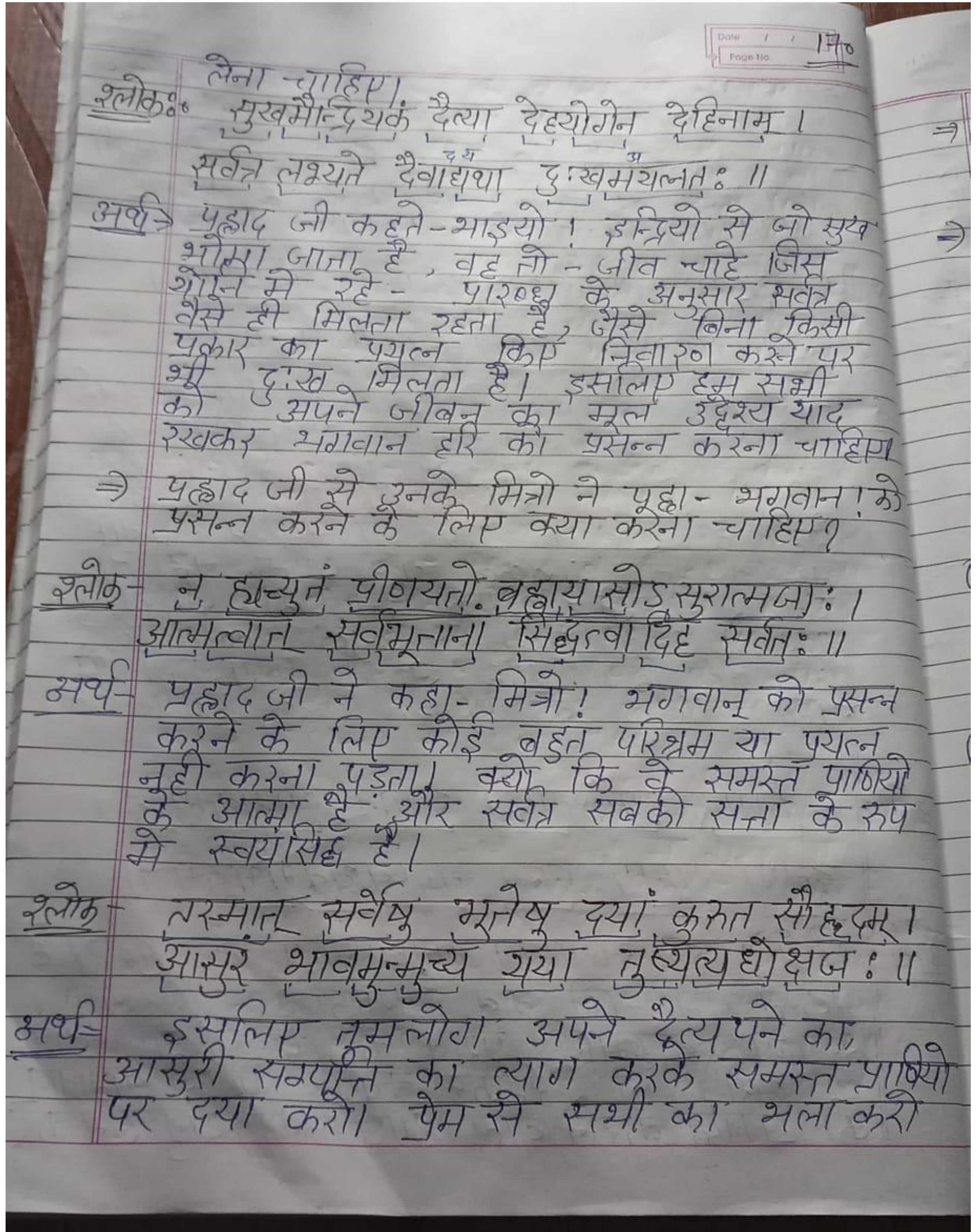
- जब हिरण्यकशिपु ने देखा कि प्रह्लाद की किसी भी प्रकार से मृत्यु नहीं हो रही है तब वह अपने मन मे विचार करने लगा -

श्लोक - अप्रमेयानुभावोऽयमकुतश्चिद् भयोऽमरः।
नूनमेतद्विरोधेन मृत्युर्मे भविता न वा॥

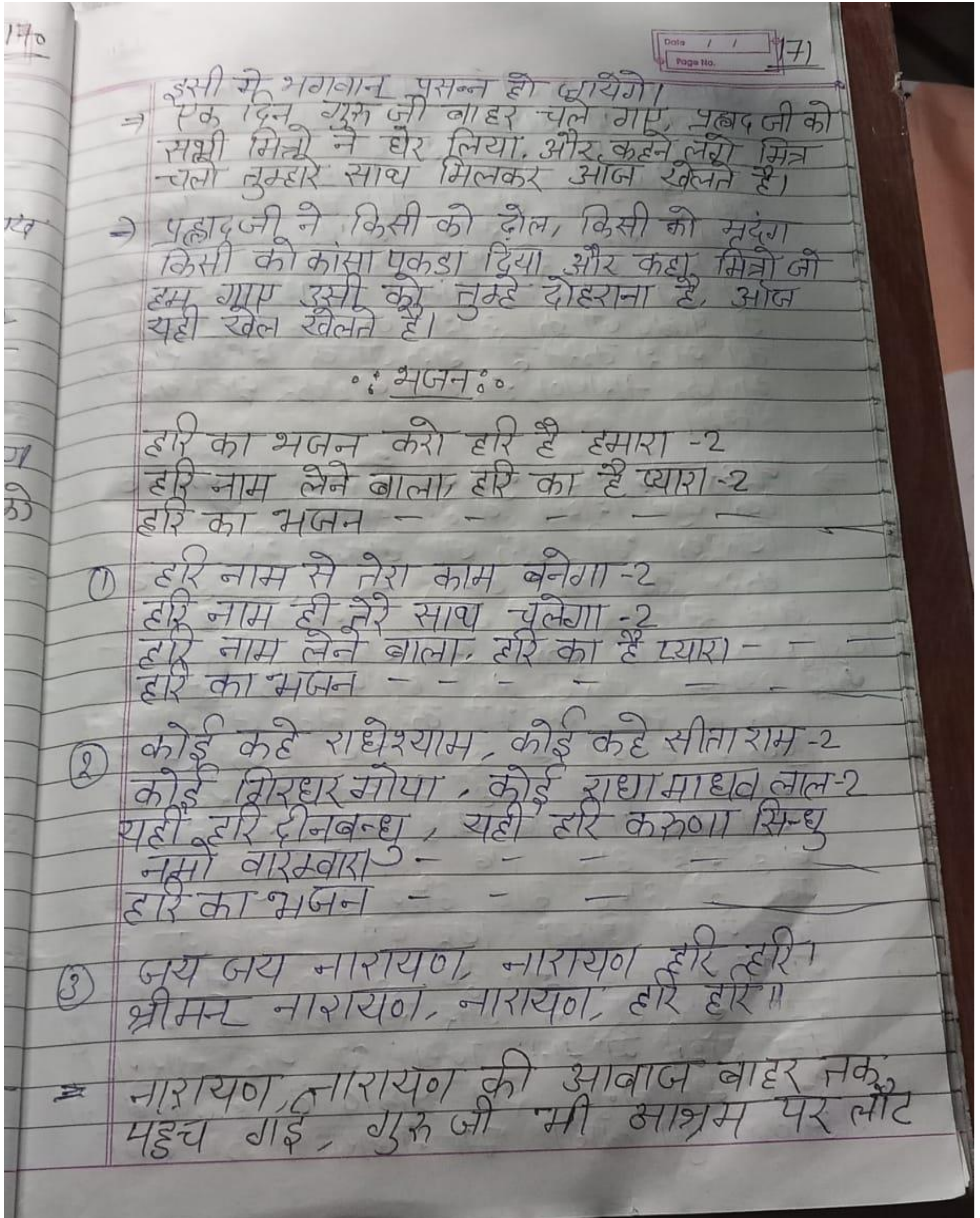
अर्थ - न तो यह किसी से डरता है और न इसकी मृत्यु ही होती है। इसकी शक्ति की थाह नहीं है। अवश्य ही इसके विरोध से मेरी मृत्यु होगी। इसलिए सैनिकों ये जैसे चाहे इसे रहने दो, अब तो प्रह्लाद जी स्वतन्त्र हो गए मन करे तो गुरुकुल चले जाते, नहीं तो घर पर ही रहते, एक दिन प्रह्लाद जी गुरुकुल गए तो उनके मित्रो ने उनको खेलने के लिए बुला लिया, प्रह्लाद जी तो परमज्ञानी थे सभी बालको को एकत्रित करके प्रवचन देने लगे।

श्लोक - कौमार आचरेत्प्राज्ञो धर्मान् भागवतानिह।
दुर्लभं मानुषं जन्म तदप्यध्रुवमर्थदम्॥

अर्थ - मित्रो! इस संसार मे मनुष्य जन्म बड़ा दुर्लभ है किन्तु पता नहीं कब इसका अन्त हो जाए इसलिए बुद्धिमान पुरुष को बुढ़ापे या जवानी के भरोसे न रहकर बचपन मे ही भगवान की प्राप्ति कराने वाले साधनो का अनुष्ठान कर



लेना चाहिए।
श्लोकः सुखमैन्द्रियकं दैत्या देहयोगेन देहिनाम् ।
सर्वत्र लभ्यते दैवाद्यथा दुःखमयत्नतः ॥
अर्थ⇒ प्रह्लाद जी कहते - भाइयो ! इन्द्रियो से जो सुख भोगा जाता है, वह तो - जीव चाहे जिस योनि मे रहे - प्रारब्ध के अनुसार सर्वत्र वैसे ही मिलता रहता है, जैसे बिना किसी प्रकार का प्रयत्न किए निवारण करने पर भी दुःख मिलता है। इसलिए हम सभी को अपने जीवन का मूल उद्देश्य याद रखकर भगवान हरि को प्रसन्न करना चाहिए।
⇒ प्रह्लाद जी से उनके मित्रो ने पूछा - भगवान ! को प्रसन्न करने के लिए क्या करना चाहिए ?
श्लोक - न ह्यच्युतं प्रीणयतो बह्वायासोऽसुरात्मजाः ।
आत्मत्वात् सर्वभूतानां सिद्धत्वादिह सर्वतः ॥
अर्थ - प्रह्लाद जी ने कहा - मित्रो ! भगवान् को प्रसन्न करने के लिए कोई बहुत परिश्रम या प्रयत्न नही करना पड़ता। क्यो कि वे समस्त प्राणियो के आत्मा है और सर्वत्र सबकी सत्ता के रुप मे स्वयंसिद्ध है।
श्लोक - तस्मात् सर्वेषु भूतेषु दयां कुरुत सौहृदम् ।
आसुरं भावमुन्मुच्य यया तुष्यत्यधोक्षजः ॥
अर्थ - इसलिए तुमलोग अपने दैत्यपने का, आसुरी सम्पत्ति का त्याग करके समस्त प्राणियो पर दया करो। प्रेम से सभी का भला करो



171

इसी से भगवान प्रसन्न हो जायेंगे।
⇒ एक दिन गुरु जी बाहर चले गए, प्रह्लाद जी को सभी मित्रो ने घेर लिया, और कहने लगे मित्र चलो तुम्हारे साथ मिलकर आज खेलते है।

⇒ प्रह्लाद जी ने किसी को ढोल, किसी को मृदंग किसी को कांसा पकड़ा दिया और कहा मित्रो जो हम गाए उसी को तुम्हे दोहराना है, आज यही खेल खेलते है।

:: भजन ::

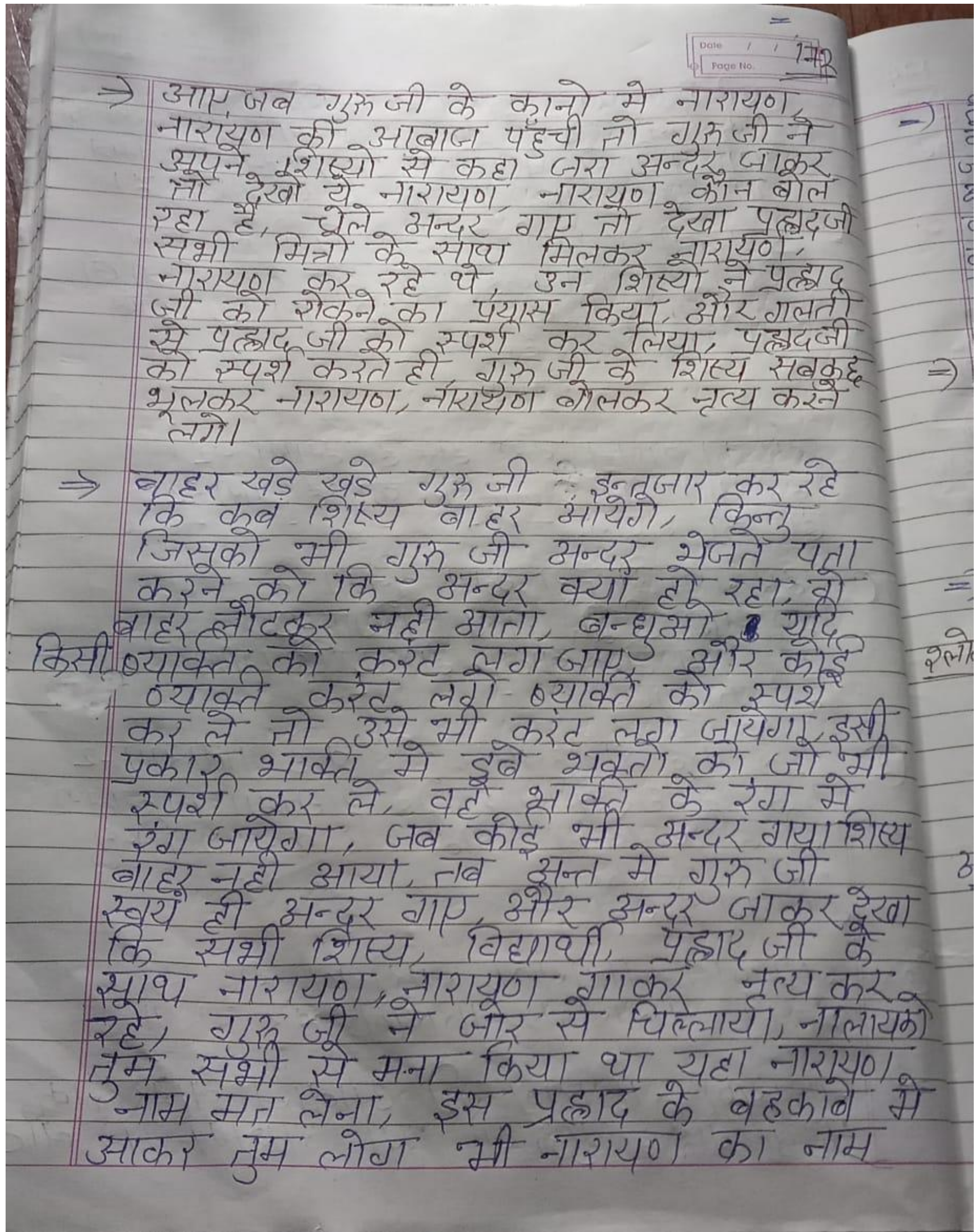
हरि का भजन करो हरि है हमारा -2
हरि नाम लेने बाला, हरि का है प्यारा -2
हरि का भजन - - - - -

(1) हरि नाम से तेरा काम बनेगा -2
हरि नाम ही तेरे साथ चलेगा -2
हरि नाम लेने बाला, हरि का है प्यारा - - -
हरि का भजन - - - - - -

(2) कोई कहे राधेश्याम, कोई कहे सीताराम -2
कोई गिरधर गोपाल, कोई राधामाधव लाल -2
यही हरि दीनबन्धु, यही हरि करुणा सिन्धु
नमो बारम्बार - - - -
हरि का भजन - - -

(3) जय जय नारायण, नारायण हरि हरि।
श्रीमन् नारायण, नारायण हरि हरि॥

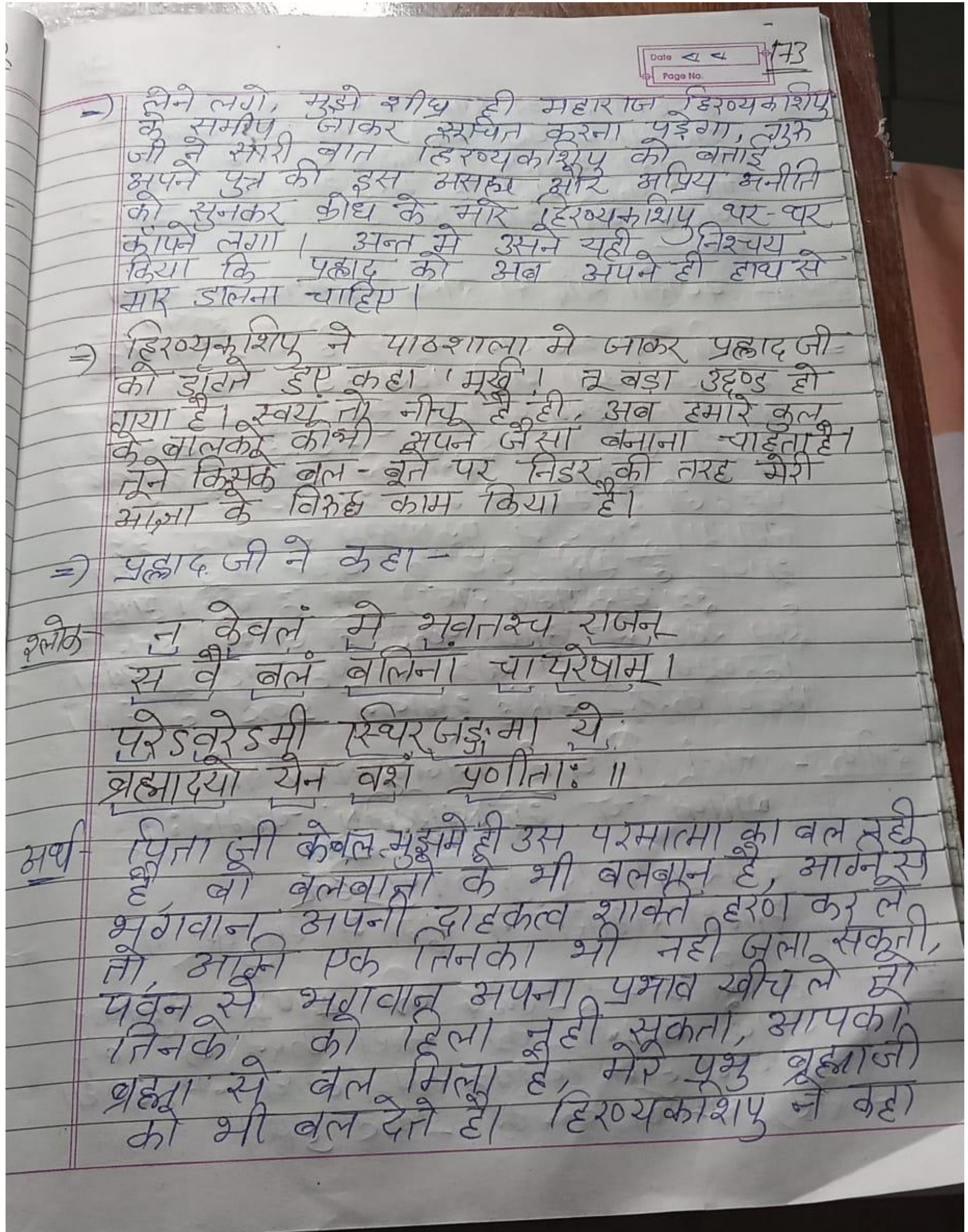
⇒ नारायण, नारायण की आवाज बाहर तक पहुँच गई, गुरु जी भी आश्रम पर लौट



Page No. 172

→ आए, जब गुरु जी के कानो मे नारायण, नारायण की आवाज पहुँची तो गुरु जी ने अपने शिष्यो से कहा जरा अन्दर जाकर तो देखो ये नारायण, नारायण कौन बोल रहा है, चेले अन्दर गए तो देखा प्रह्लादजी सभी मित्रो के साथ मिलकर नारायण, नारायण कर रहे थे, उन शिष्यो ने प्रह्लाद जी को रोकने का प्रयास किया, और गलती से प्रह्लाद जी को स्पर्श कर लिया, प्रह्लादजी को स्पर्श करते ही गुरु जी के शिष्य सबकुछ भूलकर नारायण, नारायण बोलकर नृत्य करने लगे।

⇒ बाहर खड़े खड़े गुरु जी इन्तजार कर रहे कि कब शिष्य बाहर आयेगे, किन्तु जिसको भी गुरु जी अन्दर भेजते पता करने को कि अन्दर क्या हो रहा, वो बाहर लौटकर नही आता, बन्धुओ यदि किसी व्यक्ति को करंट लग जाए और कोई व्यक्ति करंट लगे व्यक्ति को स्पर्श कर ले तो उसे भी करंट लग जायेगा, इसी प्रकार भक्ति मे डूबे भक्तो को जो भी स्पर्श कर ले, वह भक्ति के रंग मे रंग जायेगा, जब कोई भी अन्दर गया शिष्य बाहर नही आया, तब अन्त मे गुरु जी स्वयं ही अन्दर गए, और अन्दर जाकर देखा कि सभी शिष्य, विद्यार्थी, प्रह्लाद जी के साथ नारायण, नारायण गाकर नृत्य कर रहे, गुरु जी ने जोर से चिल्लायो, नालायको तुम सभी से मना किया था यहा नारायण नाम मत लेना, इस प्रह्लाद के बहकावे मे आकर तुम लोग भी नारायण का नाम



173

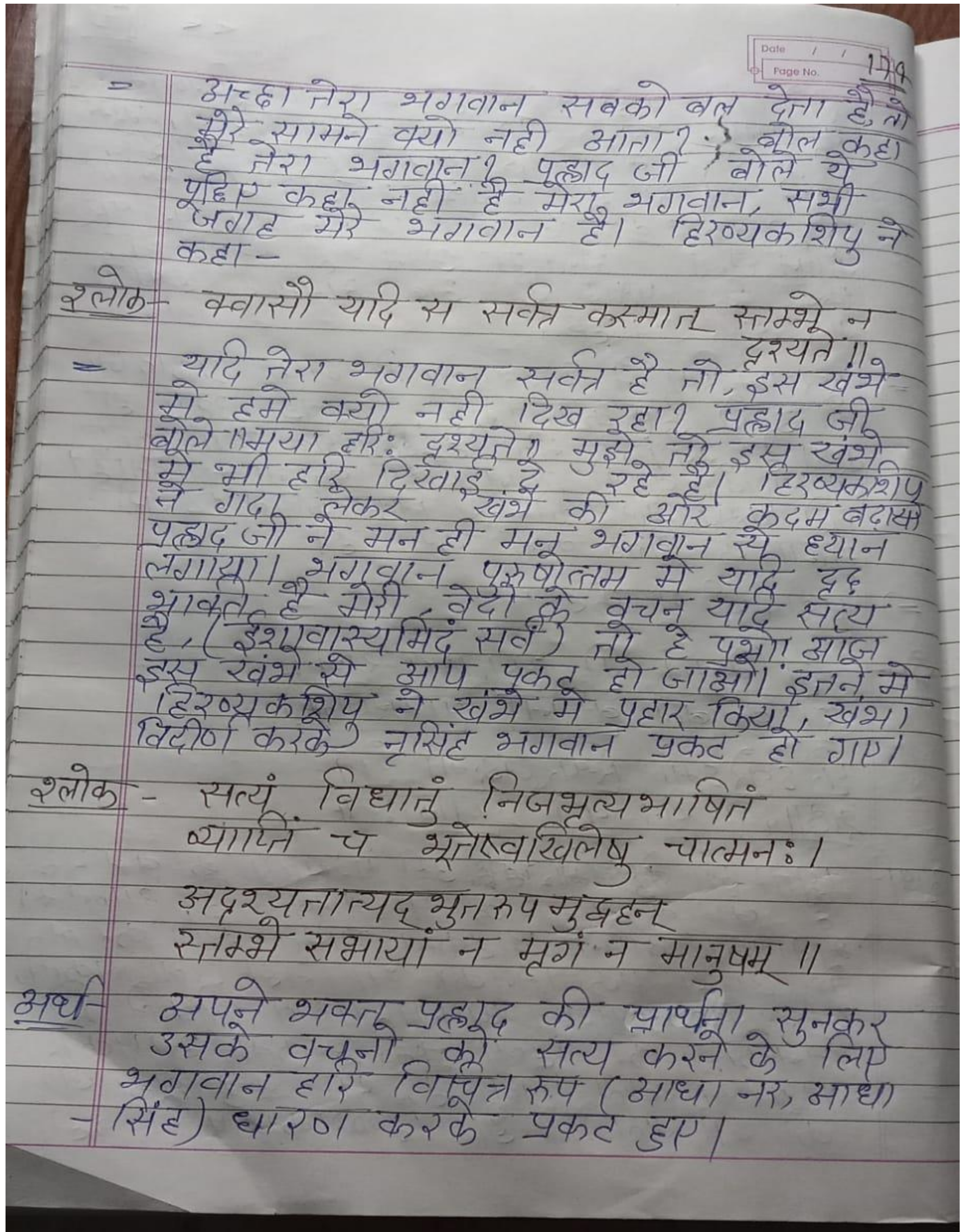
=) लेने लगे, मुझे शीघ्र ही महाराज हिरण्यकशिपु के समीप जाकर सूचित करना पड़ेगा, गुरु जी ने सारी बात हिरण्यकशिपु को बताई अपने पुत्र की इस असह्य और अप्रिय अनीति को सुनकर क्रोध के मारे हिरण्यकशिपु थर-थर कांपने लगा। अन्त मे उसने यही निश्चय किया कि प्रह्लाद को अब अपने ही हाथ से मार डालना चाहिए।

=) हिरण्यकशिपु ने पाठशाला मे जाकर प्रह्लाद जी को डांटते हुए कहा 'मूर्ख'! तू बड़ा उद्दण्ड हो गया है। स्वयं तो नीच है ही, अब हमारे कुल के बालकों को भी अपने जैसा बनाना चाहता है तूने किसके बल-बूते पर निडर की तरह मेरी आज्ञा के विरुद्ध काम किया है।

=) प्रह्लाद जी ने कहा -

श्लोक - न केवलं मे भवतश्च राजन्
स वै बलं बलिनां चापरेषाम्।
परेऽवरेऽमी स्थिरजङ्गमा ये
ब्रह्मादयो येन वशं प्रणीताः॥

अर्थ - पिता जी केवल मुझमे ही उस परमात्मा का बल नही है वो बलवानो के भी बलवान है, आग्नि से भगवान अपनी दाहकत्व शक्ति हरण कर ले तो आग्नि एक तिनका भी नही जला सकती, पवन से भगवान अपना प्रभाव खींच ले तो तिनके को हिला नही सकती, आपको ब्रह्मा से बल मिला है, मेरे प्रभु ब्रह्माजी को भी बल देते है। हिरण्यकशिपु ने कहा



Date / / Page No. 174

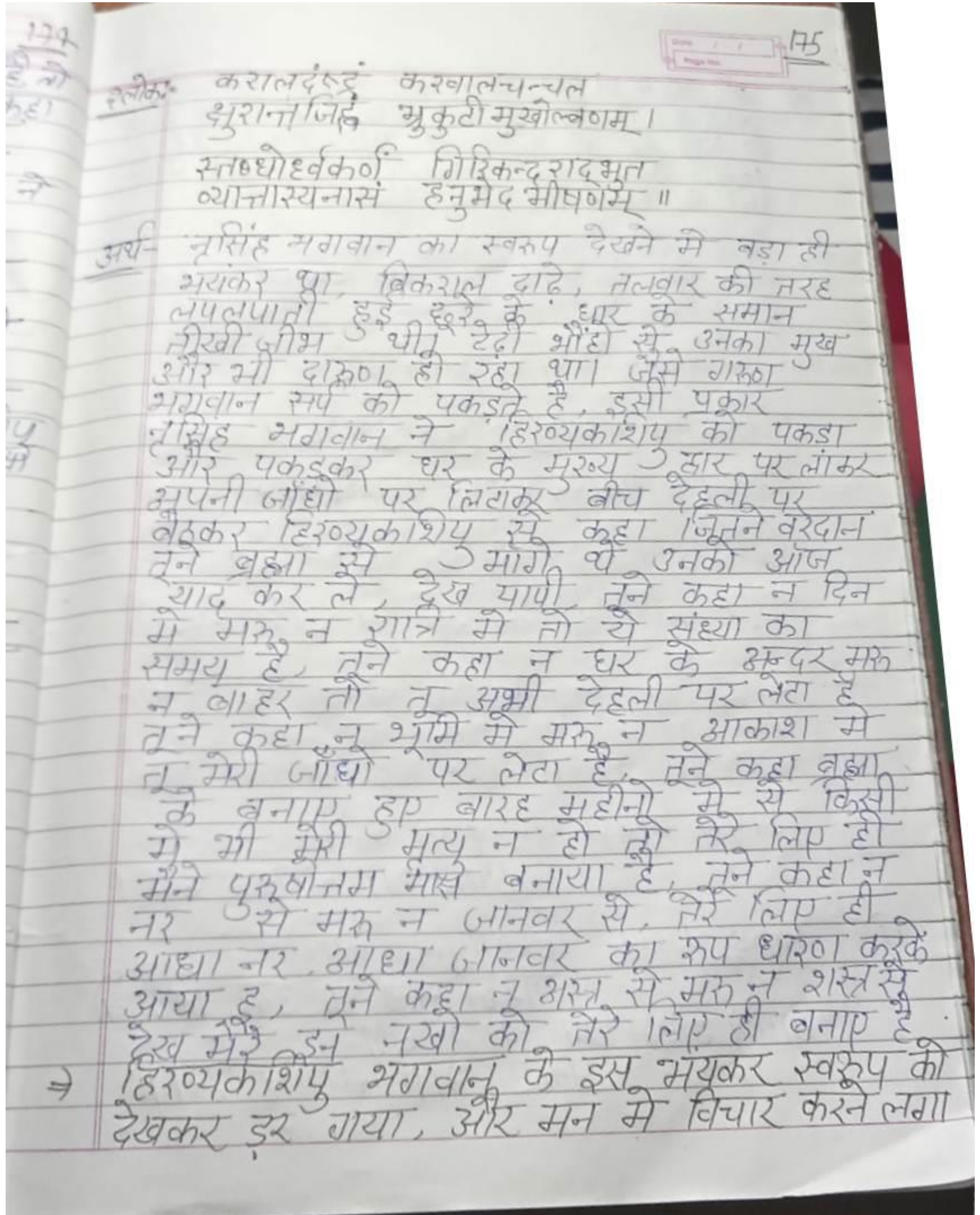
= अच्छा तेरा भगवान सबको बल देता है, तो मेरे सामने क्यो नही आता? बोल कहा है तेरा भगवान? प्रह्लाद जी बोले ये पूछिए कहा नही है मेरा भगवान, सभी जगह मेरे भगवान है। हिरण्यकशिपु ने कहा –

श्लोक – क्वासौ यदि स सर्वत्र कस्मात् स्तम्भे न दृश्यते ॥

= यदि तेरा भगवान सर्वत्र है तो, इस खंभे मे हमे क्यो नही दिख रहा? प्रह्लाद जी बोले ।मया हरिः दृश्यते।। मुझे तो इस खंभे मे भी हरि दिखाई दे रहे है। हिरण्यकशिपु ने गदा लेकर खंभे की ओर कदम बढ़ाये प्रह्लाद जी ने मन ही मन भगवान से ध्यान लगाया। भगवान पुरुषोत्तम मे यदि दृढ़ भक्ति है मेरी, वेदो के वचन यदि सत्य है, (ईशावास्यमिदं सर्वं) तो हे प्रभो! आज इस खंभे से आप प्रकट हो जाओ। इतने मे हिरण्यकशिपु ने खंभे मे प्रहार किया, खंभा विदीर्ण करके नृसिंह भगवान प्रकट हो गए।

श्लोक – सत्यं विधातुं निजभृत्यभाषितं
व्याप्तिं च भूतेष्वखिलेषु चात्मनः।
अदृश्यतात्यद्भुतरूपमुद्वहन्
स्तम्भे सभायां न मृगं न मानुषम् ॥

अर्थ – अपने भक्त प्रह्लाद की प्रार्थना सुनकर उसके वचनो को सत्य करने के लिए भगवान हरि विचित्र रूप (आधा नर, आधा सिंह) धारण करके प्रकट हुए।

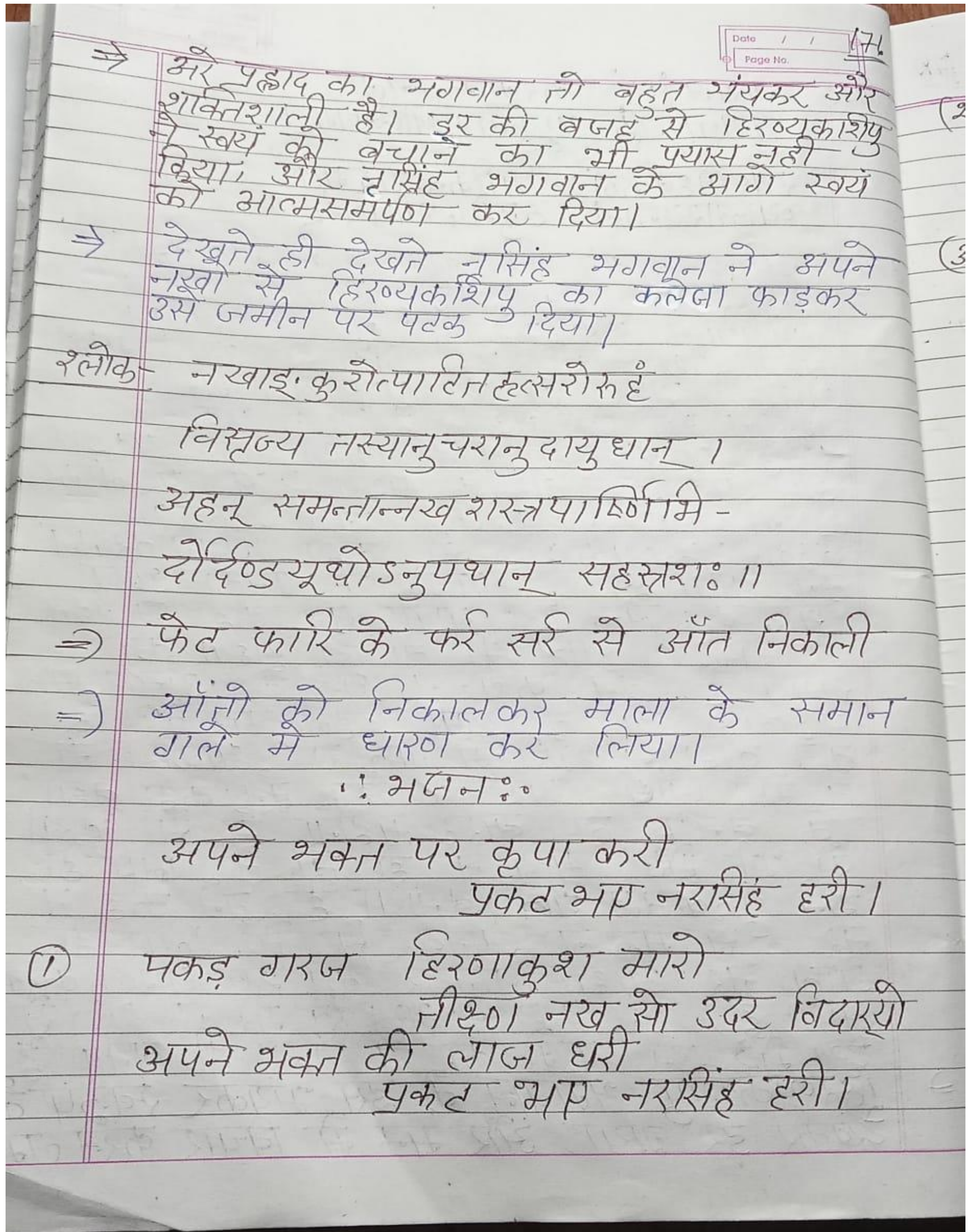


175

श्लोक- करालदंष्ट्रं करवालचञ्चल
क्षुरान्तजिह्वं भ्रुकुटीमुखोल्बणम् ।
स्तब्धोर्ध्वकर्णं गिरिकन्दराद्भुत
व्यात्तास्यनासं हनुभेद भीषणम् ॥

अर्थ- नृसिंह भगवान का स्वरुप देखने मे बड़ा ही भयंकर था, बिकराल दाढ़े, तलवार की तरह लपलपाती हुई छूरे के धार के समान तीखी जीभ थी, टेढ़ी भौंहो से उनका मुख और भी दारूण हो रहा था। जैसे गरूण भगवान सर्प को पकड़ते है, इसी प्रकार नृसिंह भगवान ने हिरण्यकशिपु को पकडा और पकड़कर घर के मुख्य द्वार पर लाकर अपनी जांघो पर लिटाकर बीच देहली पर बैठकर हिरण्यकशिपु से कहा जितने वरदान तूने ब्रह्मा से मांगे थे उनको आज याद कर ले, देख पापी तूने कहा न दिन मे मरू न रात्रि मे तो ये संध्या का समय है, तूने कहा न घर के अन्दर मरू न बाहर तो तू अभी देहली पर लेटा है तूने कहा न भूमि मे मरू न आकाश मे तू मेरी जाँघो पर लेटा है, तूने कहा ब्रह्मा के बनाए हुए बारह महीनो मे से किसी मे भी मेरी मृत्यु न हो तो तेरे लिए ही मैंने पुरूषोत्तम मास बनाया है, तूने कहा न नर से मरू न जानवर से, तेरे लिए ही आधा नर, आधा जानवर का रूप धारण करके आया हू, तूने कहा न अस्त्र से मरू न शस्त्र से देख मेरे इन नखो को तेरे लिए ही बनाए है।

→ हिरण्यकशिपु भगवान के इस भयंकर स्वरूप को देखकर डर गया, और मन मे विचार करने लगा



⇒ अरे प्रह्लाद को भगवान तो बहुत भयंकर और शक्तिशाली है। डर की वजह से हिरण्यकशिपु ने स्वयं को बचाने का भी प्रयास नही किया, और नृसिंह भगवान के आगे स्वयं को आत्मसमर्पण कर दिया।

⇒ देखते ही देखते नृसिंह भगवान ने अपने नखों से हिरण्यकशिपु का कलेजा फाड़कर उसे जमीन पर पटक दिया।

श्लोक- नखाङ्कुरोत्पाटितहृत्सरोरुहं
विसृज्य तस्यानुचरानुदायुधान् ।
अहन् समन्तान्नखशस्त्रपार्ष्णिभि-
दोर्दण्डयूथोऽनुपथान् सहस्रशः ॥

⇒ फैट फारि के फर्र सर्र से आँत निकाली

⇒ आँतो को निकालकर माला के समान गले में धारण कर लिया।

:: भजन ::

अपने भक्त पर कृपा करी
प्रकट भए नरसिंह हरी।

(1) पकड़ गरज हिरणाकुश मारो
तीक्ष्ण नख सो उदर बिदार्यो
अपने भक्त की लाज धरी
प्रकट भए नरसिंह हरी।

(२) ओज अनोखो रूप बनायो
अपने भक्त को वचन निभायो
नभ से बरषी सुमन झरी
प्रकट भए नरसिंह हरी

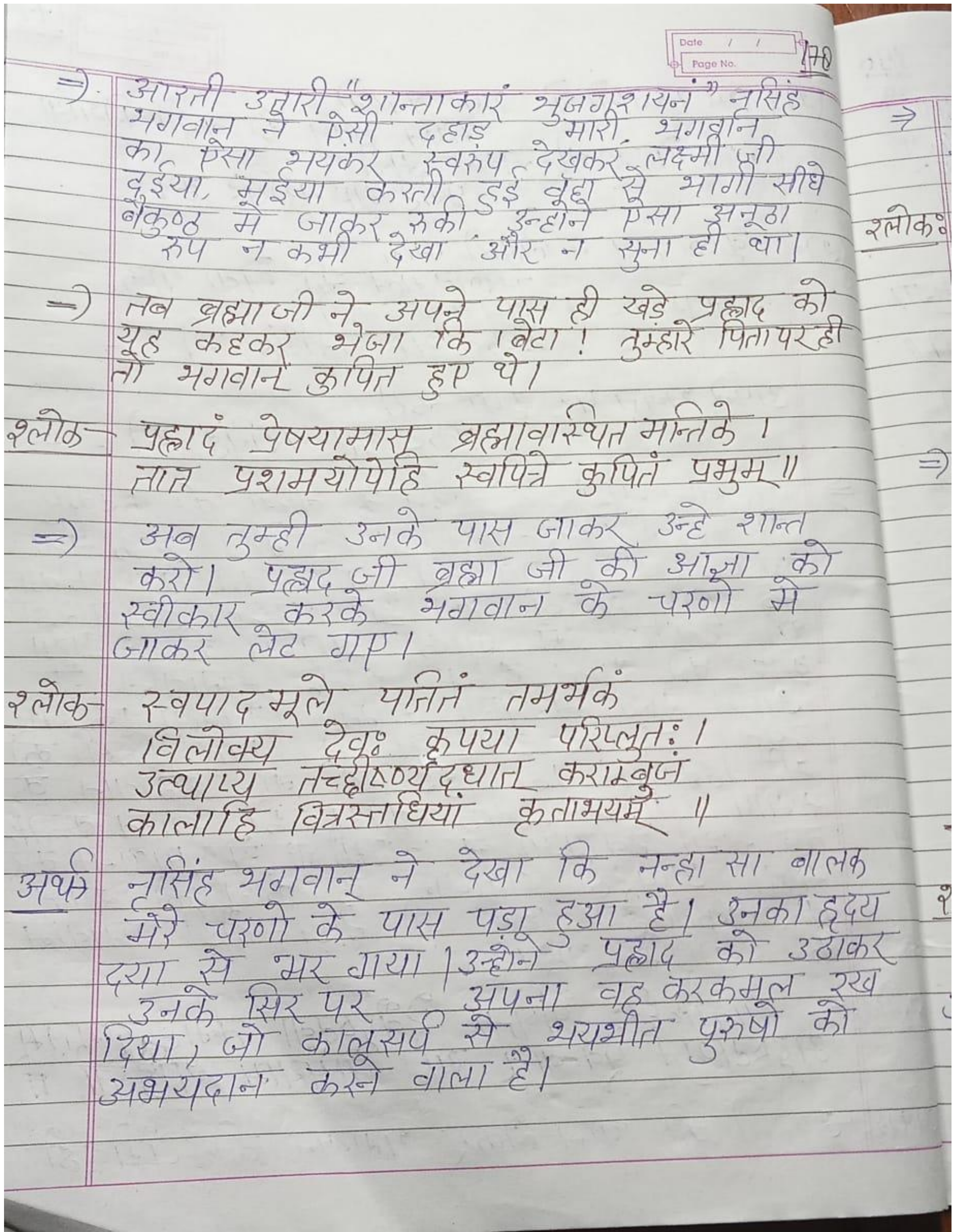
(3) कृष्णदास बलिहारी जाऊ
चरणकमल की सेवा पाऊ
सब मिल जय-जयकार करी
प्रकट भए नरसिंह हरी - -

अपने भक्त पर कृपा करी
प्रकट भए नरसिंह हरी - -

⇒ भगवान नृसिंह के गर्दन के बालो की फटकार से बादल तितर-बितर होने लगे। उनके नेत्रो की ज्वाला से सूर्य आदि ग्रहो का तेज फीका पड़ गया, भगवान का क्रोध बढ़ता ही जा रहा था, देवताओ ने जाकर प्रार्थना की हे प्रभो क्रोध को शान्त करिए, नृसिंह भगवान ने अपने मुख से ऐसी अग्नि निकाली कि सारे देवता इधर उधर भागने लगे, किसी की भी हिम्मत नही हुई कि वो भगवान के समीप जाकर उनके क्रोध को शान्त कराए तब सभी देवताओ ने लक्ष्मीजी से प्रार्थना करी माता आप ही भगवान के क्रोध को शान्त कर सकती है, लक्ष्मी जी दौड़ी-दौड़ी भगवान के चरणो मे आई।

श्लोक- साक्षाच्छ्रीः प्रेषिता देवैर्दृष्ट्वा तन्महदद्भुतम्।
अदृष्टाश्रुतपूर्वत्वात् सा नोपेयाय शङ्किता ॥

अर्थ- आरती की थाल लेकर भगवान की जैसे ही



178

=) आरती उतारी "शान्ताकारं भुजगशयनं" नृसिंह भगवान ने ऐसी दहाड़ मारी, भगवान का ऐसा भयकर स्वरूप देखकर लक्ष्मी जी दुईया, मुईया करती हुई वहां से भागी सीधे बैकुण्ठ मे जाकर रुकी उन्होंने ऐसा अनूठा रूप न कभी देखा और न सुना ही था।

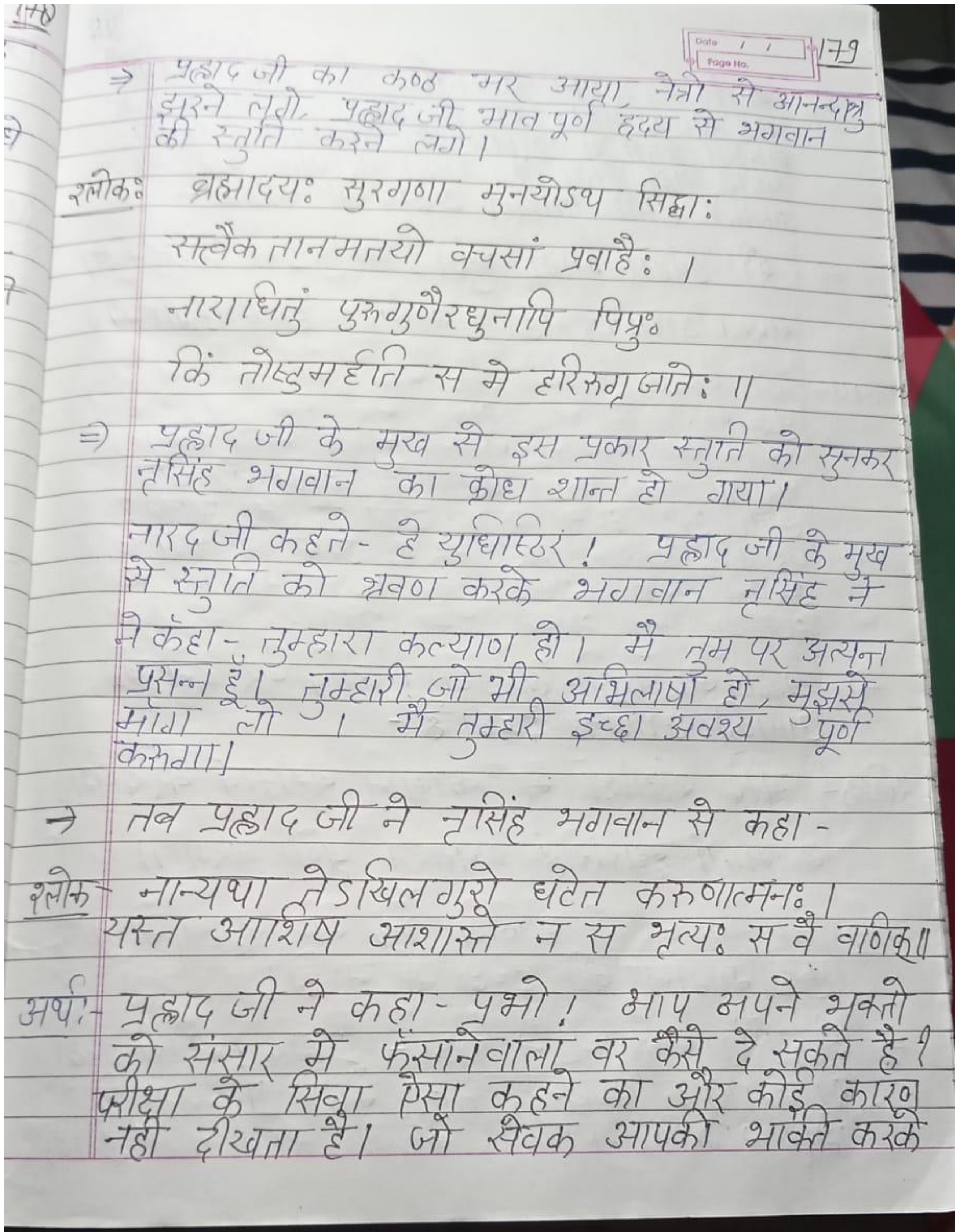
=) तब ब्रह्मा जी ने अपने पास ही खड़े प्रह्लाद को यह कहकर भेजा कि 'बेटा! तुम्हारे पिता पर ही तो भगवान कुपित हुए थे।

श्लोक- प्रह्लादं प्रेषयामास ब्रह्मावस्थित मन्तिके।
तात प्रशमयोपेहि स्वपित्रे कुपितं प्रभुम॥

=) अब तुम्ही उनके पास जाकर उन्हे शान्त करो। प्रह्लाद जी ब्रह्मा जी की आज्ञा को स्वीकार करके भगवान के चरणो मे जाकर लेट गए।

श्लोक- स्वपाद मूले पतितं तमर्भकं
विलोक्य देवः कृपया परिप्लुतः।
उत्थाप्य तच्छीर्ष्ण्यदधात् कराम्बुजं
कालाहि वित्रस्तधियां कृताभयम्॥

अर्थ- नृसिंह भगवान ने देखा कि नन्हा सा बालक मेरे चरणो के पास पड़ा हुआ है। उनका हृदय दया से भर गया। उन्होंने प्रह्लाद को उठाकर उनके सिर पर अपना वह करकमल रख दिया, जो कालसर्प से भयभीत पुरुषो को अभयदान करने वाला है।



179

→ प्रह्लाद जी का कण्ठ भर आया, नेत्रों से आनन्दाश्रु झरने लगे, प्रह्लाद जी भाव पूर्ण हृदय से भगवान की स्तुति करने लगे।

श्लोकः ब्रह्मादयः सुरगणा मुनयोऽथ सिद्धाः
सत्त्वैकतानमतयो वचसां प्रवाहैः।
नाराधितुं पुरुगुणैरधुनापि पिप्रुः
किं तोष्टुमर्हति स मे हरिरुग्रजातेः॥

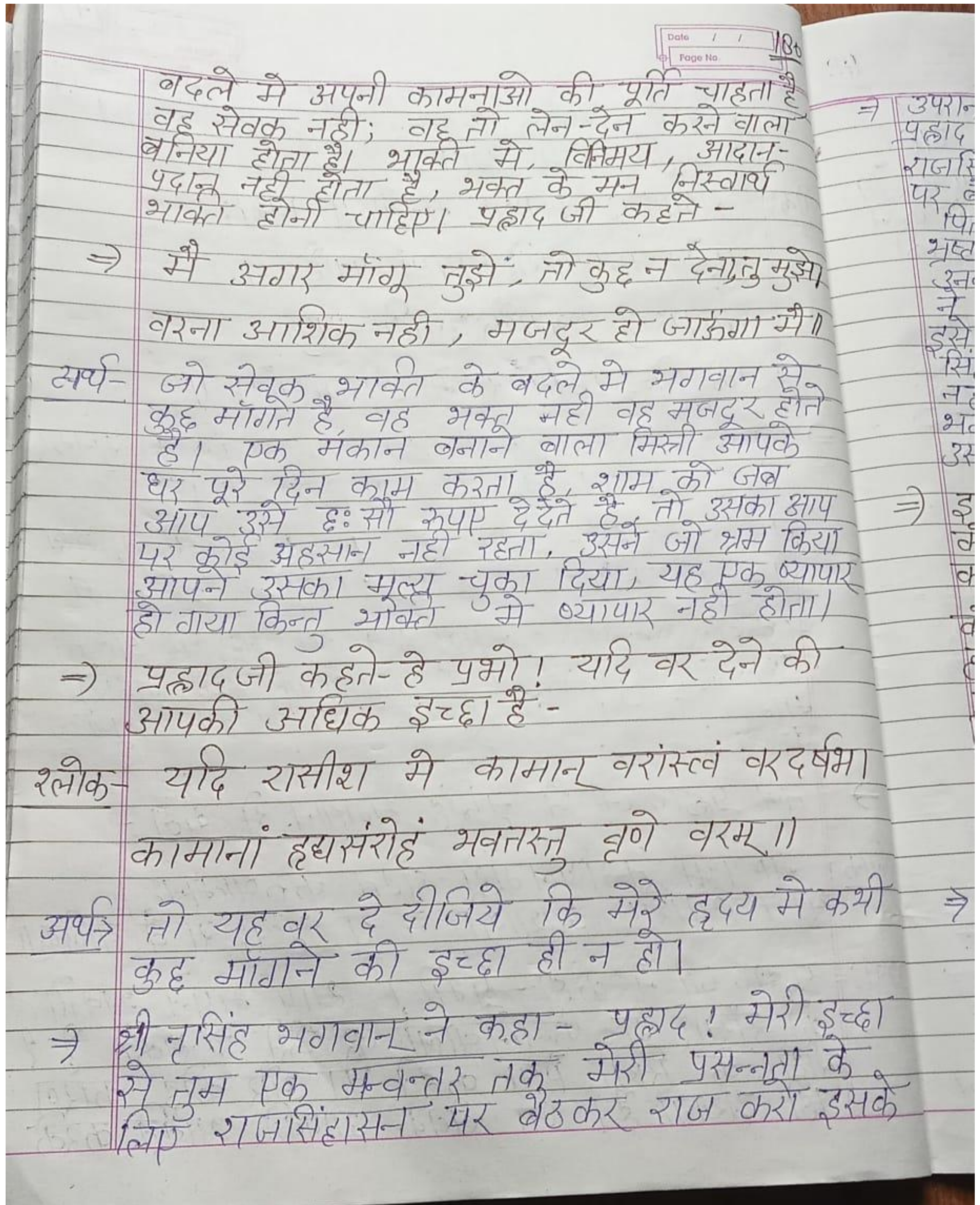
⇒ प्रह्लाद जी के मुख से इस प्रकार स्तुति को सुनकर नृसिंह भगवान का क्रोध शान्त हो गया।

नारद जी कहते- हे युधिष्ठिर! प्रह्लाद जी के मुख से स्तुति को श्रवण करके भगवान नृसिंह ने ने कहा- तुम्हारा कल्याण हो। मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो भी अभिलाषा हो, मुझसे मांग लो। मैं तुम्हारी इच्छा अवश्य पूर्ण करूंगा।

→ तब प्रह्लाद जी ने नृसिंह भगवान से कहा-

श्लोक नान्यथा तेऽखिलगुरो घटेत करुणात्मनः।
यस्त आशिष आशास्ते न स भृत्यः स वै वणिक्॥

अर्थः- प्रह्लाद जी ने कहा- प्रभो! आप अपने भक्तों को संसार में फंसाने वाला वर कैसे दे सकते हैं? परीक्षा के सिवा ऐसा कहने का और कोई कारण नहीं दीखता है। जो सेवक आपकी भक्ति करके


180

बदले मे अपनी कामनाओ की पूर्ति चाहता है
वह सेवक नही; वह तो लेन-देन करने वाला
बनिया होता है। भक्ति मे, विनिमय, आदान-
प्रदान नही होता है, भक्त के मन निस्वार्थ
भक्ति होनी चाहिए। प्रह्लाद जी कहते -

⇒ मै अगर मांगू तुझे, तो कुछ न देना तु मुझे
वरना आशिक नही, मजदूर हो जाऊंगा मै॥

अर्थ- जो सेवक भक्ति के बदले मे भगवान से कुछ मांगते है, वह भक्त नही वह मजदूर होते है। एक मकान बनाने वाला मिस्त्री आपके घर पूरे दिन काम करता है, शाम को जब आप उसे छः सौ रुपए दे देते है, तो उसका आप पर कोई अहसान नही रहता, उसने जो श्रम किया आपने उसका मूल्य चुका दिया, यह एक व्यापार हो गया किन्तु भक्ति मे व्यापार नही होता।

⇒ प्रह्लादजी कहते- हे प्रभो! यदि वर देने की आपकी अधिक इच्छा है -

श्लोक- यदि रासीश मे कामान् वरांस्त्वं वरदर्षभ।
कामानां हृद्यसंरोहं भवतस्तु वृणे वरम्॥

अर्थ- तो यह वर दे दीजिये कि मेरे हृदय मे कभी कुछ मांगने की इच्छा ही न हो।

⇒ श्री नृसिंह भगवान ने कहा- प्रह्लाद! मेरी इच्छा से तुम एक मन्वन्तर तक मेरी प्रसन्नता के लिए राजसिंहासन पर बैठकर राज करो इसके

⇒ उपरान्त मेरे पार्षद बनकर सदैव मेरे साथ रहना। प्रह्लाद जी ने नृसिंह भगवान से कहा प्रभो मैं इस राजसिंहासन पर नहीं बैठूगा, जो भी इस सिंहासन पर बैठता है, उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है, पिता जी इस सिंहासन पर बैठे उनकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई, चाचा जी इस सिंहासन पर बैठे उनकी भी बुद्धि भ्रष्ट हो गई, नृसिंह भगवान ने प्रह्लाद जी से कहा मैं इस सिंहासन पर बैठकर इसे पवित्र कर देता हूँ, इसके उपरान्त मे इस सिंहासन पर बैठकर किसी की भी बुद्धि दूषित नहीं होगी। जिस दिन प्रथम बार नृसिंह भगवान हिरण्यकशिपु के आसन पर बैठे उसी दिन से इसका नाम सिंहासन पड़ गया।

⇒ इसके उपरान्त मे नृसिंह भगवान ने प्रह्लाद जी को राजसिंहासन पर बैठाकर उनका राज्याभिषेक कर दिया, राजसिंहासन पर बैठकर प्रह्लाद जी को अपने पिता की याद आ गई। उन्होने हाथ जोड़कर श्री नृसिंह भगवान से कहा - प्रभो! मैं आपसे एक वर मांगना चाहता हूँ। मेरे पिता ने आपके ईश्वरीय तेज को न जानकर आपकी बड़ी निन्दा की है। इस विष्णु ने मेरे भाई को मार डाला है, ऐसी मिथ्यादृष्टि रखने के कारण उन्होंने आपसे बैर किया।

⇒ दीनबन्धो! यद्यपि आपकी दृष्टि पड़ते ही वे पवित्र हो चुके है, फिर भी मैं आपसे प्रार्थना करता हूँ, कि उस जल्दी नाश न होने वाले दुस्तर दोष से मेरे पिता शुद्ध हो जायें।

182

=> नृसिंह भगवान प्रह्लाद जी के मुख से इस प्रकार के वचन सुनकर प्रसन्न हो गए।

=> श्रीभगवान ने कहा- प्रह्लाद! पुत्र हो तो तुम्हारे जैसा हो, जिस पिता ने (मेरा नाम स्मरण) करने के कारण तुम्हे इतने कष्ट दिए तुम उसकी भी मुक्ति चाहते हो।

=> बन्धुओ प्रह्लाद जीने पुत्र होने का पूर्ण दायित्व निभाया, प्रत्येक पुत्र को अपने माता के प्रति जो उत्तरदायित्व होते हैं उनको पूर्ण निष्ठा से निभाना चाहिए, जो पुत्र अपने दायित्वो को नही निभा पाते उनको पुत्र कहलाने का अधिकार नही।

=> पुत्र किसे कहते है?

=> पुत्र दो शब्दो के मेल से बना है। पु + त्र = पुत्र। अर्थात पु शब्द पुंसिक नामक नरक से लिया गया है, त्र - त्राहि से लिया गया है। जो पुत्र-

=> ॥ पुन्नाम नरकात त्रायते इति पुत्रः ॥

अपने पिता की नरको से रक्षा करता है, एवं उनके मोक्ष के लिए सत्कर्म करता है, वही पुत्र कहलाने के योग्य है। मातृ और पितृ ऋण से मुक्त होने के लिए शास्त्रो मे तीन बाते मुख्य बताई गई है।

(1) जीवित अवस्था मे माता पिता की आज्ञा का पालन करना।

(2) गया मे पिंडदान करना, भागवत कथा का श्रवण पान करना।

(3) माँता पिता के निमित्त ब्राह्मण, दरिद्र, असहाय आदि को भोजन और दान करना, उनकी मद्द (सहायता) करना।

=) श्री नृसिंह भगवान ने कहा- प्रह्लद! तुम्हारे जैसा पुत्र जिस घर मे जन्म लेकर आयेगा, उसके पिता का तो तारण होगा ही साथ मे उसकी इक्कीस पीढ़िया तर जायेगी।

श्लोक - त्रिः सप्तभिः पिता पूतः पितृभिः सह तेऽनघ। यत् साधोऽस्य गृहे जातो भवान्वै कुलपावनः॥

अर्थ - बन्धुओ जिनके घर मे भगवद् भक्त जन्म लेकर आता है, उसकी इक्कीस पीढ़िया तर जाती है, प्रह्लाद जी की वजह से उनके पिता का तो तरण-तारण हुआ ही साथ मे उनकी इक्कीस पीढ़ियो का भी तरण-तारण हो गया।

= बन्धुओ नृसिंह भगवान इस प्रकार प्रह्लाद पर कृपा करके वँहा से चले गए। श्री प्रह्लाद जी ने एक मन्वन्तर तक पिता जी के राजसिंहासन पर बैठकर सुख भोगा।

चौ० नाम जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू।
भगत सिरोमनि भे प्रह्लादू॥

> अन्त मे शरीर छोड़कर भगवान के धाम चले गए और उनके पार्षद बनकर कभी अलग न होने वाली सेवा प्राप्त करके, सदा के लिए प्रभु

अष्टम स्कन्ध
मन्वन्तरों की कथा

Date / /
Page No 189

की शरणागति ग्रहण की।

⇒ सप्तम स्कन्ध के अन्तिम पांच अध्यायों मे गृहस्थों के लिए मोक्ष धर्म, मानव धर्म, वर्णधर्म और स्त्री धर्म का निरुपण किया गया है इसलिए इसे धर्म पन्चाध्यायी भी कहा जाता है।

⇒ अष्टम स्कन्ध के 24 अध्यायों मे मन्वन्तरो का वर्णन किया गया है। परीक्षित जी ने कहा- गुरुदेव! मन्वन्तर किसे कहते है? किस मन्वन्तर मे कौन मनु हुए? किस मन्वन्तर मे भगवान्ने कौन सा अवतार लिया? विस्तार से श्रवण कराए।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते - परीक्षित! प्रत्येक मन्वन्तर एक विशेष मनु द्वारा रचित एवं शासित होता है। जिन्हे ब्रह्मा द्वारा सृजित किया जाता है। मनु विश्व की और सभी प्राणियों की उत्पत्ति करते है, जो कि उनकी आयु की अवधि तक बनती और चलती रहती है। मनु की मृत्यु के उपरांत ब्रह्मा फिर एक नये मनु की सृष्टि करते है, जो कि फिर से सभी सृष्टि करते है। इसके साथ साथ विष्णु भी आवश्यकता अनुसार समय समय पर अवतार लेकर इसकी संरचना और पालन करते है। इनके साथ ही हर मन्वन्तर मे एक नये इन्द्र और सप्तर्षि भी नियुक्त होते है।

① सतयुग ⇒ 1728000 वर्ष
② त्रेतायुग ⇒ 1296000 वर्ष
③ द्वापरयुग ⇒ 864000 वर्ष
④ कलियुग ⇒ 432000 वर्ष

= चार युगो की → 1 चतुर्युगी (स०+त्रे०+द्वा+क०)
= 71 चतुर्युगी → 1 मन्वन्तर
= 14 मन्वन्तर → 1 कल्प
= 1 कल्प का → ब्रह्मा जी का एक दिन
= 1 कल्प की → ब्रह्मा जी की एक रात्रि

⇒ इस प्रकार से ब्रह्मा जी की 100 वर्ष की आयु होती है।

⇒ जब ब्रह्मा जी के 100 वर्ष पूर्ण हो जाते है तब भगवान विस्णु की पलक झपकती है। जब भगवान स्वास खीचते है, तब सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भगवान के उदर मे प्रवेश कर जाता है। और जब भगवान स्वास स्वास छोडते है, तो उनकी नासिका से हजारो, करोडो ब्रह्माण्ड निकलते है।

⇒ 14 मन्वन्तरो के 14 मनु –
1- स्वायम्भुव मनु
2- स्वारोचिष
3- उत्तम औत्तमी

Date / / Page No. 181

4- तामस
5- रैवत
6- चाक्षुष
7- वैवस्वत (श्राद्धदेव)
8- सावर्णि मनु
9- दक्ष सावर्णि मनु
10- ब्रह्मसावर्णि मनु
11- धर्म सावर्णिक मनु
12- रुद्र पुत्र सावर्णि मनु
13- रुचि मनु
14- भौम मनु

⇒ चौदह मनु और उनके मन्वन्तर को मिलाकर एक कल्प बनता है। प्रत्येक कल्प के अन्त मे प्रलय आती है। जिसमे ब्रह्माण्ड का संहार हो जाता है। इसके उपरान्त सृष्टिकर्ता ब्रह्मा फिर से सृष्टि रचना आरम्भ करते है। यह सब एक अंतहीन प्रक्रिया या चक्र मे होता रहता है।

सृष्टि कि कुल आयु : 4320000000 वर्ष है। इसे कुल 14 मन्वन्तरो मे बाँटा गया है। वर्तमान मे 7 वे मन्वन्तर अर्थात् वैवस्वत मनु चल रहा है, इस से पूर्व 6 मन्वन्तर जैसे

187

⇒ स्वायम्भुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष बीत चुके हैं, और आगे सावर्णि आदि 7 मन्वन्तर भोगेंगे।

⇒ एक चतुर्युगी की आयु -

सतयुग - 1728000

त्रेता - 1296000

द्वापर - 864000

कलियुग - 432000

4320000 एक चतुर्युगी

⇒ एक मन्वन्तर की आयु -

1 मन्वन्तर मे - 71 चतुर्युगी

1 मन्वन्तर की आयु = 71 X 4320000 (एक चतुर्युगी)

306,720,000 // वर्ष

⇒ 6 मन्वन्तर बीत गए है। इसलिए 6 मन्वन्तर की कुल आयु =

6 X 306720000 (1 मन्वन्तर की सम्पूर्ण आयु)

= 1840320000

Date / / Page No 188

⇒ वर्तमान मे वैवस्वत मनु है। सातवा मन्वन्तर चल रहा है।

⇒ कश्यप, अत्रि, वशिष्ठ, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, भरद्वाज इस मन्वन्तर के सप्तर्षि है।

⇒ इक्ष्वाकु, मान्धाता, सत्यव्रत (त्रिशंकु) हरिश्चन्द्र, रोहित, सगर, अंशुमान, दिलीप, भगीरथ, खट्वांग, अज, दशरथ, भगवान राम, लव और कुश, भगवान कृष्ण इस मन्वन्तर के विशिष्ट व्यक्तित्व है।

⇒ इस वैवस्वत मन्वन्तर के भोग मे यह 28 वीं चतुर्युगी है, इस 28वीं चतुर्युगी मे 3 युग अर्थात- सतयुग, त्रेतायुग, द्वापर युग बीत चुके है, और वर्तमान मे कलियुग का 5115 वा वर्ष चल रहा है।

⇒ 27 चतुर्युगी की कुल आयु = 27 × 4320000 (एक चतुर्युगी)

= 116640000

⇒ 28 वे चतुर्युगी के सतयुग, द्वापर, त्रेतायुग और कलियुग की 5115 की जो आयु बीत गई है।

| | | |
|---|---|---|
| सतयुग | – | 1728000 |
| त्रेता | – | 1296000 |
| द्वापर | – | + 864000 |
| कलियुग | – | 5115 |
| | | 3893115 वर्ष (बीत गए) |

= इस प्रकार वर्तमान मे 28 वे चतुर्युगी के कलियुग की 5115 वे वर्ष तक की कुल आयु = 27 वे चतुर्युगी की कुल आयु + 3893115

⇒ 27 चतुर्युगी की कुल = 116640000
28 वे चतुर्युगी के कलयुग की 5115 वर्ष तक की आयु 3893115
120533115

⇒ इस प्रकार 120533115 वर्ष बीत चुके है

⇒ 120533115 वर्ष इस प्रकार जो बीत चुके है =

6 मन्वन्तर की कुल आयु + 7 वे मन्वन्तर के 28 वीं चतुर्युगी के कलियुग की 5115 वे वर्ष तक की आयु =

6 मन्वन्तर की कुल आयु = 1840320000
+ 120533115
1960853115 वर्ष

Date / / Page No 190

⇒ अब इसमे प्रत्येक चतुर्युग के संधि काल के समय जो षष्ठांश के बराबर होता है, तथा कल्पो के प्रारम्भ और अन्त की सन्ध्या के काल समय जो एक संध्या काल एक त्रेता युग के बराबर होता है, को जोड़ ले। अतः वर्तमान मे 1972949120 वा वर्ष चल रहा है। और बचे हुए 2347050880 वर्ष भोगने है, जो इस प्रकार है।

⇒ सृष्टि की बची हुई आयु = सृष्टि की कुल आयु − 1972949119 =

⇒ सृष्टि की कुल आयु − 4320000000

⇒ वर्तमान वर्ष − −1972949119

2347050881 वर्ष

Note − गणना लिंग और स्कंध इत्यादि पुराणो से ली गई है।

⇒ शुकदेव जी कहते − परीक्षित? चौथे (तामस) मन्वन्तर मे हरि मेधा ऋषि की पत्नी हरिणी के गर्भ से हरि के रूप मे भगवान ने अवतार ग्रहण किया।

⇒ इसी अवतार मे उन्होने ग्राह से गजेन्द्र की रक्षा की थी।

⇒ राजन परीक्षित ने पूछा − मुनिवर! हम आपसे यह सुनना चाहते है कि भगवान ने गजेन्द्र को ग्राह के फंदे से कैसे छुड़ाया था।

-: अष्टम स्कन्ध :-

-: गजेन्द्र मोक्ष :-



⇒ श्री शुकदेव जी ने कहा - परीक्षित! क्षीरसागर मे त्रिकूट नाम का एक प्रसिद्ध सुन्दर एवं श्रेष्ठ पर्वत था।

श्लोक- आसीद् गिरिवरो राजंस्त्रिकूट इति विश्रुतः।
क्षीरोदेनावृतः श्रीमान्यो जनायुत मुच्छ्रितः ॥

⇒ उस पर्वत के घोर जंगल मे बहुत सी हाथिनियो के साथ एक गजेन्द्र निवास करता था। वह बड़े-बड़े शक्तिशाली हाथियो का सरदार था। उसके अन्दर दस हजार हाथियो का बल था।

श्लोक- यद् गन्ध मात्राद्धरयो गजेन्द्रा
व्याघ्रादयो व्यालमृगाः सखड्गाः

⇒ गजेन्द्र जब अपनी पत्नियो और बच्चो के साथ भ्रमण के लिए निकलता था, तो उसकी गन्धमात्र से सिंह, हाथी, बाघ, गैंडे, आदि डरकर भागा जाया करते थे।

= एक दिन गजेन्द्र अपनी सभी पत्नियो और बच्चो के साथ भ्रमण पर निकला, धूप बहुत तेज थी, छोटे, छोटे बच्चो को प्यास लगी, व्याकुल हुए बच्चो को देखकर गजेन्द्र सरोवर की और चल पड़ा।

⇒ सरोवर मे पहुचकर सभी बच्चो ने जल पिया। गजेन्द्र सरोवर मे प्रवेश करके पहले तो जल पिया, फिर अपनी थकान मिटाई।

⇒ गजेन्द्र गृहस्थ पुरुषो की भांति मोहग्रस्त होकर अपनी सूंड से जल की फुहारे छोड़ - छोड़कर साथ की हथिनियो और बच्चों को नहलाने लगा, तथा उनके मुंह मे सूंड डालकर जल पिलाने लगा।

⇒ उसी समय प्रारब्ध की प्रेरणा से एक बलवान ग्राह ने क्रोध मे भरकर उसका पैर पकड़ लिया। पहले तो गजेन्द्र को लगा कि कोई छोटा, मोटा जलीय जीव होगा जिसे मेरे ताकत का अंदाजा नही है।

⇒ किन्तु कुछ देरबाद वह ग्राह बलपूर्वक गजेन्द्र को जल के भीतर खीचने लगा इस प्रकार अकस्मात विपत्ति मे पड़कर उस बलवान गजेन्द्र ने अपनी शक्ति के अनुसार अपने को छुड़ाने की बड़ी चेस्टा की परन्तु छुड़ा न सका।

⇒ अपना सम्पूर्ण बल लगाकर भी जब गजेन्द्र अपने आप को उस ग्राह से मुक्त नही करा पाया, तब इस संकट की घड़ी मे उसने अपनी पत्नियो और बच्चों पुकारा।

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ गजेन्द्र की सभी पत्नियो और बच्चो ने सूड़ मे सूड़ मिलाकर अपने स्वामी को बाहर खींचने का प्रयास किया, किन्तु उनका ये प्रयास निरर्थक हो गया। जब गजेन्द्र की पत्नियो और बच्चो ने देखा कि स्वामी के साथ-साथ वह भी सरोवर के भीतर खिंचकर जा रहे है, तो उन्होंने गजेन्द्र को अकेला ही उस सरोवर मे छोड़ दिया।

⇒ गजेन्द्र की पत्नियो और बच्चो ने कहा स्वामी हमने सारे प्रयास करके देख लिए, किन्तु सारे प्रयास निष्फल हो गए, लगता है आपका अन्तिम समय आ गया है। यदि हमलोग ज्यादा प्रयास करेगे, तो हम भी आपके साथ काल के ग्रास बन जायेगे। इतना कहकर वह गजेन्द्र को अकेला छोड़कर जाने लगे।

⇒ संकट की घड़ी मे अकेला छोड़कर जाते पत्नियो और बच्चो से गजेन्द्र ने कहा तुम मुझे इस प्रकार अकेला छोड़कर कैसे जा सकते हो. मैंने अपना सारा जीवन तुम्हारे लिए गंवा दिया, तुम्हारे लिए मैंने नीति और अनीति दोनो मार्गों को अपनाया ताकि तुम्हे सुख दे सकु, जिनके मोह मे फंसकर मैंने अपना जीवन गंवा दिया, वही संकट की घड़ी मे मुझे छोड़कर जा रहे है।

194

⇒ बन्धुओ जब तक जीवन मे दुःख नही आता तब तक हम इस संसार मे पत्नी बच्चे इन सभी से प्रेम करके मोह मे पड़े रहते है, किन्तु जिस समय जीवन मे दुःख आता है और उस दुःख की घड़ी मे आप अपने आप को अकेला पाते है तब आपको संसार का वास्तविक स्वरूप समझ मे आता है।

⇒ जब आपको संसार का वास्तविक स्वरूप समझ आता है, तब तक बहुत देर हो गई होती है।

⇒ अब पछताए होत क्या । जब चिड़िया चुग गई खेत॥

⇒ समय निकल जाने पर आपको संसार का वास्तविक स्वरूप समझ आया तो क्या फायदा ? जैसे मकान की नीव कमजोर होगी तो मकान कब ढह जाए कोई पता नही, इसी प्रकार यदि बचपन से महापुरुषो के चरणो मे बैठकर संसार के वास्तविक स्वरूप को नही समझा, तो पता नही कब इस संसार रूपी अन्ध कूप मे गिरकर आपका जीवन नष्ट हो जाए। बन्धुओ भगवान और भक्त की चर्चा के अलावा जो भी चर्चा करते है, वह सब विषय ही है, जो जीव संसार मे आकर विषय वासनाओ मे फंस जाता है, उसको इस संसार से

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ मुक्त होना बड़ा कठिन है। मै तो कहता हू हमे दुःख को धन्यवाद देना चाहिए जब भी आता है, हमे संसार के वास्तविक स्वरूप का दर्शन कराता है।

⇒ गोस्वामी जी कहते है -

चौ०- धीरज धर्म मित्र अरु नारी।
आपद काल परिखिअहिं चारी॥

⇒ धैर्य, धर्म, मित्र, और स्त्री - इन चारो की विपत्ति के समय ही परीक्षा होती है।

उदाहरण - गजराज ने जिन स्त्री, पुत्र आदि के लिए अपने समस्त जीवन को गवा दिया संकट की घड़ी मे वह सभी उसे छोड़कर चले गए यही संसार का वास्तविक स्वरूप है।

Ex - एक बार एक महात्मा ने एक शिष्य को गुरु दीक्षा देकर कहा बेटा आज से तुम मेरे शिष्य बन गए हो, इसलिए आश्रम मे नित्य, 4 से 5 बजे (शाम) मे जो सत्संग होता है, उसमे अवश्य आया करो। शिष्य ने कहा जी गुरुजी अवश्य आऊगा।

⇒ अगले दिन जैसे ही शाम के 4 बजे तो चेला जी सत्संग मे जाने के लिए तैयार हो गए जैसे ही घर से बाहर निकले, इतने मे माता जी ने आवाज लगाई बेटा, ओ बेटा अब चेला जी सत्संग मे मे तो जाना भूल गए, माता जी ने कोई कार्य बता

196

⇒ बता दिया, चेला जी उसी मे फँस गए कार्य पूर्ण करके जब फुर्सत हुए तो देखा घड़ी मे 5 बजने मे 10 मिनट शेष थे।

⇒ चेलाजी शीघ्रतापूर्ण आश्रम पँहुचे तो देखा वहा आरती हो रही है, गुरुजी ने पूछा बेटा, इतनी देर कैसे हो गई आने मे चेला जी बोले, क्या बताए गुरु जी जैसे ही मै सत्संग मे आने को तैयार होकर घर से बाहर निकला तो हमारी माता जी ने हमे एक कार्य बता दिया, अब माता जी की बात को टाल भी नही सकते है क्यो कि वह बहुत प्रेम करती है हमसे, इसलिए आज सत्संग मे आने मे विलंब हो गया।

⇒ गुरु जी ने कहा पुत्र कोई बात नही, कल से समय से आना, अगले दिन चेला जी जैसे ही सत्संग मे जाने को तैयार हुए, पत्नी ने कोई कार्य बता दिया चेला जी जबतक उस कार्य को पूरा करके आश्रम पँहुचे देखा आरती हो रही है। गुरु जी ने कहा बेटा मैने कहा था समय से आना फिर आज देरी कैसे कर दी? चेला क्या बताए गुरु जी आज जैसे ही मै सत्संग मे आने को तैयार हुआ, वैसे ही मेरी पत्नीने एक कार्य बता दिया, अब उस कार्य को पूर्ण तो करना ही था, क्यो कि वह मुझसे बहुत प्रेम करती है, कार्य को पूर्ण करके जबतक मै आश्रम आया, आरती हो रही थी।

197

PAGE NO.:
DATE: / /20

= गुरु जी ने मन मे विचार किया ये मेरा शिष्य है इसलिए मेरी जिम्मेदारी बनती है कि मै इसे जगत के वास्तविक स्वरूप का दर्शन कराऊ।

= गुरु जी ने चेला जी से कहा पुत्र तुम्हारी माँ और पत्नी तुमसे कितना प्रेम करती है? चेला जी ने कहा मेरी माँ और पत्नी मुझसे कितना प्रेम करती है, यह तो नही पता, किन्तु मै इतना अवश्य जानता हूँ कि मेरे लिए वह दोनो कुछ भी कर सकती है। गुरु जी चेला जी से कहा चलो आज तुम्हारी माँ और पत्नी की परीक्षा ली जायेगी कि वह कितना प्रेम करती है।

= गुरु जी ने चेला जी से कहा पुत्र यँहा से घर जाकर चुपचाप बैड पर लेट जाना और जब पत्नी चाय का प्याला लेकर आए तो अपनी स्वास को भी रोक लेना, बिल्कुल मत बोलना, जो भी हो, होने देना, इससे आगे क्या करना है मै देख लूगा।

= चेला जी घर गए चुपचाप जाकर बैड पर लेट गए पत्नी चाय का प्याला लेकर आई, चेला जी ने नेत्र बन्द कर लिए. स्वास भी रोक ली, पत्नी ने एक, दो बार आवाज देकर जगाया जब स्वामी जी नही जगे तो उसने पास आकर जगाया, जब नाक के पास हाथ लगाकर देखा तो स्वास ही नही आ रही थी, वो जोर-जोर से रोने लगी, उसकी आवाज सुनकर घर के बाकी सदस्य भी आ गए।

⇒ सभी ने जब समीप जाकर देखा तो कहने लगे अरे ये तो शांत हो गया, जल्दी जमीन पर लो, अब चेला जी को सभी भूमि मे रखकर रोने लगे।

⇒ इतने मे गुरु जी हाथ मे एक पात्र पकड़कर सभी के मध्य आ पहुंचे। गुरु जी को देखकर सभी लोग और तेज से रोने लगे। गुरु जी ने सभी से कहा रोए मत, मेरे पास मे आपके इस बेटे को जीवित करने का एक उपाय है।

⇒ लोगो ने कहा - गुरु जी! क्या उपाय है ?

⇒ गुरु जी ने कहा, देखो मेरे हाथ मे यह एक पात्र है, और इसमे विषयुक्त दुग्ध है जो भी इस विषयुक्त दुग्ध को पान करेगा, उसकी मृत्यु हो जायेगी, और इसके बदले मे यह बालक जीवित हो जायेगा।

⇒ गुरु जी ने कहा मुझे ज्ञात है कि इस बालक से इसकी माता और पत्नी दोनो अत्यधिक प्रेम करती है, इसलिए आप दोनो मे से कोई भी इस दुग्ध का पान कर लीजिए इतना कहकर गुरु जी ने उस दुग्ध से भरे प्याले को माता जी की ओर करके कहा मईया आप तो अपने पुत्र से बहुत प्रेम करती हो अब आप इस दुग्ध को पीकर अपने पुत्र को जीवित कीजिए, मईया गुरु जी से बोली, गुरु जी बेटे का अन्त समय आ गया, इसलिए वह तो चला गया

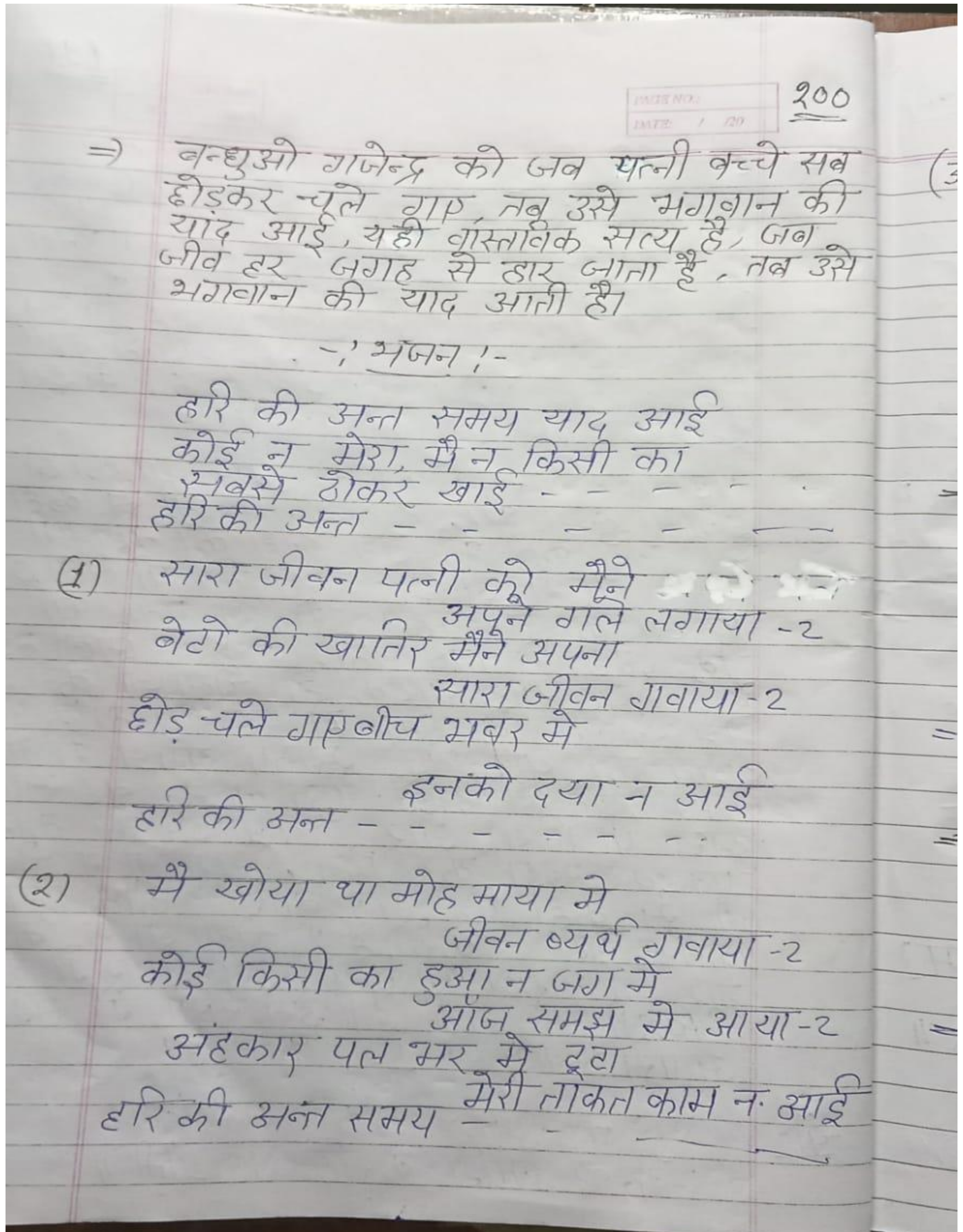
199

PAGE NO.:
DATE: / /20

=> आप हमे विषयुक्त दुग्ध पिलाकर क्यो मारना चाहते है। गुरु जी ने चेलाजी की पत्नी से कहा बेटा तुम तो अपने पति से बहुत प्रेम करती हो, तुम ही इस दुग्ध को पी लो, पत्नी ने कहा गुरु जी इनका समय तो पूर्ण हो गया, इसलिए यह तो इस संसार को छोड़कर चले गए, विधी के विधान को कौन टाल सकता है। मै इस दुग्ध का पान नही कर सकती।

=> महाराज सारा प्लान तो गुरु जी का ही बनाया हुआ था, गुरु जी ने सभी से कहा देखो यदि कोई भी इस दुग्ध को नही पी सकता, तो मै ही इस दुग्ध को पी लेता हू। गुरु जी को तो पहले से ही पता था कि दुग्ध मे विष नही, शर्करा मिली हुई है, यह सारा नाटक तो चेला जी के नेत्र खोलने के लिए हो रहा था ताकि उसे जगत का वास्तविक स्वरुप समझ मे आ जाए। देखते ही देखते गुरु जी ने वह सारा दुग्ध पी लिया और चेला जी को कान पकड़कर खड़ा कर दिया, गुरु जी ने चेला जी से कहा पुत्र अब बताओ कौन तुमसे कितना प्रेम करता है? चेला जी ने कहा गुरु जी समझ आ गया, इस संसार मे कोई किसी का नही है। इस संसार मे सभी आपसे स्वार्थ से प्रेम करते है।

चौ० सुर नर मुनि सब कै यह रीती।
स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥


200
=> बन्धुओ गजेन्द्र को जब पत्नी बच्चे सब छोड़कर चले गए, तब उसे भगवान की याद आई, यही वास्तविक सत्य है, जब जीव हर जगह से हार जाता है, तब उसे भगवान की याद आती है।
-: भजन :-
हरि की अन्त समय याद आई
कोई न मेरा, मै न किसी का
सबसे ठोकर खाई - - - - -
हरि की अन्त - - - - - -
(1) सारा जीवन पत्नी को मैने
अपने गले लगाया -2
बेटो की खातिर मैने अपना
सारा जीवन गवाया -2
छोड़ चले गए बीच भवर मे
इनको दया न आई
हरि की अन्त - - - - - -
(2) मै खोया था मोह माया मे
जीवन व्यर्थ गवाया -2
कोई किसी का हुआ न जग मे
आज समझ मे आया -2
अहंकार पल भर मे टूटा
मेरी ताकत काम न आई
हरि की अन्त समय - -

PAGE NO.: 201
DATE: / /20

(3) तुम जीवन दाता हो मेरे -2
तुम ही पालन हारे -2
जिसकी रक्षा तुम प्रभु करते
कौन उसे फिर मारे -2
बीच भवर मे तुमको पुकारु -2
आ जाओ रघुराई -2
हरि की अन्त समय — — — — — —

=) गजेन्द्र ने विचार किया संसार के लोगो से क्या सहायता मांगू? सहायता ही मांगनी है, तो मेरे गोविन्द से ही मांगू। गजेन्द्र ने अपने नेत्र बन्द कर लिए, अब उसकी शक्ति क्षीण हो रही थी, ग्राह उसे खींचकर नीचे अथाह जल मे ले जाने लगा।

= तिल भर सूड़ जब जल के ऊपर रह गई तब गजेन्द्र ने प्रभु का स्तवन किया -

=) गज और ग्राह लड़त जल भीतर,
लड़त, लड़त गज हारयो।
तिल भर सूंड़ रही जल ऊपर,
तब हरिनाम उचारयो॥

= बन्धुओ गजेन्द्र ने जो स्तुति की भगवान की उसे गजेन्द्र मोक्ष बोलते है। इस स्तुति को जो लोग ब्रह्ममुहूर्त मे जगकर ठाकुर जी के सामने गाते है, उनके सारे कष्ट कट जाते है, मृत्यु के समय भगवान उन्हे निमति

202

⇒ बुद्धि का दान करते है।

⇒ परीक्षित जी कहते - हे गुरुदेव ! गजेन्द्र तो हाथी था, उसे संकट मे भगवान की याद कैसे आई ?

⇒ शुकदेव जी कहते - राजन !

श्लोक - एवं व्यवसितो बुद्धया, समाधाय मनो हृदि।
जजाप परमं जाप्यं, प्राग्जन्मन्यनुशिक्षितम् ॥

अर्थ - पूर्व जन्म के कर्मों द्वारा उसे भगवान का स्मरण बना रहा, इसलिए पूर्वजन्म मे सीखे हुए श्रेष्ठ स्त्रोत के जप द्वारा भगवान की स्तुति करने लगा।

⇒ बन्धुओ गजेन्द्र ने भगवान की स्तुति तो की, किन्तु पूरी स्तुति मे कही भी किसी का नाम नही लिया।

श्लोक :- ॐ नमो भगवते तस्मै
यत एतच्चिदात्मकम्।
पुरुषायादि बीजाय
परेशायाभिधीमहि ॥

अर्थ - गजेन्द्र ने कहा - जो जगत के मूल कारण है, और सबके हृदय मे पुरुष के रुप मे विराजमान है, एव

PAGE NO.: 203
DATE: / /20

समस्त जगत् के एकमात्र स्वामी है, जिनके कारण इस जगत मे चेतना का विस्तार होता है - उन भगवान् को मै नमस्कार करता हूं।

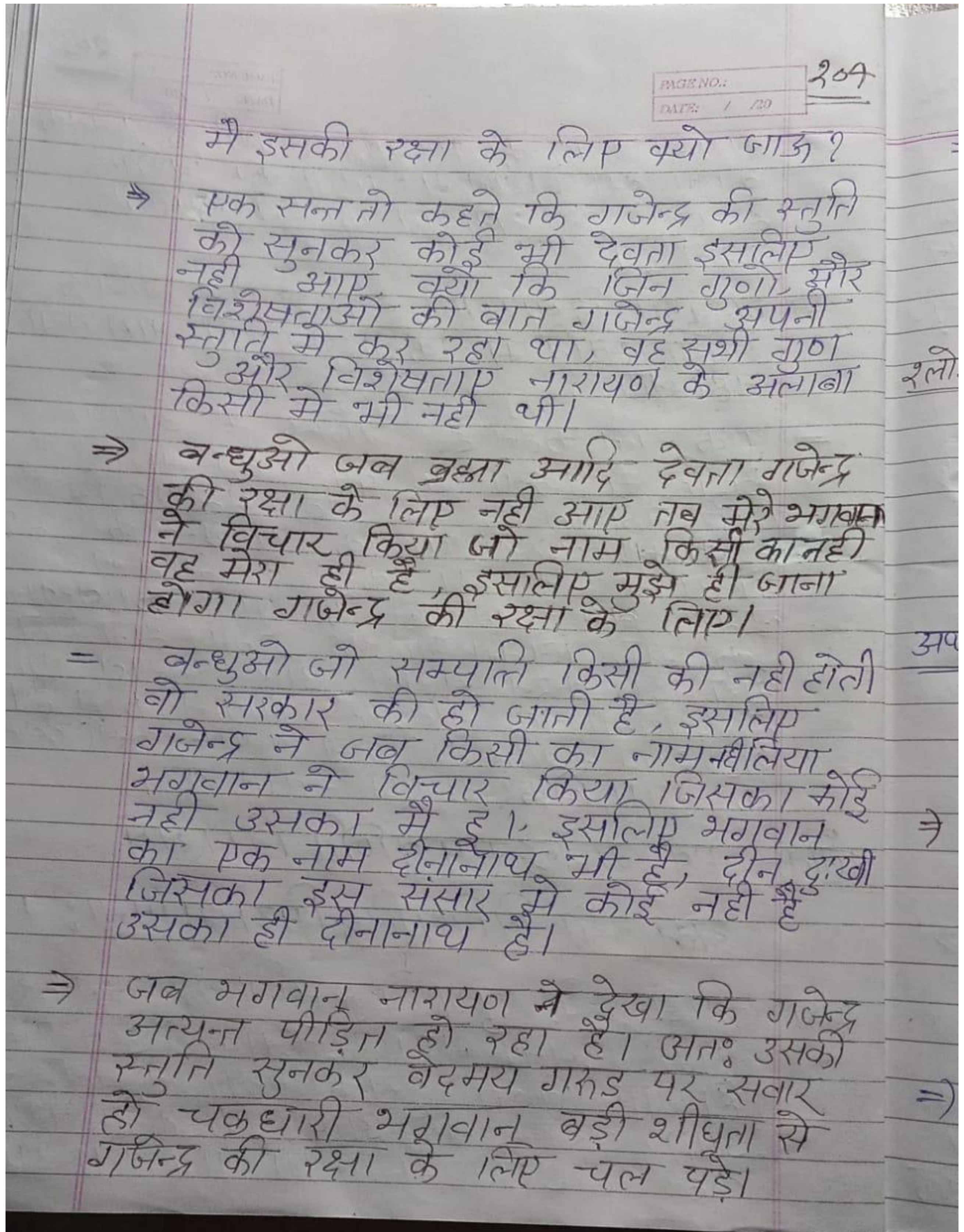
=> बन्धुओ विचारणीय बात है कि गजेन्द्र अपनी स्तुति मे किसी का भी नाम क्यो नही लेता ?

=> एक सन्त कहते है, गजेन्द्र ने अपनी स्तुति मे किसी भी देवता का नाम इस लिए नही लिया, क्यो कि वह यह जानना चाहता था कि सर्वश्रेष्ठ कौन है? मै अपनी स्तुति मे किसी का नाम नही लूगा, बस भगवान के गुणो का बखान करुगा, जिनमे भी यह गुण होगे वही मेरी रक्षा करने आयेगे, और फैसला भी हो जायेगा कि सर्वश्रेष्ठ भगवान कौन है। यही भाव रखकर गजेन्द्र ने बिना किसी देवता का नाम लिए सम्पूर्ण स्तुति की।

श्लोक- एवं गजेन्द्र मुप वर्णित निर्विशेषं

ब्रह्मादयो विविधलिङ्गभिदाभिमानाः ।

अर्थ गजेन्द्र के मुख से स्तुति को सुनकर सभी देवता नभ मे आकर उपस्थित हो गए किन्तु उसकी रक्षा के लिए नही आए, क्यो नही आए? कहते है सभी यही कहते रहे इसने मेरा नाम तो लिया नही


PAGE NO.: 204
DATE: / /20
मै इसकी रक्षा के लिए क्यो जाऊ?
⇒ एक सन्त तो कहते कि गजेन्द्र की स्तुति को सुनकर कोई भी देवता इसलिए नही आए क्यो कि जिन गुणो और विशेषताओ की बात गजेन्द्र अपनी स्तुति मे कर रहा था, वह सभी गुण और विशेषताए नारायण के अलावा किसी मे भी नही थी।
⇒ बन्धुओ जब ब्रह्मा आदि देवता गजेन्द्र की रक्षा के लिए नही आए तब मेरे भगवान ने विचार किया जो नाम किसी का नही वह मेरा ही है, इसलिए मुझे ही जाना होगा गजेन्द्र की रक्षा के लिए।
= बन्धुओ जो सम्पत्ति किसी की नही होती वो सरकार की हो जाती है, इसलिए गजेन्द्र ने जब किसी का नाम नही लिया भगवान ने विचार किया जिसका कोई नही उसका मै हू। इसलिए भगवान का एक नाम दीनानाथ भी है, दीन दुःखी जिसका इस संसार मे कोई नही है उसका ही दीनानाथ है।
⇒ जब भगवान् नारायण ने देखा कि गजेन्द्र अत्यन्त पीड़ित हो रहा है। अतः उसकी स्तुति सुनकर वेदमय गरुड पर सवार हो चक्रधारी भगवान् बड़ी शीघ्रता से गजेन्द्र की रक्षा के लिए चल पड़े।

PAGE NO: 205

⇒ सरोवर के भीतर बलवान ग्राहने गजेन्द्र को पकड़ रखा था और वह अत्यन्त व्याकुल हो रहा था। जब उसने देखा कि आकाश मे गरुड़पर सवार होकर हाथ मे चक्र लिए भगवान श्री हरि आ रहे है, तब उसने भगवान का नाम लिया।

श्लोकः सोऽन्तः सरस्यु रुबलेन गृहीत आर्तो
दृष्ट्वा गरुत्मति हरिं ख उपात्तचक्रम्।
उत्क्षिप्य साम्बुजकरं गिरमाह कृच्छ्रा
-न्नारायणा खिलगुरो भगवन् नमस्ते ॥

अर्थ- शुकदेव जी कहते- परीक्षित! गरुड़ पर सवार होकर भगवान को आता देख गजेन्द्र ने एक सुन्दर कमल पुष्प लेकर अपनी सूड़ से पकड़कर भगवान को अर्पित किया।

⇒ बन्धुओ विचारणीय बात है जिस सरोवर मे गज और ग्राह का युद्ध हो रहा हो वहा एक भी कमल शेष बचा होगा? सारे कमल तो गजेन्द्र के पैरो के नीचे आ गए होगे, फिर गजेन्द्र ने भगवान नारायण को कौन सा कमल पुष्प अर्पण किया?

⇒ भागवत के अन्य टीकाकार कहते है जब लक्ष्मी जी ने देखा कि गजेन्द्र भगवान की स्तुति कर रहा है, किन्तु उसके पास

⇒ भगवान को अर्पण करने के लिए कुछ नही है, तो उन्होने अपने हाथ के कमल को वही से गजेन्द्र को प्रदान कर दिया, उसी कमल पुष्प को भगवान को अर्पण करके उसने बड़े कष्ट से भगवान से बोला - नारायण! जगद्गुरो! भगवन्! आपको नमस्कार है।

⇒ भगवान ने देखा कि गजेन्द्र अत्यन्त पीड़ित हो रहा है, तब वे गरुड को छोड़कर कूद पड़े और कृपा करके गजेन्द्र के साथ ग्राह को भी बड़ी शीघ्रता से सरोवर से बाहर निकाल लाये।

श्लोक - तं वीक्ष्य पीडितमजः सहसावतीर्य
सग्राहमाशु सरसः कृपयोज्जहार।
ग्राहाद् विपाटित मुखा दरिणा गजेन्द्रं
संपश्यतां हरिरमूमुचदुस्त्रियाणाम् ॥

⇒ सभी देवताओं के सामने भगवान श्री हरि ने चक्र से ग्राह का मुँह फाड़ डाला और गजेन्द्र को छुड़ा लिया।

⇒ गजेन्द्र का उद्धार करके उसे अपना पार्षद बना लिया। पार्षदरूप गजेन्द्र को साथ ले गरुड़पर सवार होकर अपने अलौकिक

PAGE NO.: 207
DATE: / /20

⇒ धाम चले गए। वैकुण्ठ पँहुचकर भगवान हरि ने देखा वहा पहले से एक दिव्य पार्षद शंख, चक्र लेकर बैठा। नारायण ने लक्ष्मी जी से पूछा ये नया पार्षद कौन है? लक्ष्मी जी ने कहा स्वामी अभी-अभी जिसका आप उद्धार करके आए है, यह वही है, भगवान ने कहा देवि जिसका मै उद्धार करके आया वह तो मेरे साथ है।

⇒ तब मॉता लक्ष्मी ने कहा-स्वामी! गजेन्द्र आपका भक्त है, इसने आपके चरण पकड़े है इसलिए यह मुक्त होकर बाद मे आया, किन्तु ग्राह ने तो आपके भक्त के चरण पकड़े है, इसलिए मुक्त होकर पहले ही यहा आ गया, इसलिए महापुरुष कहते भगवान के चरण पकड़कर मुक्ति मिलेगी कि नही यह तो नही पता, किन्तु भगवान के भक्तो के चरण पकड़कर मुक्ति मिलेगी ये कन्फर्म (निश्चित) है। इसलिए हम सभी को भगवान के भक्तो की चरण शरण ग्रहण करनी चाहिए।

= महापुरुष कहते-

दोहा- पाप करे ते हरि मिलै, पाप करे ते चैन।
पाप करे सब कछु मिलै, पाप करो दिन-रैन॥

→ पाप करने से हरि मिलते, पाप करने से

२०8

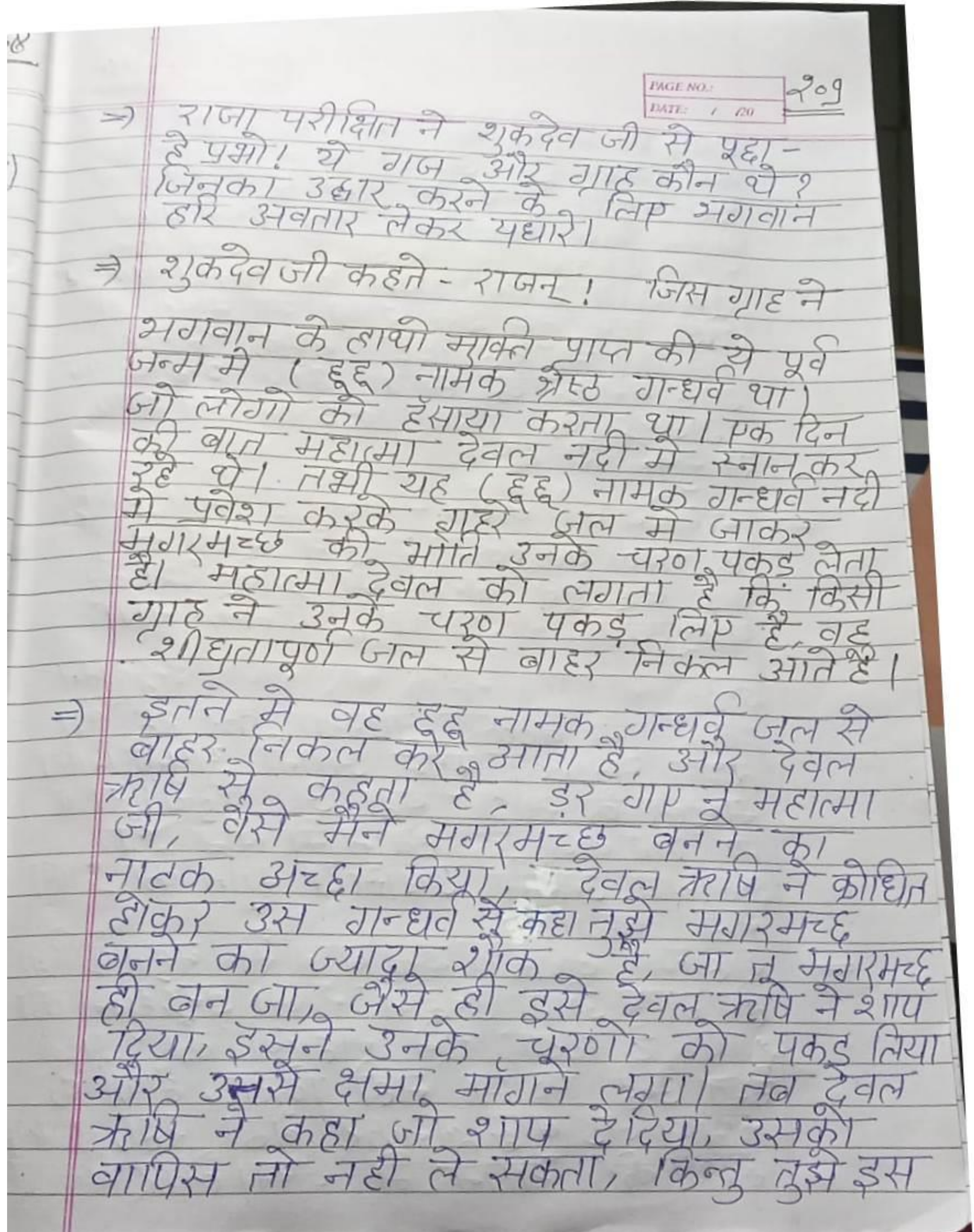
⇒ शान्ती मिलती है, पाप करने से सब कुछ मिलता है, इसलिए दिन रात पाप करना चाहिए। कुछ लोग तो इसका यही (गलत) अर्थ समझ लेते है।

⇒ इसका सही अर्थ है-

पा (प+करे) ते हरि मिलै
पा (प+करे) तैं चैन।
पा (प+करे) सब कछु मिलै
पा (प+करो) दिन रैन ॥

अर्थात- भगवान के भक्तो के पाँव पकड़ने से हरि मिलते है, पैर पकड़ने से शान्ति मिलती है, पैर पकड़ने से सब कुछ मिलता है, इसलिए दिन रात पैर पकड़ने चाहिए।

⇒ एक बात मै आपसे निवेदन करु जिन भगवान के भक्तो के चरण पकड़ने से मुक्ति मिलती है, यदि हमारे द्वारा उन्ही भक्तो का अपमान हो जाता है, तो फिर भगवान के कोप से हमे कोई नही बचा सकता, जय और विजय जो भगवान के पार्षद थे। भगवान के भक्तो का अपराध करने के कारण उन्हे भी असुर बनकर इस पृथ्वी पर आना पड़ा, इसलिए हम सभी को भक्तापराध से बचना चाहिए।

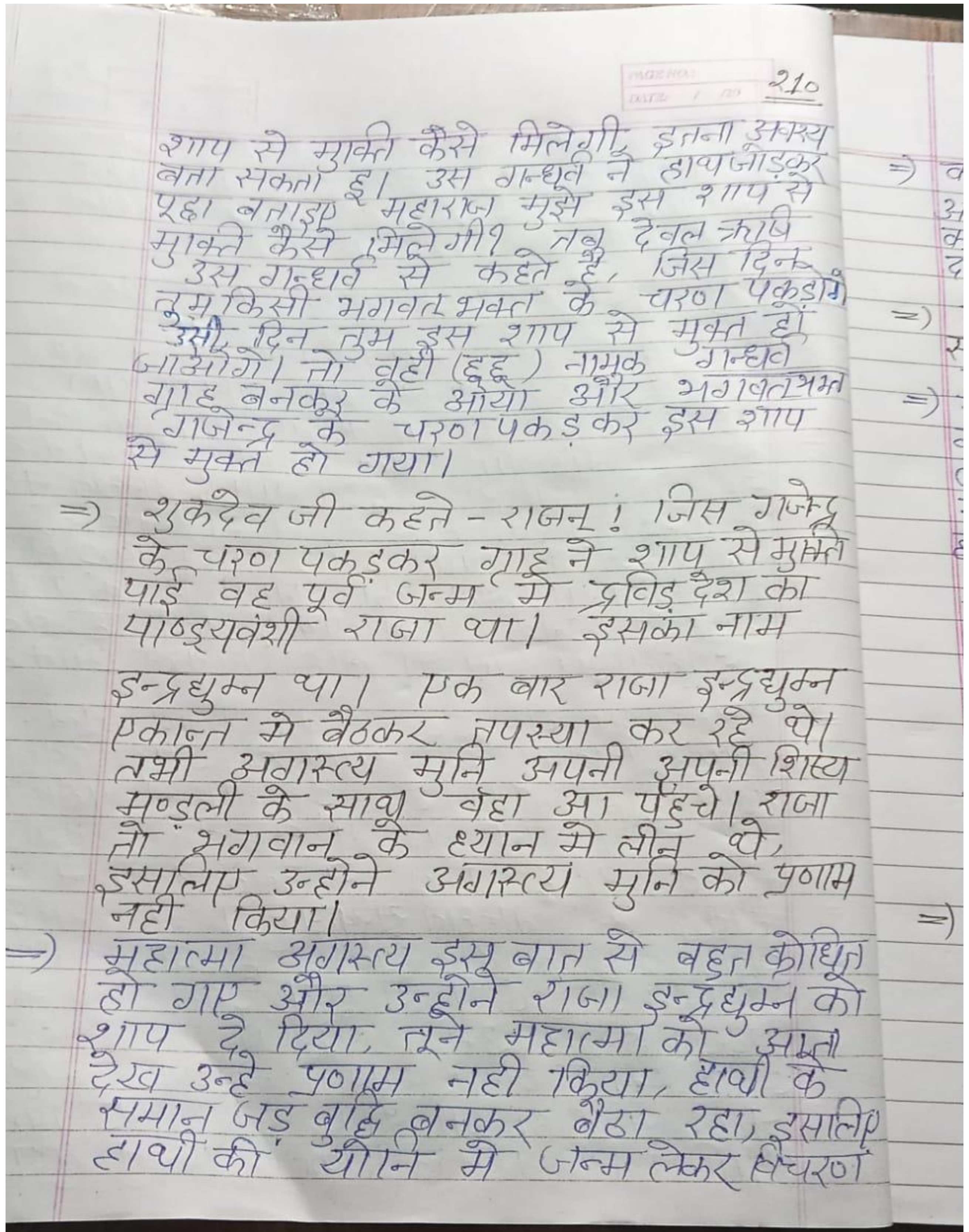


PAGE NO.: २०९

⇒ राजा परीक्षित ने शुकदेव जी से पूछा - हे प्रभो! ये गज और ग्राह कौन थे? जिनका उद्धार करने के लिए भगवान हरि अवतार लेकर पधारे।

⇒ शुकदेव जी कहते - राजन्! जिस ग्राह ने भगवान के हाथो मुक्ति प्राप्त की ये पूर्व जन्म मे (हूहू) नामक श्रेष्ठ गन्धर्व था। जो लोगो को हँसाया करता था। एक दिन की बात महात्मा देवल नदी मे स्नान कर रहे थे। तभी यह (हूहू) नामक गन्धर्व नदी मे प्रवेश करके गहरे जल मे जाकर मगरमच्छ की भाँति उनके चरण पकड़ लेता है। महात्मा देवल को लगता है कि किसी ग्राह ने उनके चरण पकड़ लिए है, वह शीघ्रतापूर्ण जल से बाहर निकल आते है।

⇒ इतने मे वह हूहू नामक गन्धर्व जल से बाहर निकल कर आता है, और देवल ऋषि से कहता है, डर गए न महात्मा जी, कैसे मैंने मगरमच्छ बनने का नाटक अच्छा किया, देवल ऋषि ने क्रोधित होकर उस गन्धर्व से कहा तुझे मगरमच्छ बनने का ज्यादा शौक है, जा तू मगरमच्छ ही बन जा, जैसे ही इसे देवल ऋषि ने शाप दिया, इसने उनके चरणों को पकड़ लिया और उनसे क्षमा मांगने लगा। तब देवल ऋषि ने कहा जो शाप दे दिया, उसको वापिस तो नही ले सकता, किन्तु तुझे इस



210

शाप से मुक्ति कैसे मिलेगी, इतना अवश्य बता सकता हूँ। उस गन्धर्व ने हाथ जोड़कर पूछा बताइए महाराज मुझे इस शाप से मुक्ति कैसे मिलेगी? तब देवल ऋषि उस गन्धर्व से कहते हैं, जिस दिन तुम किसी भगवत भक्त के चरण पकड़ोगे उसी दिन तुम इस शाप से मुक्त हो जाओगे। तो वही (हूहू) नामक गन्धर्व ग्राह बनकर के आया और भगवतभक्त गजेन्द्र के चरण पकड़कर इस शाप से मुक्त हो गया।

=> शुकदेव जी कहते - राजन्! जिस गजेन्द्र के चरण पकड़कर ग्राह ने शाप से मुक्ति पाई वह पूर्व जन्म मे द्रविड़ देश का पाण्ड्यवंशी राजा था। इसका नाम इन्द्रद्युम्न था। एक बार राजा इन्द्रद्युम्न एकान्त मे बैठकर तपस्या कर रहे थे। तभी अगस्त्य मुनि अपनी अपनी शिष्य मण्डली के साथ वहा आ पहुँचे। राजा तो भगवान के ध्यान मे लीन थे, इसलिए उन्होने अगस्त्य मुनि को प्रणाम नही किया।

=> महात्मा अगस्त्य इस बात से बहुत क्रोधित हो गए और उन्होने राजा इन्द्रद्युम्न को शाप दे दिया, तूने महात्मा को आते देख उन्हे प्रणाम नही किया, हाथी के समान जड़ बुद्धि बनकर बैठा रहा, इसलिए हाथी की योनि मे जन्म लेकर विचरण

PAGE NO.: 211
DATE: / /20

=) कर, वही राजा इन्द्रद्युम्न गजेन्द्र बनकर के आया, और पूर्वजन्म का स्मरण होने के कारण भगवान की स्तुति करके, उनके दर्शन करके इस शाप से मुक्त हो गया।

=) बन्धुओ इस गजेन्द्र मोक्ष की कथा का सार क्या है?

=) यह शरीर ही गजेन्द्र है, और काल ही ग्राह है। जिस दिन हम इस संसार मे जन्म लेकर आते है, उसी दिन से काल रुपी ग्राह हमारे पैर को पकड लेता है, किन्तु हमको ज्ञात नही होता, जवानी मे इस काल रुपी ग्राह से अपने आप को छुटाने का प्रयास करेगे तो शायद आप इस काल रुपी ग्राह से मुक्त हो जाए, किन्तु बुढापे मे जब इस काल रुपी ग्राह की शक्ति बढ जाती है, तो इससे खुद को मुक्त कर पाना बड़ा कठिन है। इसलिए जिस दिन से हमे दुनियादारी की थोड़ी भी समझ हो जाए उसी दिन से भगवान के भजन मे लग जाना चाहिए।

=) सूतजी शौनकादि मुनियो से कहते इस प्रकार राजा परीक्षित के पूछने पर शुकदेव जी ने गजेन्द्र मोक्ष की कथा को विस्तार से श्रवण कराया।

:: अष्टम स्कन्ध :: पञ्चमोऽध्याय :- 212

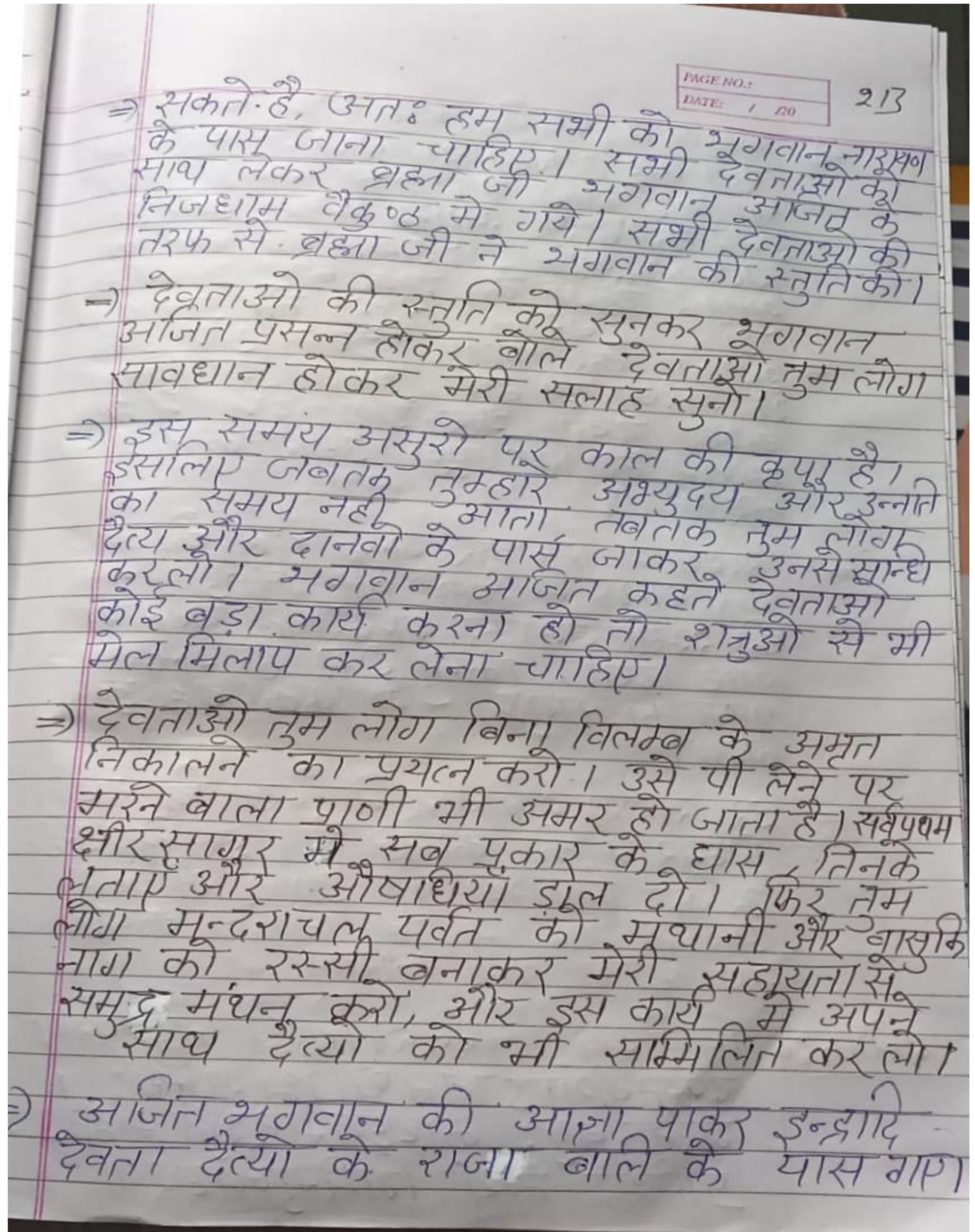
:: समुद्र मन्थन की कथा ::

⇒ गजेन्द्र मोक्ष की कथा के उपरान्त अष्टम स्कन्ध मे शुकदेव जीने राजा परीक्षित को समुन्द्र मन्थन की कथा श्रवण कराई जिस समुन्द्र मंथन के दौरान मेरे भगवान ने कच्छप, धन्वन्तरि और विश्व मोहिनी एक साथ तीन अवतार लिए।

⇒ राजा परीक्षित ने - शुकदेव जीसे पूछा - प्रभो! भगवान ने समुद्र मंथन क्यों करवाया? इसका मूल कारण क्या है?

⇒ शुकदेव जी कहते राजन परीक्षित! छठे मन्वन्तर के चाक्षुष मनु थे। और इस मन्वन्तर मे मन्त्रद्रुम नाम के इन्द्र तथा आप्य नाम के देवगण थे। हविष्यमान और वीरक आदि सप्तर्षि थे। इसी मन्वन्तर मे जगत्पति भगवान ने वैराज की पत्नी सम्भूति के गर्भ से अजित नाम का अंशावतार ग्रहण किया था। उन्होंने ही समुद्रमन्थन करके देवताओं को अमृत पिलाया था।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! एक समय की बात, असुरो ने अपने तीखे शस्त्रों से देवताओं को पराजित कर दिया, सभी देवता दुःखी होकर ब्रह्मा जी के पास पहुंचे और अपने दुःख का कारण बताया। तब ब्रह्मा जी ने देवताओं से कहा इन असुरो के आतंक से बचने का उपाय भगवान नारायण ही बता



PAGE NO.: 213
DATE: / /20

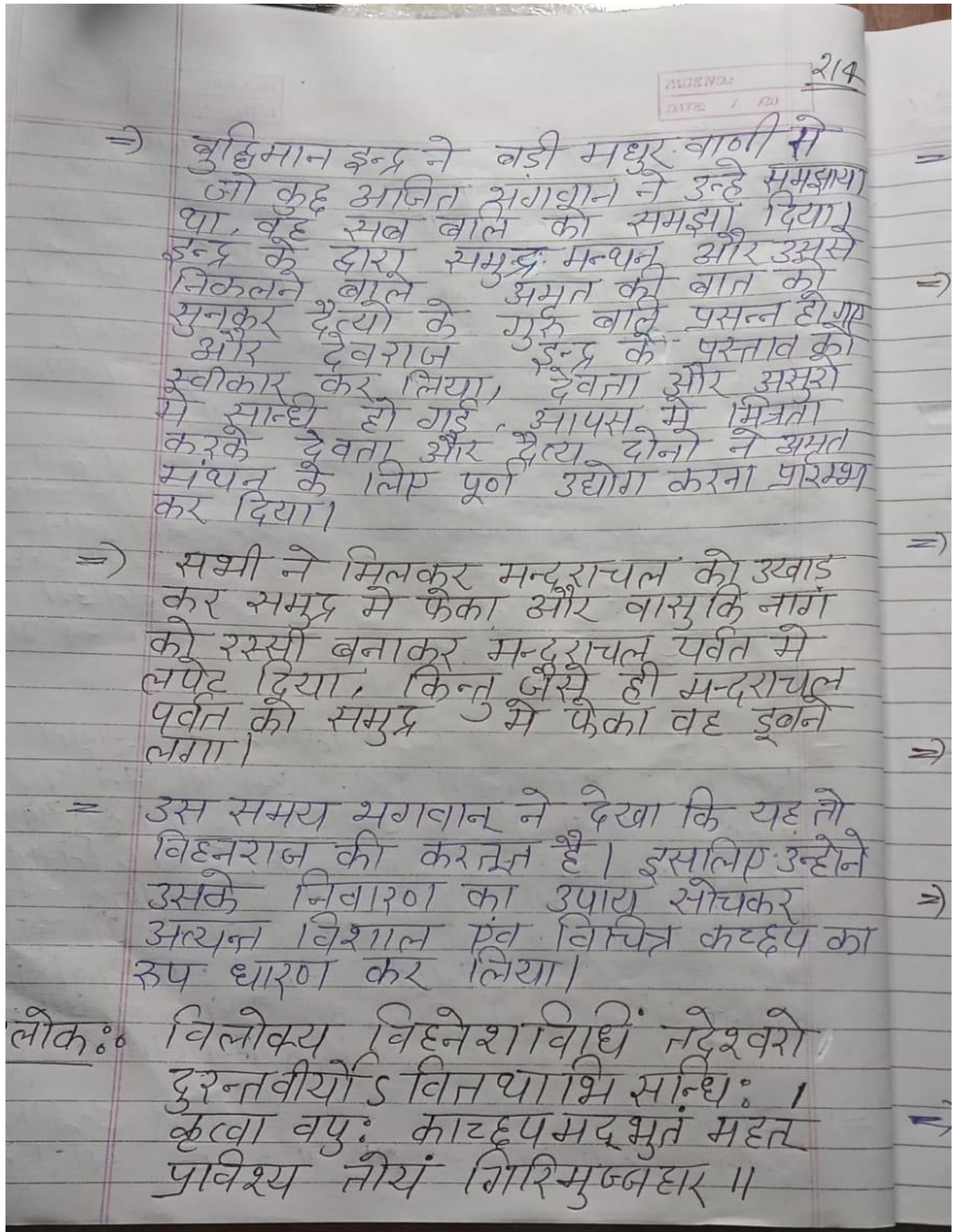
⇒ सकते है, अतः हम सभी को भगवान नारायण के पास जाना चाहिए। सभी देवताओ को साथ लेकर ब्रह्मा जी भगवान अजित के निजधाम वैकुण्ठ मे गये। सभी देवताओ की तरफ से ब्रह्मा जी ने भगवान की स्तुति की।

⇒ देवताओ की स्तुति को सुनकर भगवान अजित प्रसन्न होकर बोले देवताओ तुम लोग सावधान होकर मेरी सलाह सुनो।

⇒ इस समय असुरो पर काल की कृपा है। इसलिए जबतक तुम्हारे अभ्युदय और उन्नति का समय नही आता तबतक तुम लोग दैत्य और दानवो के पास जाकर उनसे सन्धि करलो। भगवान अजित कहते देवताओ कोई बड़ा कार्य करना हो तो शत्रुओ से भी मेल मिलाप कर लेना चाहिए।

⇒ देवताओ तुम लोग बिना विलम्ब के अमृत निकालने का प्रयत्न करो। उसे पी लेने पर मरने वाला प्राणी भी अमर हो जाता है। सर्वप्रथम क्षीरसागर मे सब प्रकार के घास, तिनके लताएँ और औषधियाँ डाल दो। फिर तुम लोग मन्दराचल पर्वत को मथानी और वासुकि नाग की रस्सी बनाकर मेरी सहायता से समुद्र मंथन करो, और इस कार्य मे अपने साथ दैत्यो को भी सम्मिलित कर लो।

⇒ अजित भगवान की आज्ञा पाकर इन्द्रादि देवता दैत्यो के राजा बलि के पास गए।



214

=> बुद्धिमान इन्द्र ने बड़ी मधुर वाणी से जो कुछ अजित भगवान ने उन्हे समझाया था, वह सब बलि को समझा दिया। इन्द्र के द्वारा समुद्र मन्थन और उससे निकलने वाले अमृत की बात को सुनकर दैत्यो के गुरु बलि प्रसन्न हो गए और देवराज इन्द्र के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया, देवता और असुरो मे सान्धि हो गई, आपस मे मित्रता करके देवता और दैत्य दोनो ने अमृत मंथन के लिए पूर्ण उद्योग करना प्रारम्भ कर दिया।

=> सभी ने मिलकर मन्दराचल को उखाड़ कर समुद्र मे फेका और वासुकि नाग को रस्सी बनाकर मन्दराचल पर्वत मे लपेट दिया, किन्तु जैसे ही मन्दराचल पर्वत को समुद्र मे फेका वह डूबने लगा।

= उस समय भगवान ने देखा कि यह तो विघ्नराज की करतूत है। इसलिए उन्होने उसके निवारण का उपाय सोचकर अत्यन्त विशाल एवं विचित्र कच्छप का रूप धारण कर लिया।

श्लोकः विलोक्य विघ्नेशविधिं तदेश्वरो
दुरन्तवीर्योऽवितथाभिसन्धिः।
कृत्वा वपुः काच्छपमद्भुतं महत्
प्रविश्य तोयं गिरिमुज्जहार॥

215

PAGE NO.:
DATE: / /20

=> कच्छप बनकर भगवान समुद्र मे प्रवेश कर गए और अपनी पीठ पर मन्दराचल पर्वत को धारण कर लिया।

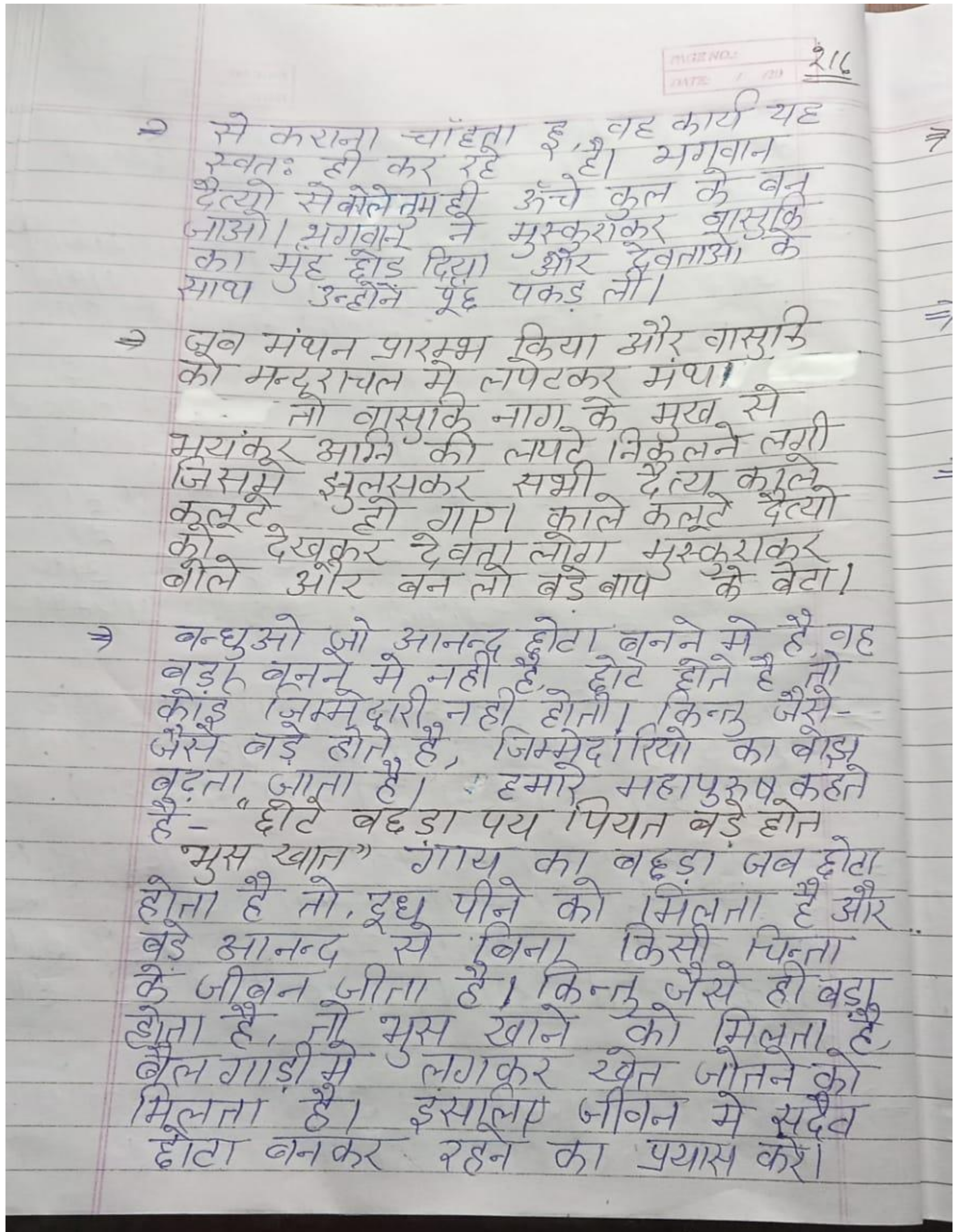
=> देवता और दैत्यो ने मन्दराचल को मथानी और वासुकि नाग को रस्सी बनाकर मंथन आरम्भ किया। भगवान को पता था वासुकि नाग के मुख की ओर जो खड़ा होगा उसको नाग देवता के मुख से निकलने वाली ज्वाला का सामना करना पड़ेगा।

=> इसलिए भगवान ने देवताओ से कहा देवताओ तुम लोग ऊंचे कुल से हो तुम लोग वासुकि के मुख की ओर खड़े होकर मंथन करना प्रारम्भ करो।

=> भगवान की यह बात दैत्यो को पसंद नही आई। उन्होने कहा 'पूछ' तो सांप का अशुभ अंग है। हम उसे नही पकड़ेगे।

=> हमने वेद-शास्त्रो का विधिपूर्वक, अध्ययन किया है, ऊँचे वंश मे हमारा जन्म हुआ है, और वीरता के बड़े-बड़े काम हमने किए है? इतना कहकर सभी दैत्य एक किनारे खड़े हो गए।

=> भगवान अजित मन ही मन मुस्कुकाये और विचार करने लगे, जो कार्य मै इन दैत्यो

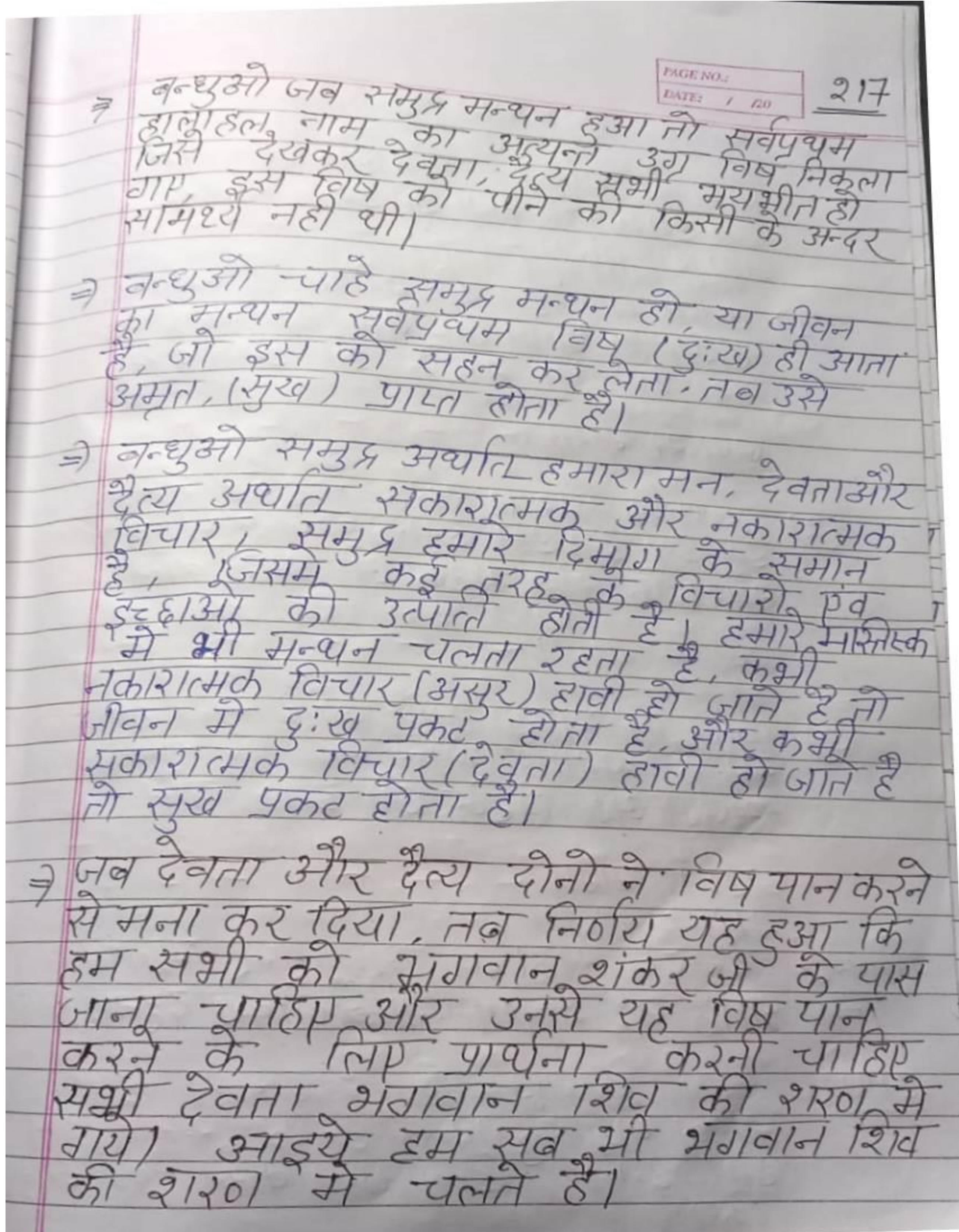


216

⇒ से कराना चाहता है, वह कार्य यह स्वतः ही कर रहे हैं। भगवान दैत्यो से बोले तुम ही ऊँचे कुल के बन जाओ। भगवान ने मुस्कुराकर वासुकि का मुँह छोड़ दिया और देवताओं के साथ उन्होंने पूँछ पकड़ ली।

⇒ जब मंथन प्रारम्भ किया और वासुकि को मन्दराचल में लपेटकर मंथा तो वासुकि नाग के मुख से भयंकर अग्नि की लपटे निकलने लगी जिसमे झुलसकर सभी दैत्य काले कलूटे हो गए। काले कलूटे दैत्यो को देखकर देवता लोग मुस्कुराकर बोले और बन लो बड़े बाप के बेटा।

⇒ बन्धुओ जो आनन्द छोटा बनने मे है वह बड़ा बनने मे नहीं है, छोटे होते है तो कोई जिम्मेदारी नही होती। किन्तु जैसे-जैसे बड़े होते है, जिम्मेदारियो का बोझ बढ़ता जाता है। हमारे महापुरुष कहते है- "छोटे बछड़ा पय पियत बड़े होत भुस खात" गाय का बछड़ा जब छोटा होता है तो दूध पीने को मिलता है और बड़े आनन्द से बिना किसी चिन्ता के जीवन जीता है। किन्तु जैसे ही बड़ा होता है, तो भुस खाने को मिलता है, बैल गाड़ी मे लगाकर खेत जोतने को मिलता है। इसलिए जीवन मे सदैव छोटा बनकर रहने का प्रयास करें।

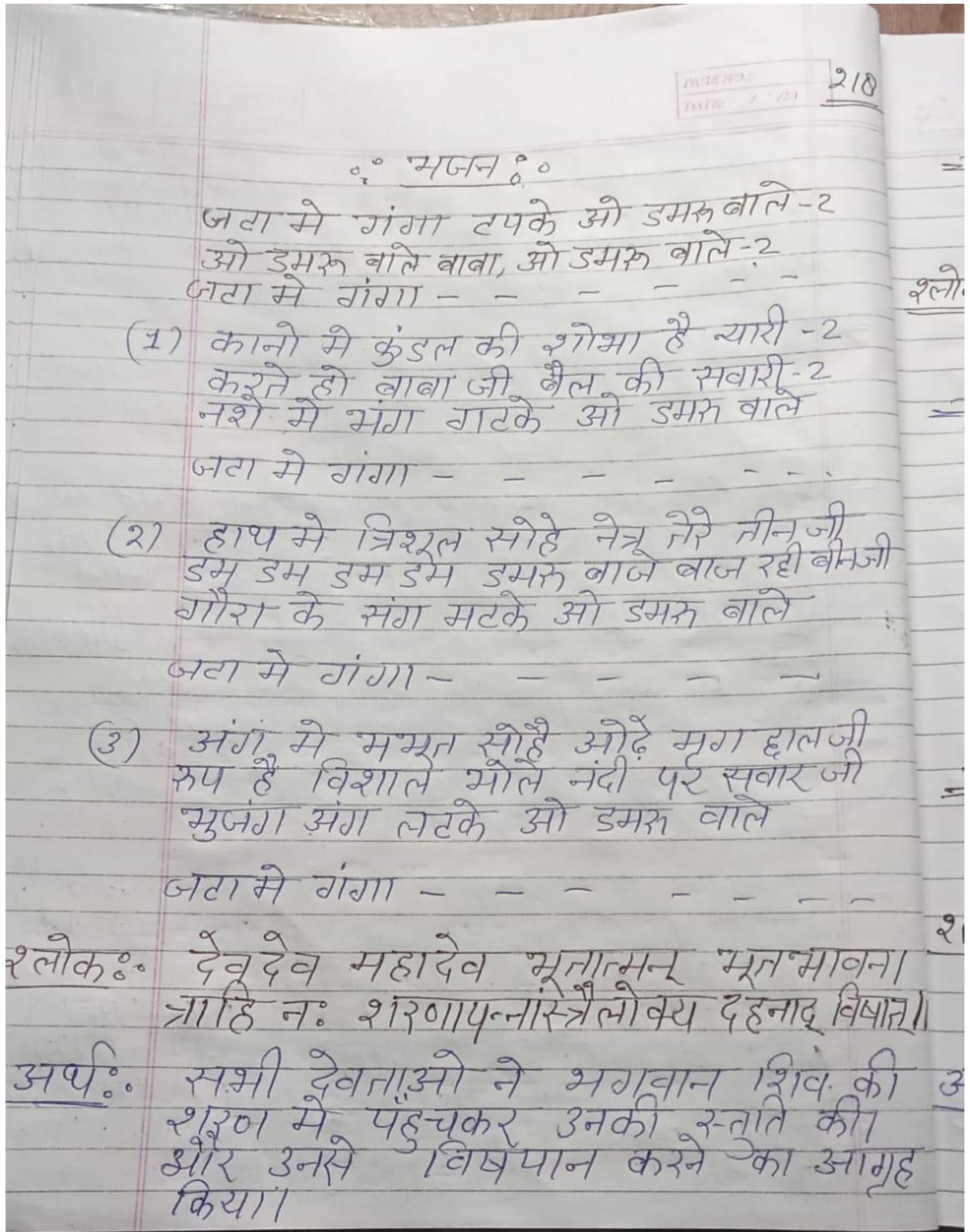

PAGE NO.: 217
DATE: / /20

⇒ बन्धुओ जब समुद्र मन्थन हुआ तो सर्वप्रथम हालाहल नाम का अत्यन्त उग्र विष निकला जिसे देखकर देवता, दैत्य सभी भयभीत हो गए, इस विष को पीने की किसी के अन्दर सामर्थ्य नही थी।

⇒ बन्धुओ चाहे समुद्र मन्थन हो, या जीवन का मन्थन सर्वप्रथम विष (दुःख) ही आता है, जो इस को सहन कर लेता, तब उसे अमृत, (सुख) प्राप्त होता है।

⇒ बन्धुओ समुद्र अर्थात हमारा मन, देवताओर दैत्य अर्थात सकारात्मक और नकारात्मक विचार, समुद्र हमारे दिमाग के समान है, जिसमे कई तरह के विचारो एवं इच्छाओ की उत्पात्ति होती है। हमारे मस्तिष्क मे भी मन्थन चलता रहता है, कभी नकारात्मक विचार (असुर) हावी हो जाते है तो जीवन मे दुःख प्रकट होता है, और कभी सकारात्मक विचार (देवता) हावी हो जाते है तो सुख प्रकट होता है।

⇒ जब देवता और दैत्य दोनो ने विष पान करने से मना कर दिया, तब निर्णय यह हुआ कि हम सभी को भगवान शंकर जी के पास जाना चाहिए और उनसे यह विष पान करने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए सभी देवता भगवान शिव की शरण मे गये। आइये हम सब भी भगवान शिव की शरण मे चलते है।


218
भजन
जटा मे गंगा टपके ओ डमरु वाले -2
ओ डमरु वाले बाबा, ओ डमरु वाले -2
जटा मे गंगा - - - - - -
(1) कानो मे कुंडल की शोभा है न्यारी -2
करते हो बाबा जी बैल की सवारी -2
नशे मे भंग गटके ओ डमरु वाले
जटा मे गंगा - - - - - - -
(2) हाथ मे त्रिशूल सोहे नेत्र तेरे तीन जी
डम डम डम डम डमरु बाजे बाज रही बीनजी
गौरा के संग मटके ओ डमरु वाले
जटा मे गंगा - - - - -
(3) अंग मे भभूत सोहे ओढ़े मृग छालजी
रूप है विशाले भोले नंदी पर सवार जी
भुजंग अंग लटके ओ डमरु वाले
जटा मे गंगा - - - - - - -
श्लोकः देवदेव महादेव भूतात्मन् भूतभावन।
त्राहि नः शरणापन्नांस्त्रैलोक्य दहनाद् विषात्॥
अर्थः सभी देवताओ ने भगवान शिव की शरण मे पहुंचकर उनकी स्तुति की और उनसे विषपान करने का आग्रह किया।

218

PAGE NO.: 219
DATE: / /20

=> सभी प्राणियो की रक्षा के लिए, कल्याण के लिए भगवान शिव ने उस हालाहल विष को अपनी हथेली पर उठाया -

श्लोक:- ततः करतलीकृत्य व्यापि हालाहलं विषम्।
अभक्षयन्महादेवः कृपया भूतभावनः ॥

=> और भक्षण कर गए। भगवान शिव जी ने जैसे ही उस विष को मुख मे रखा तो रा बोला और म बोलकर मुख को बन्द कर लिया। कण्ठ से होते हुए उस विष को जैसे ही उदर तक ले जाना चाहा तो याद आया कि हृदय मे राम जी बैठे है मेरे राम जी को कष्ट होगा। इसलिए भगवान शिव ने उस विष को कण्ठ मे ही धारण कर लिया, नाम पड़ गया नीलकण्ठ।
॥ बोलो नीलकण्ठ भगवान की जय ॥

=> जिस समय भगवान शंकर विषपान कर रहे थे उस समय उनके हाथ से थोड़ा-सा विष टपक रहा था।

श्लोक- प्रस्कन्नं पिबतः पाणेर्यत् किञ्चिज्जगृहुः स्म तत्।
वृश्चिकाहि विषौषध्यो दन्दशूकाश्च येऽपरे ॥

अर्थ:- उस विष को बिच्छू, साँप तथा अन्य विषैले जीवो ने ग्रहण कर लिया, जिससे उनके अन्दर विष उत्पन्न हो गया।

220

⇒ बन्धुओ एक बात विचारणीय है इतने सारे देवता और दैत्य थे किन्तु विष पान करने के लिए शिव जी से ही क्यो आग्रह किया ?

श्लोक- वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्करऱूपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते॥

⇒ बन्धुओ भगवान शिव "गुरुं शङ्कर रूपिणम्" को गुरुदेव की उपाधि दी गई है। जीवन मे जब भी विष (दु:ख) आता है तो हमारे गुरुदेव ही हमे बता सकते है, कि इस दु:ख से हमे कैसे बचना है। इसलिए सभी देवता भगवान शिव की शरण मे गए।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते है - परीक्षित! जब भगवान् शंकर ने विष पी लिया, तब देवता और असुरो की बडी प्रसन्नता हुई। वे फिर नए उत्साह से समुद्र मंथन करने लगे। तब समुद्र से -

श्लोक- ममन्थुस्तरसा सिन्धुं हविर्धानी ततोऽभवत्।

⇒ कामधेनु प्रकट हो गई, जो एकदम सफेद रंग की थी, जो मन की सभी इच्छाओ को पूर्ण करे उसे कामधेनु कहते। कामधेनु गाय को ऋषियो ने उसे गृहण किया।

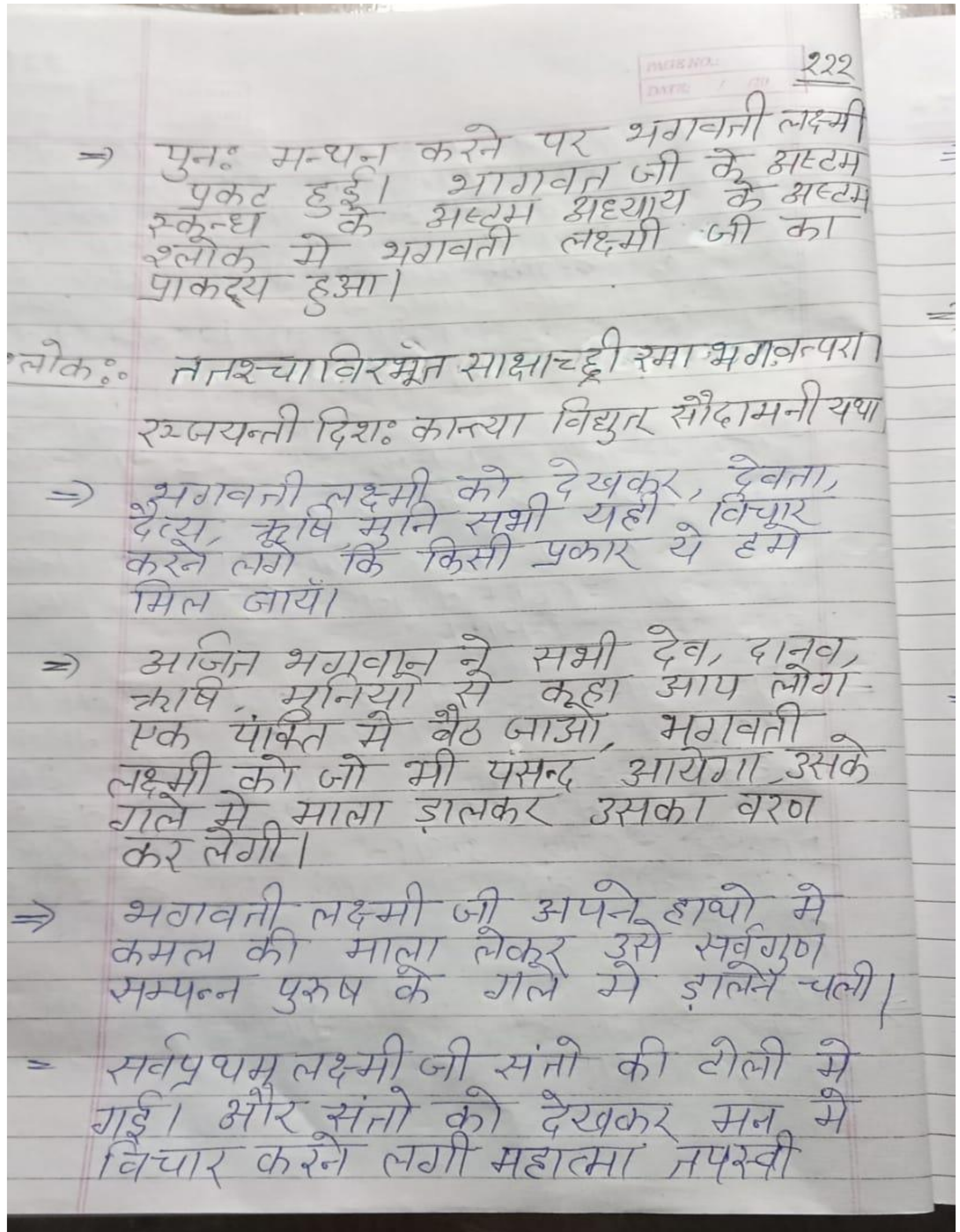
⇒ इसके बाद जब पुनः मन्थन किया तो उच्चैःश्रवा नाम का घोड़ा निकला, जो श्वेत वर्ण का था। देवराज इन्द्र ने उसे लेना चाहा, किन्तु वह अश्व दैत्यों के राजा बलि को दिया गया। यह देखकर देवताओं के राजा इन्द्र उदास हो गए, भगवान अजित ने इन्द्र से कहा उदास मत हो इसके बाद मे हाथी निकलने वाला है, उसे तुम ले लेना।

⇒ पुनः मन्थन करने पर ऐरावत नाम का श्रेष्ठ हाथी निकला, जिसके बड़े- बड़े चार दांत थे, इसको इन्द्र को दे दिया गया।

⇒ पुनः मन्थन करने पर कौस्तुभ मणि निकली जिसको अजित भगवान ने हृदय पर धारण कर लिया।

⇒ पुनः मन्थन करने पर कल्पवृक्ष निकला जिसे स्वर्गलोक मे स्थापित कर दिया गया। बन्धुओ जिस वृक्ष के नीचे बैठने पर आप जिस वस्तु की प्राप्ति की इच्छा करे, वह आपको प्राप्त हो जाए, अर्थात आपकी कामनाओ (इच्छाओ) को जो पूर्ण कर दे, उसे कल्प वृक्ष कहते है।

⇒ पुनः मन्थन करने पर अप्सराएँ प्रकट हुई वह देवता और दैत्य दोनो को सुख पहुचाने वाली हुई।


222
⇒ पुनः मन्थन करने पर भगवती लक्ष्मी प्रकट हुई। भागवत जी के अष्टम स्कन्ध के अष्टम अध्याय के अष्टम श्लोक मे भगवती लक्ष्मी जी का प्राकट्य हुआ।
श्लोकः ततश्चाविरभूत साक्षाच्छ्री रमा भगवत्परा।
रञ्जयन्ती दिशः कान्त्या विद्युत सौदामनी यथा।
⇒ भगवती लक्ष्मी को देखकर, देवता, दैत्य, ऋषि मुनि सभी यही विचार करने लगे कि किसी प्रकार ये हमे मिल जायँ।
⇒ अजित भगवान ने सभी देव, दानव, ऋषि, मुनियो से कहा आप लोग एक पंक्ति मे बैठ जाओ, भगवती लक्ष्मी को जो भी पसन्द आयेगा उसके गले मे माला डालकर उसका वरण कर लेगी।
⇒ भगवती लक्ष्मी जी अपने हाथो मे कमल की माला लेकर उसे सर्वगुण सम्पन्न पुरुष के गले मे डालने चली।
⇒ सर्वप्रथम लक्ष्मी जी संतो की टोली मे गई। और संतो को देखकर मन मे विचार करने लगी महात्मा तपस्वी

PAGE NO.: 223
DATE: / /20

⇒ तो बहुत है, परन्तु क्रोध पर विजय नही प्राप्त की है। किसी-किसी ऋषि ने आयु तो बहुत लंबी प्राप्त कर ली है, परन्तु उनका शील-मंगल भी मेरे योग्य नही है।

⇒ इसके बाद लक्ष्मी जी देव और दैत्यो की टोली मे आई और उन्हे देखकर मन मे विचार करने लगी किसी मे ज्ञान बहुत है, परन्तु वह पूर्ण रूप से अनासक्त नही है, कोई बड़े महत्वशाली, परन्तु काम को नही जीत सके। किसी के पास ऐश्वर्य बहुत है, परन्तु वह ऐश्वर्य ही किस काम का, जब उन्हे दूसरो का आश्रय लेना पड़े। इस प्रकार भगवती लक्ष्मी को सभी में कुछ न कुछ कमी दिखाई दी, उन्हे कोई भी पसन्द नही आया।

⇒ अन्त मे भगवती लक्ष्मी की नजर एकान्त मे बैठे अजित भगवान पर गई भगवान अजित को देखकर वह प्रसन्न हो गई, किन्तु भगवान अजित ने एकबार भी लक्ष्मी जी की तरफ देखा नही, भगवान अजित ही एक सर्वगुण सम्पन्न है यह विचार करके अन्त मे लक्ष्मी जी ने जयमाला भगवान के गले मे डालकर उन्हे ही अभीष्ट वर के रूप मे चुना।

⇒ पुनः मन्थन करने पर वारुणी देवी प्रकट हुई भगवान की अनुमति से दैत्यो ने उसे ले लिया।

⇒ पुनः मन्थन करने पर एक अत्यन्त अलौकिक पुरुष प्रकट हुआ, उसके हाथों मे कंगन और अमृत से भरा हुआ कलश था। वह साक्षात विष्णु भगवान के अंश अवतार थे।

श्लोकः- धन्वन्तरिरिति ख्यात आयुर्वेददृगिज्यभाक्।
तमालोक्यासुराः सर्वे कलशं चामृताभृतम्॥

⇒ वे ही आयुर्वेद के प्रवर्तक और यज्ञभोक्ता धन्वन्तरि के नाम से सुप्रसिद्ध हुए। जिस दिन धन्वन्तरि भगवान अमृत कलश लेकर प्रकट हुए, उस दिन को हम लोग धनत्रयोदशी (धनतेरस) के नाम से जानते है। बहुत से लोगो को इस दिन के महत्व के बारे मे पता नही होता है और वे इस दिन थाली, चम्मच, लोटा खरीदते है, यह दिन थाली चम्मच लोटा खरीदने का नही होता है, बल्कि भगवान धन्वन्तरि के पूजन का दिन होता है, इस दिन हम सभी को षोडशोपचार विधि से भगवान धन्वन्तरि का पूजन करना चाहिए।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! जब दैत्यो की दृष्टि भगवान धन्वन्तरि तथा उनके हाथ से अमृत से भरे हुए कलश पर पड़ी, तब उन्होंने बल पूर्वक अमृत के कलश को छीन लिया, और वहा से भाग गए।

PAGE NO.: 225
DATE: / /20

⇒ जब दैत्य अमृत कलश लेकर वहाँ से दूर चले गए, तो देवताओ का मन विषाद से भर गया। सभी देवता भगवान अजित की शरण मे आए। उनकी दीन दशा को देखकर भक्तवाञ्छाकल्पतरु भगवान ने कहा- देवताओ! तुम लोग खेद मत करो। मै अपनी माया से दैत्यो मे फूट डालकर अभी तुम्हारा काम बना देता हूँ।

= शुकदेव जी राजन् परीक्षित से कहते - परीक्षित- जब सभी दैत्य अमृत का कलश लेकर कुछ दूर पर जाकर आपस मे बाँटने लगे, तो पहले मैं पीऊँगा, पहले मैं पीऊँगा, इस बात को लेकर आपस मे झगड़ा होने लगा।

श्लोकः- मिथः कलिरभूत्तेषां तदर्थे तर्षचेतसाम् ।
अहं पूर्वमहं पूर्वं न त्वं न त्वमिति प्रभो ॥

⇒ पहले मै पीऊँगा, पहले मैं; तुम नही, तुम नही'। इस प्रकार आपस मे तू-तू, मैं-मैं होने लगी। इतने मे चतुरशिरोमणि भगवान ने अत्यन्त अद्भुत और अवर्णनीय स्त्री का रूप धारण किया और दैत्यो के समीप पहुँच गए। सुन्दर नील कमल के समान शरीर, सुन्दर कपोल, ऊँची नासिका और रमणीय मुख, सलज्ज मुस्कान, नाचती हुई तिरछी भौंहे और विलासभरी चितवन से

⇒ मोहिनी रूपधारी भगवान दैत्य सेनापतियों के चित्त मे बार-बार कामोद्दीपन करने लगे।

⇒ सुन्दर स्त्री को देखकर सभी दैत्य आपस मे झगड़ा करना भूल गए, और मोहिनी रूप धारण किए भगवान की प्रशंसा करने लगे।

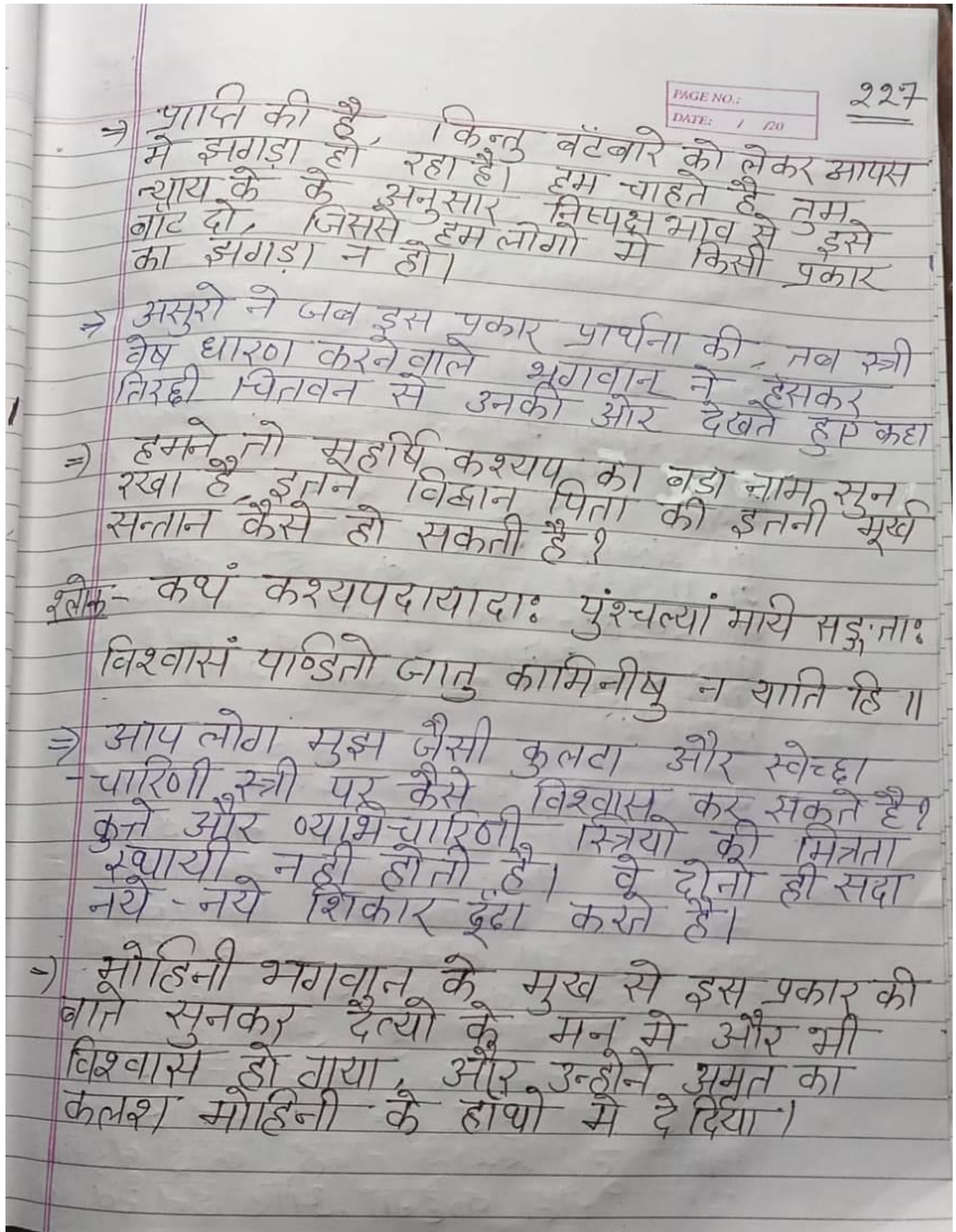
श्लोक- अहो रूपमहो धाम अहो अस्या नवं वयः।

⇒ कैसा अनुपम सौन्दर्य है। शरीर मे कितनी अद्भुत छटा छिटक रही है। सभी दैत्यो ने मोहिनी भगवान के पास जाकर पूछा-

श्लोक- का त्वं कञ्जपलाशाक्षि कुतो वा किं चिकीर्षसि।

⇒ कमलनयनी! तुम कौन हो? कहाँ से आ रही हो? सुन्दरी! अवश्य ही विधाता ने दया करके शरीर धारियो की सम्पूर्ण इन्द्रियों एवं मन को तृप्त करने के लिए तुम्हे भेजा है। मोहिनी ने पूछा- आप लोग आपस मे झगड़ क्यो रहे है?

⇒ दैत्यो ने कहा- मानिनी! हम सभी एक ही जाति के है। कश्यप जी के पुत्र होने के नाते हम सभी सगे भाई है। बड़ा पुरुषार्थ करके समुद्र मंथन के द्वारा हम लोगो ने अमृत की



PAGE NO.: 227
DATE: / /20

⇒ प्राप्ति की है, किन्तु बंटवारे को लेकर आपस मे झगड़ा हो रहा है। हम चाहते है तुम न्याय के के अनुसार निष्पक्ष भाव से इसे बाँट दो, जिससे हम लोगो मे किसी प्रकार का झगड़ा न हो।

⇒ असुरो ने जब इस प्रकार प्रार्थना की, तब स्त्री वेष धारण करने वाले भगवान् ने हँसकर तिरछी चितवन से उनकी ओर देखते हुए कहा

⇒ हमने तो महर्षि कश्यप का बड़ा नाम सुन रखा है, इतने विद्वान पिता की इतनी मूर्ख सन्तान कैसे हो सकती है?

श्लोक- कथं कश्यपदायादाः पुंश्चल्यां मायि सङ्गताः
विश्वासं पण्डितो जातु कामिनीषु न याति हि ॥

⇒ आप लोग मुझ जैसी कुलटा और स्वेच्छा-चारिणी स्त्री पर कैसे विश्वास कर सकते है? कुत्ते और व्याभिचारिणी स्त्रियो की मित्रता स्थायी नही होती है। वे दोनो ही सदा नये-नये शिकार ढूंढा करते है।

⇒ मोहिनी भगवान के मुख से इस प्रकार की बाते सुनकर दैत्यो के मन मे और भी विश्वास हो गया, और उन्होने अमृत का कलश मोहिनी के हाथो मे दे दिया।

PAGE NO. 228
DATE:

- भगवान् ने अमृत का कलश अपने हाथ मे लेकर मुस्कुराते हुए मीठी वाणी से कहा- 'मै उचित या अनुचित जो कुछ भी करूँ, वह सब यदि तुमलोगो को स्वीकार हो तो मै यह अमृत बाँट सकती हूँ। दैत्यो का मोहिनी के प्रति स्नेह हो गया था, इसलिए उन्होने शर्त को स्वीकार कर लिया।

=) जिस समय मोहिनी भगवान दैत्यो को अमृत पिलाने जा रहे थे, उसी समय देवता भी वहा आ पहुचे। देवताओ को देखकर मोहिनी भगवान ने दैत्यो से पूछा ये लोग कौन है? तब दैत्यो ने कहा- सुन्दरी! ये हमारे सौतेले भाई है, अमृत प्राप्ति के लिए इन लोगो ने भी हमारे साथ श्रम किया है।

=) मोहिनी भगवान ने दैत्यो से कहा- दैत्यो! यदि इन लोगो ने अमृत प्राप्ति के लिए तुम्हारे साथ श्रम किया है तो अमृत इनको भी पिलाना चाहिए खैर यह तो तुम्हारी इच्छा है। वैसे दैत्यो इस कलश मे गाढा, गाढा माल तो नीचे है, और ऊपर, ऊपर जल है, तुमलोग कहो तो पानी की दो, दो बूंद इन देवताओ को पिला दू, इससे तुम्हे कोई बेईमान भी नही कहेगा, और इन देवताओ

PAGE NO.: 229
DATE: / /20

= की तुम्हे बुरी नजर भी नही लगेगी, अन्यथा यह अमृत तुम्हे पचने वाला नही है।

=) दैत्य तो मोहिनी भगवान के स्वरुप पर मोहित थे, इसलिए उन्होने कहा सुन्दरी तुम्हे जैसा उचित लगे, करो।

=) मोहिनी भगवान ने विचार किया कि असुर तो जन्म से ही क्रूर स्वभाव वाले है। इनको अमृत पिलाना सर्पो को दूध पिलाने के समान है।

=) भगवान ने देवता और असुरो की अलग-अलग पंक्तियां बनाकर बिठा दिया, इसके बाद मे हाथ मे अमृत का कलश लेकर दैत्यो के पास गए। उन्हे अपने हाव भाव और कटाक्ष से मोहित करके दूर बैठे हुए देवताओ के पास आ गये और उन्हे अमृत पिलाने लगे, भगवान दैत्यो को देखकर बस मुस्कुरा देते है, और देवताओ को अमृत पिला देते, एक दैत्य को मोहिनी भगवान पर शक हो जाता है, वह विचार करता कि मोहिनी ने कहा था, कि इस कलश मे ऊपर-ऊपर जल है, किन्तु देवताओ को अमृत पिलाते पिलाते हाथ तो कलश के नीचे भाग तक जा रहा है, तब वह स्वरभानु नाम का दैत्य देवता का रुप धारण करके सूर्य और चन्द्रमा के मध्य आकर बैठ जाता है और देवताओ के साथ अमृत पी लेता है। तब सूर्य और चन्द्र

PAGE NO.: 230
DATE: / /20

⇒ भगवान को बताते है - प्रभो! यह नकली देव है। तत्क्षण भगवान अपने तीखे धारवाले चक्र से उसका सिर काट देते है। अमृत पान करने के कारण उसके शरीर के दोनो भाग जीवित ः हो जाते हैं, और राहु, केतु के रूप मे पहचाने जाते है।

⇒ राहु और केतु को छाया ग्रह कहा जाता है, राक्षस का सिर वाला भाग राहु कहलाता है, जबकि धड़ वाला भाग केतु, ब्रह्मा जी ने इन्हे नवग्रहो मे स्थान दिया। वही राहु, केतु पूर्णिमा और अमावस्या को वैर भाव से बदला लेने के लिए चन्द्रमा तथा सूर्य पर आक्रमण करते है।

⇒ जब सभी देवताओ ने अमृत पी लिया, तब मोहिनी का रूप धारण करने वाले भगवान वँहा से अदृश्य हो गए।

⇒ जब दैत्यो की दृष्टि देवताओ पर पड़ी तो उन्होने देखा कि सभी देवता पेटपर हाथ फिराकर डकार ले रहे थे, और मोहनी कही दिखाई नही दे रही थी।

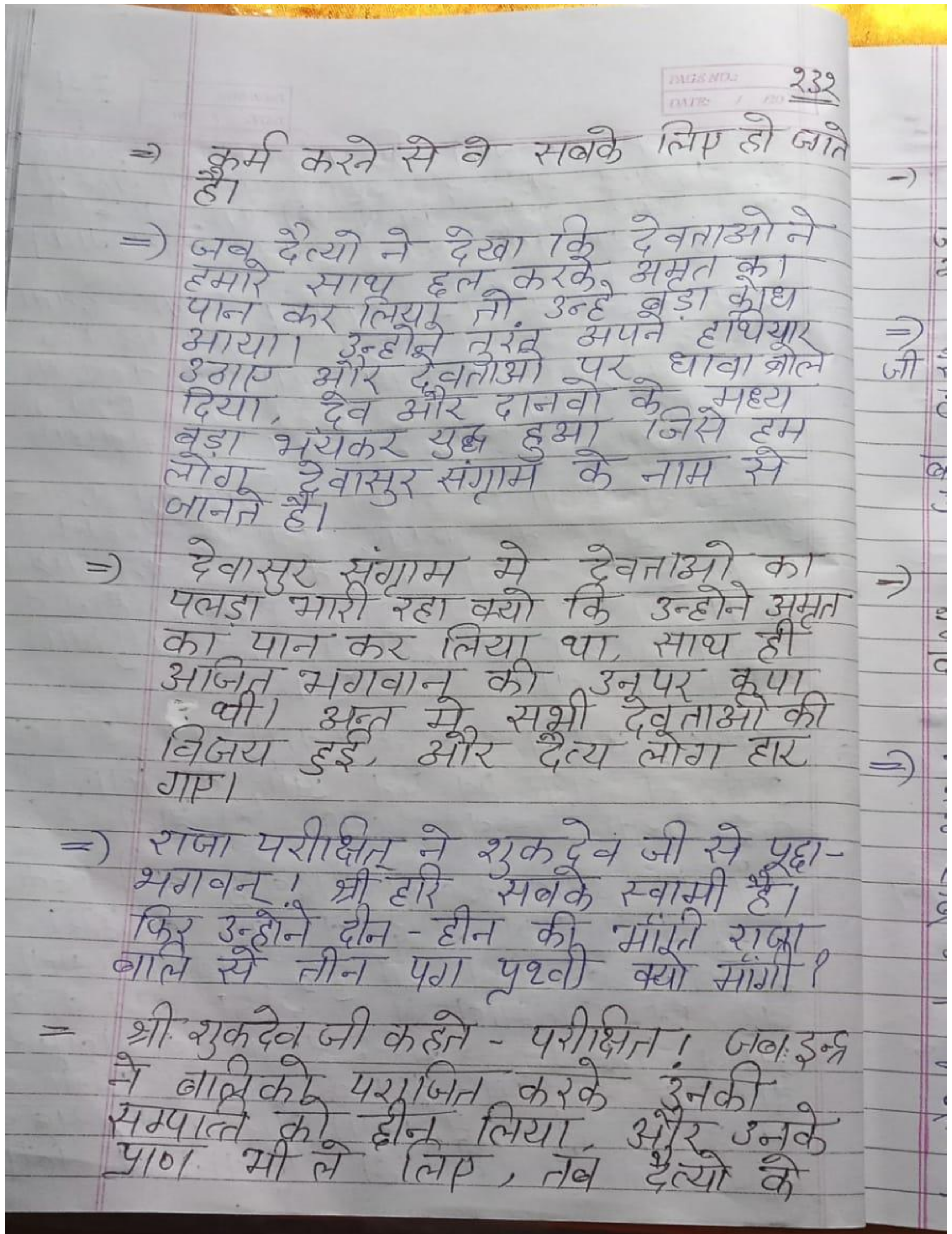
⇒ एक दैत्य ने कहा - अरे! मोहिनी कही दिखाई नही दे रही, कँहा गई?

PAGE NO.: 231
DATE: / /20

⇒ तब अन्य दैत्य बोले, दिखाई नही दे रही, या दिखाई नही दे रहा, अरे वो मोहनी कोई और नही विष्णु ही था, जो होरी बनके हम सभी को छलकर चला गया।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! देखो - देवता और दैत्य दोनो ने एक ही समय पर एक स्थान पर, एक प्रयोजन तथा एक वस्तु के लिए एक विचार से एक ही कर्म किया, परन्तु फल मे भेद हो गया। देवताओ ने बड़ी सुगमता से अपने परिश्रम का फल - अमृत प्राप्त कर लिया, क्यो कि उन्होने भगवान् के चरणकमलो की रज का आश्रय लिया था। परन्तु उससे विमुख होने के कारण परिश्रम करने पर भी असुरगण अमृत से वंचित ही रहे।

⇒ मनुष्य अपने प्राण, धन, कर्म, मन, और वाणी आदि से शरीर एवं पुत्र आदि के लिए जो कुछ करता है - वह व्यर्थ ही होता है; क्यो कि उसके मूल मे भेदबुद्धि बनी रहती है। परन्तु उन्ही प्राण आदि वस्तुओ के द्वारा भगवान् के लिए जो कुछ किया जाता है, वह सब भेदभाव से रहित होने के कारण अपने पुत्र और समस्त संसार के लिए सफल हो जाता है। जैसे - वृक्ष की जड़ मे पानी देने से उसका तना, टहनियाँ और पत्ते - सब के सब सिंच जाते है, वैसे ही भगवान के लिए



232

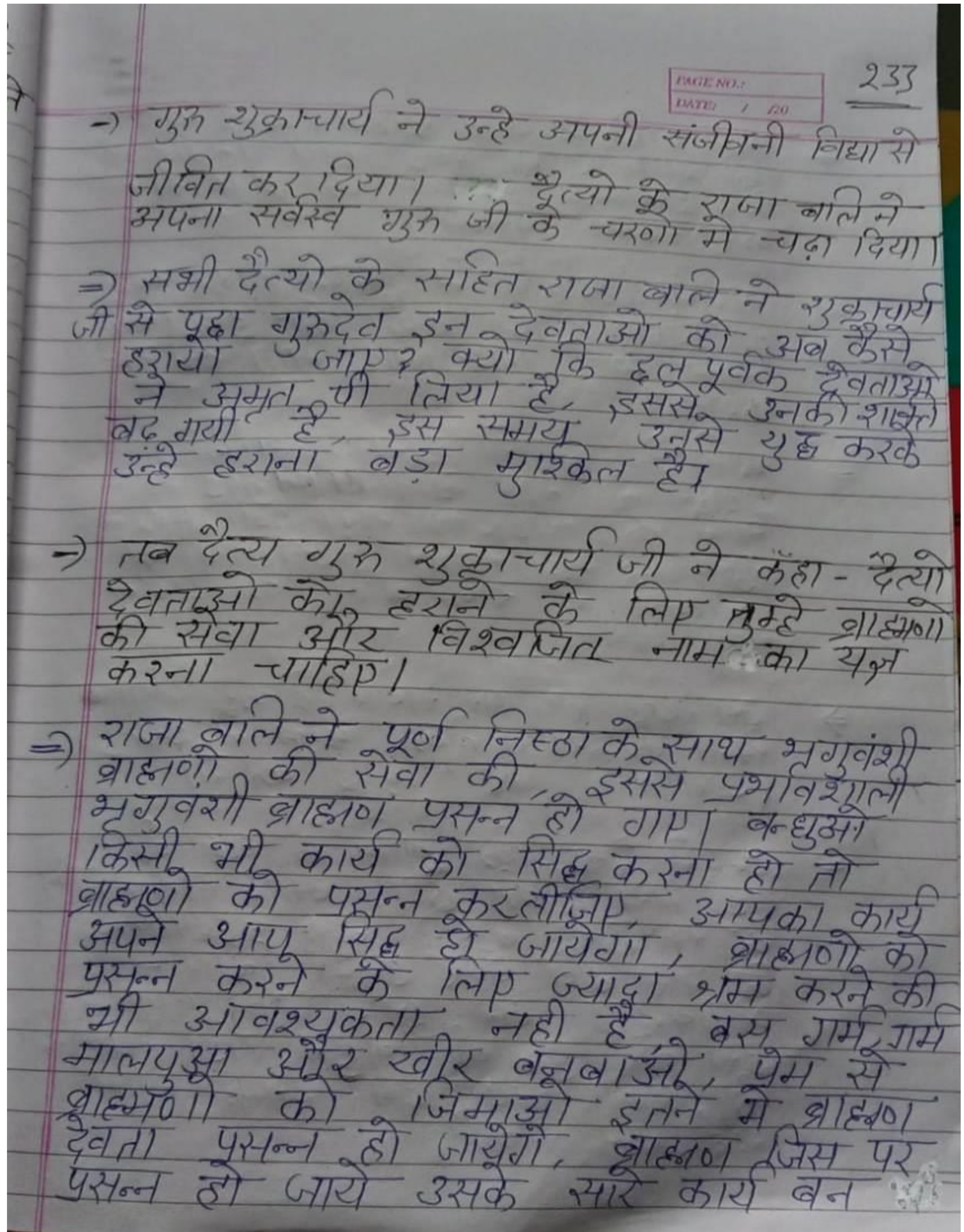
=> कर्म करने से वे सबके लिए हो जाते है।

=> जब दैत्यो ने देखा कि देवताओ ने हमारे साथ छल करके अमृत का पान कर लिया तो उन्हे बड़ा क्रोध आया। उन्होने तुरंत अपने हथियार उठाए और देवताओ पर धावा बोल दिया, देव और दानवो के मध्य बड़ा भयंकर युद्ध हुआ जिसे हम लोग देवासुर संग्राम के नाम से जानते है।

=> देवासुर संग्राम मे देवताओ का पलड़ा भारी रहा क्यो कि उन्होने अमृत का पान कर लिया था, साथ ही अजित भगवान की उनपर कृपा थी। अन्त मे सभी देवताओ की विजय हुई, और दैत्य लोग हार गए।

=> राजा परीक्षित ने शुकदेव जी से पूछा- भगवन! श्री हरि सबके स्वामी है। फिर उन्होने दीन-हीन की भांति राजा बलि से तीन पग पृथ्वी क्यो मांगी?

= श्री शुकदेव जी कहते - परीक्षित! जब इन्द्र ने बलि को पराजित करके उनकी सम्पत्ति को छीन लिया, और उनके प्राण भी ले लिए, तब दैत्यो के



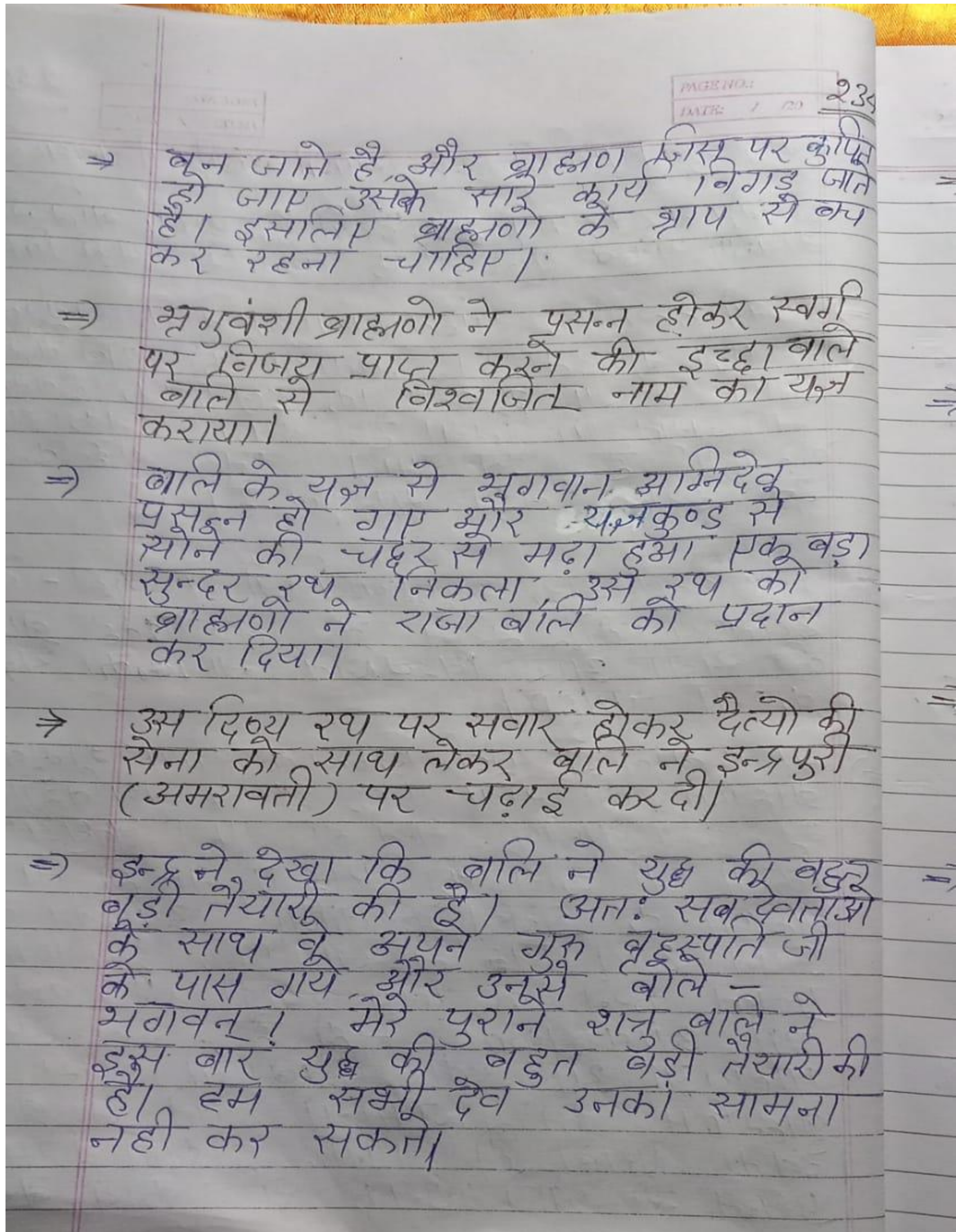
PAGE NO.: 233
DATE: / /20

=> गुरु शुक्राचार्य ने उन्हे अपनी संजीवनी विद्या से जीवित कर दिया। दैत्यो के राजा बालि ने अपना सर्वस्व गुरु जी के चरणो मे चढ़ा दिया।

=> सभी दैत्यो के सहित राजा बालि ने शुक्राचार्य जी से पूछा गुरुदेव इन देवताओ को अब कैसे हराया जाए? क्यो कि छल पूर्वक देवताओ ने अमृत पी लिया है, इससे उनकी शक्ति बढ़ गयी है, इस समय उनसे युद्ध करके उन्हे हराना बड़ा मुश्किल है।

=> तब दैत्य गुरु शुक्राचार्य जी ने कहा - दैत्यो देवताओ को हराने के लिए तुम्हे ब्राह्मणो की सेवा और विश्वजित नाम का यज्ञ करना चाहिए।

=> राजा बालि ने पूर्ण निष्ठा के साथ भृगुवंशी ब्राह्मणो की सेवा की, इससे प्रभावशाली भृगुवंशी ब्राह्मण प्रसन्न हो गए। बन्धुओ किसी भी कार्य को सिद्ध करना हो तो ब्राह्मणो को प्रसन्न करलीजिए, आपका कार्य अपने आप सिद्ध हो जायेगा, ब्राह्मणो को प्रसन्न करने के लिए ज्यादा श्रम करने की भी आवश्यकता नही है, बस गर्म गर्म मालपुआ और खीर बनबाओ, प्रेम से ब्राह्मणो को जिमाओ इतने मे ब्राह्मण देवता प्रसन्न हो जायेगे, ब्राह्मण जिस पर प्रसन्न हो जाये उसके सारे कार्य बन



234

⇒ बन जाते है और ब्राह्मण जिस पर कुपित हो जाए उसके सारे कार्य बिगड़ जाते है। इसलिए ब्राह्मणो के श्राप से बच कर रहना चाहिए।

⇒ भृगुवंशी ब्राह्मणो ने प्रसन्न होकर स्वर्ग पर विजय प्राप्त करने की इच्छा वाले बालि से विश्वजित नाम का यज्ञ कराया।

⇒ बालि के यज्ञ से भगवान अग्निदेव प्रसन्न हो गए और यज्ञकुण्ड से सोने की चद्दर से मढ़ा हुआ एक बड़ा सुन्दर रथ निकला उस रथ को ब्राह्मणो ने राजा बालि को प्रदान कर दिया।

⇒ उस दिव्य रथ पर सवार होकर दैत्यो की सेना को साथ लेकर बालि ने इन्द्रपुरी (अमरावती) पर चढ़ाई कर दी।

⇒ इन्द्र ने देखा कि बालि ने युद्ध की बहुत बड़ी तैयारी की है। अतः सब देवताओ के साथ वे अपने गुरु बृहस्पति जी के पास गये और उनसे बोले — भगवन्! मेरे पुराने शत्रु बालि ने इस बार युद्ध की बहुत बड़ी तैयारी की है। हम सभी देव उनका सामना नही कर सकते।

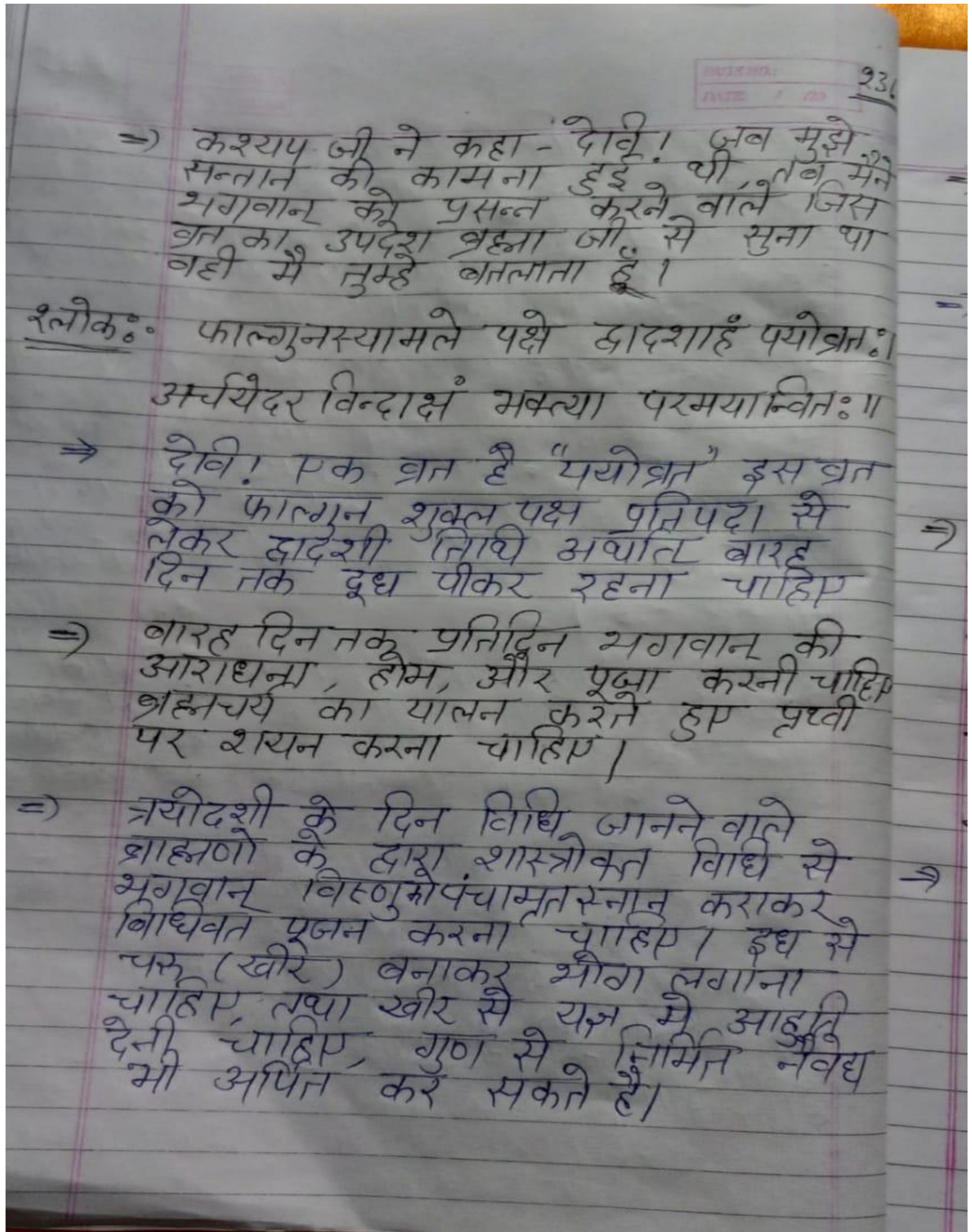
PAGE NO.: 235
DATE: / /20

⇒ देवगुरु ब्रहस्पति जी ने कहा - इन्द्र! मैं तुम्हारे शत्रु बलि की उन्नति का कारण जानता हूँ। इस समय ब्राह्मणो के तेज से बलि की उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। इसलिए तुम लोग स्वर्ग को छोड़कर कहीं छिप जाओ।

⇒ सभी देवता स्वेच्छानुसार रूप धारण करके स्वर्ग छोड़कर चले गए। बलि ने अमरावती पुरी पर अपना अधिकार कर लिया और तीनों लोकों को जीत लिया। ब्राह्मणो ने बलि से सौ अश्वमेध यज्ञ करवाए, जिसमें निन्यानवे पूर्ण हो गए एक शेष पर, यज्ञों के प्रभाव से बलि की कीर्ति तीनों लोकों, दसों दिशाओं मे फैल गई।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! जब देवमाता अदिति को ज्ञात हुआ कि बलि ने स्वर्ग पर अधिकार कर लिया, और देवता स्वर्ग छोड़कर छिप गये हैं, तो उन्हे बहुत कष्ट हुआ।

⇒ उन्होंने अपने पति कश्यप मुनि से कहा - प्रभो! दैत्यों के राजा बलि ने बलवान दैत्यों के साथ मिलकर हमारी सम्पत्ति और रहने का स्थान तक छीन लिया है। आप हमारी रक्षा कीजिए। आप विचार करके ऐसा उपाय बताइए जिससे मेरे पुत्रों को वे खोई हुई वस्तुए पुनः प्राप्त हो जाए।



231

=) कश्यप जी ने कहा - देवी! जब मुझे सन्तान की कामना हुई थी, तब मैंने भगवान को प्रसन्न करने वाले जिस व्रत का उपदेश ब्रह्मा जी से सुना था वही मैं तुम्हे बतलाता हूँ।

श्लोकः- फाल्गुनस्यामले पक्षे द्वादशाहं पयोव्रतः।
अर्चयेदरविन्दाक्षं भक्त्या परमयान्वितः॥

⇒ देवी! एक व्रत है "पयोव्रत" इस व्रत को फाल्गुन शुक्ल पक्ष प्रतिपदा से लेकर द्वादशी तिथि अर्थात बारह दिन तक दूध पीकर रहना चाहिए

=) बारह दिन तक प्रतिदिन भगवान की आराधना, होम, और पूजा करनी चाहिए ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए पृथ्वी पर शयन करना चाहिए।

=) त्रयोदशी के दिन विधि जानने वाले ब्राह्मणो के द्वारा शास्त्रोक्त विधी से भगवान विष्णुको पंचामृतस्नान कराकर विधिवत पूजन करना चाहिए। दूध से चरु (खीर) बनाकर भोग लगाना चाहिए, तथा खीर से यज्ञ मे आहुति देनी चाहिए, गुण से निर्मित नैवेद्य भी अर्पित कर सकते है।

PAGE NO.: 237
DATE: / /20

⇒ इसके उपरान्त यज्ञसम्पन्न कराने वाले आचार्य को वस्त्र, आभूषण और गौ आदि देकर सन्तुष्ट करना चाहिए।

⇒ श्री शुकदेव जी कहते - परीक्षित! अपने पतिदेव महर्षि कश्यप जी का उपदेश सुनकर अदिति ने बड़ी सावधानी से बारह दिन तक इस व्रत का अनुष्ठान किया तब पुरुषोत्तम भगवान प्रसन्न होकर प्रकट हो गए।

⇒ श्री भगवान ने कहा - देवताओं की जननी अदिति! तुम्हारी इच्छा को मै जानता हूँ। परन्तु देवि! इस समय दैत्यसेनापति जीते नही जा सकते, क्यो कि ईश्वर और ब्राह्मण दोनो ही उनके अनुकूल है। और मै राजाबलि को युद्ध मे मार भी नही सकता, क्यो कि मैने प्रह्लाद को वचन दिया है, कि तुम्हारे वंश मे जन्म लेने वाले किसी भी व्यक्ति को मारूँगा नही।

⇒ इसलिए हे देवि - मै तुम्हारे इस व्रत को सफल करने के लिए अंशरूप मे कश्यप के वीर्य मे प्रवेश करूँगा और तुम्हारा पुत्र बनकर आऊँगा। दैत्यो से तुम्हारे पुत्रो की रक्षा करूँगा। इतना कहकर भगवान वही अन्तर्धान हो गए।

⇒ समय आने पर भाद्रपद मास शुक्लपक्ष श्रवण नक्षत्र अभिजित मुहूर्त मे द्वादशी तिथि को भगवान हरि देवमाता अदिति के यहाँ प्रकट हो गए। जिस तिथि को वामन भगवान प्रकट होकर पधारे उस तिथि को विजया द्वादशी कहते है।

⇒ जब अदिति ने अपने गर्भ से प्रकट हुए परम पुरुष परमात्मा को देखा, तो वह आश्चर्यचकित और परमानन्दित हो गई। कश्यप जी भगवान को योगमाया से शरीर धारण किए हुए देख विस्मित हो गए और कहने लगे 'प्रभु आपकी जय हो'।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! देखते ही देखते नारायण भगवान ने अपने आयुध और आभूषणो को गायब कर दिया और वामन ब्रह्मचारी का रूप धारण कर लिया।

श्लोकः॰ तं वटुं वामनं दृष्ट्वा मोदमाना महर्षयः
कर्माणि कारयामासुः पुरस्कृत्य प्रजापतिम्।

⇒ भगवान् को वामन ब्रह्मचारी के रूप मे देखकर महर्षियों को बड़ा आनन्द हुआ

⇒ सभी महर्षियो ने कश्यप प्रजापति

⇒ को आगे करके वामन भगवान का जातकर्म, और उपनयन संस्कार कराया। भगवान के उपनयन संस्कार मे सभी देवी देवता पधारे, हमारे यहा जब उपनयन संस्कार होता है, तो जिसका यज्ञोपवीत संस्कार होता है उसे सभी लोग भिक्षा देते है, भगवान का भी जब उपनयन संस्कार हुआ तो सभी देवी, देवताओ ने भगवान को भिक्षा दी।

⇒ देव गुरु बृहस्पति ने यज्ञोपवीत संस्कार विधि सम्पन्न कराई, गायत्री के अधिष्ठातृ - देवता सविता ने उन्हे गायत्री का उपदेश किया।

⇒ पृथ्वी ने कृष्णमृग का चर्म, चन्द्रमा ने दण्ड माता अदिति ने कौपीन, आकाश ने छत्र ब्रह्मा ने कमण्डलु, सप्तर्षियो ने कुशआसन माता सरस्वती ने रुद्राक्ष की माला, कुबेर ने भिक्षा का पात्र, भगवती उमा ने भिक्षा प्रदान की।

⇒ देवमाता अदिति ने वामन भगवान से कहा इतनी भिक्षा से काम नही चलेगा, इसलिए नर्मदा नदी के उत्तरतट पर भृगुकच्छ नाम का एक स्थान है जहा राजा बलि यज्ञ कर रहे है, वहा जाइए, और भिक्षा मे हमारे पुत्रो का खोया हुआ सिंहासन, और ऐश्वर्य मांग लीजिए।

⇒ माँता की आज्ञा पाकर वामन भगवान नर्मदा के उत्तरतट पर भृगुकच्छ नाम के

240

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ स्थान पर पहुँचे जहाँ राजा बलि ब्राह्मणों के साथ बैठकर यज्ञ कर रहे थे। जैसे ही बलि और भृगुवंशी ऋत्विजों ने वामन भगवान को देखा, तो उन्हें ऐसा जान पड़ा मानो साक्षात् सूर्यदेव का उदय हो रहा है।

⇒ राजा बलि ने देखा कि द्वार पर एक सुन्दर रूप वाले, सबको अपनी ओर आकर्षित करने वाले वामन भगवान खड़े हैं, यह देखकर राजा बलि हर्षित हो गए। आप यज्ञ कर रहे हों, आपके घर कोई ब्राह्मण देवता पधारे, इससे अधिक सौभाग्य की बात क्या हो सकती है। राजा बलि ने द्वार पर आकर वामन भगवान का स्वागत किया।

श्लोकः स्वागतं ते नमस्तुभ्यं ब्रह्मन्किं करवाम ते

ब्रह्मर्षीणां तपः साक्षान्मन्ये त्वाऽऽर्य वपुर्धरम्।

⇒ राजा बलि ने कहा - प्रभो! आपको मैं नमस्कार करता हूँ। आज्ञा कीजिए, मैं आपकी क्या सेवा करूँ? आर्य! ऐसा जान पड़ता कि बड़े-बड़े ब्रह्मर्षियों की तपस्या ही स्वयं मूर्तिमान होकर मेरे सामने आ गई हो।

241

PAGE NO.:
DATE: / /20

श्लोक॰ अद्य नः पितरस्तृप्ता अद्य नः पावितं कुलम्।
अद्य स्विष्टः क्रतुरयं यद् भवानागतो गृहान् ॥

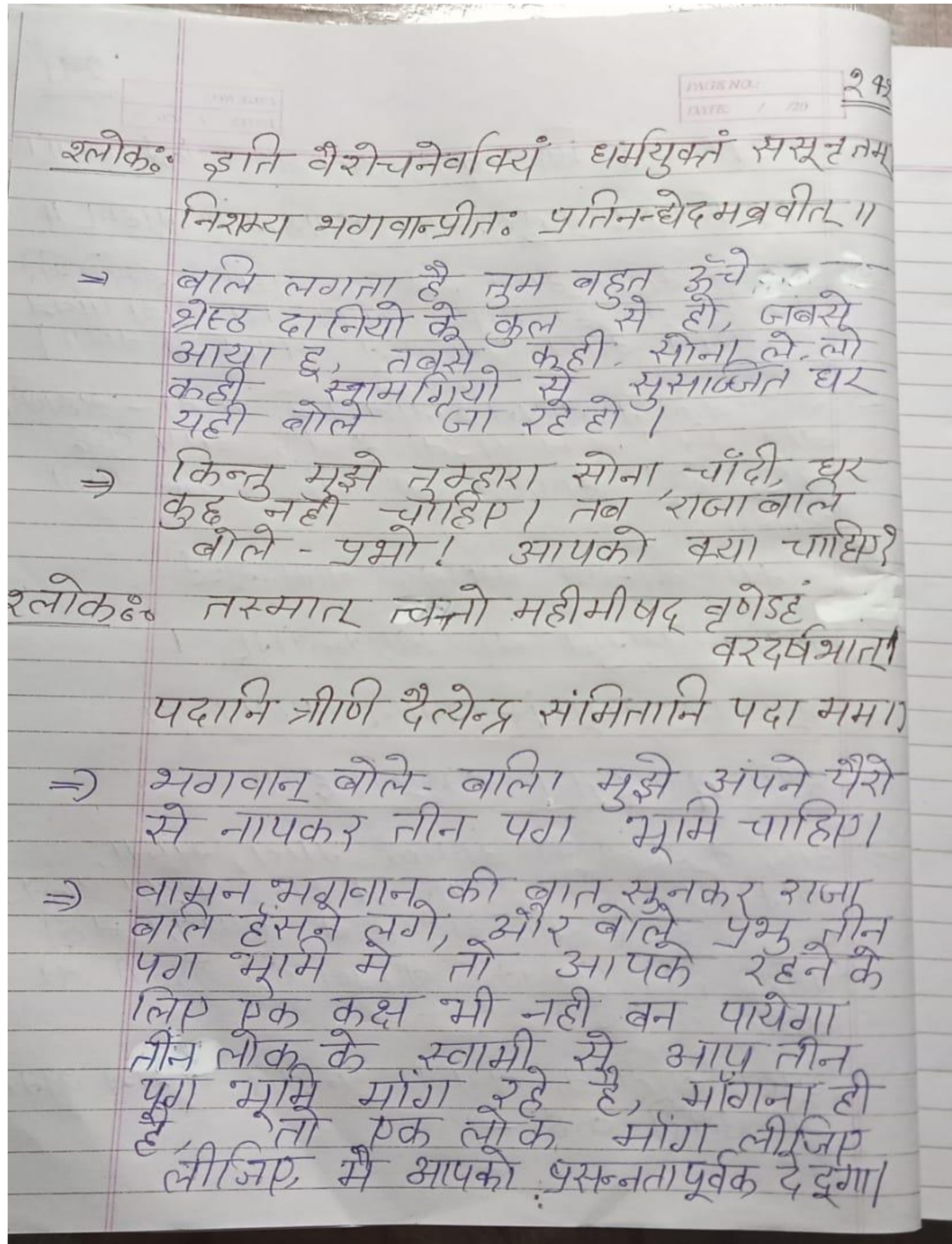
⇒ प्रभो! आज आप मेरे घर पधारे इससे मेरे पितर तृप्त हो गए। आज मेरा वंश पवित्र हो गया। आज मेरा यज्ञ सफल हो गया।

⇒ राजा बलि ने वामन भगवान् से कहा- ब्रह्मचारी जी! ऐसा जान पड़ता है कि आप कुछ चाहते हैं। आपको जो भी चाहिए माँग लीजिए।

श्लोक- गां कान्चनं गुणवद् धाम मृष्टं
तथान्नपेयमुत वा विप्रकन्याम् ।
ग्रामान् समृद्धांस्तुरगान् गजान् वा
रथांस्तथार्हत्तम सम्प्रतीच्छ ॥

⇒ आप कहो तो मैं आपको गाय, सोना, सामाग्रियों से सुसज्जित घर, पवित्र अन्न, दे दूं, और यदि यह सब आपको नहीं चाहिए तो, आपका ब्राह्मण की कन्या से विवाह करा दे?

⇒ राजा बलि के वचन सुनकर वामन भगवान ने उनसे कहा-



242

श्लोकः इति वैरोचनेर्वाक्यं धर्मयुक्तं ससूनृतम्
निशम्य भगवान्प्रीतः प्रतिनन्द्येदमब्रवीत् ॥

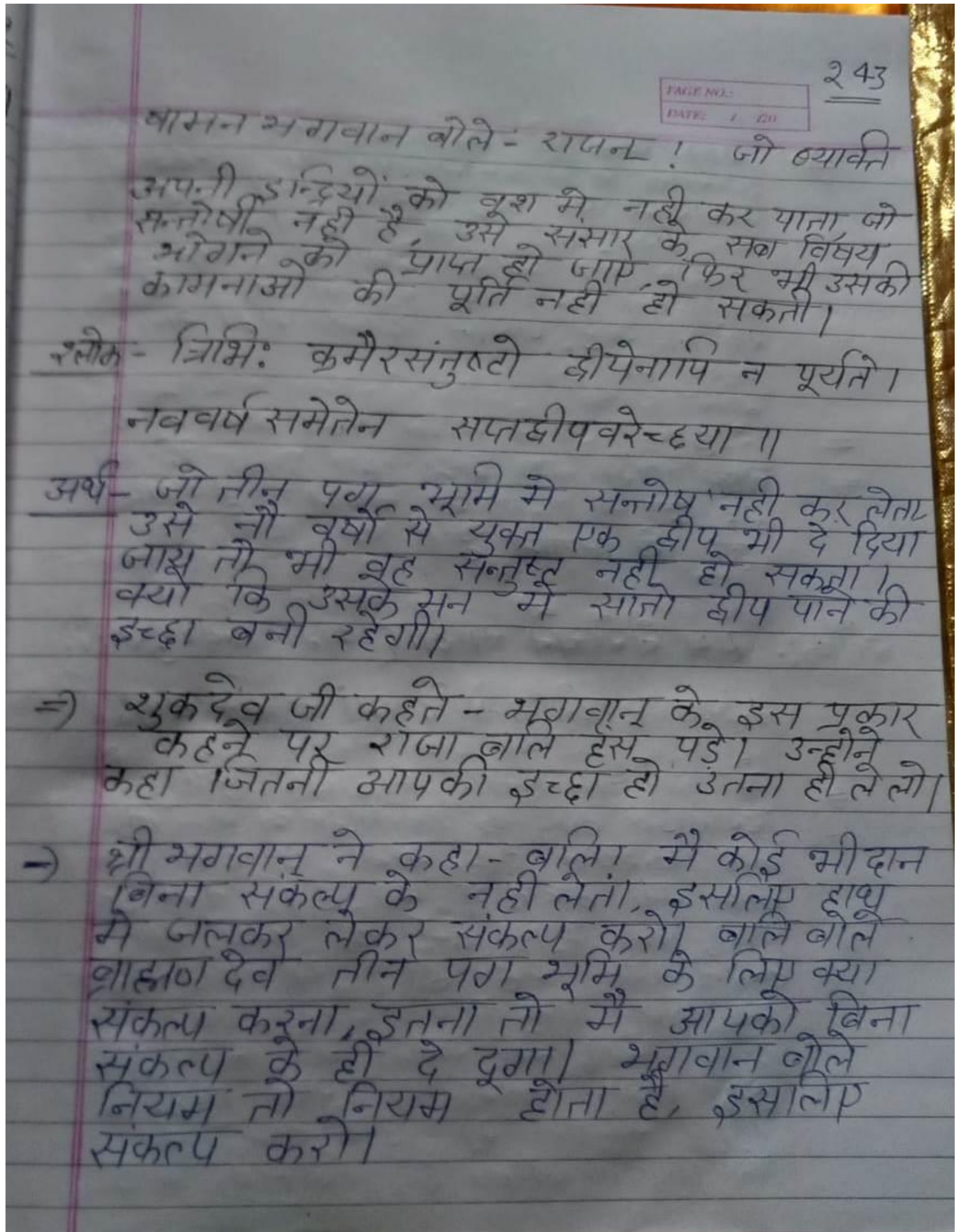
⇒ बलि लगता है तुम बहुत ऊँचे श्रेष्ठ दानियो के कुल से हो, जबसे आया हू, तबसे कही सोना ले लो कही सामग्रियो से सुसज्जित घर यही बोले जा रहे हो।

⇒ किन्तु मुझे तुम्हारा सोना चाँदी घर कुछ नही चाहिए। तब राजा बलि बोले - प्रभो! आपको क्या चाहिए?

श्लोकः तस्मात् त्वत्तो महीमीषद् वृणेऽहं वरदर्षभात्।
पदानि त्रीणि दैत्येन्द्र संमितानि पदा मम॥

⇒ भगवान बोले- बलि। मुझे अपने पैरो से नापकर तीन पग भूमि चाहिए।

⇒ वामन भगवान की बात सुनकर राजा बलि हँसने लगे, और बोले प्रभु तीन पग भूमि मे तो आपके रहने के लिए एक कक्ष भी नही बन पायेगा तीन लोक के स्वामी से आप तीन पग भूमि माँग रहे है, माँगना ही है, तो एक लोक माँग लीजिए लीजिए मै आपको प्रसन्नतापूर्वक दे दूंगा।


243
PAGE NO.:
DATE:
वामन भगवान बोले- राजन ! जो व्यक्ति अपनी इन्द्रियों को वश मे नही कर पाता जो सन्तोषी नही है, उसे संसार के सब विषय भोगने को प्राप्त हो जाए फिर भी उसकी कामनाओ की पूर्ति नही हो सकती।
श्लोक- त्रिभिः क्रमैरसंतुष्टो द्वीपेनापि न पूर्यते।
नववर्ष समेतेन सप्तद्वीपवरेच्छया ।।
अर्थ- जो तीन पग भूमि मे सन्तोष नही कर लेता उसे नौ वर्षों से युक्त एक द्वीप भी दे दिया जाय तो भी वह सन्तुष्ट नही हो सकता। क्यो कि उसके मन मे सातो द्वीप पाने की इच्छा बनी रहेगी।
=> शुकदेव जी कहते - भगवान् के इस प्रकार कहने पर राजा बलि हँस पड़े। उन्होंने कहा जितनी आपकी इच्छा हो उतना ही ले लो।
-> श्री भगवान् ने कहा- बलि। मै कोई भी दान बिना संकल्प के नही लेता, इसलिए हाथ मे जल लेकर संकल्प करो। बलि बोले ब्राह्मण देव तीन पग भूमि के लिए क्या संकल्प करना, इतना तो मै आपको बिना संकल्प के ही दे दूगा। भगवान बोले नियम तो नियम होता है, इसलिए संकल्प करो

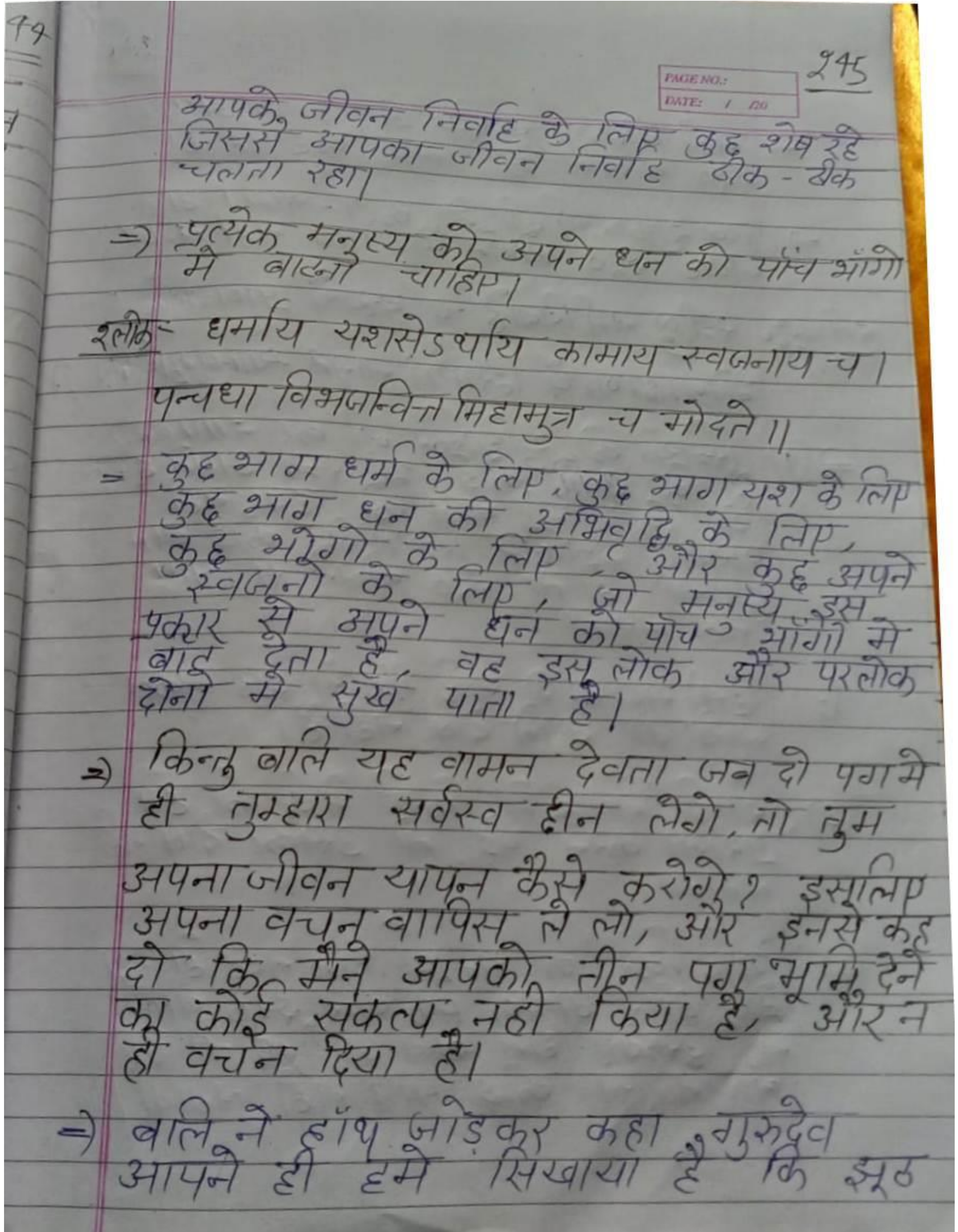
244

⇒ शुक्राचार्य जी भगवान और बाली की सारी बाते सुन रहे थे उन्हें वामन भगवान पर कुछ संशय हुआ, उन्हें बार बार ऐसा लग रहा था जैसे उन्होंने इस ब्राह्मण को कही देखा है, फिर उन्हें याद आ गया कि ब्राह्मण के रूप मे सामने खड़े वामन देवता नही भगवान विष्णु ही है।

= शुक्राचार्य जी ने तुरन्त राजा बाली से कहा बाली जिसे तुम तीन पग भूमि देने जा रहे हो, ना ये वामन है और न ही ये तिरपन है।

श्लोक:- एष वैरोचने साक्षाद् भगवान्विष्णुरव्यय:
कश्यपाददितेर्जातो देवानां कार्यसाधक:॥

⇒ ये विरोचनकुमार भगवान विष्णु है देवताओ का कार्य सिद्ध करने के लिए कश्यप की पत्नी अदिति के गर्भ से अवतीर्ण हुए है। तुम इन्हे तीन पग भूमि देने के लिए संकल्प करने जा रहे हो? ये विश्वव्यापक भगवान एक पग मे पृथ्वी और दूसरे पग मे स्वर्ग को नाप लेगे यह तुमसे तुम्हारा सब कुछ छीन लेगा। संसार मे उसी दान की प्रशंसा की जाती है, जिसके बाद


245

आपके जीवन निर्वाह के लिए कुछ शेष रहे जिससे आपका जीवन निर्वाह ठीक-ठीक चलता रहा।

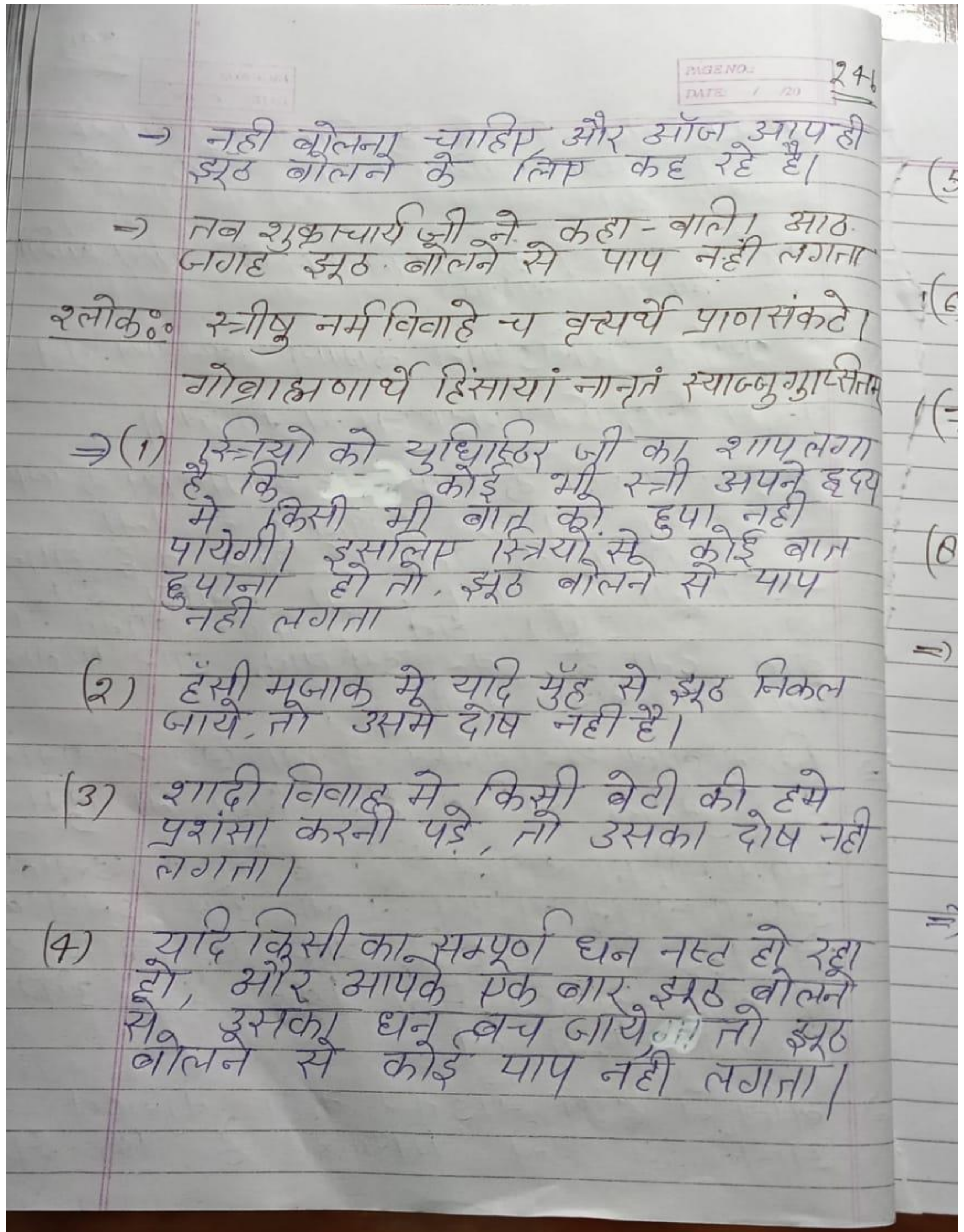
=) प्रत्येक मनुष्य को अपने धन को पाँच भागो मे बाटना चाहिए।

श्लोक- धर्माय यशसेऽर्थाय कामाय स्वजनाय च।
पन्चधा विभजन्वित्त मिहामुत्र च मोदते॥

= कुछ भाग धर्म के लिए, कुछ भाग यश के लिए कुछ भाग धन की अभिवृद्धि के लिए, कुछ भोगो के लिए और कुछ अपने स्वजनो के लिए, जो मनुष्य इस प्रकार से अपने धन को पाँच भागो मे बाट देता है, वह इस लोक और परलोक दोनो मे सुख पाता है।

=) किन्तु बलि यह वामन देवता जब दो पग मे ही तुम्हारा सर्वस्व छीन लेगे, तो तुम अपना जीवन यापन कैसे करोगे? इसलिए अपना वचन वापिस ले लो, और इनसे कह दो कि मैने आपको तीन पग भूमि देने का कोई संकल्प नही किया है, और न ही वचन दिया है।

=) बलि ने हाँथ जोड़कर कहा, गुरुदेव आपने ही हमे सिखाया है कि झूठ



246

→ नही बोलना चाहिए और आज आप ही झूठ बोलने के लिए कह रहे है।

→ तब शुक्राचार्य जी ने कहा - बाली! आठ जगह झूठ बोलने से पाप नही लगता

श्लोक:- स्त्रीषु नर्मविवाहे च वृत्त्यर्थे प्राणसंकटे।
गोब्राह्मणार्थे हिंसायां नानृतं स्याज्जुगुप्सितम्

⇒(1) स्त्रियो को युधिष्ठिर जी का शाप लगा है कि कोई भी स्त्री अपने हृदय मे किसी भी बात को छुपा नही पायेगी। इसलिए स्त्रियों से कोई बात छुपाना हो तो, झूठ बोलने से पाप नही लगता

(2) हँसी मजाक मे यदि मुँह से झूठ निकल जाये, तो उसमे दोष नही है।

(3) शादी विवाह मे किसी बेटी की हमे प्रशंसा करनी पड़े, तो उसका दोष नही लगता।

(4) यदि किसी का सम्पूर्ण धन नस्ट हो रहा हो, और आपके एक बार झूठ बोलने से उसका धन बच जाये, तो झूठ बोलने से कोई पाप नही लगता।

PAGE NO.: 247
DATE: / /20

(5) किसी के प्राण संकट मे पड़े हो उसके प्राणो को बचाने के लिए झूठ बोलना पड़े, तो उसका दोष नही लगता।

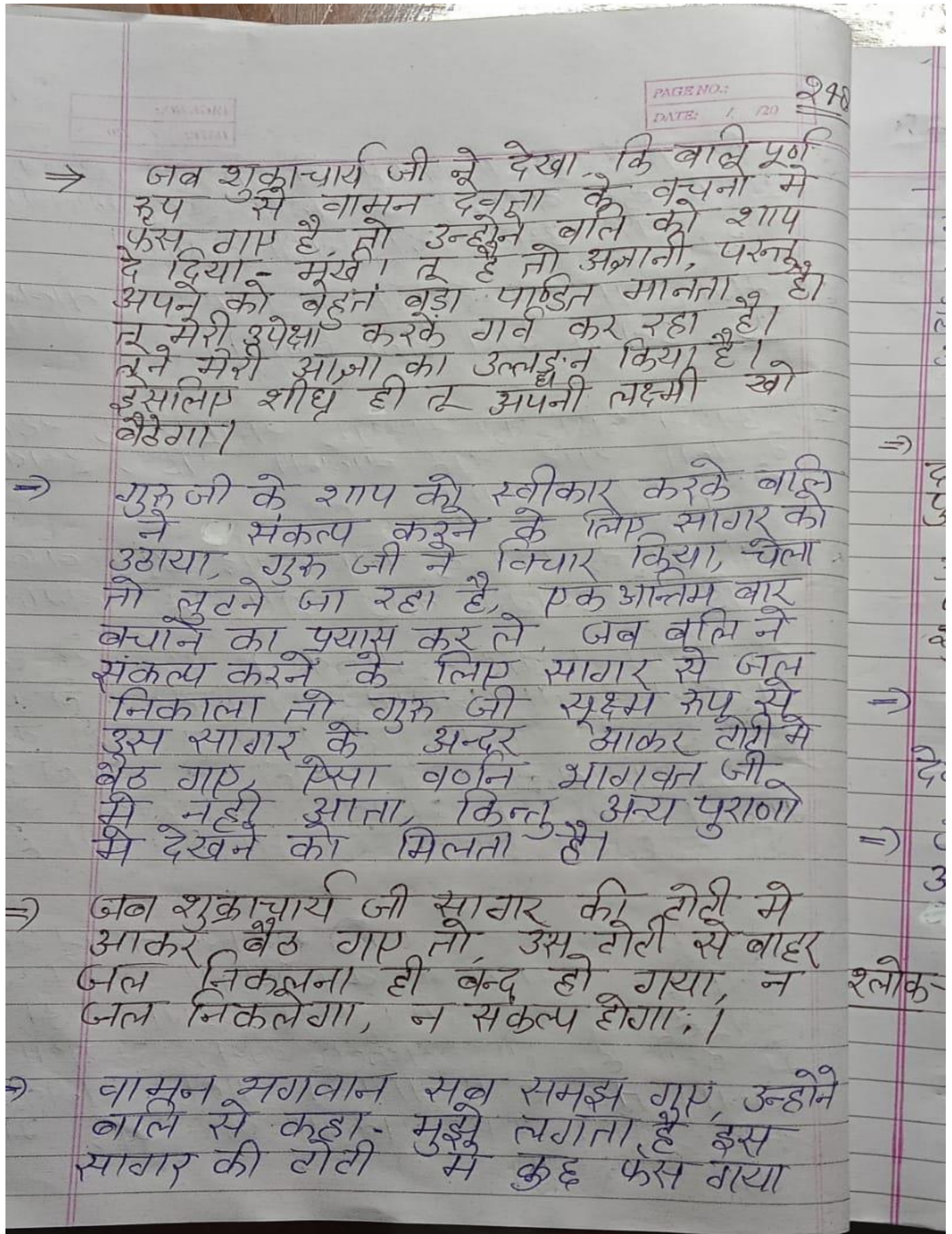
(6) गऊ हत्या को रोकने के लिए झूठ बोलना पड़े, उसका दोष नही लगता।

(7) अपने धर्म की सुरक्षा, संस्कृति के रक्षण के लिए यादि झूठ बोलना पड़े, उसका दोष नही लगता।

(8) ब्राह्मण के हित के लिए यदि झूठ बोलना पड़े तो उसका कोई दोष नही लगता।

=) राजा बलि ने कहा- गुरुवर! यदि ये साक्षात भगवान है, तो त्रिलोकी को लूटकर ले जाये, मुझे इसकी परवाह नही। लोग यही कहेंगे कि भगवान भी बलि के यहाँ भीख मांगने गये थे। भगवान न होकर यदि ये साधारण ब्राह्मण है, तो तीन पग ही लेगो।

=) गुरु शिष्य की बात सुनकर वामन भगवान बोले- तुम लोग क्या वार्ता करने मे लगे हो, यदि तीन पग भूमि मुझे दान मे देनी है, तो संकल्प करो, अन्यथा मै चला।



PAGE NO.: 248
DATE: / /20

→ जब शुक्राचार्य जी ने देखा कि बलि पूर्ण रूप से वामन देवता के वचनों मे फंस गए है तो उन्होंने बलि को शाप दे दिया- मूर्ख! तू है तो अज्ञानी, परन्तु अपने को बहुत बड़ा पण्डित मानता है। तू मेरी उपेक्षा करके गर्व कर रहा है। तूने मेरी आज्ञा का उल्लङ्घन किया है। इसलिए शीघ्र ही तू अपनी लक्ष्मी खो बैठेगा।

→ गुरु जी के शाप को स्वीकार करके बलि ने संकल्प करने के लिए सागर को उठाया, गुरु जी ने विचार किया, चेला तो लुटने जा रहा है, एक अन्तिम बार बचाने का प्रयास कर ले. जब बलि ने संकल्प करने के लिए सागर से जल निकाला तो गुरु जी सूक्ष्म रूप से उस सागर के अन्दर आकर टोटी मे बैठ गए, ऐसा वर्णन भागवत जी मे नही आता, किन्तु अन्य पुराणो मे देखने को मिलता है।

→ जब शुक्राचार्य जी सागर की टोटी मे आकर बैठ गए तो उस टोटी से बाहर जल निकलना ही बंद हो गया, न जल निकलेगा, न संकल्प होगा।

→ वामन भगवान सब समझ गए, उन्होने बलि से कहा- मुझे लगता है इस सागर की टोटी मे कुछ फंस गया

249

PAGE NO.:
DATE: / /20

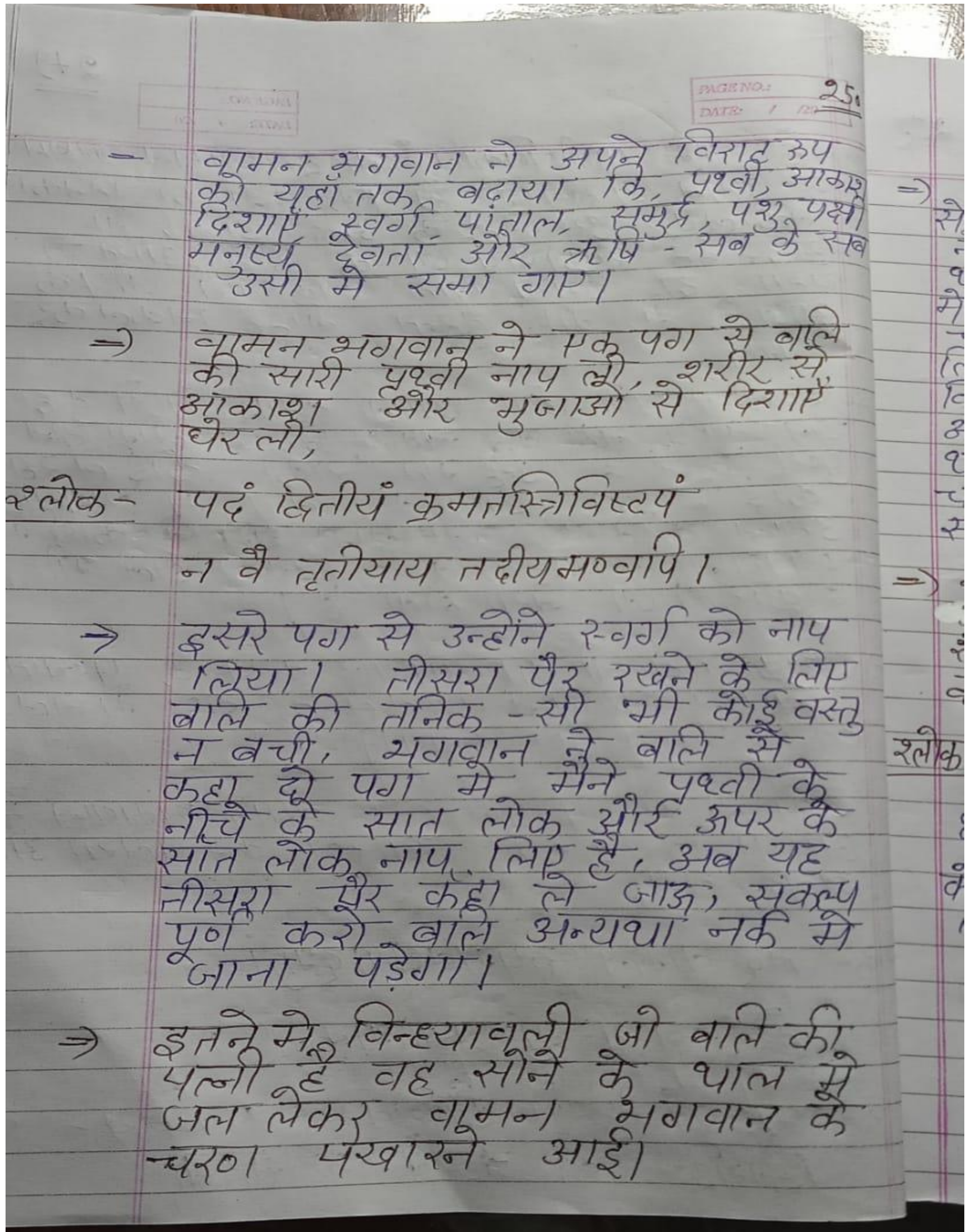
है। मैं अभी निकाल देता हूं, वामन भगवान ने अपने आसन में से एक कुश का तिनका निकालकर उस टोटी के अन्दर डाला, तो अन्दर बैठे शुक्राचार्य जी के सीधे आँख में लगा, दो आँख वाले शुक्राचार्य जी एक आँख के हो गए, तुरन्त बाहर निकलकर भागे।

=> बन्धुओ यदि आप अपनी कमाई में से कुछ दान, पुण्य नहीं कर सकते, तो जो लोग दान पुण्य करते है, उन्हे मत रोको, कोई ले रहा, कोई दे रहा, आप क्यो बीच में व्यवधान उत्पन्न करते है, जो लोग धर्म के कार्य मे व्यवधान उत्पन्न करते है, उनका हाल भी शुक्राचार्य जी जैसा होता है।

=> शुक्राचार्य जी का उपचार करने के पश्चात वामन भगवान ने बलि के हाथ मे जल देकर संकल्प पूर्ण कराया।

=> जैसे ही संकल्प पूर्ण हुआ, वामन भगवान ने अपना विराट रुप धारण कर लिया और बढ़ने लगे।

श्लोक- तद् वामनं रुपमवर्धताद्‌भुतं
हरेरनन्तस्य गुणत्रयात्मकम् ।
भूः खं दिशो द्यौर्विवराः पयोधय-
स्तिर्यङ्‌नृदेवा ऋषयो यदासत ॥


25

→ वामन भगवान ने अपने विराट रूप को यहां तक बढ़ाया कि, पृथ्वी, आकाश दिशाएं स्वर्ग पाताल, समुद्र, पशु, पक्षी मनुष्य, देवता और ऋषि - सब के सब उसी मे समा गए।

→ वामन भगवान ने एक पग से बलि की सारी पृथ्वी नाप ली, शरीर से आकाश और भुजाओं से दिशाएं घेर ली,

श्लोक- पदं द्वितीयं क्रमतस्त्रिविष्टपं
न वै तृतीयाय तदीयमण्वपि।

→ दूसरे पग से उन्होंने स्वर्ग को नाप लिया। तीसरा पैर रखने के लिए बलि की तनिक - सी भी कोई वस्तु न बची, भगवान ने बलि से कहा दो पग मे मैने पृथ्वी के नीचे के सात लोक और ऊपर के सात लोक नाप लिए है, अब यह तीसरा पैर कहां ले जाऊ, संकल्प पूर्ण करो बलि अन्यथा नर्क मे जाना पड़ेगा।

→ इतने मे विन्ह्यावली जो बलि की पत्नी है वह सोने के थाल मे जल लेकर वामन भगवान के चरण पखारने आई।

251

PAGE NO.:
DATE: / /20

=) विन्ध्यावली ने हाथ जोड़कर वामन भगवान से कहा - प्रभो! एक बात बताइए गजेन्द्र ने आपको सिर्फ एक कमलपुष्प चढ़ाया था, आप उसमे ही प्रसन्न हो गए, मेरे पति ने तो आपके चरणो मे सबकुछ चढ़ा दिया, फिर भी आपने इनको बांध लिया तब भगवान ने मुस्कुराकर कहा विन्ध्याबली, गजेन्द्र ने एक कमल पुष्प नही अपितु अपने आप को ही अर्पित कर दिया था, किन्तु तुम्हारे पति ने अपना सबकुछ चढ़ा दिया। अपने अंहकार और स्वयं को अर्पित नही किया।

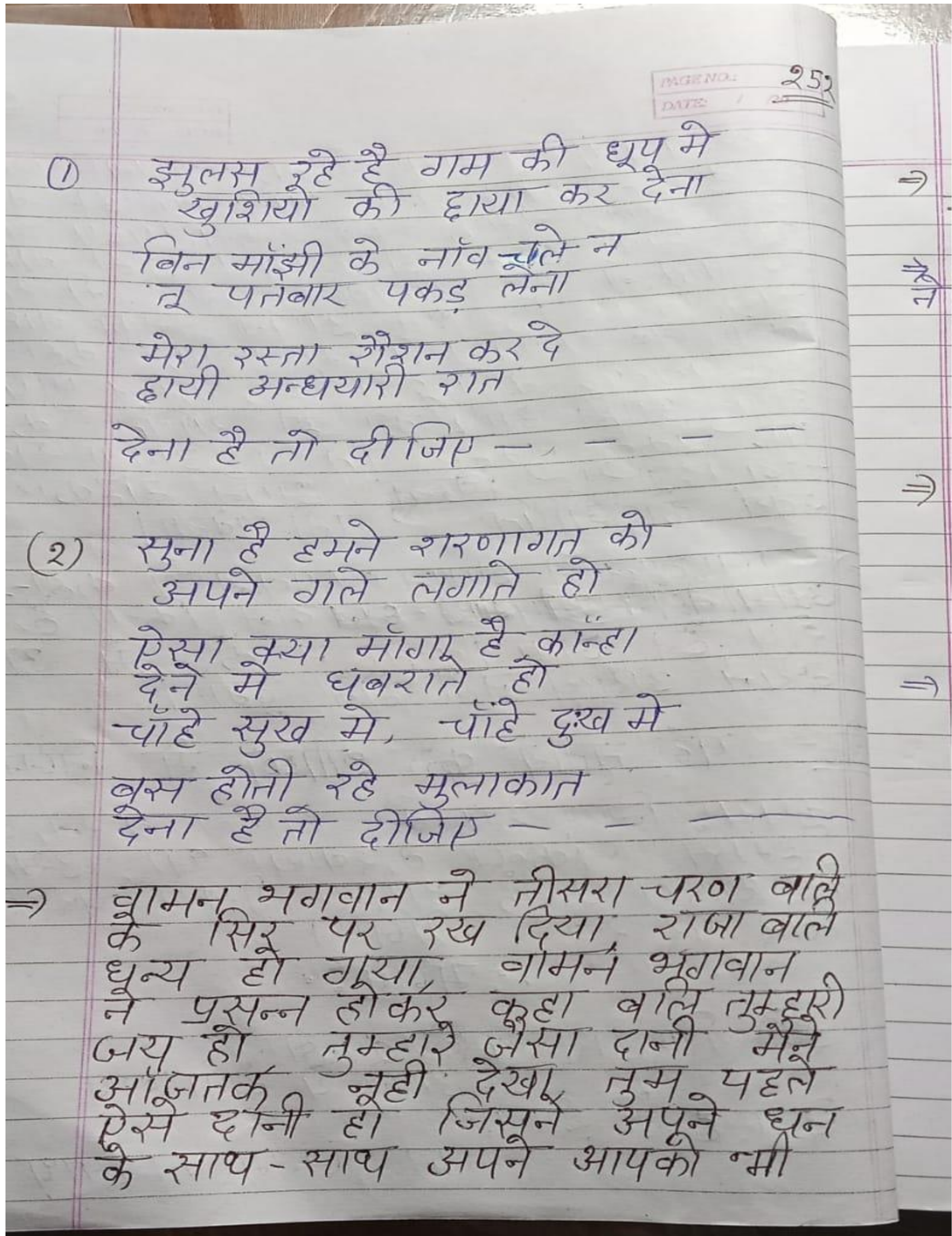
=) राजा बलि ने वामन भगवान से कहा - प्रभो! अभी मैने अपना धन दान किया है, दाता शेष है। आप चिन्ता न करे, मै अपना वचन असत्य नही होने दूगा।

श्लोक- पदं तृतीयं कुरु शीर्ष्णि मे निजम्।

कृपया जिस रुप को धारण करके आपने हमसे संकल्प करवाया था, उसी रुप को धारण करके, अपना तीसरा चरण मेरे सिर पर रख दीजिए।

: भजन :

मेरे सिर पर रख दो कान्हा
अपने ये दोनो हाथ
देना है तो दीजिए
जनम, जनम का साथ ॥



PAGE NO.: 252

DATE:

(1) झुलस रहे है गम की धूप मे
खुशियो की छाया कर देना
बिन माँझी के नॉव चले न
तू पतवार पकड़ लेना
मेरा रस्ता रौशन कर दे
छायी अन्धयारी रात
देना है तो दीजिए — — — —

(2) सुना है हमने शरणागत को
अपने गले लगाते हो
ऐसा क्या मॉगा है कान्हा
देने मे घबराते हो
चॉहे सुख मे, चॉहे दुःख मे
बस होती रहे मुलाकात
देना है तो दीजिए — — ——

⇒ वामन भगवान ने तीसरा चरण बलि के सिर पर रख दिया, राजा बलि धन्य हो गया, वामन भगवान ने प्रसन्न होकर कहा बलि तुम्हारी जय हो तुम्हारे जैसा दानी मैंने आजतक नही देखा, तुम पहले ऐसे दानी हो जिसने अपने धन के साथ-साथ अपने आपको भी

PAGE NO.
DATE / /20

⇒ दान कर दिया, भगवान इस प्रकार कह ही रहे थे, तभी प्रह्लाद जी वहाँ आ पहुँचे।

⇒ प्रह्लाद जी राजा बलि के पितामह है, प्रह्लाद जी ने भगवान को प्रणाम करके कहा- प्रभो ! मेरा पोता तो मेरे से भी आगे निकल गया, मेरे सिर पर तो आपने अपना हाथ रखा था, मेरे पोते के सिर पर आपने अपना पैर रख दिया।

⇒ भगवान ने प्रह्लाद जी से कहा, आपका पोता आपसे आगे तो निकलेगा ही क्यो कि उसने अपने धन के साथ-साथ अपने आप को भी दान कर दिया बलि का दान श्रेष्ठ दानो मे गिना जायेगा

⇒ राजा बलि ने अपना सर्वस्व भगवान को अर्पित कर दिया, इसलिए ही कहते है, दान तो बलि के जैसा होना चाहिए, तब से ही बलि दान की प्रथा प्रारम्भ हो गई, बलिदान - अर्थात्- बलि के जैसे अपना सर्वस्व दान कर देना ही बलिदान कहलाता है।

⇒ वामन भगवान ने राजा बलि से कहा - राजन् मैं तुमसे बहुत प्रसन्न हूँ, इसलिए मैं तुम्हें सुतल लोक का राज्य दे रहा हूँ, तुम अपने पितामह प्रह्लाद जी के साथ सुतल लोक के राजा बनकर राज्य करो, समय आने पर सावर्णि मन्वन्तर मे तुम इन्द्र बनोगे। यदि तुम्हारी और कुछ माँगने की इच्छा हो तो माँग लो।

PAGE NO.: 254

⇒ राजा बलि ने भगवान से कहा- प्रभो यदि आप कुछ देना चाहते हैं, तो एक ही वर दें- जब भी मैं अपने महल से निकलूँ, तो द्वार पर आपके दर्शन करूँ ?

⇒ भगवान ने बलि से कहा- इसका मतलब तो ये हुआ, हम तुम्हारे द्वारपाल बन जाए? तुम अपने महल से कब निकलते हो, कब अन्दर जाते हो, यह तो मैं तब जान पाऊंगा, जब मैं तुम्हारा द्वारपाल बन जाऊंगा।

⇒ भगवान ने कहा- तुमने अपने आपको दान करके मुझे प्रसन्न किया है, इसलिए मैं तुम्हारे प्रेम के डोरी में बंध गया हूं, मैं तुम्हारी इच्छा को अवश्य पूर्ण करूगा, आज के बाद तुम जब भी महल से बाहर या अन्दर जाओगे तो द्वारपर तुम्हे मेरे दर्शन होगे। (1)

⇒ बन्धुओ प्रेम मे वो सामर्थ्य है, जो भगवान को भी अपना द्वारपाल (2) बना लेता है, कोई डोरी संसार मे ऐसा नही जिससे जीवात्मा परमात्मा को बाँध सके, माँ यशोदा ने भगवान को बहुत बाँधने का प्रयास किया अहंकार की रस्सी से भगवान नहीं बँधे, किन्तु जैसे ही अहंकार को छोड़कर प्रेम की डोर से भगवान

255

को बांधा तो भगवान् बंध जाए, प्रेम की डोर ही एक ऐसी डोर है, जिसमें भगवान को बाँधा जा सकता है।

:: भजन ::

प्रेम की डोर से बंधे भगवान रे -2
प्रेम भक्तिके भूखे भगवन
बिके प्रेम के भाँव रे - -
प्रेम की ड़ोर से - - - - - -

(1) एक - एक बेर उठाकर शबरी
पहले आधा खाए 2 —
फिर अपने हाथो भगवन को
झूठा बेर खिलाए -2
प्रभु राम की होठो पर भी
प्रेम भरी मुस्कान रे -2
प्रेम की ड़ोर से - - - -

(2) चलते - चलते राम एक दिन
शबरी के द्वार आए -2
पुलकित हो आनन्द में शबरी
नयनो नीर बहाए -2
आए तीन - तीन लोक के स्वामी
दीनन के मेहमान रे - —
प्रेम की ड़ोर से - - - —

PAGE NO.: 25
DATE: / /20

(3) वशीभूत हो प्रेम से जिनको
रघुनन्दन ने खाया-2
मरम न जाना उन बेरो का
लक्ष्मण ने ठुकराया-2
राम ही समझे अर्थ प्रेम का
लखन सका न जानरे-2
प्रेम की डोर से - - - - -

⇒ राजा बलि ने भगवान को प्रेम की डोरी मे बांध कर अपने महल का द्वारपाल बना लिया।

⇒ भगवान को गए हुए जब बहुत दिन हो गए, वह लौटकर नही आए, तो माता लक्ष्मी को चिन्ता होने लगी, माता लक्ष्मी विचार करने लगी ये मेरे स्वामी देवताओ का कार्य बनाने के लिए बलि के द्वार पर गए थे, बीच मे कहा अटक गए, अभी तक लौटकर नही आए।

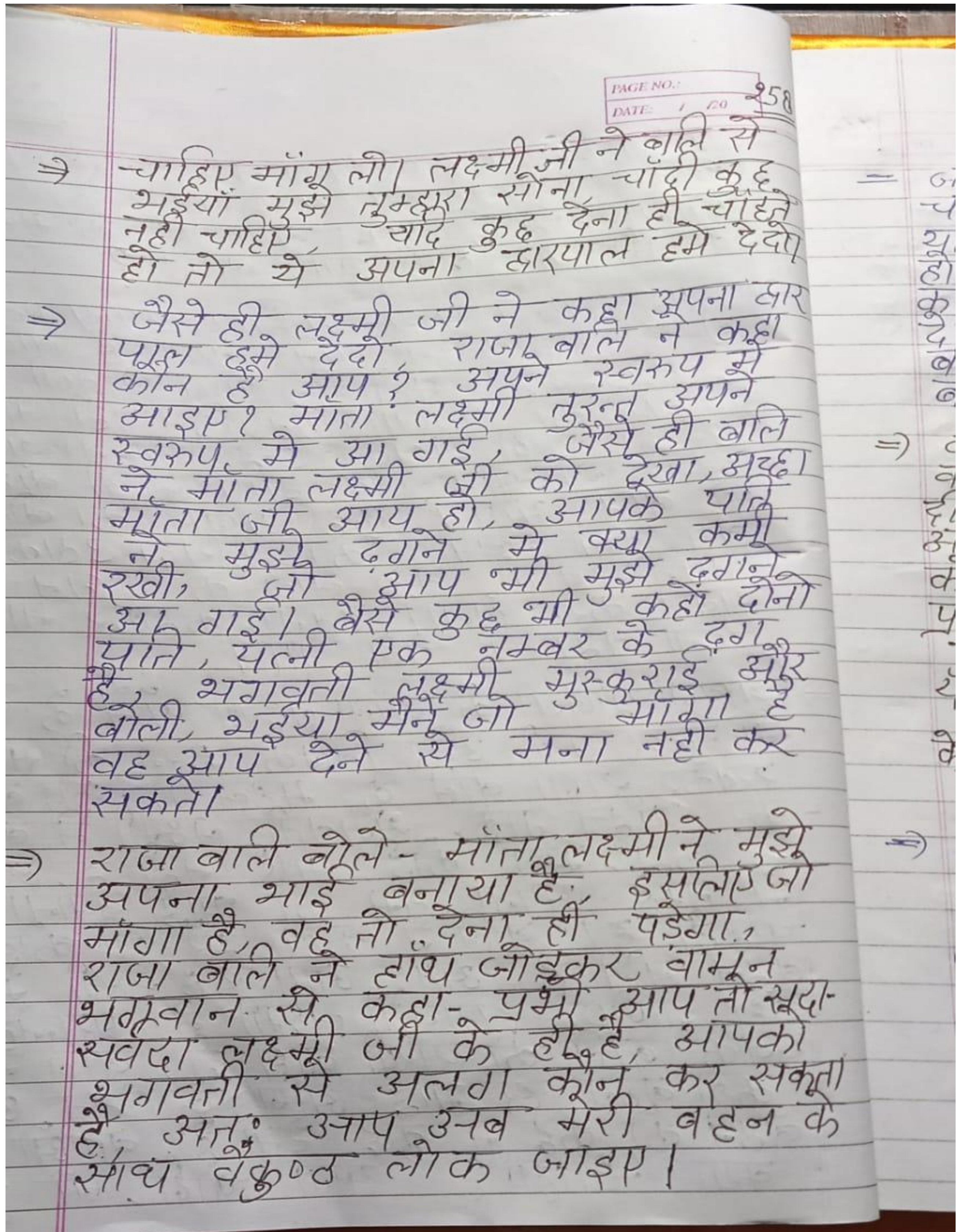
⇒ इतने मे नारदजी वँहा आ पंहुचे, लक्ष्मी जी ने नारद जी से पूछा- स्वामी देवताओ का कार्य बनाने गए थे किन्तु अभी तक लौटकर नही आए नारद जी ने कहा- आयेगे भी नही। क्या मतलब? मईया राजा बलि ने प्रेम की डोरी मे प्रभु को बांध लिया है, और वह द्वारपाल बनकर बलि के महल के मुख्यद्वार पर खड़े है।

257

⇒ मईयाँ ने नारद जी से कहा - इस समय बैकुंठ मे प्रभु की आवश्यकता है, इसलिए बालि के बन्धन से स्वामी को मुक्त करवाने का कोई उपाय बताइए?

⇒ नारद जी ने कहा - मईया! उपाय एक ही है। रक्षाबन्धन आने वाला है, बालि के कोई बहन नही है आप श्रावणी पूर्णिमा को राजा बालि के यहां जाकर उनको राखी बांधकर उन्हे अपना भाई बना लीजिए। जब आप राखी बांधेगी तो बालि आपसे कुछ मांगने को बोलेगा, बस इसी अवसर का फायदा उठाकर अपने स्वामी को बालि के बन्धन से मुक्त करा लेना। इतना कहकर नारद जी वहा से चले गए।

⇒ श्रावणी पूर्णिमा को माँता लक्ष्मी सोने के थाल मे सुन्दर राखी और तिलक करने की सामग्री रखकर राजा बालि के महल मे रुप बदल-कर पंहुच गई, भगवती लक्ष्मी ने बालि से कहा, मेरा कोई भाई नही है, इसलिए मै तुम्हे अपना धर्म का भाई बनाना चाहती हु। बालि ने कहा - मेरे भी कोई बहन नही है, अतः आप यह राखी मुझे बांध दीजिए, भगवती लक्ष्मी ने प्रसन्नता पूर्वक बालि को राखी बांध दी, बालि ने कहा बहन हर भाई आज के दिन अपनी बहन को कुछ न कुछ देता है, बताओ तुम्हे क्या चाहिए? सोना, चांदी, जो कुछ


PAGE NO.: 258
DATE: / /20

⇒ चाहिए माँग लो। लक्ष्मी जी ने बलि से भईयाँ मुझे तुम्हारा सोना चाँदी कुछ नही चाहिए यदि कुछ देना ही चाहते हो तो ये अपना द्वारपाल हमे दे दो

⇒ जैसे ही लक्ष्मी जी ने कहा अपना द्वारपाल हमे दे दो, राजा बलि ने कहा कौन है आप? अपने स्वरुप मे आइए। माता लक्ष्मी तुरन्त अपने स्वरुप मे आ गई, जैसे ही बलि ने माता लक्ष्मी जी को देखा, अच्छा माता जी आय हो, आपके पति ने मुझे ठगने मे क्या कमी रखी, जो आप भी मुझे ठगने आ गई। वैसे कुछ भी कहो दोनो पति, पत्नी एक नम्बर के ठग है, भगवती लक्ष्मी मुस्कुराई और बोली, भईया मैंने जो माँगा है वह आप देने से मना नही कर सकते।

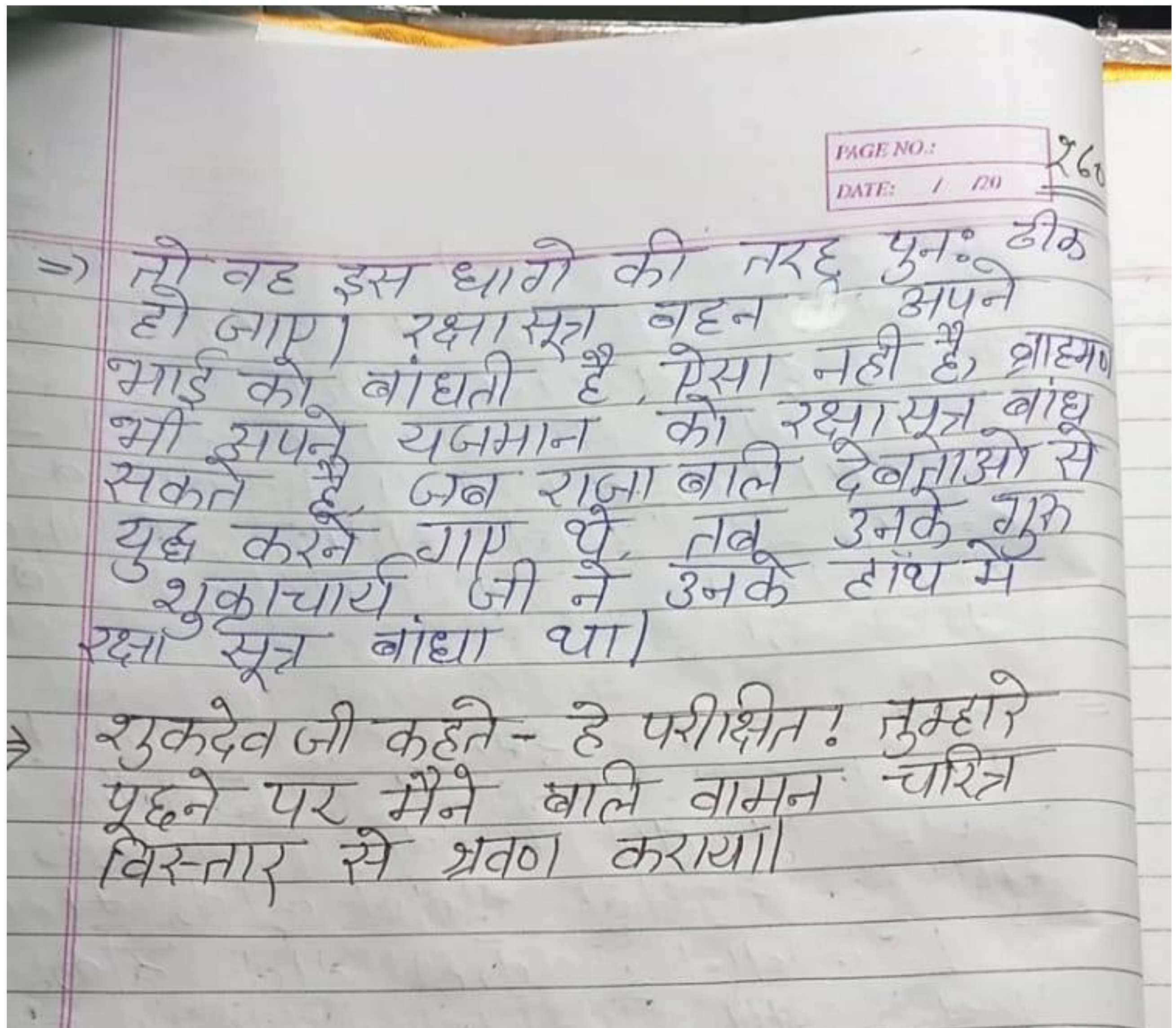
⇒ राजा बलि बोले - माँता लक्ष्मी ने मुझे अपना भाई बनाया है, इसलिए जो माँगा है, वह तो देना ही पड़ेगा, राजा बलि ने हाथ जोड़कर वामन भगवान से कहा- प्रभो आप तो सदा-सर्वदा लक्ष्मी जी के ही है, आपको भगवती से अलग कौन कर सकता है अतः आप अब मेरी बहन के साथ वैकुण्ठ लोक जाइए।

259

= जब भगवान लक्ष्मी जी के साथ बैकुण्ठ चलने को हुए तो पुनः बलि से कहा। यदि कुछ वरदान माँगने की इच्छा हो तो माँग लो, माता लक्ष्मी ने प्रभु का हाथ पकड़कर कहा एकबार वरदान देने पर तो उसने आपको द्वारपाल बना लिया, दुबारा वर देकर क्या बनने की इच्छा है।

=> बलि ने हाथ जोड़कर कहा - प्रभो! यदि वरदान देना चाहते है तो यह वर दे दीजिए कि वर्ष मे कुछ समय के लिए आप हमारे यहा सुतल लोक मे निवास करे। भगवान ने कहा बलि ठीक है प्रत्येक वर्ष देवशयनी एकादशी से लेकर देव उठनी एकादशी तक मै तुम्हारे यहा ही विश्राम किया करुगा, यह वर देकर भगवान नारायण माता लक्ष्मी के साथ वैकुण्ठ लोक चले गए।

=> बन्धुओ जिस दिन भगवती लक्ष्मी ने राजा बलि को राखी बांधी थी उसी दिन को हम लोग रक्षाबन्धन के नाम से जानते है, पहले राखी कच्चे सूत की हुआ करती थी, आज कल तो सोने चाँदी की भी बाजार मे आती है, कच्चासूत बीचसे यदि टूट जाए तो आपस मे पुनः जुड़ जाता है, इसका अभिप्राय यह है, यदि भाई बहन के मध्य कोई अनबन हो गई है


PAGE NO.: 260
DATE: / /20
=> तो वह इस धागे की तरह पुनः ठीक हो जाए। रक्षासूत्र बहन ही अपने भाई को बांधती है, ऐसा नहीं है, ब्राह्मण भी अपने यजमान को रक्षासूत्र बांध सकते है जब राजा बलि देवताओं से युद्ध करने गए थे, तब उनके गुरु शुक्राचार्य जी ने उनके हाथ में रक्षा सूत्र बांधा था।
=> शुकदेव जी कहते - हे परीक्षित! तुम्हारे पूछने पर मैंने बलि वामन चरित्र विस्तार से श्रवण कराया।

•: मत्स्यावतार की कथा:-

:: अष्टम स्कन्ध ::- 261

PAGE NO.
DATE / /20

⇒ राजा परीक्षित ने शुकदेव जी से पूछा- गुरुदेव, भगवान के कर्म बड़े अद्भुत है। उन्होंने एक बार अपनी योगमाया से मत्स्यावतार धारण करके बड़ी सुन्दर लीला की थी, मैं उनके उसी मत्स्यावतार की कथा सुनना चाहता हूँ।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! पिछले कल्प के अन्त मे ब्रह्मा जी के सो जाने के कारण ब्राह्म नामक नैमित्तिक प्रलय हुआ था। प्रलयकाल आ जाने पर ब्रह्मा जी को नींद आ गई, वे सोना चाहते थे। जब ब्रह्मा जी शयन मे चले गए, तभी उनके मुख से वेद निकल पड़े, और उनके पास ही रहने वाले हयग्रीव नामक दैत्य ने उन्हें योगबल से चुरा लिया।

⇒ सर्वशक्तिमान भगवान श्री हरि ने दानवराज हयग्रीव की यह चेष्टा जान ली। इसलिए उन्होंने मत्स्यावतार ग्रहण किया।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! जिस समय हयग्रीव नामक दैत्य ने वेदो को चुरा लिया था, उसी समय सत्यव्रत नाम के राजा जिन्हे हम लोग विवस्वान् (सूर्य) के पुत्र श्राद्धदेव के नाम से जानते है, वह कृतमाला नदी मे जल से तर्पण कर रहे थे।

PAGE NO.: २६२
DATE: / /20

श्लोकः एकदा कृतमालायां
कुर्वतो जलतर्पणम् ।
तस्याञ्जल्युदके काचिच्
छफर्येकाभ्यपद्यत ॥

⇒ उसी समय उनकी अंजलि के जल मे एक छोटी सी मछली आ गई। राजा सत्यव्रत ने अपनी अंजलि मे आयी हुई मछली को जल के साथ ही फिर से नदी मे डाल दिया। उस मछली ने बड़ी करुणा से राजा सत्यव्रत से कहा - राजन! आप बड़े दीनदयालु है। आप जानते है जल मे रहने वाले जन्तु अपनी जातिवालो को भी खा डालते है। मै उनके भय से अत्यन्त व्याकुल हो रही हूं। अतः आप मुझे यहा से निकालकर किसी सुरक्षित स्थान पर ले चलिए।

⇒ राजा सत्यव्रत को यह ज्ञात नही था कि स्वयं भगवान मुझ पर प्रसन्न होकर कृपा करने के लिए मछली के रूप मे पधारे है। राजा सत्यव्रत उस मछली को अपने कमण्डल मे रखकर अपने आश्रम पर ले आये। एक रात्रि मे ही वह मछली कमण्डल मे इतनी बड़ी हो गई कि उसमे उसके रहने के लिए स्थान हीन रहा। उस मछली ने राजा से कहा -

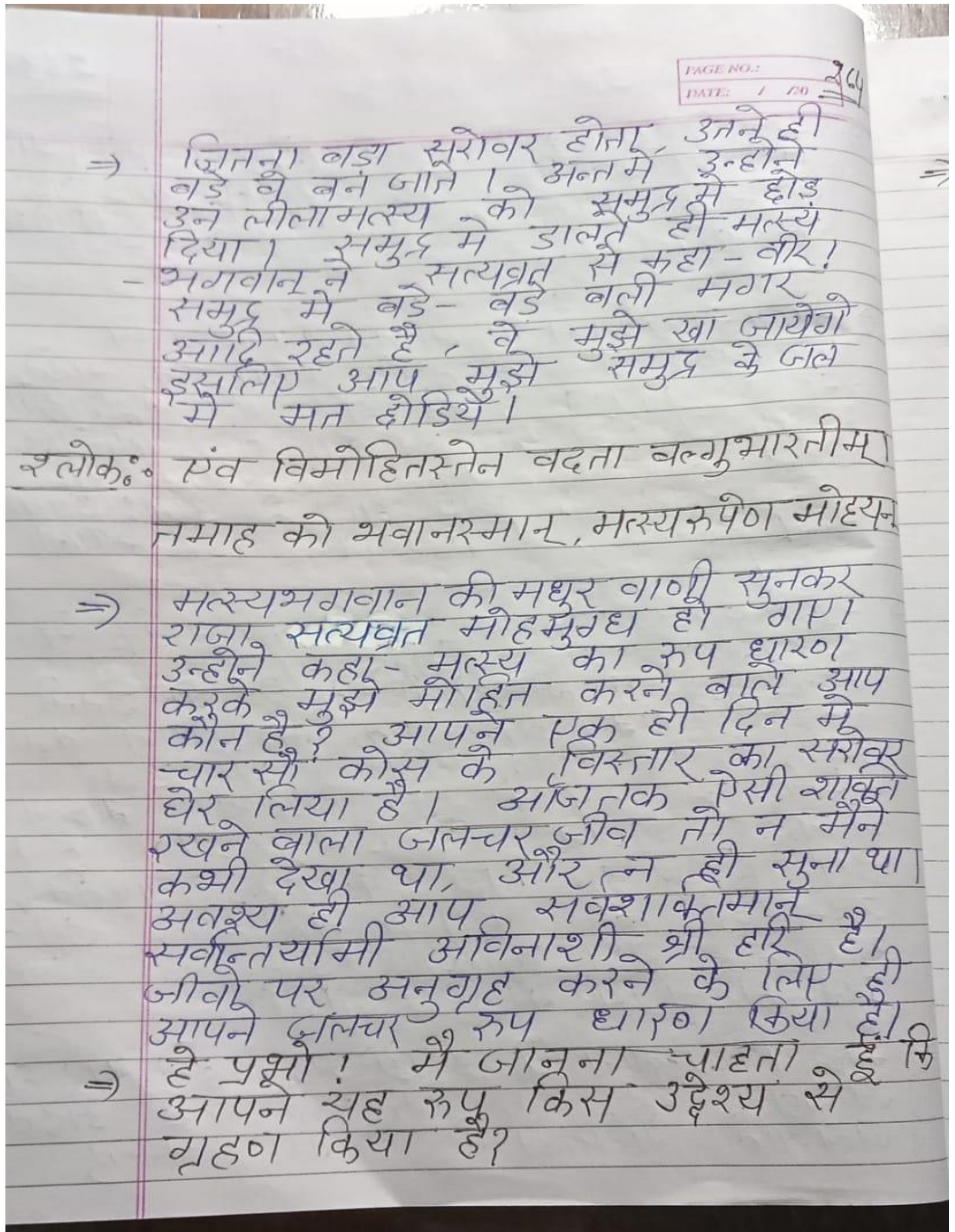
263

⇒ अब तो इस कमण्डलु मे मै कस्टपूर्वक भी नही रह सकती; अतः मेरे लिए कोई बड़ा सा स्थान नियत कर दे, जहां मै सुखपूर्वक रह सकूं।

⇒ राजा सत्यव्रत ने मछली को कमण्डलु से निकालकर, एक बहुत बडे पानी के मटके मे रख दिया। देखते ही देखते वह मछली मटके के आकार से भी बडी हो गई, उसने राजा से कहा, यह स्थान भी मेरे रहने के लिए छोटा है, अतः आप मुझे रहने के लिए कोई बड़ा स्थान दो।

⇒ राजा सत्यव्रत ने उस मछली को मटके से निकालकर एक सरोवर मे डाल दिया परन्तु वह मछली थोड़ी ही देर मे इतनी बढ गई, कि उसने एक महामत्स्य का आकार धारण कर लिया, और उस सरोवर के जल को घेर लिया। मछली ने कहा - राजन! मै जलचर प्राणी हूं। इस सरोवर का जल भी मेरे सुखपूर्वक रहने के लिए पर्याप्त नही है। इसलिए आप मेरी रक्षा कीजिए और मुझे किसी अगाध सरोवर मे रख दीजिए।

⇒ मत्स्यभगवान के इसप्रकार कहने पर राजा सत्यव्रत उन्हे एक-एक करके कई अटूट जलवाले सरोवरो मे ले गए, परन्तु

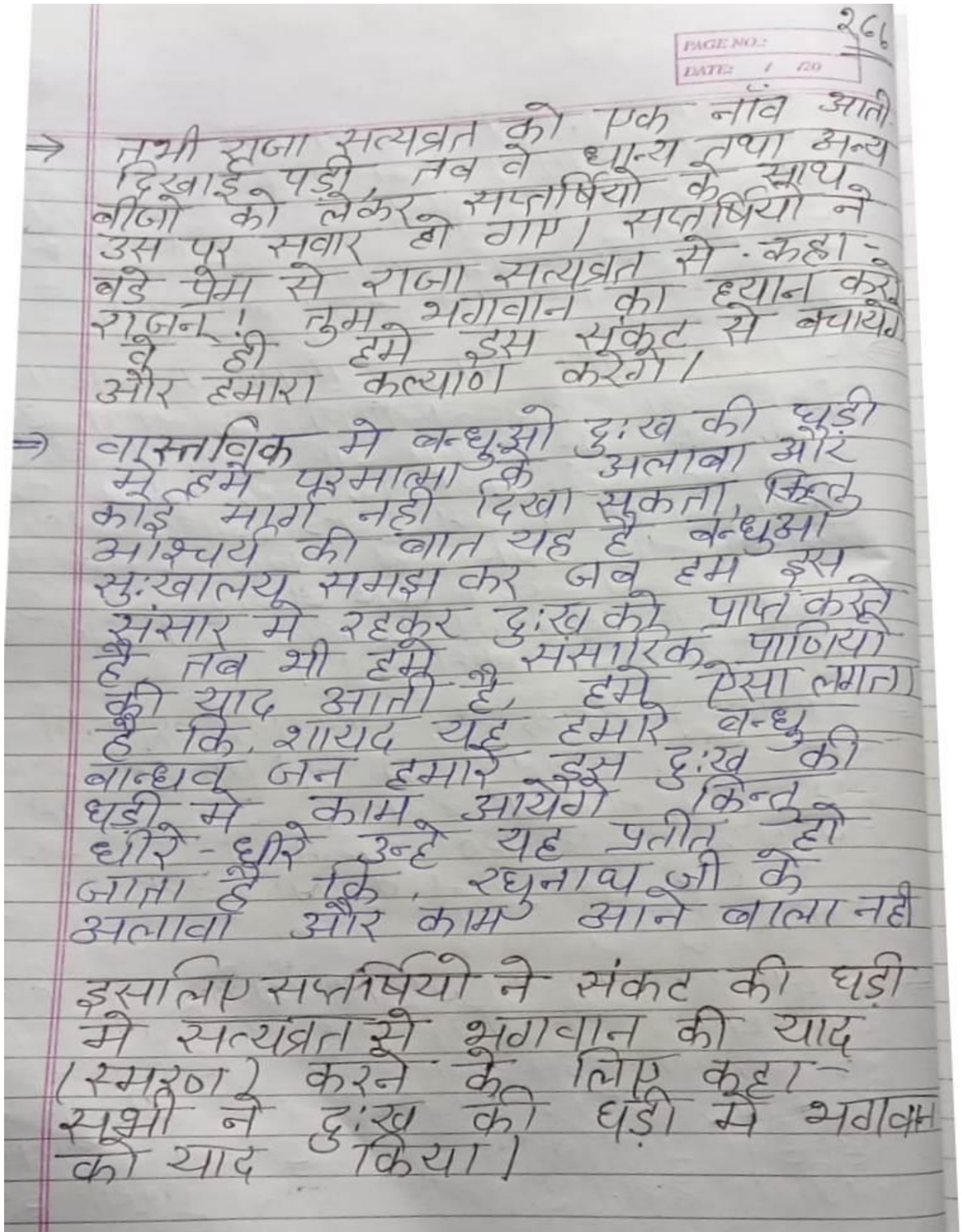

PAGE NO.: 264
DATE: / /20
⇒ जितना बड़ा सरोवर होता, उतने ही बड़े वे बन जाते। अन्त में उन्होंने उन लीलामत्स्य को समुद्र में छोड़ दिया। समुद्र में डालते ही मत्स्य भगवान् ने सत्यव्रत से कहा- वीर! समुद्र में बड़े-बड़े बली मगर आदि रहते हैं, वे मुझे खा जायेंगे इसलिए आप मुझे समुद्र के जल में मत छोड़िये।
श्लोकः एवं विमोहितस्तेन वदता वल्गुभारतीम्।
तमाह को भवानस्मान्, मत्स्यरूपेण मोहयन्
⇒ मत्स्यभगवान की मधुर वाणी सुनकर राजा सत्यव्रत मोहमुग्ध हो गए। उन्होंने कहा- मत्स्य का रूप धारण करके मुझे मोहित करने वाले आप कौन हैं? आपने एक ही दिन में चार सौ कोस के विस्तार का सरोवर घेर लिया है। आजतक ऐसी शक्ति रखने वाला जलचर जीव तो न मैंने कभी देखा था और न ही सुना था। अवश्य ही आप सर्वशक्तिमान सर्वान्तर्यामी अविनाशी श्री हरि हैं। जीवों पर अनुग्रह करने के लिए ही आपने जलचर रूप धारण किया है।
⇒ हे प्रभो! मैं जानना चाहता हूँ कि आपने यह रूप किस उद्देश्य से ग्रहण किया है?

⇒ तब भगवान बोले - राजर्षि सत्यव्रत! आज से सातवें दिन भूर्लोक आदि तीन लोक प्लय के समुद्र मे डूब जायेगो। उस समय जब तीनो लोक प्रलयकाल की जलराशि मे डूबने लगेगे, तब मेरी प्रेरणा से तुम्हारे पास एक बहुत बड़ी नौका आयगी

⇒ उस समय तुम समस्त प्राणियो के सूक्ष्म शरीरो को लेकर सप्तर्षियो के साथ उस नौका पर चढ़ जाना और समस्त धान्य तथा छोटे - बड़े अन्य प्रकार के बीजो को साथ रख लेना। जब प्रचण्ड आँधी चलने के कारण नाव डगमगाने लगेगी, तब मै इसी रुप मे वहा आ जाऊँगा और तुम लोग वासुकि नाग के द्वारा उस नाव को मेरे सींग मे बाँध देना।

⇒ सत्यव्रत! इसके बाद जब तक ब्रह्मा जी की रात रहेगी, तबतक मै ऋषियो के साथ तुम्हे उस नाव मे बैठाकर उसे खीचता हुआ समुद्र मे विचरण करुंगा। उस समय जब तुम प्रश्न करोगे, तब मै तुम्हे उपदेश दूंगा।

⇒ राजा सत्यव्रत को यह आदेश देकर भगवान अन्तर्धान हो गये। कुछ समय बाद भगवान का बताया हुआ समय आ पहुँचा। राजा ने देखा कि समुद्र अपनी मर्यादा छोड़कर बढ़ रहा है। प्रलयकाल के भयङ्कर मेघ वर्षा करने लगे। देखते ही देखते सारी पृथ्वी डूबने लगी


266
PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ तभी राजा सत्यव्रत को एक नाँव आती दिखाई पड़ी, तब वे धान्य तथा अन्य बीजो को लेकर सप्तर्षियो के साथ उस पर सवार हो गए। सप्तर्षियो ने बड़े प्रेम से राजा सत्यव्रत से कहा - राजन! तुम भगवान का ध्यान करो वे ही हमे इस संकट से बचायेंगे और हमारा कल्याण करेंगे।

⇒ वास्तविक मे बन्धुओ दुःख की घड़ी मे हमे परमात्मा के अलावा और कोई मार्ग नही दिखा सकता, किन्तु आश्चर्य की बात यह है बन्धुओ सुःखालय समझ कर जब हम इस संसार मे रहकर दुःख को प्राप्त करते है तब भी हमे संसारिक प्राणियो की याद आती है, हमे ऐसा लगता है कि, शायद यह हमारे बन्धु बान्धव जन हमारे इस दुःख की घड़ी मे काम आयेंगे किन्तु धीरे-धीरे उन्हे यह प्रतीत हो जाता है कि, रघुनाथ जी के अलावा और काम आने वाला नही

इसलिए सप्तर्षियो ने संकट की घड़ी मे सत्यव्रत से भगवान की याद (स्मरण) करने के लिए कहा - सभी ने दुःख की घड़ी मे भगवान को याद किया।

267

PAGE NO.:
DATE: / /20

०ः भजनः०

अधमो को नाथ उबारना, तुम्हे याद हो कि न याद हो

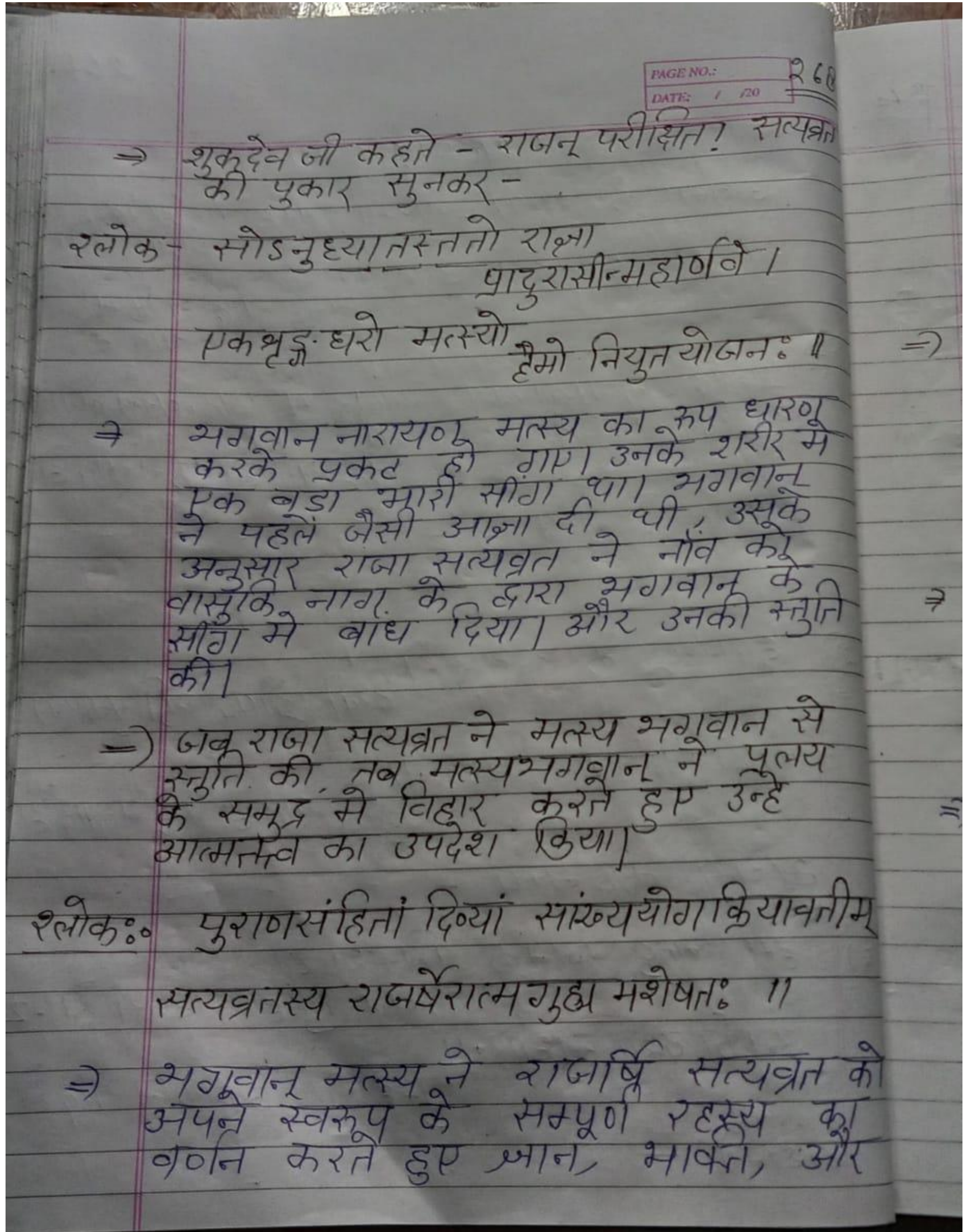
खल जन के मद को उतारना, तुम्हे याद हो कि न याद हो

(1) प्रह्लाद जब मरने लगा, खंजर पै सिर धरने लगा
उस दिन का खंभ विदारना, तुम्हे याद हो कि न याद हो

अधमो को नाथ - - - - - -

(2) धृतराष्ट्र के दरबार मे, दुखी द्रौपदी की पुकार मे
साड़ी के थान संवारना, तुम्हे याद हो कि न याद हो

अधमो को नाथ - - —



PAGE NO.: 268
DATE: / /20

⇒ शुकदेव जी कहते - राजन् परीक्षित! सत्यव्रत की पुकार सुनकर -

श्लोक- सोऽनुध्यातस्ततो राजा प्रादुरासीन्महार्णवे ।
एकशृङ्गधरो मत्स्यो हैमो नियुतयोजनः ॥

⇒ भगवान नारायण मत्स्य का रूप धारण करके प्रकट हो गए। उनके शरीर मे एक बड़ा भारी सींग था। भगवान् ने पहले जैसी आज्ञा दी थी, उसके अनुसार राजा सत्यव्रत ने नाँव को वासुकि नाग के द्वारा भगवान के सींग मे बांध दिया। और उनकी स्तुति की।

⇒ जब राजा सत्यव्रत ने मत्स्य भगवान से स्तुति की, तब मत्स्यभगवान् ने प्रलय के समुद्र मे विहार करते हुए उन्हें आत्मतत्त्व का उपदेश किया।

श्लोकः- पुराणसंहितां दिव्यां सांख्ययोगक्रियावतीम्
सत्यव्रतस्य राजर्षेरात्मगुह्य मशेषतः ॥

⇒ भगवान् मत्स्य ने राजर्षि सत्यव्रत को अपने स्वरूप के सम्पूर्ण रहस्य का वर्णन करते हुए ज्ञान, भक्ति, और

269

कर्मयोग से परिपूर्ण दिव्य पुराण का उपदेश किया जिसको 'मत्स्य पुराण' कहते है।

मत्स्य पुराण मे - 14 हजार श्लोक
अध्याय - 290 है।

=) मत्स्य अवतार - भगवान् नारायण का प्रथम अवतार है, जो जल से सम्बन्धित है।

जल - जन्मयते, लयते

जल

=) जन्मयते के 'ज' और लयते के ल शब्द से मिलकर बना है जल शब्द। जिसका अर्थ - जन्म देने वाला, और समाप्त करने वाला होता है। अर्थात - जन्म देने वाला और समाप्त करने वाला जल है।

=) मत्स्यपुराण मे श्रोता राजा सत्यव्रत बने जिन्हे हम लोग श्राद्धदेव के नाम से भी जानते है, वर्तमान मे सप्तम मन्वन्तर के जो मनु है वह श्राद्धदेव ही, सूर्यदेव के पुत्र होने के कारण इन्हे वैवस्वत मनु भी कहा जाता है। मत्स्य पुराण के अन्तर्गत राजा सत्यव्रत प्रश्न करते है, भगवान मत्स्य उत्तर देते है।

PAGE NO.: 270
DATE: / /20

⇒ मत्स्य पुराण के अन्तर्गत व्रतों- संक्रान्ति का व्रत, उद्यापन, तृतीया, चतुर्थी का व्रत उद्यापन की चर्चा की गई है।

⇒ घर के निर्माण से लेकर गृहप्रवेश, एवं घरों मे होने वाले वास्तुदोष एवं उसको दूर करने के उपायो की चर्चा की गई है।

⇒ पूजन विधि, व्रत मे क्या खाए क्या नही, व्रत मे किन नियमो का पालन करे आदि की भी चर्चा की गई है।

⇒ भगवान विष्णु और राजर्षि सत्यव्रत का यह संवाद जो भी सुनता है -

श्लोक संवादं महदाख्यानं श्रुत्वा मुच्येत किल्बिषा

वह सब प्रकार के पापो से मुक्त हो जाता है।

**मत्स्यावतार की कथा का सार :-**

⇒ सत्यव्रत कौन है? साधक ही सत्यव्रत है। जिसने अपने जीवन मे सत्य का व्रत ले लिया हो। सत्य कौन है? सत+चित + आनन्द = सच्चिदानन्द भगवान श्री कृष्ण ही सत्य है। जिसने श्री कृष्ण का व्रत ले लिया, जो वैष्णव हो गया, जो भगवान की प्राप्ति

271

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ के मार्ग पर लग चुका है। वही सत्यव्रत है। प्रलय क्या है? मृत्यु का दृण ही प्रलय है। मृत्यु के दृण मे कौन बचेगा सत्यव्रत। कैसे बचेगा? नौका मे बैठकर। नौका क्या है? भगवान नाम संकीर्तन ही नौका है। नाम रुपी नौका मे सप्तर्षियो के साथ बैठना है। सप्तर्षि कौन है? गुरुदेव ही सप्तर्षि है। मत्स्य भगवान ही गोविन्द है। सप्तर्षि रुपी गुरुदेव, वासुकि नाग के द्वारा नाम रुपी नौका को मत्स्य भगवान से बांध देते है, और प्रलय के दृण मे सब जीव डूब जाते है। संसार डूब जाता है। पर जो सत्यव्रत है - अर्थात - जिसने श्री कृष्ण रुपी सत्य का आश्रय लिया हुआ है, उनके नाम रुप, लीला, धाम का आश्रय लिया हुआ है, जिसने मान लिया है, गोविन्द मेरे है मै गोविन्द का हूं। मत्स्य भगवान उस सत्यव्रत को प्रलय मे डूबने नही देते है, उस सत्यव्रत की नौका को खीच कर ले जाते है।

⇒ शुकदेव जी कहते - राजन परीक्षित! पिछले प्रलय का अन्त होने के पश्चात ब्रह्मा जी की नींद टूटी तब भगवान ने हयग्रीव असुर को मारकर उससे वेद छीन लिये और ब्रह्मा जी को दे दिए। भगवान नारायण के मत्स्यावतार धारण करने के कारण ही हमारे वेद सुरक्षित है।

॥ अष्टमः स्कन्धः समाप्तः ॥

:- नवम स्कन्ध :- 272

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ भागवत जी के नवम स्कन्ध मे 24 अध्याय है। प्रारम्भ मे श्री रामचरित्र का और अन्तिम अध्यायो मे श्रीकृष्ण चरित्र का वर्णन किया गया है।

⇒ राम कृष्ण दोऊ एक है,
अंतर नही निमेष।
इनके नयन गंभीर है,
इनके चपल विशेष॥

⇒ भगवान राम के नेत्रो मे गंभीरता है, कृष्ण के नेत्रो मे चपलता है।

⇒ राम की करनी को अपनाओ।
⇒ कृष्ण की कहनी को अपनाओ।

⇒ राम चरित्र परम पवित्र, और कृष्ण चरित्र महा विचित्र है।

⇒ श्री परीक्षित जी ने कहा - हे गुरुदेव! आप हमें राम कथा सुनायें।

⇒ श्री शुकदेव जी ने कहा - परीक्षित!

श्लोक - श्रूयतां मानवो वंशः प्राचुर्येण परंतप।
न शक्यते विस्तरतो वक्तुं वर्षशतैरपि॥

PAGE NO.:
DATE: / /20

=> राम कथा को तुम संक्षेप मे सुनो। विस्तार से तो सैकड़ो वर्ष मे भी उसका वर्णन नही किया जा सकता।

=> भगवान नारायण के नाभि से कमल, कमल पर ब्रह्मा जी, ब्रह्मा जी के पुत्र मरीचि और मरीचि के पुत्र कश्यप हुए। कश्यप का विवाह अदिति से हुआ। विवाह के उपरान्त इनके द्वारा विवस्वान् नामक पुत्र का जन्म हुआ। विवस्वान् का दूसरा नाम सूर्य है। इनसे ही सूर्यवंश का विस्तार हुआ।

=> विवस्वान् का विवाह संज्ञा के साथ हुआ। विवाह के उपरान्त श्राद्धदेव नामक पुत्र का जन्म हुआ। इन्ही श्राद्धदेव को हमलोग वैवस्वत मनु के नाम से जानते है।

=> श्राद्धदेव का विवाह श्रद्धा देवी के साथ हुआ विवाह के उपरान्त इला नाम की पुत्री का जन्म हुआ। श्राद्धदेव ने अपने गुरुदेव वसिष्ठ जी से कहा- भगवन्! हमको बिटियाँ नही बेटा चाहिए। तब वसिष्ठ जी ने इला नाम की कन्या को ही पुरुष बना देने के लिए भगवान नारायण की स्तुति की।

=> भगवान नारायण ने प्रसन्न होकर मुँहमाँगा वर दिया, जिसके प्रभाव से वह कन्या ही सुद्युम्न नामक श्रेष्ठ पुत्र बन गयी।

274

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ एक बार राजा सुद्युम्न जी एक ऐसे वन मे चले गए जो भगवान शिव जी द्वारा शापित था। जो भी उस वन मे जाता था वह स्त्री बन जाता था। जब सुद्युम्न जी उस वन मे पहुचे तो वह भी स्त्री बन गए। और अन्त मे उन्हे अपना देह त्याग करना पड़ा।

⇒ सुद्युम्न के जाने के पश्चात वैवस्वत मनु के मन मे चिन्ता हुई और उन्होंने सन्तान प्राप्त की कामना से भगवान् हरि की आराधना की, और अपने ही समान दस पुत्र प्राप्त किए, जिनके नाम इक्ष्वाकु, नृग, शर्याति, दिष्ट, धृष्ट, करूष, नरिष्यन्त, पृषध्र, नभग और कवि थे।

⇒ वैवस्वत मनु के शर्याति नाम के जो पुत्र थे उनकी एक कमललोचना नाम की कन्या थी, जिसका नाम सुकन्या था।

⇒ एक दिन सुकन्या अपने पिता शर्याति के साथ वन मे घूमते - घूमते च्यवन ऋषि के आश्रम पर जा पहुंची।

⇒ आश्रम मे भ्रमण करते - करते उसने एक बांबी ( दीमकों की एकत्रित की हुई मिट्टी ) के छेद मे से जुगनू की तरह दो ज्योतियो को देखा।

⇒ सुकन्या ने बालसुलभ चपलता से एक कांटे के द्वारा उन ज्योतियो को बेध

275

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ दिया। इससे उनमे से बहुत सारा खून बह चला। सुकन्या ने जुगनू की तरह जिन ज्योतियो को देखा था, वह च्यवन ऋषि के नेत्र थे, सुकन्या की बाल सुलभ चपलता के कारण च्यवन ऋषि के दोनो नेत्रो की ज्योति चली गई।

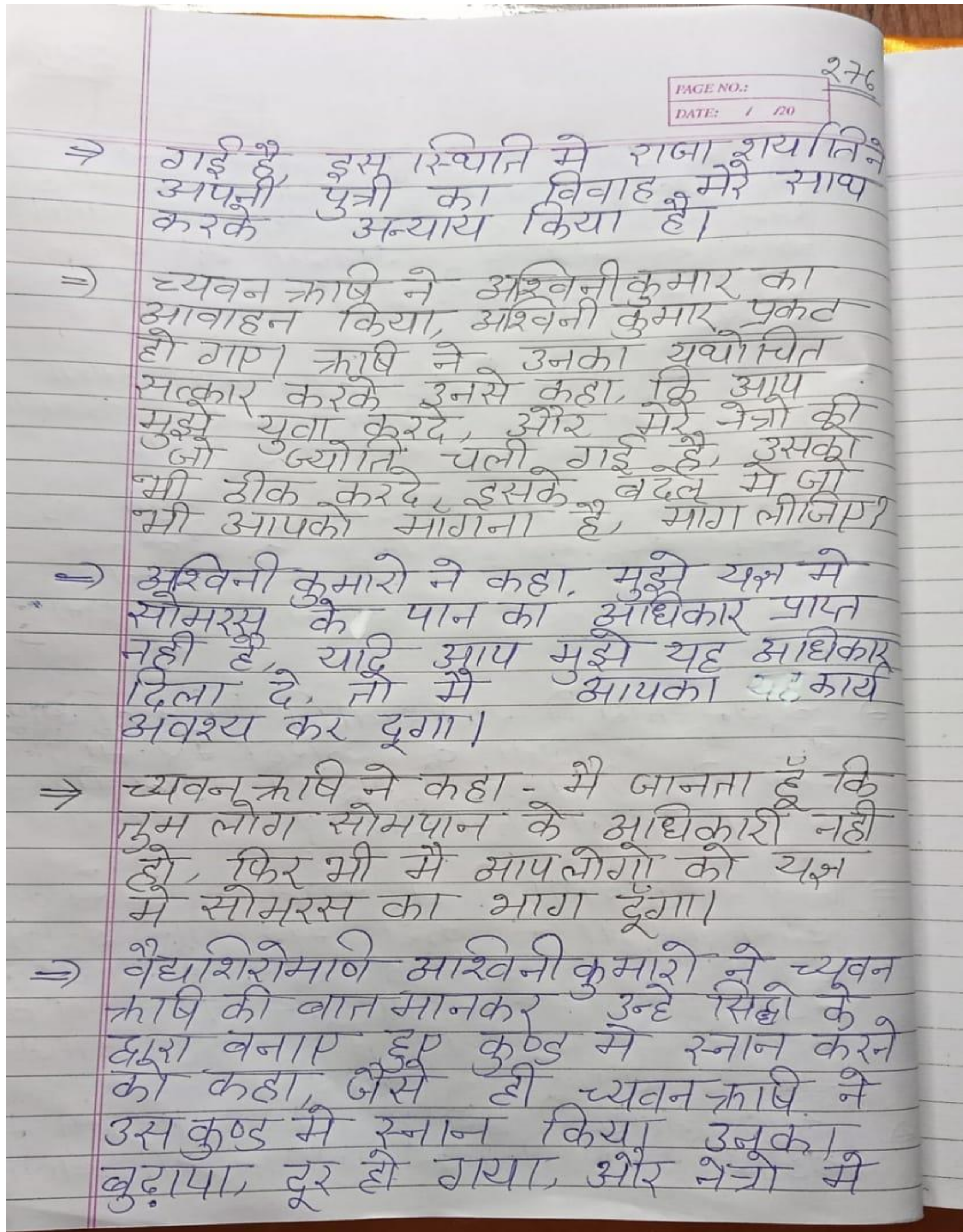
⇒ इससे च्यवन ऋषि को बहुत क्रोध आया और उन्होने राजा शर्याति एंव उनके सभी सैनिको का मल मूत्र बन्द कर दिया।

⇒ जब राजा शर्याति को यह ज्ञात हुआ कि उनकी बेटी की चपलता के कारण च्यवन ऋषि के नेत्रो की ज्योति चली गई तो उन्होने च्यवन ऋषि से क्षमा माँगी।

⇒ च्यवन ऋषि ने राजा शर्याति से कहा आपकी बेटी की चपलता के कारण मेरे तो दोनो नेत्रो की ज्योति चली गई है, अब मेरा जीवन यापन कैसे होगा?

⇒ तब राजा शर्याति ने च्यवन ऋषि से कहा आप चिन्ता न करो मेरे पास इसका उपाय है। इतना कहकर उन्होने अपनी बेटी सुकन्या का हाथ च्यवन ऋषि के हाथ मे दे दिया, और कहा आज से यह आपकी सेवा करेगी।

⇒ च्यवन ऋषि ने विचार किया एक तो मैं वृद्ध और मेरे नेत्रो की ज्योति भी चली


276

PAGE NO.:
DATE: / /20

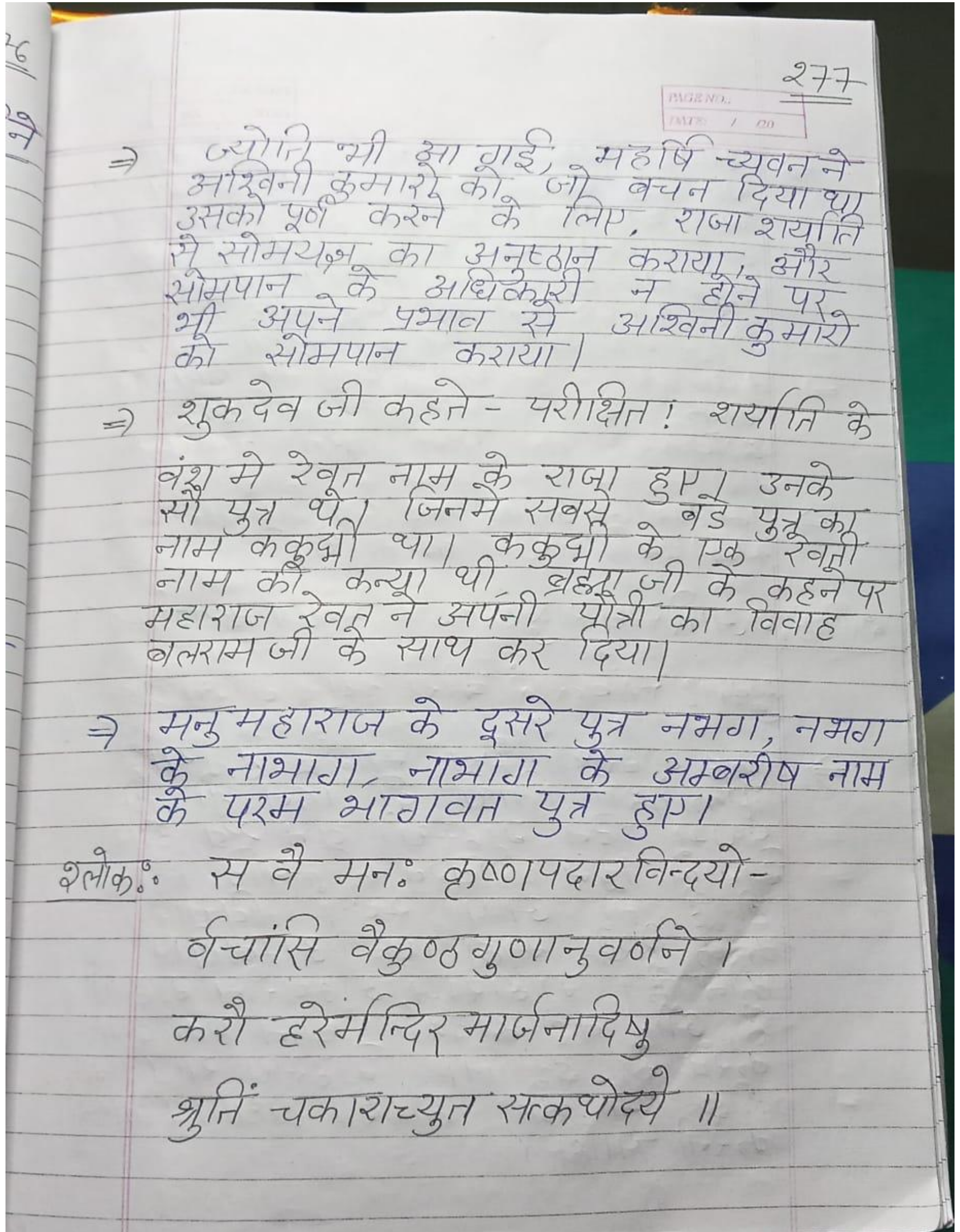
⇒ गई है, इस स्थिति मे राजा शर्याति ने अपनी पुत्री का विवाह मेरे साथ करके अन्याय किया है।

⇒ च्यवन ऋषि ने अश्विनीकुमार का आवाहन किया, अश्विनी कुमार प्रकट हो गए। ऋषि ने उनका यथोचित सत्कार करके उनसे कहा, कि आप मुझे युवा करदे, और मेरे नेत्रो की जो ज्योति चली गई है, उसको भी ठीक करदे, इसके बदले मे जो भी आपको मांगना है, मांग लीजिए?

⇒ अश्विनी कुमारो ने कहा, मुझे यज्ञ मे सोमरस के पान का अधिकार प्राप्त नही है, यदि आप मुझे यह अधिकार दिला दे, तो मै आपका यह कार्य अवश्य कर दूंगा।

⇒ च्यवन ऋषि ने कहा - मै जानता हूँ कि तुम लोग सोमपान के अधिकारी नही हो, फिर भी मै आपलोगो को यज्ञ मे सोमरस का भाग दूंगा।

⇒ वैद्यशिरोमणि अश्विनीकुमारो ने च्यवन ऋषि की बात मानकर उन्हे सिद्धो के द्वारा बनाए हुए कुण्ड मे स्नान करने को कहा, जैसे ही च्यवनऋषि ने उस कुण्ड मे स्नान किया, उनका बुढ़ापा, दूर हो गया, और नेत्रो मे



277

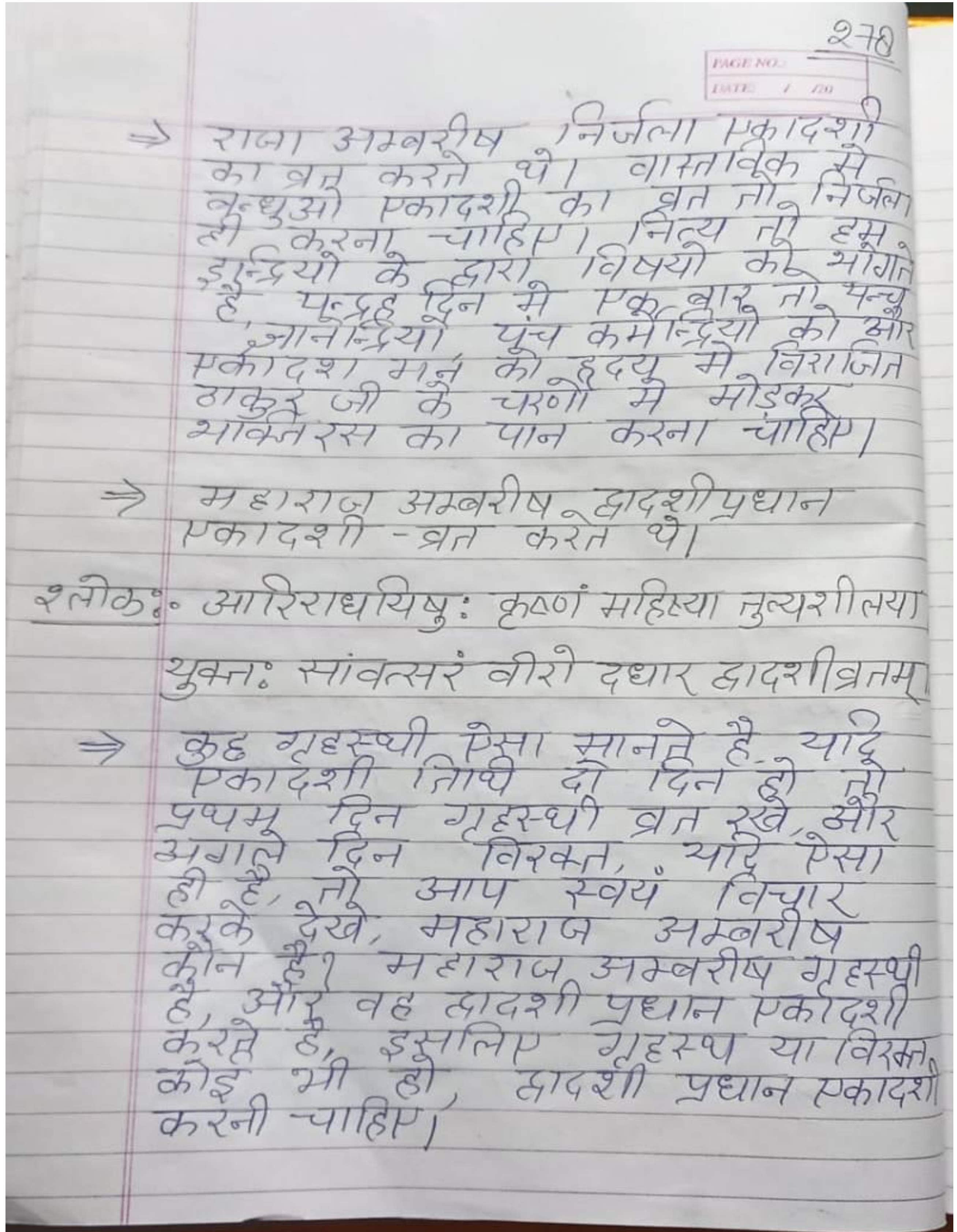
PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ ज्योति भी आ गई, महर्षि च्यवन ने आश्विनी कुमारो को जो वचन दिया था उसको पूर्ण करने के लिए, राजा शर्याति से सोमयज्ञ का अनुष्ठान कराया, और सोमपान के अधिकारी न होने पर भी अपने प्रभाव से अश्विनी कुमारो को सोमपान कराया।

⇒ शुकदेव जी कहते - परीक्षित! शर्याति के वंश मे रेवत नाम के राजा हुए। उनके सौ पुत्र थे। जिनमे सबसे बडे पुत्र का नाम ककुद्मी था। ककुद्मी के एक रेवती नाम की कन्या थी, ब्रह्मा जी के कहने पर महाराज रेवत ने अपनी पौत्री का विवाह बलराम जी के साथ कर दिया।

⇒ मनु महाराज के दूसरे पुत्र नभग, नभग के नाभाग, नाभाग के अम्बरीष नाम के परम भागवत पुत्र हुए।

श्लोकः स वै मनः कृष्णपदारविन्दयो-
र्वचांसि वैकुण्ठगुणानुवर्णने।
करौ हरेर्मन्दिर मार्जनादिषु
श्रुतिं चकाराच्युत सत्कथोदये॥


278
PAGE NO.
DATE / /20
⇒ राजा अम्बरीष निर्जला एकादशी का व्रत करते थे। वास्तविक से बन्धुओ एकादशी का व्रत तो निर्जला ही करना चाहिए। नित्य तो हम इन्द्रियो के द्वारा विषयो को भोगते है, पन्द्रह दिन मे एक बार तो पन्च ज्ञानेन्द्रियाँ पंच कर्मेन्द्रियो को और एकादश मन को हृदय मे विराजित ठाकुर जी के चरणों मे मोड़कर भक्तिरस का पान करना चाहिए।
⇒ महाराज अम्बरीष द्वादशीप्रधान एकादशी-व्रत करते थे।
श्लोकः- आरिराधयिषुः कृष्णं महिष्या तुल्यशीलया।
युक्तः सांवत्सरं वीरो दधार द्वादशीव्रतम्।
⇒ कुछ गृहस्थी ऐसा मानते है यदि एकादशी तिथि दो दिन हो तो प्रथम दिन गृहस्थी व्रत रखे और अगले दिन विरक्त, यदि ऐसा ही है, तो आप स्वयं विचार करके देखे, महाराज अम्बरीष कौन है? महाराज अम्बरीष गृहस्थी है, और वह द्वादशी प्रधान एकादशी करते है, इसलिए गृहस्थ या विरक्त कोई भी हो, द्वादशी प्रधान एकादशी करनी चाहिए।

279

PAGE NO.:
DATE: / /20

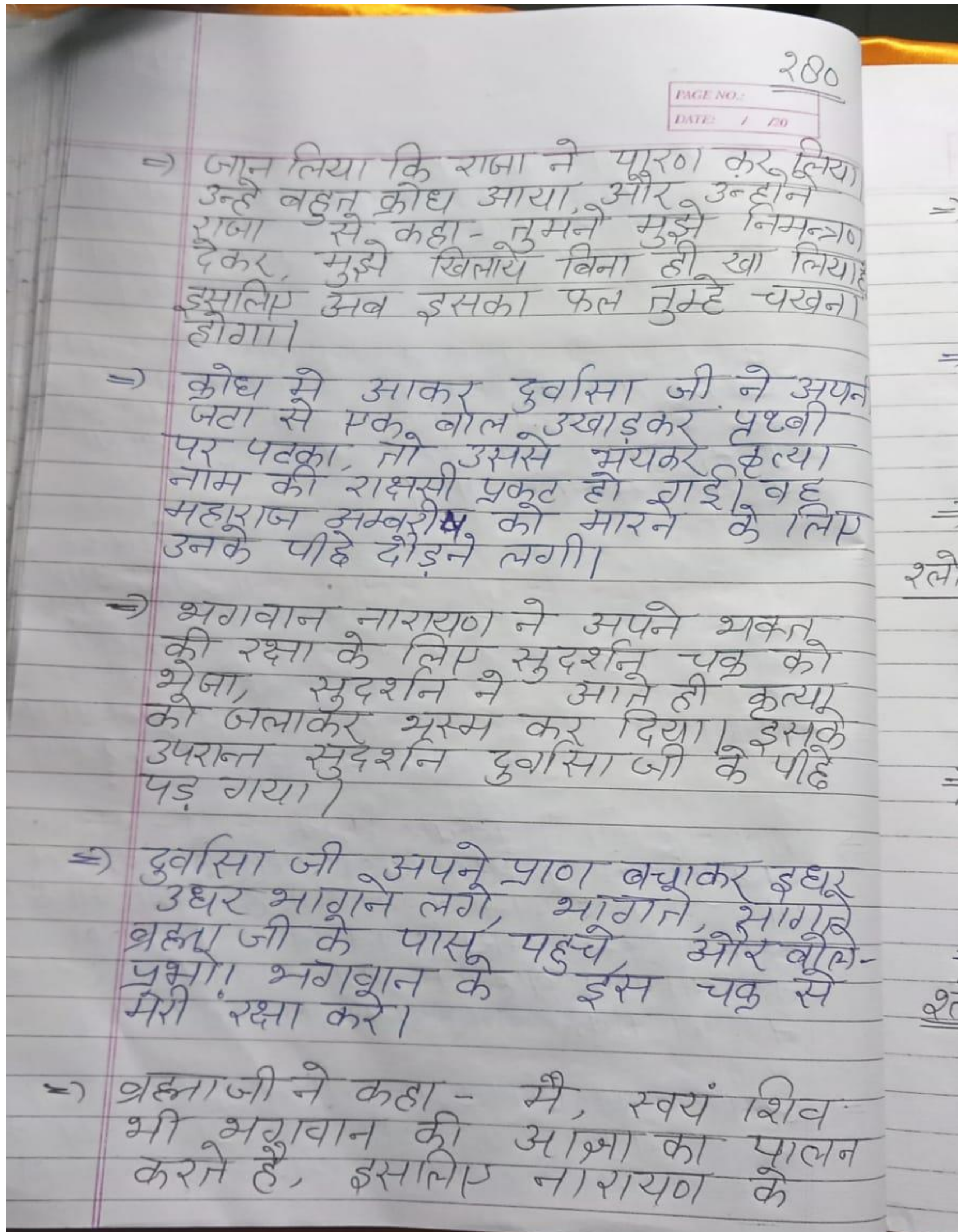
⇒ एक बार महाराज अम्बरीष ने एकादशी का व्रत किया, उसी समय दुर्वासा जी भी उनके यहाँ अतिथि के रूप मे पधारे। महाराज अम्बरीष ने उनका स्वागत किया और उनसे भोजन के लिए प्रार्थना की।

⇒ दुर्वासा जी ने महाराज अम्बरीष से कहा राजन्, तुम भोजन की तैयारी करो तब तक मै अपने दैनिक नित्यकर्म को पूर्ण करके आता हूं। इतना कहकर दुर्वासा जी वहाँ से चले गए।

⇒ इधर द्वादशी केवल घड़ी भर ही शेष रह गयी थी, किन्तु दुर्वासा जी नही आए तब महाराज अम्बरीष ने ब्राह्मणो से पूछा देवताओ। ब्राह्मण को बिना भोजन कराये स्वयं खा लेना, और द्वादशी रहते पारण न करना, दोनो ही दोष है, इसलिए अब आप ही बताए मुझे क्या करना चाहिए?

⇒ तब ब्राह्मणो ने विचार करके कहा - महाराजा श्रुतियो मे ऐसा कहा गया है कि जल पी लेना, भोजन करना भी है, नही भी है, इसलिए इस समय केवल जल से पारण कर लीजिए। ब्राह्मणो की बात मानकर राजा ने जल पीकर व्रत का पारण कर लिया।

⇒ जब दुर्वासा जी अपने दैनिक नित्यकर्म से निवृत्त होकर महाराज अम्बरीष के यहाँ आए तो उन्होने अनुमान से ही



280

PAGE NO.:
DATE: / /20

=> जान लिया कि राजा ने पारण कर लिया। उन्हें बहुत क्रोध आया, और उन्होंने राजा से कहा- तुमने मुझे निमन्त्रण देकर, मुझे खिलाये बिना ही खा लिया है इसलिए अब इसका फल तुम्हें चखना होगा।

=> क्रोध मे आकर दुर्वासा जी ने अपनी जटा से एक बाल उखाड़कर पृथ्वी पर पटका, तो उससे भयंकर कृत्या नाम की राक्षसी प्रकट हो गई। वह महाराज अम्बरीष को मारने के लिए उनके पीछे दौड़ने लगी।

=> भगवान नारायण ने अपने भक्त की रक्षा के लिए सुदर्शन चक्र को भेजा, सुदर्शन ने आते ही कृत्या को जलाकर भस्म कर दिया। इसके उपरान्त सुदर्शन दुर्वासा जी के पीछे पड़ गया।

=> दुर्वासा जी अपने प्राण बचाकर इधर उधर भागने लगे, भागते, भागते ब्रह्मा जी के पास पहुंचे और बोले- प्रभो! भगवान के इस चक्र से मेरी रक्षा करें।

=> ब्रह्माजी ने कहा- मैं, स्वयं शिव भी भगवान की आज्ञा का पालन करते हैं, इसलिए नारायण के

PAGE NO:
DATE: / /20

⇒ इस चक्र से मैं तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता। जब ब्रह्मा जी ने दुर्वासा जी को निराश कर दिया तब वह, शंकर जी के पास गए।

⇒ दुर्वासा जी ने भगवान शिव से हाथ जोड़कर कहा- प्रभो। मैं तो आपका अंश हूँ, इसलिए अब आप ही इस सुदर्शन से मेरी रक्षा कीजिए।

⇒ तब भगवान शिव ने दुर्वासा जी से कहा-

श्लोकः- तमेव शरणं याहि हरिस्ते शं विधास्यति।

दुर्वासा जी जिनका यह सुदर्शन है, तुम उन्ही की शरण मे जाओ, भगवान नारायण ही तुम्हारा मंगल करेंगे।

⇒ शिव जी से निराश होकर दुर्वासा जी भगवान नारायण के पास गए और उनसे बोले- प्रभो। अब आप ही अपने इस सुदर्शन से मेरी रक्षा कीजिए।

⇒ तब भगवान नारायण ने कहा -

श्लोकः- अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतन्त्र इव द्विज।

साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्त जन प्रियः॥

282

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ दुर्वासा जी - मै स्वतन्त्र नही हूँ। मै किसी के अधीन हूँ। दुर्वासा जी ने कहा - प्रभो! आप तो स्वतन्त्र है। फिर आप किस के अधीन है?

चौ० परम स्वतन्त्र न सिर पर कोई।
भावइ मनहि करहु तुम्ह सोई॥

⇒ भगवान नारायण तो परम स्वतन्त्र है, ऐसे भगवान स्वयं कह रहे मै किसी के अधीन हूँ।

⇒ भगवान नारायण कहते - दुर्वासा जी मै अपने भक्तो के अधीन हूँ। मै स्वतन्त्र नही हूँ, मेरे सीधे - सादे सरल भक्तो ने मेरे हृदय को अपने हाथ मे कर रखा है। भक्तजन मुझसे प्रेम करते और मै उनसे।

= श्री भगवान कहते -

:: भजन ::

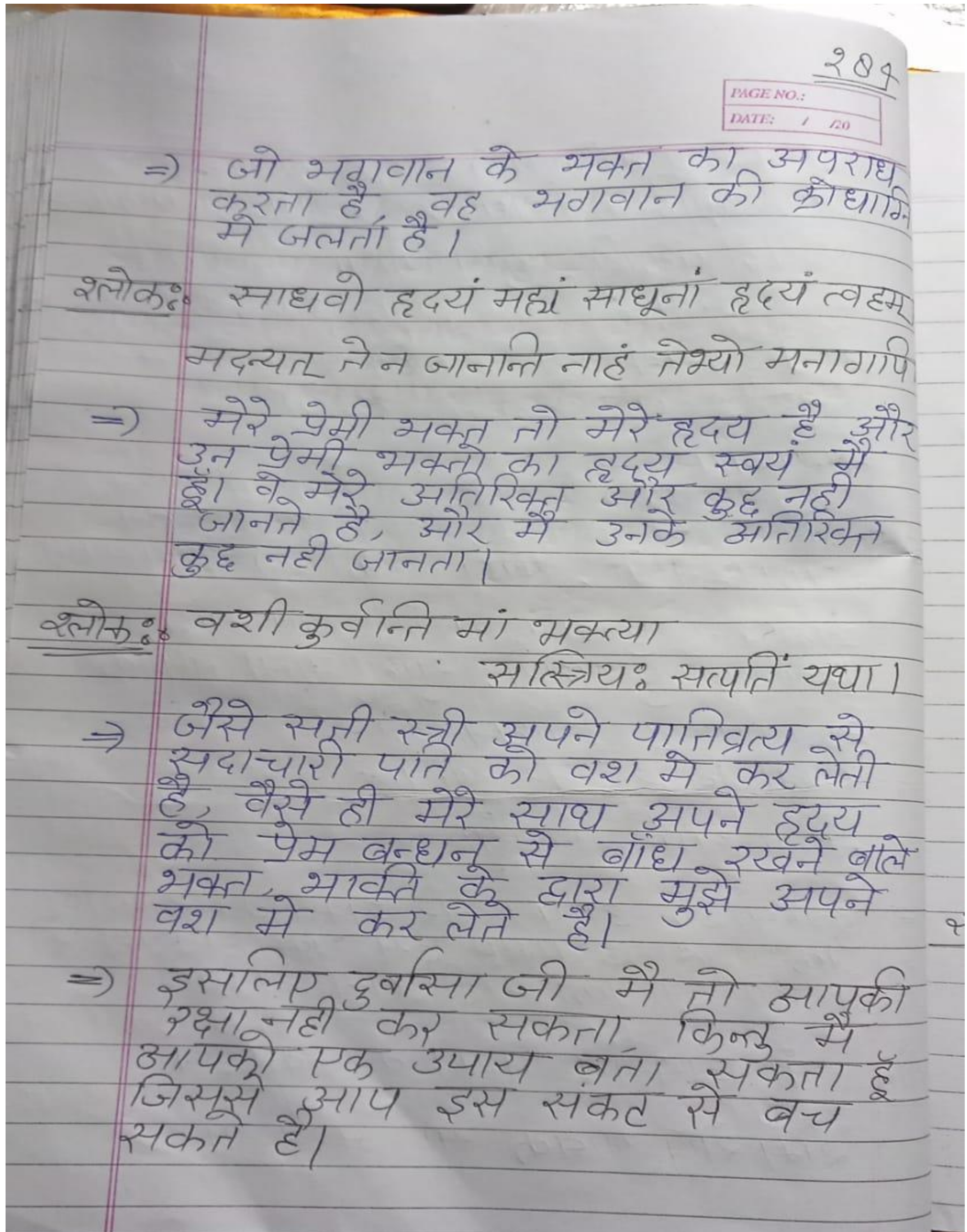
नाना भाँति नचायो भक्तन ने मोहे
नाना भाँति नचायो -2
लोक लाज तजि नही काज मैने
वैकुण्ठअ बिसरायो -2
नाना भाँति नचायो - - -

(1) गज ने पुकारो, मैंने गरुण बिसारो -2
जाहि ग्राह को संघारो, सुन प्रेम की पुकार -2
द्रोपदी पुकारी, सुधि लीजिए बनवारी
मोहे आस है तिहारी, जाऊ और किसके द्वार
सुनी टेर नही करी देर - मैंने- हो हो - हो - - -
तुरतई चीर बढ़ायो, बढ़ायो - -
नाना भाँति - - - - -

(2) नरसी भगत हेतु, साँवरिया सेठ बन
भात पहनायो, लाज राखी जन की
प्रह्लाद ने पुकारो, नरसिंह रुप धारो
हिरण्यकशिपु संघारो, सुधि भूली तन की
छोड़ मिठाई दुर्योधन की - हो - हो - हो -
साग विदुर घर खायो - - - -
नाना भाँती नचायो - -

⇒ दुर्वासा जी आपने मेरे भक्त का अपराध किया है, इसलिए इस भक्तअपराध से मै भी आपको नही बचा सकता।

चौ॰ जो अपराधु भगत कर करई।
राम रोष पावक सो जरई ॥


२८४
PAGE NO.:
DATE: / /20
=> जो भगवान के भक्त का अपराध करता है, वह भगवान की क्रोधाग्नि मे जलता है।
श्लोकः साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहम्
मदन्यत् ते न जानन्ति नाहं तेभ्यो मनागपि
=> मेरे प्रेमी भक्त तो मेरे हृदय है और उन प्रेमी भक्तो का हृदय स्वयं मैं हूं। वे मेरे अतिरिक्त और कुछ नही जानते है, और मैं उनके अतिरिक्त कुछ नही जानता।
श्लोकः वशी कुर्वन्ति मां भक्त्या
सत्स्त्रियः सत्पतिं यथा।
=> जैसे सती स्त्री अपने पातिव्रत्य से सदाचारी पति को वश मे कर लेती है, वैसे ही मेरे साधु अपने हृदय को प्रेम बन्धन से बांध रखने वाले भक्त, भक्ति के द्वारा मुझे अपने वश मे कर लेते है।
=> इसलिए दुर्वासा जी मैं तो आपकी रक्षा नही कर सकता किन्तु मैं आपको एक उपाय बता सकता हूँ जिससे आप इस संकट से बच सकते है।

285

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ दुर्वासा जी ने पूछा-प्रभो! क्या उपाय है? तब भगवान ने कहा- आपने मेरे जिस भक्त का अपराध किया है, उनके पास जाकर क्षमा माँग लीजिए, तब आपको शान्ति मिलेगी।

⇒ दुर्वासा जी दौड़े-दौड़े गए और अम्बरीष जी के चरणो मे गिर गए। जब अम्बरीष जी ने देखा, तो उन्हे उठाकर, हाथ जोड़कर उनसे कहा महाराज ऐसा अनर्थ न करिए, अपराध तो मैने आपका किया है, इसलिए मुझे क्षमा कर दीजिए।

⇒ दुर्वासा जी ने कहा- अरे यह सब बाते बाद मे भी होती रहेगी, पहले इस सुदर्शन को रोकिए, जो एकवर्ष से मेरे पीछे पड़ा है, मैं तो भाग-भाग कर परेशान हो गया हूँ।

⇒ तब राजा अम्बरीष ने कहा-

श्लोक- यदि नो भगवान् प्रीत एकः सर्वगुणाश्रयः।
सर्वभूतात्मभावेन द्विजो भवतु विज्वरः॥

⇒ यदि मैंने समस्त प्राणियो के आत्मा के रुप मे नारायण को देखा हो, तो भगवान नारायण मुझ पर प्रसन्न होकर, इस सुदर्शन से दुर्वासा जी की रक्षा करें।

=> इतना कहते ही सुदर्शन चक्र वहा से अदृश्य हो गया।

=> दुर्वासा जी ने कहा-

श्लोकः- अहो अनन्तदासानां महत्वं दृष्टमद्य मे।
कृतागसोऽपि यद् राजन् मंगलानि समीहसे॥

=> आज मै भगवान के प्रेमी भक्तो का महत्व क्या होता है, समझ गया।

= बन्धुओ इसलिए ही हमारे साधु, सन्त कहते है, कि हमे सदैव भगवान के भक्तो का संग करना चाहिए।

=> महाराज अम्बरीष के वंश मे ही आगे चलकर युवनाश्व नाम के राजा हुए। युवनाश्व के कोई संतान नही हुई तब ऋषियो ने पुत्र प्राप्ती की कामना से युवनाश्व के द्वारा एक यज्ञ कराया।

=> यज्ञ पूर्ण होने मे एक दिन शेष था, रात्रि के 12 बजे युवनाश्व को प्यास लगी जब उन्हे कही भी जल नही दिखा तो वह यज्ञशाला मे प्रवेश कर गए और उन्होने मन्त्र से अभिमन्त्रित जल ही पी लिया। प्रातःकाल जब ऋषि लोग सोकर उठे तो देखा कलश मे जल ही नही है जब उन्हे यह ज्ञात हुआ, कि कलश के जल को राजा ने पी लिया है, तो

२८७

⇒ वह युवनाश्व से बोले महाराज- पुत्र उत्पन्न करने वाला जो जल महारानी को पीना था, वह तो आप ने पी लिया है।

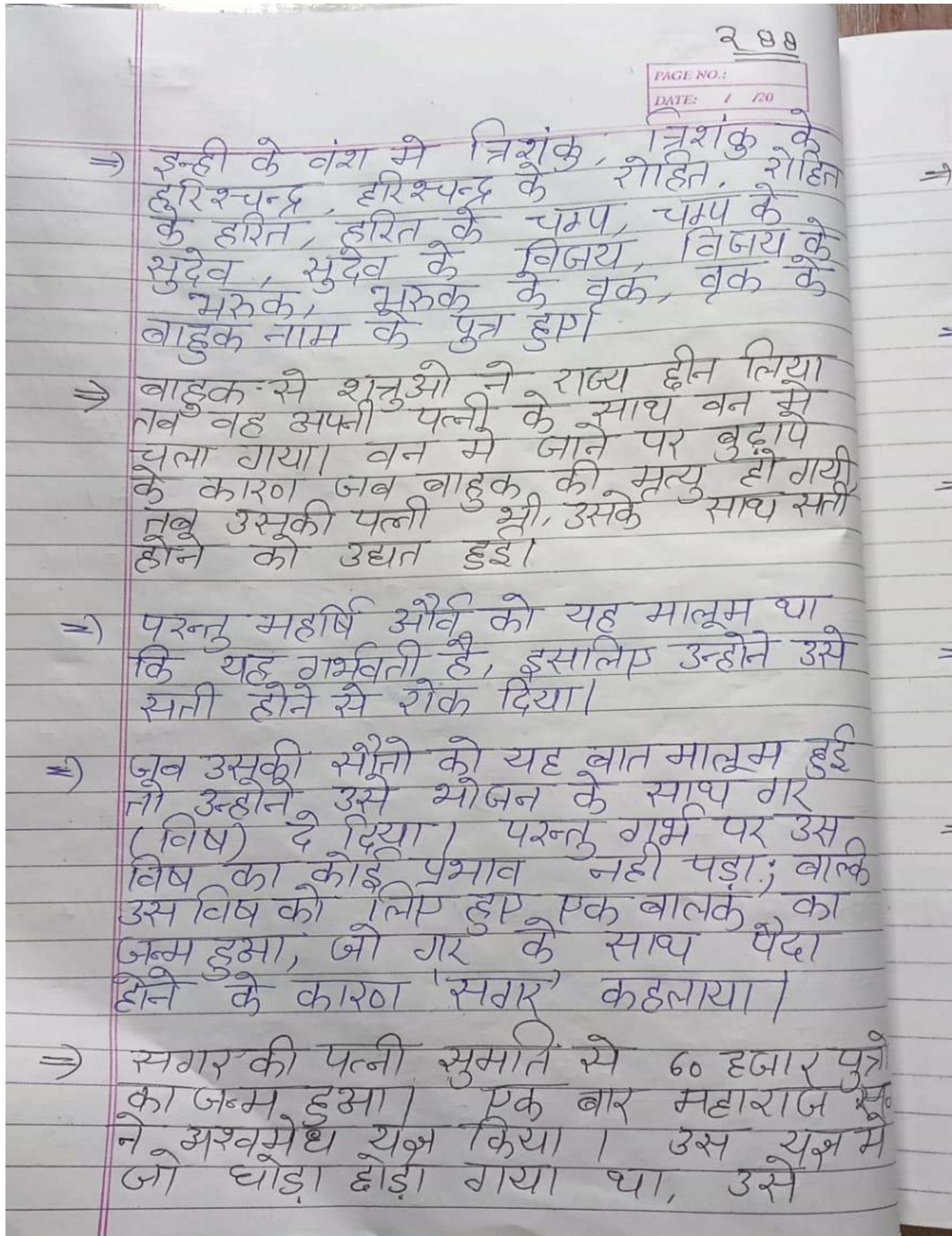
⇒ राजा ने ऋषियो से पूछा अब क्या होगा? ऋषियों ने कहा महाराज, मन्त्रों का असर तो अपना फल देगा, और ब्राह्मणों का अनुष्ठान तो निष्फल होगा नहीं, इसलिए महारानी की जगह अब आपको पुत्र होगा। महारानी की जगह महाराज की ही पूरे नौ महीने की छुट्टी हो गई।

⇒ नौ महीने बाद शल्यचिकित्सा के माध्यम से पेट को फाड़कर बालक को बाहर निकाला गया। अब बालक जब जन्म लेता है, तो रोता है। माँ उसे दुग्ध का पान कराती है। बालक का जन्म तो हो गया, किन्तु उसे दुग्ध का पान कौन कराए?

⇒ तभी देवताओं के राजा इन्द्र ने आकर कहा -

श्लोक- मां धाता वत्स मा रोदीरितीन्द्रो देशिनीमदात्।

⇒ यह बालक दूध के लिए रो रहा है; इसलिए (मां धाता) बेटा तू रो मत, तुझे मैं दुग्ध का पान कराऊंगा, इतना कहकर इन्द्र ने अपनी तर्जनी अंगुली को उसके मुख मे रख दिया। इसलिए इस बालक का नाम मान्धाता पड़ा।



२४४

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ इन्ही के वंश मे त्रिशंकु, त्रिशंकु के हरिश्चन्द्र, हरिश्चन्द्र के रोहित, रोहित के हरित, हरित के चम्प, चम्प के सुदेव, सुदेव के विजय, विजय के मरुक, मरुक के वृक, वृक के बाहुक नाम के पुत्र हुए।

⇒ बाहुक से शत्रुओ ने राज्य छीन लिया तब वह अपनी पत्नी के साथ वन मे चला गया। वन मे जाने पर बुढ़ापे के कारण जब बाहुक की मृत्यु हो गयी तब उसकी पत्नी भी, उसके साथ सती होने को उद्यत हुई।

⇒ परन्तु महर्षि और्व को यह मालूम था कि यह गर्भवती है, इसलिए उन्होने उसे सती होने से रोक दिया।

⇒ जब उसकी सौतो को यह बात मालूम हुई तो उन्होने उसे भोजन के साथ गर (विष) दे दिया। परन्तु गर्भ पर उस विष का कोई प्रभाव नही पड़ा; बल्कि उस विष को लिए हुए एक बालक का जन्म हुआ, जो गर के साथ पैदा होने के कारण 'सगर' कहलाया।

⇒ सगर की पत्नी सुमति से 60 हजार पुत्रो का जन्म हुआ। एक बार महाराज स० ने अश्वमेध यज्ञ किया। उस यज्ञ मे जो घोड़ा छोड़ा गया था, उसे

२८९

⇒ इन्द्र चुराकर ले गए। घोड़े को ढूढ़ने के लिए सगर के पुत्रो ने सारी पृथ्वी छान डाली, तब अन्त मे उन्हे वह घोड़ा कपिलमुनि के आश्रम मे दिखाई पड़ा।

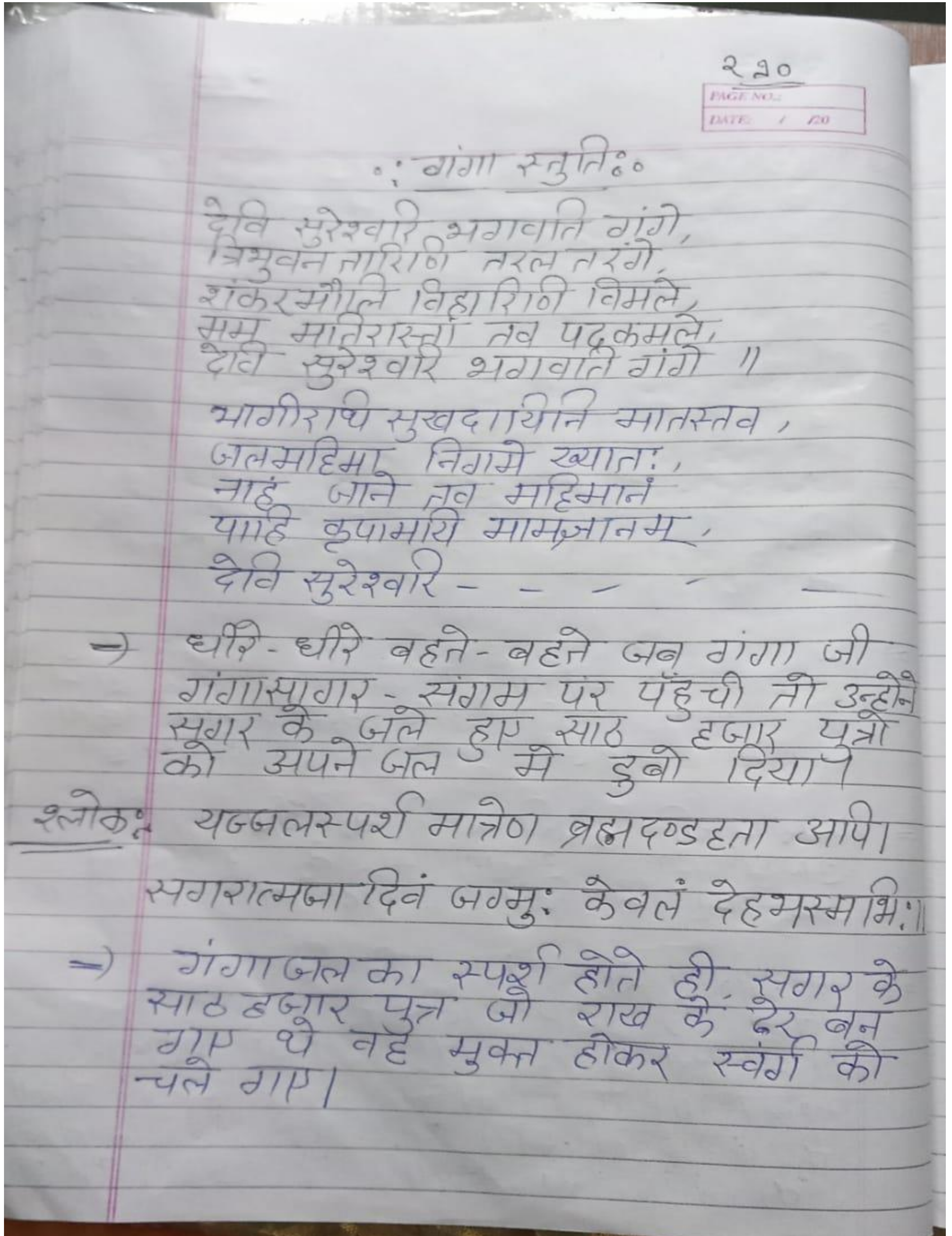
⇒ सगर के पुत्रो को लगा कि कपिलमुनि ने उनका अश्व चुराकर बांध लिया है। इसलिए वह कपिलमुनि का तिरस्कार करने लगे।

⇒ तिरस्कार के फलस्वरुप कपिलमुनि को क्रोध आ गया और उन्होने सगर के साठ हजार पुत्रो को जलाकर भस्म कर दिया।

⇒ अपने पुत्रो के उद्धार के लिए महाराज सगर ने गंगा जी से पृथ्वी पर आने की प्रार्थना की और कठोर तप किया किन्तु गंगाजी पृथ्वी पर नही आई।

= सगर की दूसरी रानी केशिनी का बेटा असमजस, असमंजस के अंशुमान, अंशुमान के दिलीप, दिलीप के भगीरथ

= भगीरथ ने गंगा जी को पृथ्वी पर लाने के लिए कठोर तप किया, तप से प्रसन्न होकर गंगा जी (जो भगवान नारायण के चरण से प्रकट होकर ब्रह्मा के कमण्डलु मे) आई थी वह शिव जी के जटा से होती हुई पृथ्वी पर आई।



२९०

PAGE NO.:
DATE: / /20

.: गंगा स्तुति :.

देवि सुरेश्वरि भगवति गंगे,
त्रिभुवन तारिणि तरल तरंगे,
शंकरमौलि विहारिणि विमले,
मम मतिरास्तां तव पदकमले,
देवि सुरेश्वरि भगवति गंगे ॥

भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव,
जलमहिमा निगमे ख्यातः,
नाहं जाने तव महिमानं
पाहि कृपामयि मामज्ञानम्,
देवि सुरेश्वरि - - - -

→ धीरे-धीरे बहते-बहते जब गंगा जी गंगासागर-संगम पर पहुँची तो उन्होंने सगर के जले हुए साठ हजार पुत्रों को अपने जल में डुबो दिया।

श्लोकः यज्जलस्पर्श मात्रेण ब्रह्मदण्डहता अपि।
सगरात्मजा दिवं जग्मुः केवलं देहभस्मभिः॥

→ गंगाजल का स्पर्श होते ही सगर के साठ हजार पुत्र जो राख के ढेर बन गए थे वह मुक्त होकर स्वर्ग को चले गए।

२९१

PAGE NO.:
DATE: / /20

=) भस्मी भूतांगसंगेन स्वर्याताः सगरात्मजाः।
किं पुनः श्रद्धया देवीं ये सेवन्ते धृतव्रताः ॥

=) जरा विचार करिए जब गंगाजल से शरीर की राख का स्पर्श हो जाने से सगर के पुत्रो को स्वर्ग की प्राप्ति हो गई, तब जो लोग श्रद्धा के साथ नियम लेकर श्री गंगा जी (गंगा जल) का सेवन करेंगे उन्हे किस फल की प्राप्ति होगी? मैंने ऐसे कई महापुरुषो को देखा है, जिन्होंने आजतक जल का सेवन कभी किया ही नही, [illegible] जल की जगह गंगाजल का ही सेवन करते है।

=) हम इतना तो नियम अवश्य बनाए कि एक शीशी, या अच्छे पात्र मे गंगाजल भरकर रख ले, और जब भी आचमन करना हो तो दो बूंद गंगाजल लेकर आचमन कर ले, यदि हमने इतना भी कर लिया, तो प्यारे हमारा कल्याण हो जायेगा।

=) भगीरथ के वंश मे राजा ऋतुपर्ण हुए, ऋतुपर्ण के सर्वकाम, सर्वकाम के सुदास, सुदास के सौदास, सौदास के अश्मक, अश्मक के नारीकवच नाम के पुत्र हुए।

= इन्ही के वंश मे आगे चलकर खट्वांग नाम के राजा हुए, जिन्होंने मृत्यु के अन्तिम समय मे भगवान मे मन लगाकर

२९२

PAGE NO.:
DATE: / /20

= केवल दो घड़ी मे हुई मुक्ति पाली थी। खट्वांग के पुत्र दीर्घबाहु, दीर्घबाहु के रघु हुए। इन्ही रघु के नाम पर इस वंश का नाम रघुवंश पड़ा।

=> रघु के पुत्र अज, अज के पुत्र महाराज दशरथ हुए। इन्ही दशरथ जी के यहा देवताओ की प्रार्थना से साक्षात परमब्रह्म परमात्मा भगवान श्री हरि ही अपने अंशांश से चार रुप धारण करके राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न के रुप मे आए।

=> महाराज दशरथ परम तपस्वी, तेजस्वी, पराक्रमी राजा थे। जिसने अपनी दशों इन्द्रियो पर विजय प्राप्त कर ली हो उसे दशरथ कहते है। वे अयोध्या मे निवास करते थे। जहा कोई द्वन्द नही, युद्ध नही उसे अयोध्या कहते है।

=> महाराज दशरथ की तीन रानिया थी। कौशल्या, सुमित्रा, कैकेयी, यह इनके वास्तविक नाम नही है। कौशल देश की राजकुमारी होने के नाते कौशल्या, सौमित्र देश की राजकुमारी होने के नाते सुमित्रा कैकेया नरेश की पुत्री होने के कारण कैकेयी कहा जाता था। कौशल्या का वास्तविक नाम कान्तिमती, सुमित्रा का गुणावती, कैकेयी का रुपमालती था।

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ दशरथ जी मूर्तिमान वेद है। उनकी तीन रानिया, उसकी शाखाएं है। कौशल्या ज्ञानयोग, सुमित्रा भक्तियोग, और कैकेयी कर्मयोग का प्रतीक है।

→ तीन पत्नियाँ होने पर भी राजा निःसंतान थे।

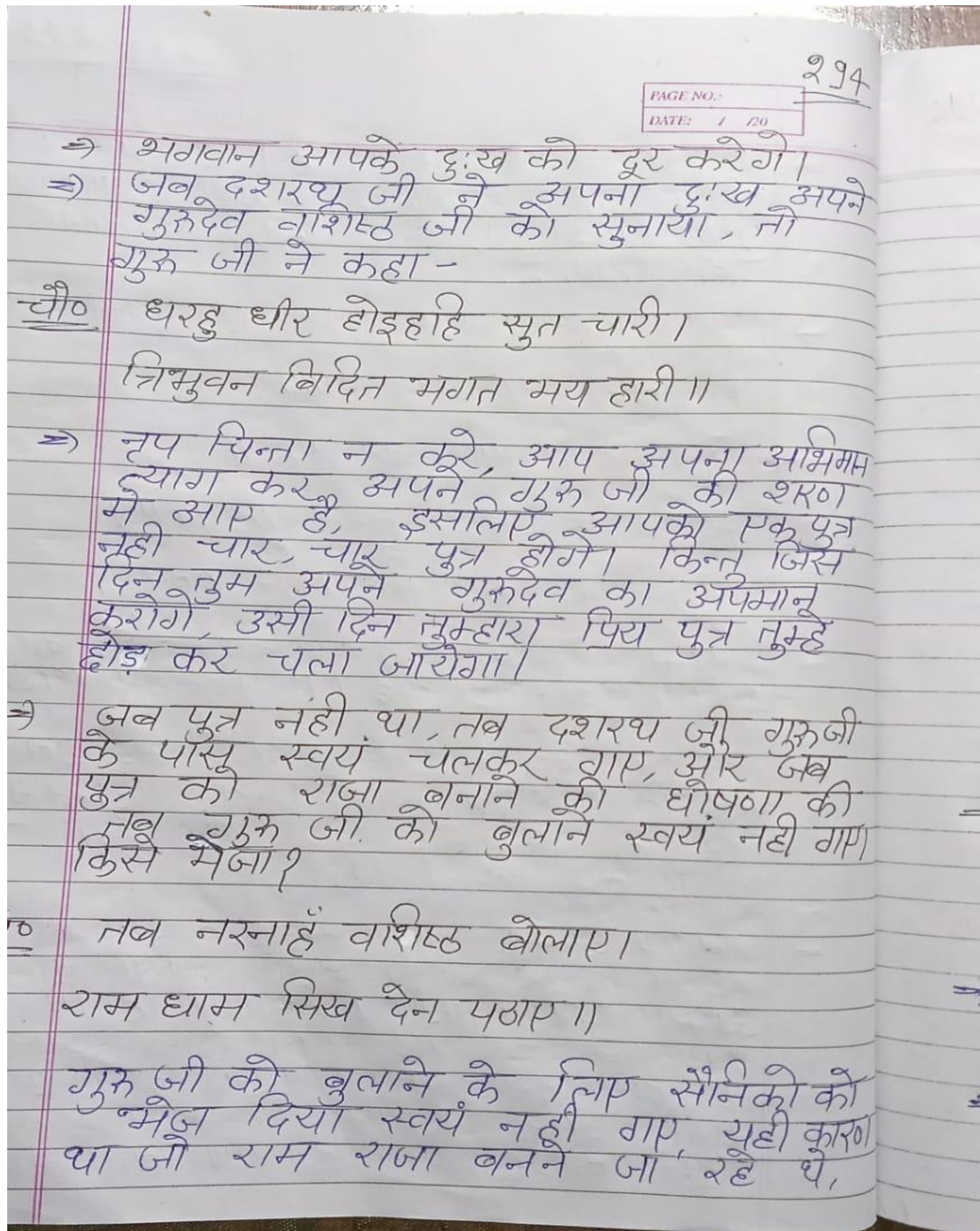
चौ० एक बार भूपति मन माही।
मै गलानि मोरे सुत नाही॥

चौ० गुर गृह गयऊ तुरत महिपाला।
चरन लागि करि बिनय बिसाला॥

→ मानस मे जँहा भी एकबार शब्द का प्रयोग हुआ, वहा कुछ विशेष घटना घटी

= एक बार दशरथ जी के मन मे बड़ी ग्लानि हुई कि मेरे पुत्र नही है। राजा तुरन्त गुरु जी के पास गए और चरणो मे प्रणाम कर विनय की।

⇒ जब भी आपके जीवन मे दुःख आए तो दो लोगो की शरण मे जाओ, संसार को अपना दुःख बताओगे तो हंसी होगी किन्तु भगवान को यदि अपना दुःख सुनाओगे तो दुःख दूर होगा। अपना दुःख, अपने गुरुदेव और भगवान को सुनाए, गुरुदेव दुःख को दूर करने का मार्ग बताएगे, और


294
PAGE NO.:
DATE: / /20
⇒ भगवान आपके दुःख को दूर करेगे।
⇒ जब दशरथ जी ने अपना दुःख अपने गुरुदेव वशिष्ठ जी को सुनाया, तो गुरु जी ने कहा -
चौ० धरहु धीर होइहहिं सुत चारी।
त्रिभुवन बिदित भगत भय हारी॥
⇒ नृप चिन्ता न करे, आप अपना अभिमान त्याग कर, अपने गुरु जी की शरण मे आए है, इसलिए आपको एक पुत्र नही चार-चार पुत्र होगे। किन्तु जिस दिन तुम अपने गुरुदेव का अपमान करोगे, उसी दिन तुम्हारा प्रिय पुत्र तुम्हें छोड़ कर चला जायेगा।
⇒ जब पुत्र नही था, तब दशरथ जी गुरुजी के पास स्वयं चलकर गए, और जब पुत्र को राजा बनाने की घोषणा की तब गुरु जी को बुलाने स्वयं नही गए। किसे भेजा?
चौ० तब नरनाहँ वशिष्ठ बोलाए।
राम धाम सिख देन पठाए॥
गुरु जी को बुलाने के लिए सैनिको को भेज दिया स्वयं नही गए, यही कारण था जो राम राजा बनने जा रहे थे,

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ उन्हे 14 वर्षों के लिए वन जाना पड़ा।

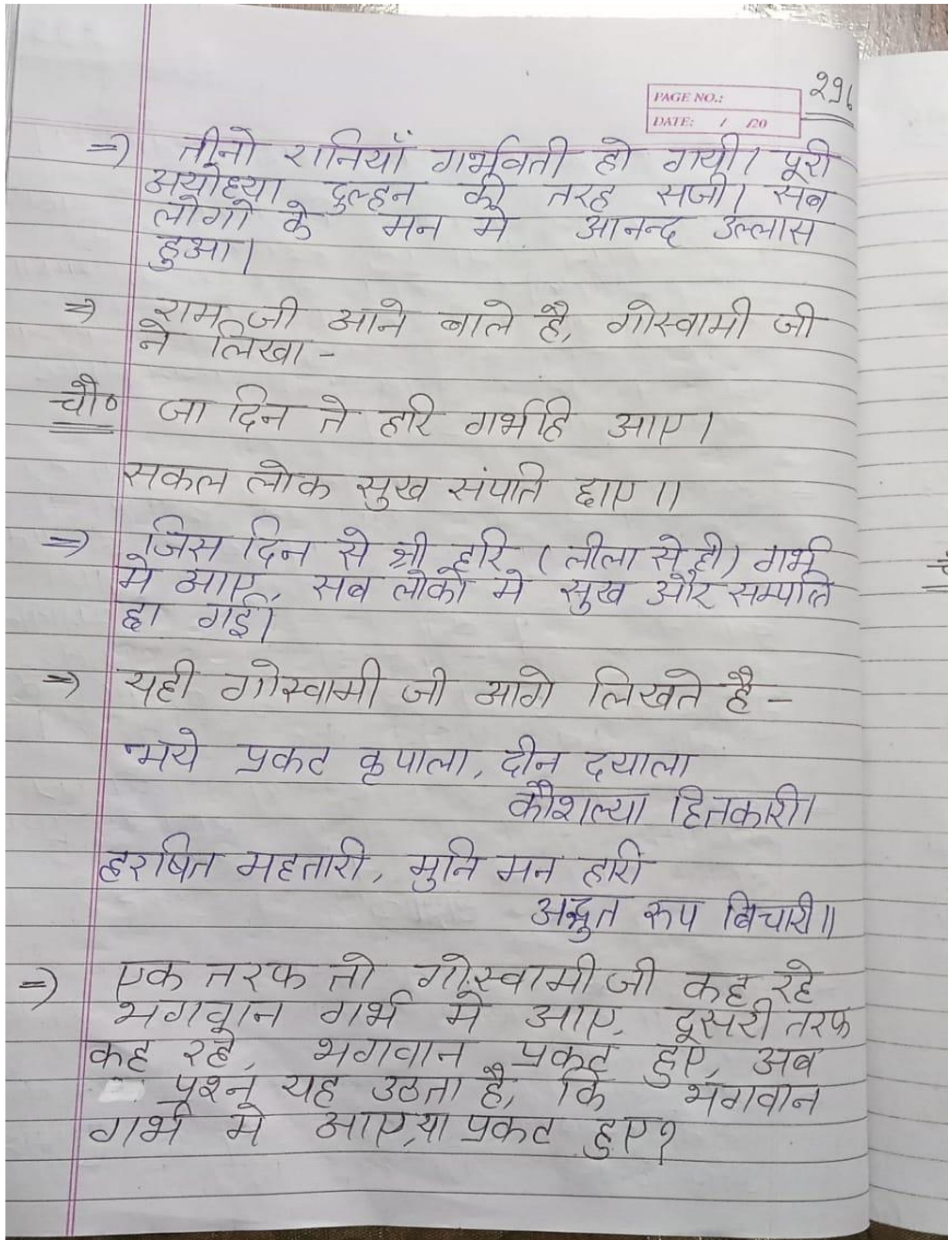
⇒ बन्धुओ एक बात और विचारणीय है यहा पर, आपने सुना कि दशरथ जी को संतान नही थी, उन्होने गुरु जी को अपना दुःख सुनाया, और वशिष्ठ जी ने कहा - चिन्ता मत करिए, एक पुत्र नही चार-चार पुत्र होगे, किन्तु उसके लिए पुत्रकामेष्टि यज्ञ करना पड़ेगा।

⇒ इसका अर्थ यह हुआ कि वशिष्ठ जी को पूर्व से ही ज्ञात था, कि दशरथ जी को चार पुत्र होगे। जब पूर्व से ही ज्ञात था, तो अपने तरफ से कोई कार्यवाही क्यो नही की? क्यो कि वशिष्ठ जी भगवान के कार्य मे कोई दखल नही कर सकते, गुरुदेव तो अपने शिष्य के कल्याण के लिए केवल प्रार्थना कर सकते है।

⇒ वशिष्ठ जी के द्वारा दशरथ जी से पुत्र कामेष्टि यज्ञ कराया गया। यज्ञ से प्रसन्न होकर भगवान अग्नि देव, हाथ मे खीर का चरु लेकर यज्ञ कुण्ड से प्रकट हो गए।

⇒ अग्निदेव ने राजा से कहा - इसे अपनी रानियो को खिला देना। आपके यहा दिव्य संतान होगी।

⇒ गुरु वशिष्ठ की आज्ञा से बड़ी रानी कौशल्या को अर्धभाग, और अर्धभाग सुमित्रा और कैकेयी को बाट दिया।



PAGE NO.: 296
DATE: / /20

=) तीनो रानियां गर्भवती हो गयी। पूरी अयोध्या दुल्हन की तरह सजी। सब लोगो के मन मे आनन्द उल्लास हुआ।

=) राम जी आने वाले है, गोस्वामी जी ने लिखा -

चौ० जा दिन ते हरि गर्भहि आए।
सकल लोक सुख संपति छाए।।

=) जिस दिन से श्री हरि (लीला से ही) गर्भ मे आए, सब लोकों मे सुख और सम्पत्ति छा गई।

=) यही गोस्वामी जी आगे लिखते है -

"भये प्रकट कृपाला, दीन दयाला
कौशल्या हितकारी।
हरषित महतारी, मुनि मन हारी
अद्भुत रूप बिचारी।।

=) एक तरफ तो गोस्वामी जी कह रहे भगवान गर्भ मे आए, दूसरी तरफ कह रहे, भगवान प्रकट हुए, अब प्रश्न यह उठता है, कि भगवान गर्भ मे आए या प्रकट हुए?

297

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ कुछ विद्वानो का मत है कि भगवान कभी किसी के गर्भ से जन्म नहीलेते भगवान का अवतार होता है, यदि भगवान का अवतार होता है तो उत्तरा के गर्भ मे भगवान ने प्रवेश कैसे किया?

⇒ हमको तो गोस्वामी जी की बात को सिद्ध करना है कि भगवान गर्भ मे भी आए और प्रकट भी हुए कैसे?

= आगे गोस्वामी जी ने लिखा है-

चौ० इहाँ उहाँ दुइ बालक देखा।
मतिभ्रम मोर कि आन बिसेषा।।

⇒ एक बार माता कौशल्या जी ने राम जी को स्नान कराकर पालने मे बैठा दिया, और स्वयं मन्दिर मे प्रवेश कर गई पूजन के लिए, किन्तु माता कौशल्या जी ने देखा कि वह जिस लाला को पालने मे बैठा कर आई थी वह मन्दिर मे बैठा था, कौशल्या जी भागकर पालने के पास गई तो देखा लाला पालने मे बैठा जिस प्रकार कौशल्या जी एक लाला को मन्दिर और पालने दो जगह देख रही थी इसी प्रकार भगवान गर्भ मे भी आए और प्रकट भी हुए, ईश्वर सामर्थ्यवान है। उनके लिए कुछ भी असम्भव नही है।

PAGE NO.: 298
DATE: / /20

चौ० नौमी तिथि मधु मास पुनीता।
शुक्ल पक्ष अभिजित हरि प्रीता॥

=) चैत्रमास, शुक्ल पक्ष, नौमी तिथि, पुनर्वसु नक्षत्र, मंगलवार, अभिजित मुहूर्त मे ठीक बारह बजे (दिन के) राघवेन्द्र प्रभु का प्राकट्य हुआ।

=> राम जी नवमी तिथि को ही क्यो आए?

=) 9 अंक पूर्ण है। नौ का पहाड़ा पढ़िए -
9×1 = 9, 9×2 = 18 ⇒ 8+1 = 9
9×3 = 27 = 7+2 = 9
9×4 = 36 = 6+3 = 9

नौ का पूरा पहाड़ा पढ़ लीजिए, संख्या नौ ही आयेगी, न एक अंक कम होगा, न एक अंक ज्यादा, इसी प्रकार राम की मर्यादा है, परिस्थितियां कैसी भी आए राम की मर्यादा कभी खण्डित नही होती अंको मे सबसे बड़ा अंक नौ है इसी प्रकार सभी अवतारो मे सबसे बड़ी मर्यादा रामावतार मे है। अंक मे नौ से बड़ा कोई नही, मर्यादा मे राम से बड़ा कोई नही।

दूसरा कारण - ज्योतिष शास्त्र मे चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी को रिक्ता तिथि माना गया है। जिस दिन रिक्ता

299

⇒ तिथी होती उस दिन ज्योतिषी बोलते कोई कार्य मत करो। एक दिन रिक्तातिथि भगवान नारायण के पास जाकर बोली प्रभु आपने हमको तो बनाया लेकिन रिक्ता बना दिया, जैसे ही मेरा समय आता है, पण्डित लोग कहते आज तो रिक्ता है, सब कार्य बन्द, इसलिए मैं तो दुःखी हूं। भगवान ने कहा, तुम चिन्ता मत करो त्रेता मे जब मै अवतार लेकर आऊंगा, तो रिक्ता तिथी मे ही आऊगा और तुम्हे पूर्णा बना दूगा।

⇒ रिक्ता तिथि मे क्यो आए?
सन्तजन कहते भगवान आए तो उनके लिए जगह तो होनी चाहिए, जिसके अन्दर पहले से ही कचरा भरा हो, वहा ठाकुर कहा आयेगे, पहले रिक्त करो, हृदय रिक्त होगा, खाली होगा, संसार निकलेगा तब भगवान आएगे, इसलिए भगवान रिक्ता तिथि को आए।

⇒ पुनर्वसु नक्षत्र मे प्राकट्य क्यो हुआ?

⇒ पुनर्वसु का अर्थ है, पुनः बसाने वाला, जो पुनः बसा दे, उसे पुनर्वसु कहते है रावण के आतंक से जो लोग उजड़ गए थे, उन भक्तो को पुनः बसाने के लिए भगवान पुनर्वसु नक्षत्र मे आए।

300

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ मंगल को ही क्यो आए?
⇒ मंगलानां च मंगलम जो मंगल के मंगल है, पवित्र के भी जो पवित्र है ऐसे परमात्मा सम्पूर्ण विश्व का मंगल करने के लिए मंगलवार को पधारे-

चौ॰ मंगल भवन अमंगल हारी।
द्रवहु सुदशरथ आजिर बिहारी॥

= भगवान् राम तो मंगलो का भवन है, अमंगलो का हरण करने वाले है, इसलिए जगत के कल्याण के लिए मंगलवार को पधारे।

= सशंख चक्रं सकिरीट कुण्डलं,
सपीतवस्त्रं सरसीरुहेक्षणम।
सहारवक्षः स्थल कौस्तुभश्रियं
नमामि विष्णुं शिरसा चतुर्भुजम्

⇒ दिन के ठीक बारह बजे राघवेन्द्र प्रभु प्रकट हुए, ऐसी सुन्दर झाँकी। आप दर्शन करे। मंद, मंद स्मित हास्य कर रहे है, मुस्कुरा रहे है। भगवान! शंख, चक्र, गदा, पदम, धारण किये खड़े है। माता कौशल्या गदगद हो गयी। लेकिन यह बात बाहर किसी को नही पता।

⇒ भगवान ने मईया से कहा- आप ने मुझसे कहा था, आप जैसा बेटा मुझे चाहिए

301

→ इसलिए मै आपका बेटा बनकर आया हूं।

→ कौशल्या मईया बोली, मैंने आपको पुत्र बनकर आने को कहा था। आप तो पिता जी बनकर पधारे है। ये, शंख, चक्र, गदा, पद्म लेकर क्यो आये है? ऐसा कोई बेटा होता है?

→ राम जी बोले- माता हम तो जहां कही पुत्र बनते है, ऐसे ही बनते है। आप हमको पुत्र बोलो, हम आपको माता बोले, हो गया बेटा मैया बोली- ये तो ठीक है, लेकिन चार हाथ का बेटा होता है? लोग कहेगे चार हाथ का कैसे हुआ? मैया के कहने पर राम जी ने दो हाथ हटा दिए, दो हाथ के हो गए और मैया से बोले, अब तो पुत्र हो गया, अब तो द्वार खोलिए।

→ मैया बोली इतना लम्बा बेटा नही होता, पहले छोटे बनिए तभी द्वार खुलेगा। राम जी छोटे हो गए। मईयाँ ने कहा वस्त्र तो उतारो- राम जी ने कहा बहुत परेशान करती है आप, कभी कहती दो हाथ हटाओ आप, कभी कहती छोटे हो जाओ, कभी कहती नंगे हो जाओ। नंगे काहे को होवे।

माता पुनि बोली सो मति डोली, तजहु तात यह रूपा।
कीजे शिशु लीला अति प्रिय शीला, यह सुख परम अनूपा॥

PAGE NO.: 302
DATE: / /20

⇒ मैया की बात मानकर राम जी नंगे हो गए। जब छोटे से हो गए तो नंगे होने मे क्या लगता है? हो गए नंगे। मैया ने पलना मे सुला दिया। अब तो द्वार खोलो मैया, मुझे सब देखना चाहते है।

⇒ मैया बोली – लाला होता है, तो रोता है, रोओ तो सही – भगवान बोले - रोने का अभ्यास नही।

⇒ सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना
होई बालक सुरभूपा।
यह चरित जे गावहिं हरि पद पावहि
ते न परहिं भवकूपा॥

⇒ मैया की बात मानकर, राम जी रोने लगे। आकाश मण्डल मे देवताओ की भीड़ लगी है, दर्शन के लिए। चन्द्र देव भी भगवान के दर्शन के लिए पधारे जैसे ही चन्द्र देव ने भगवान के दर्शन करने चाहे तो सूर्यदेव आगे आकर खड़े हो गए। चन्द्र ने सूर्य से कहा - आगे से हटो मुझे दर्शन करने दो, सूर्य ने कहा भगवान मेरे वंश मे आये है, इसलिए मुझे दर्शन करने है, मै नही हटूंगा।

⇒ राम जी ने चन्द्रमा से कहा - दुखी क्यो होते है? चन्द्रमा बोले, एक तो दिन मे अवतार लिया आपने, वो भी सूर्य वंश मे।

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ राम जी ने कहा डरते क्यो हो ? इस बार सूर्यवंश मे आया हूं। अगली बार चन्द्रवंश मे आऊंगा। इस बार दिनू के बारह बजे आया, अगली बार रात्री के बारह बजे आऊंगा। यादि इससे भी तुम्हे प्रसन्नता नही है। तो सुनो चन्द्रमा जो मेरा नाम लेगा वो मेरे संग तुम्हारा नाम जरूर लेगा। इसलिए रामजी का पूरा नाम है रामचन्द्र।

०: श्री राम स्तुति :०

श्री रामचन्द्र कृपालु भजमन हरण भवभय दारुणं
नवकंज - लोचन, कंज मुख कर कंज पद कंजारुणं
कंदर्प अगणित अमित छवि नवनील नीरज सुन्दरं
पटपीत मानहु तड़ित रुचि शुचि, नौमि जनक सुतावरं
भज दीनबन्धु दिनेश, दानव दैत्यवंश निकंदनं
रघुनन्द आनन्दकन्द कौशलचन्द्र दशरथ नन्दनं
सिर मुकुट कुण्डल तिलक चारु उदारु अंग विभूषणं
आजानुभुज शर - चापधर, संग्राम जित्त खरदूषणं
इति वदति तुलसीदास शंकर - शेष मुनि मन रंजनं
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खल दल गंजनं।

PAGE NO.: 304
DATE: / /20

⇒ महाराज दशरथ को सूचना मिली, आपकी तीनो भार्याओ ने पुत्रो को जन्म दिया है। पुनर्वसु नक्षत्र मे राम जी का जन्म हुआ, राम जी के जन्म के 18 घण्टे बाद पुष्य नक्षत्र मे भरतजी का जन्म हुआ।

⇒ भरतजी के जन्म के 6 घण्टे बाद श्लेषा नक्षत्र मे लक्ष्मण और शत्रुघ्न जी का जन्म हुआ। वाल्मीकि रामायण मे लिखा है सार्प नक्षत्रे अर्थात- जिस नक्षत्र के देवता सर्प है उसे सार्प नक्षत्र कहते है। लक्ष्मण जी शेषनाग के अवतार है, इसलिए श्लेषा नक्षत्र मे आए। श्लेषा का एक अर्थ जुड़ा हुआ होता है। इसलिए सुमित्रा जी को जुड़वाँ बालक प्राप्त हुए।

= महारानी कौशल्या के रघुवर पधारे है कैकेयी महारानी ने श्री भरतलाल को जन्म दिया, और सुमित्रा जी ने श्री लक्ष्मण जी और शत्रुघ्न लाल को जन्म दिया है।

= दशरथ महाराज के आनन्द की सीमा न रही। दशरथ जी के महल के मुख्य द्वार पर बधाई देने वालो की भीड़ एकत्रित हो गयी। सभी ने मिलकर महाराज दशरथ को बधाई दी

:: बधाई गीत ::

प्रकट भए है चारो भईया -2
अवधपुर बाजे बधईयां -2
बाजे बधईयाँ, बाजे बधईयाँ
प्रकट भए है चारो भईया
अवधपुर बाजे बधईया

3.05

PAGE NO.:
DATE: / /20

(1) राजा दशरथ घर लाला जायो -2
नाम धरे रघुरईया, अवधपुर बाजे बधईया

जन्म लियो है चारो भईया
अवधपुर बाजे बधईया - - —

(2) राम लला की होत न्यौछावर -2
दधि, माखन, धेनु मईयाँ - - -
अवधपुर बाजे - —

जन्म लियो है - - —

⇒ आइए अब सूक्ष्म मे राम कथा श्रवण करके कृष्ण जन्म की ओर चलें। एक श्लोक मे राम कथा श्रवण करते है।

श्लोकः- गुर्वर्थे त्यक्तराज्यो व्यचरदनुवनं
पद्म पद्भ्यां प्रियायाः
पाणिस्पर्शाक्षमाभ्यां मृजितपथरुजो
यो हरीन्द्रानुजाभ्याम्।
वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषा-
ऽऽरोपितभ्रूविजृम्भ-
त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः
कोसलेन्द्रोऽवतान्नः ॥

306

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ भगवान राम अपने पिता दशरथ जी के सत्य की रक्षा के लिए राजपाट छोड़कर वन को चले गए।

⇒ जिस राज्य को प्राप्त करने के लिए इन्द्र आदि देवता ललचाते रहते है, ऐसे राजपाट को छोड़कर भगवान वन, वन भटकते है।

⇒ अभिषेक होने पर प्रसन्नता नही वन जाने का दुःख नही ऐसे राम जी है।

⇒ वन मे सीता जी को सोने का मृग पसन्द आया, सीता जी ने विचार किया जब लोग बाहर घूमने जाते है, तो वहा से कुछ निशानी लाते है, हम इस सोने के मृग को अयोध्या ले जायेगे।

⇒ सीता जी ने राघव से सोने के मृग को लाने के लिए कहा, राम जी ने विचार किया अभी तक जानकी जी ने हमसे कुछ मांगा नही, आज पहली बार उन्हे कुछ पसन्द आया और वह मांग रही है इसलिए उनकी इच्छा को पूर्ण करना चाहिए।

⇒ स्वर्ण के सिंघासन को छोड़कर रामजी सोने के मृग के पीछे भागे।

⇒ भला कही संसार मे सोने का मृग होए।
अनहोनी होनी नही, होनी होय सो होय॥

⇒ जिस स्वर्ण के मृग के पीछे राम जी भागे वह तो नकली निकल गया, मारीच का बध कर दिया राम जी ने।

⇒ जब तक भगवान लौटकर जानकी जी के पास आए तब तक रावण जानकी जी का हरण कर के लंका ले गया।

⇒ सीता जी की खोज मे जगपति वन वन भटके, जिस सोने के मृग के पीछे राम जी भागे वह तो नकली निकल गया किन्तु आगे चलकर असली सोने का मृग मिल गया। कौन मिल गया ?

श्लोक- अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि ॥

⇒ हनुमान जी से भेट हो गयी राम जी की राम जी ने विचार किया ये असली सोने का मृग है, बन्दर भी शाखा मृग होते है। गोस्वामी जी ने लिखा-

चौ० शाखामृग कै बड़ि मनुसाई।
शाखा ते शाखा पर जाई॥
राम जी ने कहा यह मृग तो घर ले जाने लायक है।

308

PAGE NO.:
DATE: / /20

=) स्वर्ण के मृग को स्वर्णमुद्रिका देकर, स्वर्ण नगरी (लंका) मे जानकी जी से मिलने भेजा।

=) स्वर्ण के मृग (हनुमान) जी को देखकर जानकी जी के मन मे विचार आया पहले वाला सोने का मृग तो नकली निकला, कही यह भी नकली न हो।

=) तब हनुमान जी ने जानकी मईयां को विश्वास दिलाया -

चौ० राम दूत मै मातु जानकी।
सत्य सपथ करुनानिधान की॥

=) हनुमान जी ने जब करुणानिधान नाम लिया तब सीता मईया समझ गयी कि निश्चित ही हमारे स्वामी ने इसे यँहा भेजा है। क्यों कि करुणानिधान नाम जो सीतामईया लेती थी, वह राम जी और मईया को ही पता था, पहले के समय से स्त्रिया अपने पति का नाम नही लेती थी, अन्य कोई नाम रख लेती थी, जिसे सिर्फ वह पति, पत्नी ही जानते थे।

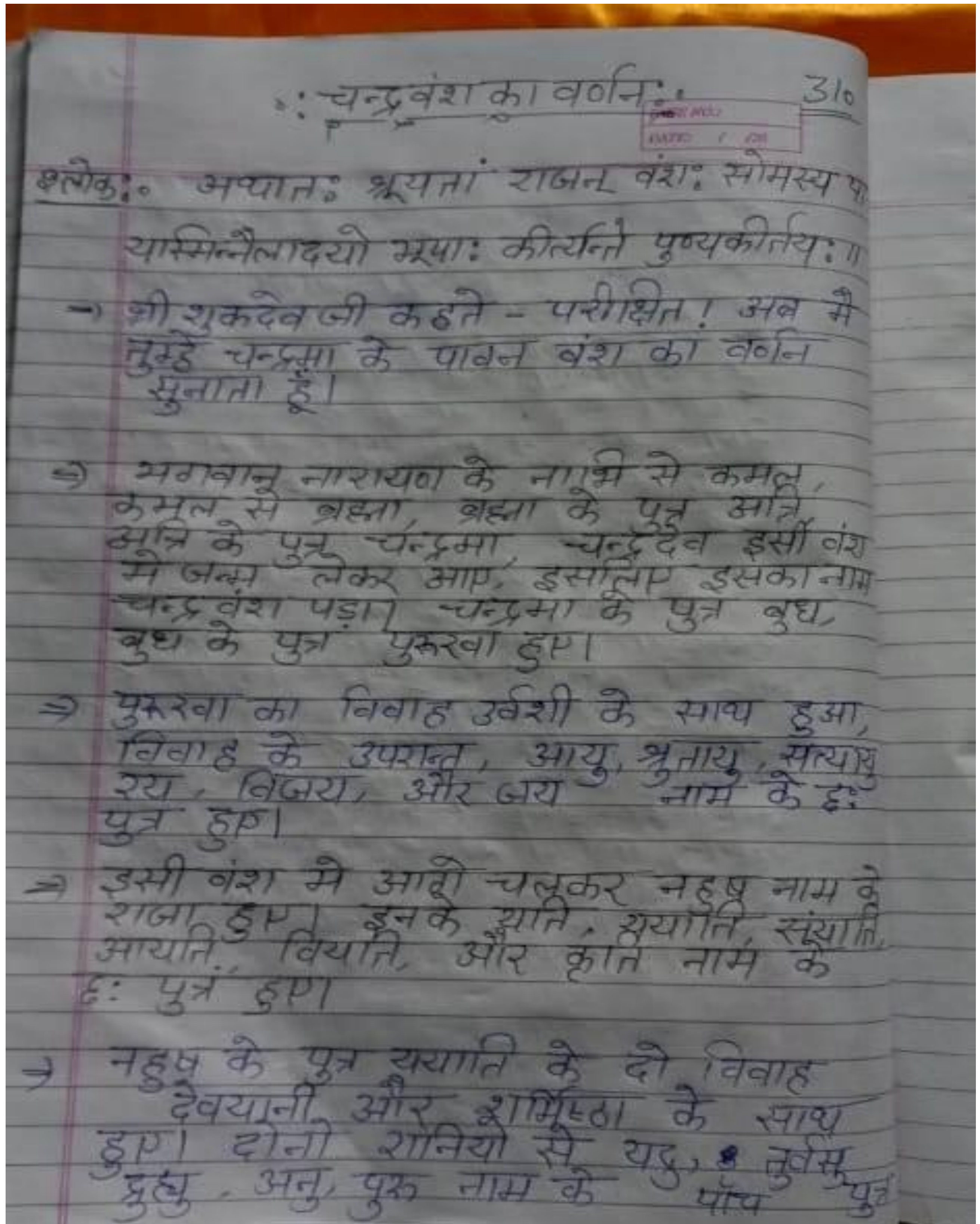
=) जब हनुमान जी ने माँता सीता को भरोसा दिलाया तो मईयाँ ने विचार किया कि यदि ये असली सोने का मृग है तो इसकी परीक्षा तो लेनी ही चाहिए।

309

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ सोने (स्वर्ण) की परीक्षा तो अग्नि मे होती है। रावण ने हनुमान जी की पूछ मे आग लगवा दी, आश्चर्य यह हुआ रावण की पूरी लंका जलकर राख हो गई। हनुमान जी की पूछ का बाल बाका नही हुआ। ज्यो के त्यो चमकते हुए माता जी के शरण मे पहुचकर प्रणाम किए, मईया को विश्वास हो गया यह सचमुच खरा सोना है। इसमे कोई मिलावट नही। आशीर्वाद देकर विदा किया।

⇒ हनुमान जी ने आकर सन्देश राम जी को दिया। दलबल के साथ समुद्र पर सेतु का निर्माण करके राम जी ने लंका मे प्रवेश किया, राम जी की क्रोधाग्नि मे जलकर राक्षसो का वन नष्ट हो गया। रावण का अन्त हुआ। राम जी जानकी जी को पुनः प्राप्त करके शरण मे आए विभीषण को लंका सौपकर पुष्पक विमान पर बैठकर 14 वर्ष बाद अयोध्या लौट कर आए और अवधेश बने। ऐसे भगवान श्री रामचन्द्र के चरणो मे हम सब प्रणाम करते है।



: चन्द्रवंश का वर्णन : 310

श्लोक:- अथातः श्रूयतां राजन् वंशः सोमस्य पा
यस्मिन्नैलादयो भूपाः कीर्त्यन्ते पुण्यकीर्तयः॥

→ श्री शुकदेव जी कहते - परीक्षित! अब मै तुम्हें चन्द्रमा के पावन वंश का वर्णन सुनाता हूँ।

⇒ भगवान् नारायण के नाभि से कमल, कमल से ब्रह्मा, ब्रह्मा के पुत्र अत्रि, अत्रि के पुत्र चन्द्रमा, चन्द्रदेव इसी वंश मे जन्म लेकर आए, इसलिए इसका नाम चन्द्रवंश पड़ा। चन्द्रमा के पुत्र बुध, बुध के पुत्र पुरूरवा हुए।

⇒ पुरूरवा का विवाह उर्वशी के साथ हुआ, विवाह के उपरान्त, आयु, श्रुतायु, सत्यायु, रय, विजय, और जय नाम के छः पुत्र हुए।

⇒ इसी वंश मे आगे चलकर नहुष नाम के राजा हुए। इनके यति, ययाति, संयाति, आयाति, वियाति, और कृति नाम के छः पुत्र हुए।

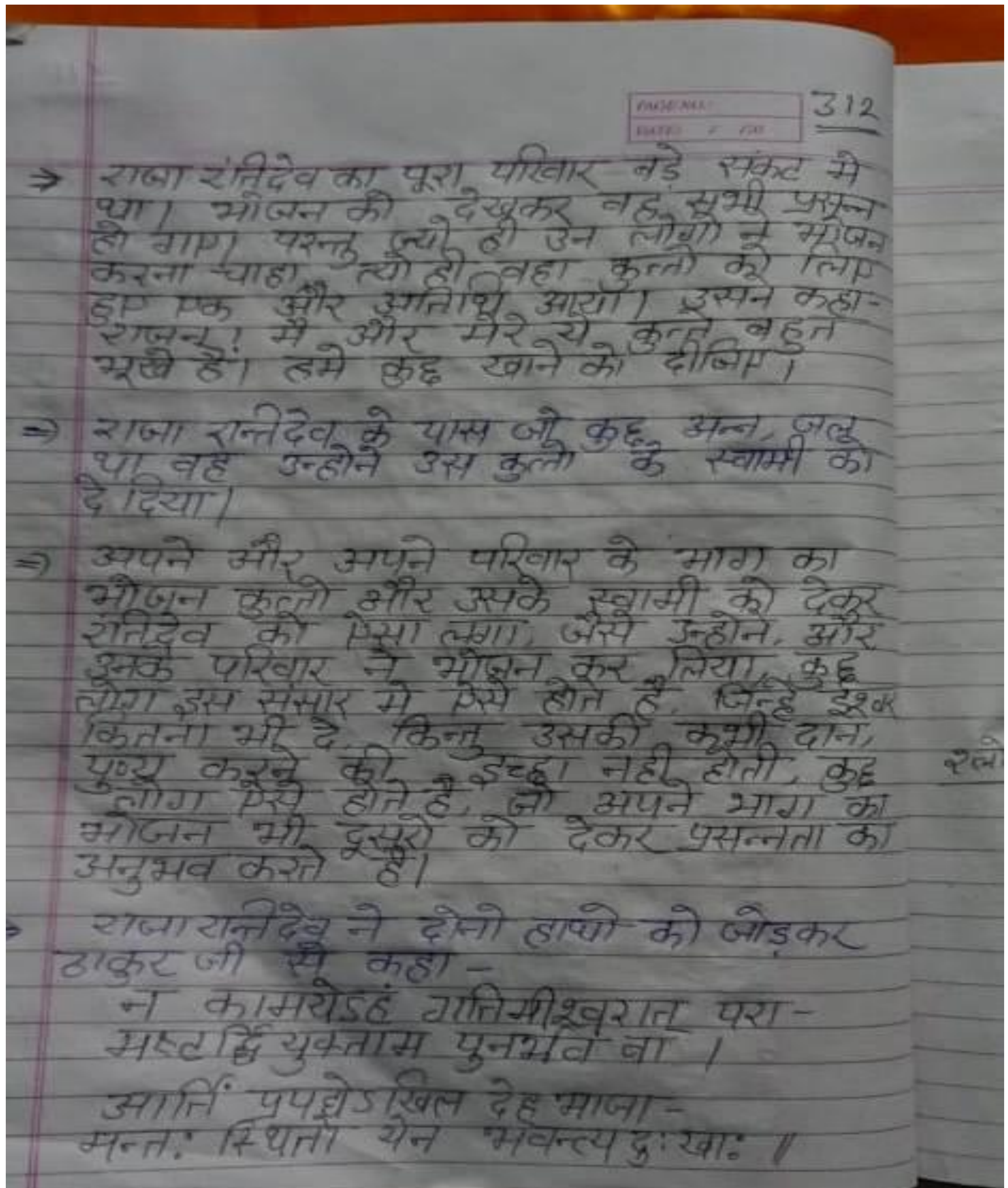
→ नहुष के पुत्र ययाति के दो विवाह देवयानी और शर्मिष्ठा के साथ हुए। दोनो रानियो से यदु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु, पुरु नाम के पाँच पुत्र

311

⇒ हुए छोटे बेटे पुरु ने अपनी जवानी अपने पिता (ययाति) को दे दी। राजा ययाति ने प्रसन्न होकर अपने छोटे बेटे, पुरु को सम्राट बना दिया।

⇒ इसी पुरु वंश मे राजा हुए दुष्यन्त जिन्होने शकुन्तला से विवाह करके परम प्रतापी भरत को जन्म दिया। इनके वंश मे सब भारत कहलाए, (भरतवंशी सभी राजा भारत) इसलिए गीता जी मे भगवान श्री कृष्ण अर्जुन के लिए भारत शब्द का प्रयोग करते है।

⇒ इन्ही भरत के वंश मे आगे चलकर रन्तिदेव नाम के राजा हुए। पूर्व राजाओ के किए गए पाप का परिणाम यह हुआ कि रतिदेव महाराज की धरती सूख गयी। रंतिदेव की प्रजा भूखो मरने लगी। रंतिदेव ने अपने खजाने को सारी प्रजा मे बॉट दिया। राजा के जीवन मे एक दिन ऐसा आ गया, कि उनके विशाल भण्डार मे एक अन्न का दाना भी शेष नही बचा, एक बार तो लगातार अड़तालीस दिन ऐसे बीत गए कि उन्हे पानी तक पीने को न मिला। उनन्चासवे दिन प्रातःकाल ही उन्हे कुछ घी, खीर, हलवा और जल मिला।



312

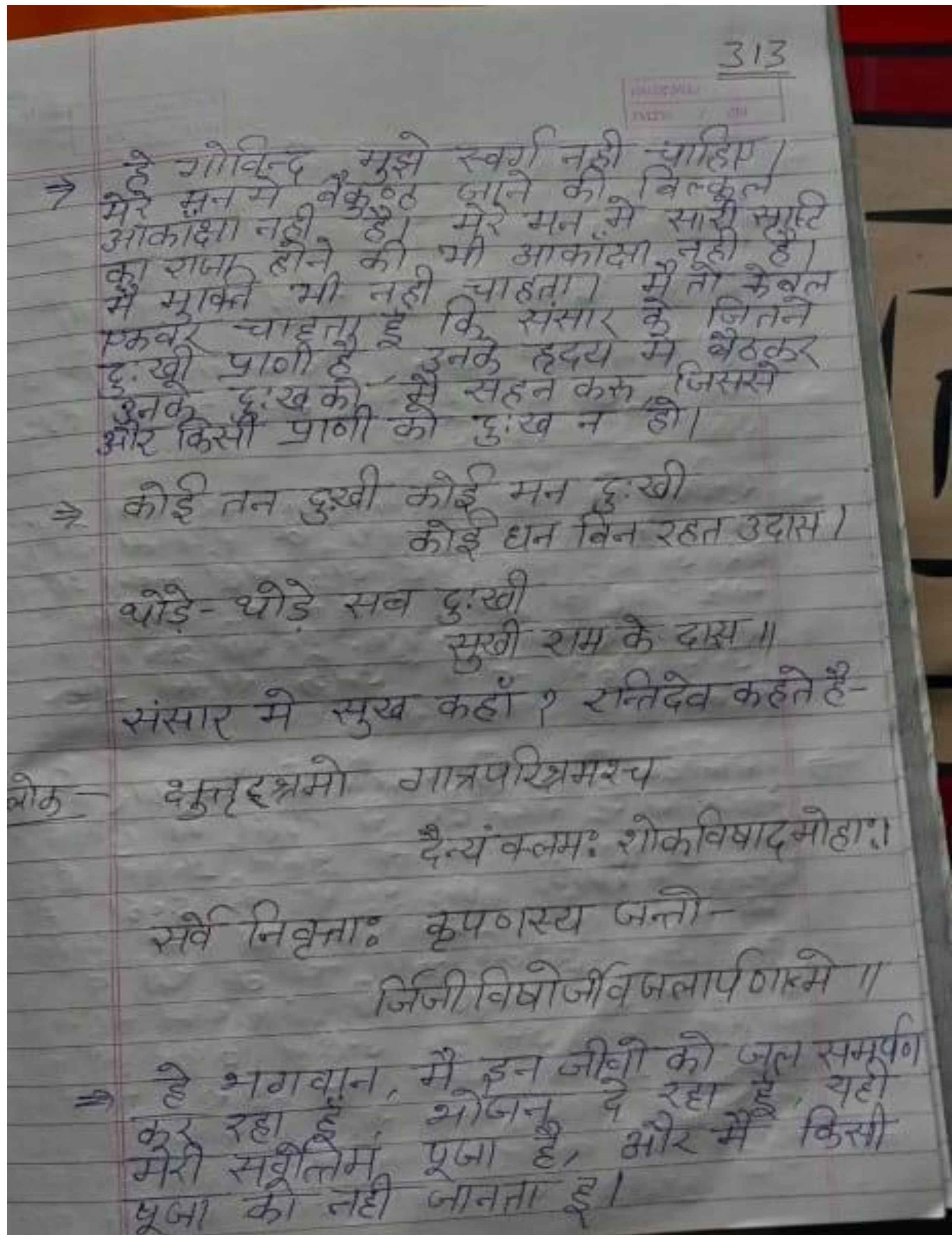
⇒ राजा रंतिदेव का पूरा परिवार बड़े संकट मे था। भोजन को देखकर वह सभी प्रसन्न हो गए। परन्तु ज्यो ही उन लोगो ने भोजन करना चाहा, त्यो ही वहा कुत्तो को लिए हुए एक और अतिथि आया। उसने कहा- राजन्! मै और मेरे ये कुत्ते बहुत भूखे है। हमे कुछ खाने को दीजिए।

⇒ राजा रन्तिदेव के पास जो कुछ अन्न, जल था वह उन्होने उस कुत्तो के स्वामी को दे दिया।

⇒ अपने और अपने परिवार के भाग का भोजन कुत्तो और उसके स्वामी को देकर रंतिदेव को ऐसा लगा, जैसे उन्होने, और उनके परिवार ने भोजन कर लिया, कुछ लोग इस संसार मे ऐसे होते है, जिन्हे ईश्वर कितना भी दे, किन्तु उसकी कभी दान, पुण्य करने की इच्छा नही होती, कुछ लोग ऐसे होते है, जो अपने भाग का भोजन भी दूसरो को देकर प्रसन्नता का अनुभव करते है।

⇒ राजा रन्तिदेव ने दोनो हाथो को जोड़कर ठाकुर जी से कहा -

न कामयेऽहं गतिमीश्वरात् परा-
मष्टर्द्धियुक्तामपुनर्भवं वा।
आर्तिं प्रपद्येऽखिलदेहभाजा-
मन्तःस्थितो येन भवन्त्यदुःखाः॥



313

⇒ हे गोविन्द मुझे स्वर्ग नही चाहिए। मेरे मन मे वैकुण्ठ जाने की बिल्कुल आकांक्षा नही है। मेरे मन मे सारी सृष्टि का राजा होने की भी आकांक्षा नही है। मै मुक्ति भी नही चाहता। मै तो केवल एकवर चाहता हूँ कि संसार के जितने दुःखी प्राणी है उनके हृदय मे बैठकर उनके दुःख को मै सहन करू जिससे और किसी प्राणी को दुःख न हो।

⇒ कोई तन दुःखी कोई मन दुःखी
कोई धन बिन रहत उदास।
थोड़े-थोड़े सब दुःखी
सुखी राम के दास॥

संसार मे सुख कहाँ? रन्तिदेव कहते है-

श्लोक- क्षुत्तृट्श्रमो गात्रपरिश्रमश्च
दैन्यं क्लमः शोकविषादमोहाः।
सर्वे निवृत्ताः कृपणस्य जन्तो-
र्जिजीविषोर्जीवजलार्पणान्मे॥

⇒ हे भगवान, मै इन जीवो को जल समर्पण कर रहा हूँ, भोजन दे रहा हूँ, यही मेरी सर्वोत्तम पूजा है, और मै किसी पूजा को नही जानता हूँ।

314

बड़ी सुन्दर बात कही है-

→ मालिक इतना दीजिये जा मे कुटुम्ब समाय
मै भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय।।

→ हे परमात्मन् इतना प्रदान करना कि मै भी भूखा न रहूं और मेरे घर से कोई संत भूखा न जाए।

→ रन्तिदेव के भाव को देखकर परमात्मा प्रसन्न हो गए। जो आतिथि के रूप मे राजा के घर आए वह कोई और नही स्वयं भगवान नारायण ही थे। भक्तो की अभिलाषा पूर्ण करने वाले त्रिभुवन स्वामी ब्रह्मा, विष्णु और महेश तीनो उनके सामने प्रकट हो गए।

⇒ रन्तिदेव ने उनके चरणो मे नमस्कार किया भगवान ने रन्तिदेव से कहा, मै तुमसे और तुम्हारी भक्ति से बहुत प्रसन्न हूं, तुम्हारे मन मे कुछ मांगने की इच्छा हो तो मांग लो, रन्तिदेव को तो भगवान का प्रेम, उनकी कृपा चाहिए थी, वे भगवान को चाहते थे, भगवान से नही चाहते थे। इसलिए उन्होने ठाकुर जी से कहा- हे प्रभो! मेरा मन पूर्ण रूप से आप मे लग जाए, बस यही दे दीजिए। शुकदेव जी कहते- परीक्षित! इसी पुरुवंश मे तुम्हारा भी जन्म हुआ। इसलिए तुम्हे

315

⇒ श्री भारत कहते है। ये तो हुई पुरुवंश की बात। पुरु के बड़े भाई और ययाति के बड़े पुत्र यदु थे। इसी यदुवंश मे मेरे गोविन्द का प्राकट्य हुआ।

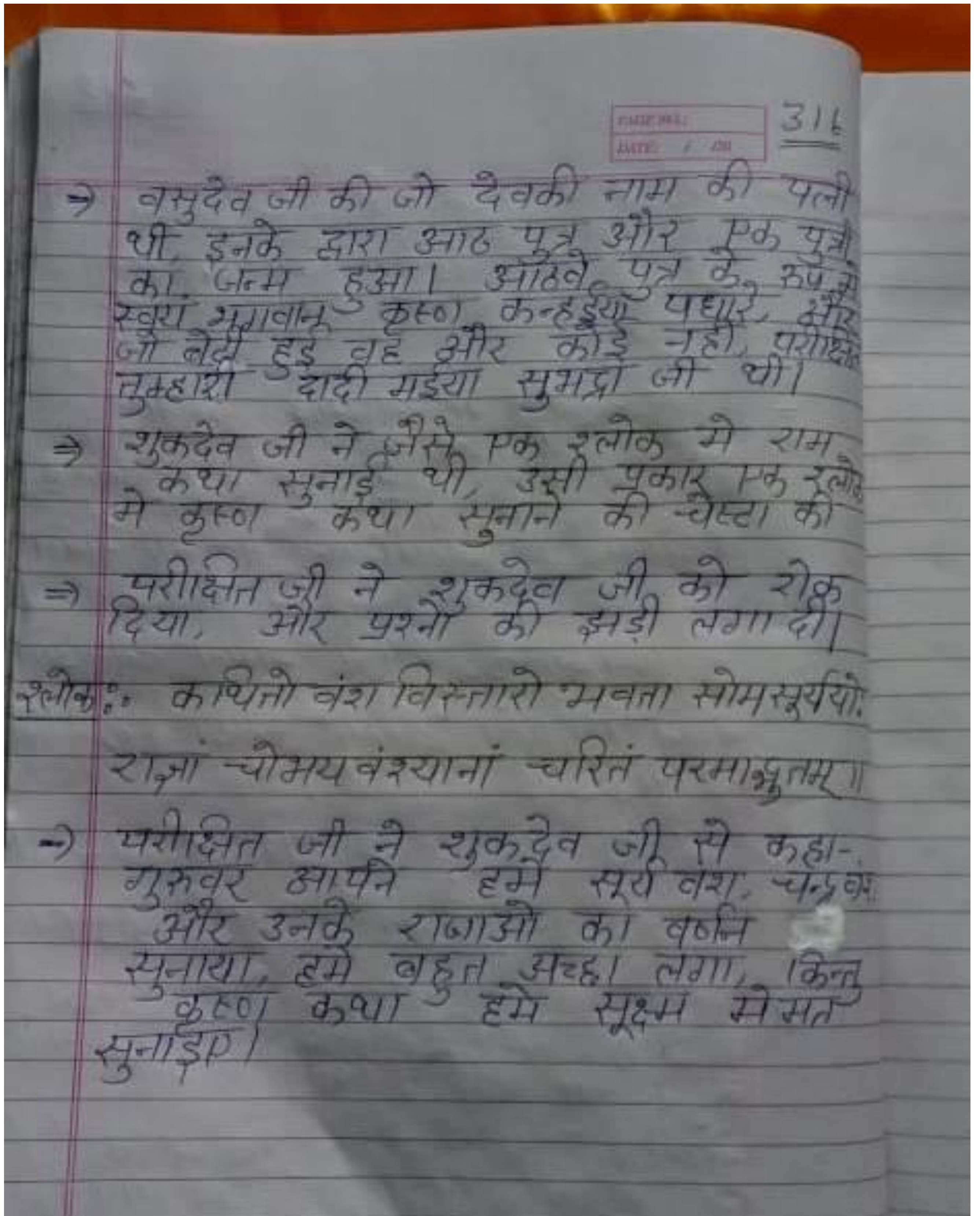
⇒ इसी यदुवंश मे अजमीढ, देवमीढ, शूरसेन नाम के राजा हुए। शूरसेन का विवाह मारिषा के साथ हुआ, विवाह के उपरान्त मारिषा ने दस पुत्रो को जन्म दिया, जिसमे वसुदेव जी सबसे बड़े थे।

⇒ वसुदेव जी के जन्म के समय देवताओ के नगारे और नौबत स्वयं ही बजने लगे थे। इसलिए इनका एक नाम आनकदुन्दुभि पड़ गया।

श्लोक: पौरवी रोहिणी भद्रा मदिरा रोचना इला।
देवकी प्रमुखा आसन् पत्न्य आनकदुन्दुभेः॥

⇒ वसुदेव जी की पौरवी, रोहिणी, भद्रा, मदिरा, रोचना, इला, और देवकी आदि बहुत सी पत्नियां थी।

⇒ रोहिणी के गर्भ से वसुदेव जी के बलराम, गद, सारण, दुर्मद, विपुल, ध्रुव, और कृत आदि पुत्र हुए थे।



316

→ वसुदेव जी की जो देवकी नाम की पत्नी थी, इनके द्वारा आठ पुत्र और एक पुत्री का जन्म हुआ। आठवे पुत्र के रूप मे स्वयं भगवान कृष्ण कन्हैया पधारे, और जो बेटी हुई वह और कोई नही, परीक्षित तुम्हारी दादी मईया सुभद्रा जी थी।

→ शुकदेव जी ने जैसे एक श्लोक मे राम कथा सुनाई थी, उसी प्रकार एक श्लोक मे कृष्ण कथा सुनाने की चेष्टा की

→ परीक्षित जी ने शुकदेव जी को रोक दिया, और प्रश्नों की झड़ी लगा दी।

श्लोक:- कथितो वंश विस्तारो भवता सोमसूर्ययो:
राज्ञां चोभयवंश्यानां चरितं परमाद्भुतम् ॥

→ परीक्षित जी ने शुकदेव जी से कहा- गुरुवर आपने हमे सूर्य वंश, चन्द्रवंश और उनके राजाओ को वर्णन सुनाया, हमे बहुत अच्छा लगा, किन्तु कृष्ण कथा हमे सूक्ष्म मे मत सुनाइए।

317

PAGE NO.:
DATE: / /20

= सुनते रहिए। अन्त मे परिणाम यह होगा कि इस जन्म मरण के रोग से हम मुक्त हो जायेगे। इसलिए कृष्ण कथा आप विस्तार से सुनाइए।

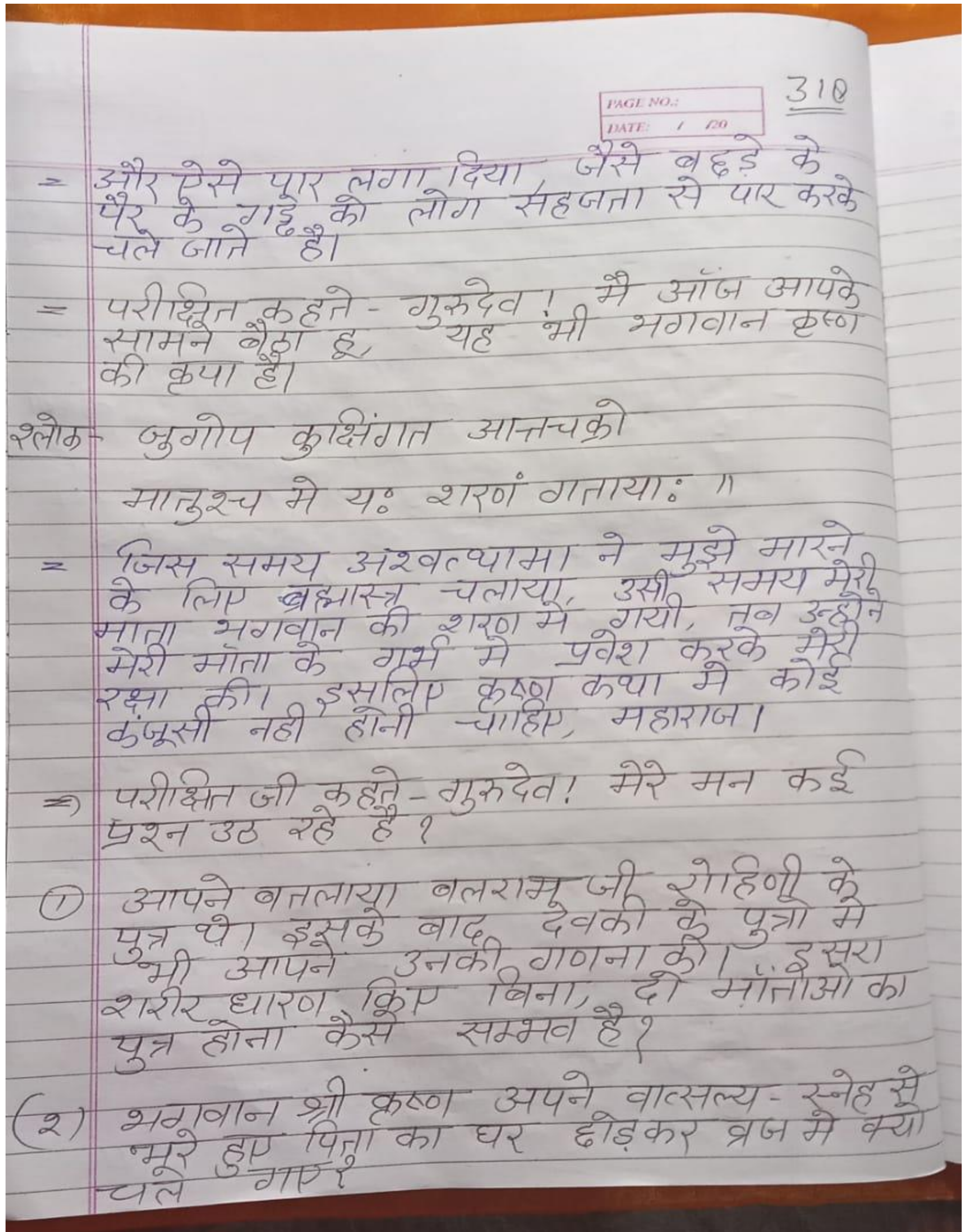
= शुकदेव जी ने पूछा - परीक्षित तुम कृष्ण कथा ही क्यो सुनना चाहते हो ?

= परीक्षित ने कहा - हमारे दादा जी को कौरवो के विशाल सेना के समुद्र से हमारे प्रभु ने पार लगा दिया था। इसलिए उनका हमारे परिवार पर बड़ा एहसान है। नही तो कौरवो के सेना के समुद्र को कोई पार नही कर सकता था।

= तिमि, तिमिंगिल मत्स्य है, समुद्र की मछलियाँ बड़ी खतरनाक होती है, कई योजन लम्बी, चौड़ी मछली का नाम है तिमि, तिमि को जो निगल जाए उसे तिमिंगील कहते है, तिमिंगिल को भी जो निगल जाए उसे तित्यामिंगिल कहते है।

= समुद्र है कौरवो की सेना, तिमि, तिमिंगिल है द्रोणाचार्य, कृपाचार्य इत्यादि। अब किसकी हिम्मत है, जो कौरव रुपी समुद्र को पार कर ले, पर मेरे प्रभु कृपा की नौका लेकर आए पाण्डवो को बैठाए

श्लोक - पितामहा मे समरेऽमरंजयै-
देवव्रताद्यातिर थैस्तिमिंगिलैः।
दुरत्ययं कौरवसैन्यसागरं
कृत्वातरन् वत्सपदं स्म यत्प्लवाः ॥



318

PAGE NO.:
DATE: / /20

= और ऐसे पार लगा दिया, जैसे बछड़े के पैर के गड्ढे को लोग सहजता से पार करके चले जाते है।

= परीक्षित कहते - गुरुदेव ! मै आज आपके सामने बैठा हू, यह भी भगवान कृष्ण की कृपा है।

श्लोक- जुगोप कुक्षिंगत आत्तचक्रो
मातुश्च मे यः शरणं गतायाः ॥

= जिस समय अश्वत्थामा ने मुझे मारने के लिए ब्रह्मास्त्र चलाया, उसी समय मेरी माता भगवान की शरण मे गयी, तब उन्होने मेरी माता के गर्भ मे प्रवेश करके मेरी रक्षा की। इसलिए कृष्ण कृपा मे कोई कंजूसी नही होनी चाहिए, महाराज।

= परीक्षित जी कहते - गुरुदेव! मेरे मन कई प्रश्न उठ रहे है ?

(1) आपने बतलाया बलराम जी रोहिणी के पुत्र थे। इसके बाद देवकी के पुत्रो मे भी आपने उनकी गणना की। दूसरा शरीर धारण किए बिना, दो माताओ का पुत्र होना कैसे सम्भव है ?

(2) भगवान श्री कृष्ण अपने वात्सल्य- स्नेह से भरे हुए पिता का घर छोड़कर व्रज मे क्यो चले गए ?

(3) भगवान श्री कृष्ण ने अपनी माँ के भाई मामा कंस को अपने हाथो से क्यो मार डाला ?

(4) द्वारिकापुरी मे यदुवंशियो के साथ उन्होने कितने वर्षों तक निवास किया? और उन सर्वशक्तिमान प्रभु की कितनी पत्नियाँ थी? कई जिज्ञासाएं मेरे मन मे उठ रही है, इसलिए कृष्ण कथा विस्तार से सुनाइए?

⇒ आपके मुख से भगवान की मधुर कथा को सुनकर मेरी भूख, प्यास भी गायब हो गई है।

श्लोक:- नैषातिदुःसहा क्षुन्मां त्यक्तोदमपि बाधते।
पिबन्तं त्वन्मुखाम्भोजच्युतं हरिकथामृतम्॥

- इसलिए भगवान की सुन्दर कथा का पान हमे कराइए। संसार मे जो भी पेय पदार्थ हम पीते है, वह मल और मूत्र के द्वारा निकल जाते है। किन्तु भगवान की कथा जब कर्णपुट के माध्यम से शरीर मे प्रवेश करती तो वह बाहर नही निकलती, मस्तिष्क मे स्थिपित हो जाती है। इसलिए भगवान की कथा सुनने से अधिक

PAGE NO.: 320
DATE: / /20

⇒ पान करने का विषय है।

⇒ शुकदेव जी परीक्षित के प्रश्न सुनकर प्रसन्न हो गए, और कहने लगे-

श्लोक:- वासुदेव कथाप्रश्नः पुरुषांस्त्रीन् पुनाति हि।
वक्तारं पृच्छकं श्रोतॄंस्तत्पाद सलिलं यथा॥

⇒ भगवान श्री कृष्ण की कथा के सम्बन्ध मे प्रश्न करने से ही वक्ता, प्रश्नकर्ता और श्रोता तीनो ही पवित्र हो जाते है। इसलिए अब भगवान श्री कृष्ण की कथा को ध्यान से सुनो।

⇒ द्वापरयुग के अन्तकाल मे, अर्थात- द्वापर युग समाप्त होने वाला था, कलियुग आने वाला था, तभी क्षत्रियो के घरो मे राक्षस पैदा हो गए।

⇒ सतयुग मे प्रत्यक्षरुप से राक्षस होते थे। त्रेता मे रावण, कुम्भकरण के रुप मे ब्राह्मणो के घरो मे, द्वापर मे क्षत्रियो के घरो मे, दुर्योधन, शिशुपाल, कंस के रुप मे, कलियुग मे घर-घर मे राक्षस पैदा हो गए। भगवान ने विचार किया इन राक्षसो का वध करने के लिए अवतार लेना पड़ेगा।

321

= शुकदेव जी कहते - परीक्षित! जब पृथ्वी पर चारो ओर अत्याचार, पापाचार, दुराचार भ्रष्टाचार का साम्राज्य हो गया तब गाय बन कर यह पृथ्वी ब्रह्मा जी की शरण मे गई और कहने लगी -

⇒ मै कँहा रहू इस दुनियां मे -

⇒ ब्रह्मा जी ने कहा - अरे! पृथ्वी बताओ तो क्या हुआ?

⇒ पृथ्वी कहती -

⇒ अर्थी से उतर के पिता के कफन
शमशान मे बेचे जाते है।
इंसानो की औकात ही क्या
यहां भगवान भी बेचे जाते है॥

- मांता पृथ्वी ने अपनी पूरी कष्ट की कहानी ब्रह्मा जी को सुनाई। ब्रह्मा जी स्वर्ग के सभी प्रमुख देवताओ को लेकर पृथ्वी माता के साथ भगवान नारायण के पास गए। क्षीरसागर के तटपर पहुंचकर ब्रह्मा आदि देवताओ ने पुरुषसूक्त से भगवान की स्तुति की। तब भगवान नारायण ने आकाशवाणी के द्वारा अपनी आगे की लीला के बारे मे ब्रह्मा जी को बताया।

PAGE NO.: 322
DATE: / /20

⇒ ब्रह्मा जीने पृथ्वी माता के सहित सभी देवताओं से कहा - भगवान नारायण से मेरी बात हो गई -

श्लोक - वसुदेव गृहे साक्षाद् भगवान् पुरुषः परः।
जनिष्यते तत्प्रियार्थं सम्भवन्तु सुरस्त्रियः ॥

⇒ वसुदेव जी के घर मे भगवान बहुत जल्दी प्रकट होगे। आप लोग चलो मथुरा मण्डल मे भगवान के स्वागत हेतु अकेले मत जाना, भगवान अपनी प्राणप्रिया (राधा) जी के साथ पधारेगे, इसलिए तुम लोग भी अपनी पत्नियों को साथ मे लेकर जाओ। देवतागण अपनी पत्नियो को लेकर मथुरा मे आ गए।

श्लोक ⇒ मथुरा भगवान् यत्र नित्यं संनिहितो हरिः

⇒ सात मोक्षदायिका पुरियो मे से एक है मथुरा, मथुरा भगवान की ग्रीवा है। जहाँ भगवान सदैव विराजमान रहते है उसे मथुरा कहते है।

⇒ मथुरा के राजा उग्रसेन थे जो बड़े धर्मात्मा थे किन्तु बेटा बड़ा दुष्ट था। नाम था कंस। हिंसा, मारकाट से जिसको आनन्द आए, उसे कंस कहते है। इतना बड़ा दुष्ट कि अपने पिता को उठाकर जेल मे बन्द कर दिया, और स्वयं अपने पिता

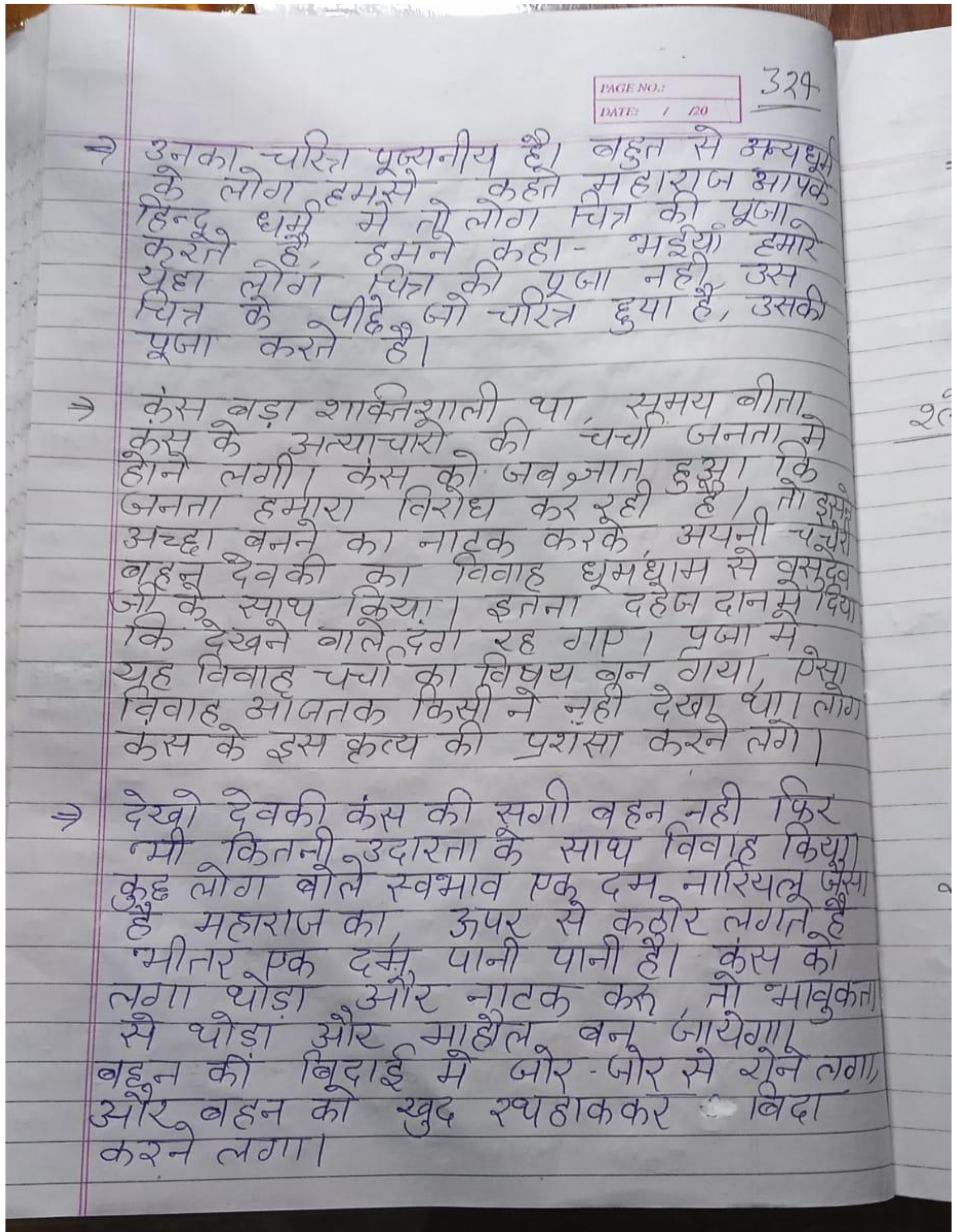
PAGE NO.:
DATE: / /20

की गद्दी पर बैठ गया।

उदाहरण- एकदिन मै अपनी कथा मे श्रोताओ से निवेदन कर रहा था, कि कथा को जब आप श्रवण करे, तो कथा के पात्रो मे जो भी आपको अच्छा लगे, उसे अपना गुरु बनाए। शाम को जब कथा करने के उपरान्त मै अपने कक्ष मे गया तो मैने परीक्षित जी के पुत्र से पूछा, आपने आज की कथा को श्रवण करके किसे अपना गुरु बनाया?

⇒ परीक्षित जी का पुत्र बोला- महाराज। मैने तो कंस को अपना गुरु बनाया। मैने पूछा? इतने अच्छे, अच्छे पात्र थे तुम्हे कंस ही मिला गुरु बनाने के लिए? वह बोला महाराज मैं अपने पिता जी के व्यापार को संभालने लायक हो गया हूँ। किन्तु मेरे पिताजी है कि वह मुझे कुछ देना ही नही चाहते। इसलिए कंस की तरह मै भी अपने पिता से अपना हक छीन लूंगा।

⇒ तो बन्धुओ कहने का भाँव यही है कि कथा को श्रवण करके कथा के पात्रो मे से किसी एक का चयन करके उसे अपना गुरु बनाए, किन्तु इसका अभिप्राय यह नही है कि कंस को आप अपना गुरु बना लो, राम, कृष्ण को हम अपना गुरु बनाते है, क्यो? क्यो कि


PAGE NO.: 324
DATE: / /20

⇒ उनका चरित्र पूज्यनीय है। बहुत से अन्यधर्म के लोग हमसे कहते महाराज आपके हिन्दू धर्म मे तो लोग चित्र की पूजा करते है, हमने कहा- भईया हमारे यहा लोग चित्र की पूजा नही, उस चित्र के पीछे जो चरित्र हुया है, उसकी पूजा करते है।

⇒ कंस बड़ा शक्तिशाली था, समय बीता, कंस के अत्याचारो की चर्चा जनता मे होने लगी। कंस को जब ज्ञात हुआ कि जनता हमारा विरोध कर रही है, तो इससे अच्छा बनने का नाटक करके, अपनी चचेरी बहन देवकी का विवाह धूमधाम से वसुदेव जी के साथ किया। इतना दहेज दान मे दिया कि देखने वाले दंग रह गए। प्रजा मे यह विवाह चर्चा का विषय बन गया, ऐसा विवाह आजतक किसी ने नही देखा था। लोग कंस के इस कृत्य की प्रशंसा करने लगे।

⇒ देखो देवकी कंस की सगी बहन नही फिर भी कितनी उदारता के साथ विवाह किया। कुछ लोग बोले स्वभाव एक दम नारियल जैसा है महाराज का, ऊपर से कठोर लगते है भीतर एक दम पानी पानी है। कंस को लगा थोड़ा और नाटक करू, तो भावुकता से थोड़ा और माहौल बन जायेगा। बहन की बिदाई मे जोर-जोर से रोने लगा, और बहन को खुद रथहाककर बिदा करने लगा।

325

⇒ जनता और भावुक होने लगी, इसकी भावुकता का नाटक देखकर, देवताओ ने देखा ये बड़ा नौटंकी कर रहा है, भोली, भाली जनता को उल्लू बना रहा है। इसका असली चेहरा अब इसी जनता के सामने दिखाना पड़ेगा। इसलिए देवताओ ने आकाशवाणी कर दी।

श्लोकः॰ पथि प्रग्रहिणं कंसमाभाष्याहाशरीरवाक्।
अस्यास्त्वामष्टमो गर्भो हन्ता यां वहसेबुध॥

⇒ अरे मूर्ख! जिसको तू रथ मे बैठाकर लिये जा रहा है, जिस देवकी के विवाह मे तू प्रसन्न है, इसी का आठवाँ लाल तेरा बनेगा काल, सुनते ही कंस की आखे हो गई लाल, निकालकर तलवार अपनी बहिन की चोटी पकड़कर उसे मारने के लिए तैयार हो गया।

= तब वसुदेव जी ने समझाया -

श्लोकः॰ श्लाघनीयगुणः शूरैर्भवान् भोजयशस्करः।
स कथं भगिनीं हन्यात् स्त्रियमुद्वाहपर्वणि

⇒ महाराज एक तो यह स्त्री, दूसरी आपकी बहिन, और तीसरा यह विवाह का शुभ अवसर, ऐसी स्थिति मे आप इसे कैसे मार सकते है,

PAGE NO.: 326
DATE: / /20

⇒ आपको इसकी होने वाली सन्तान से भय है। इसलिए इसे न मारे हम आपको वचन देते हैं इसकी सारी सन्ताने आपको दे देगी। कंस ने कहा हम तुम्हारी बात एक शर्त पर मानेगे तुम हमे वचन दो कि जबतक देवकी की आठो सन्तान नही हो जाती, तबतक तुम दोनो मेरे पास रहोगे कारागार मे, वसुदेव जी ने कंस की शर्त स्वीकार कर ली।

⇒ समय आने पर पहला पुत्र हुआ, अपने वचन के अनुसार वसुदेव, जी उस बालक को कंस के पास ले गए। कंस ने कहा -

श्लोकः॰ प्रतियातु कुमारोऽयं न ह्यस्मादस्ति मे भयम्।

इस नन्हे से बालक को आप ले जाइए, मुझे तो देवकी की आठवी सन्तान से भय है, इसलिए उसे ले आइएगा।

⇒ जब वसुदेव जी चले गए कंस के समीप से तभी नारद जी वहा आए। नारद जी ने विचार किया जबतक कंस अधिक पाप नही करेगा तबतक इसके पाप का घड़ा नही भरेगा, जब तक इसके पाप का घड़ा नही भरेगा, तब तक भगवान अवतार लेकर नही आयेगे। नारद जी ने अपनी झोली मे से एक कमल पुष्प निकाला, और कंस से कहा- बताओ इस कमल मे आठवी पंखुडी कौन सी है।

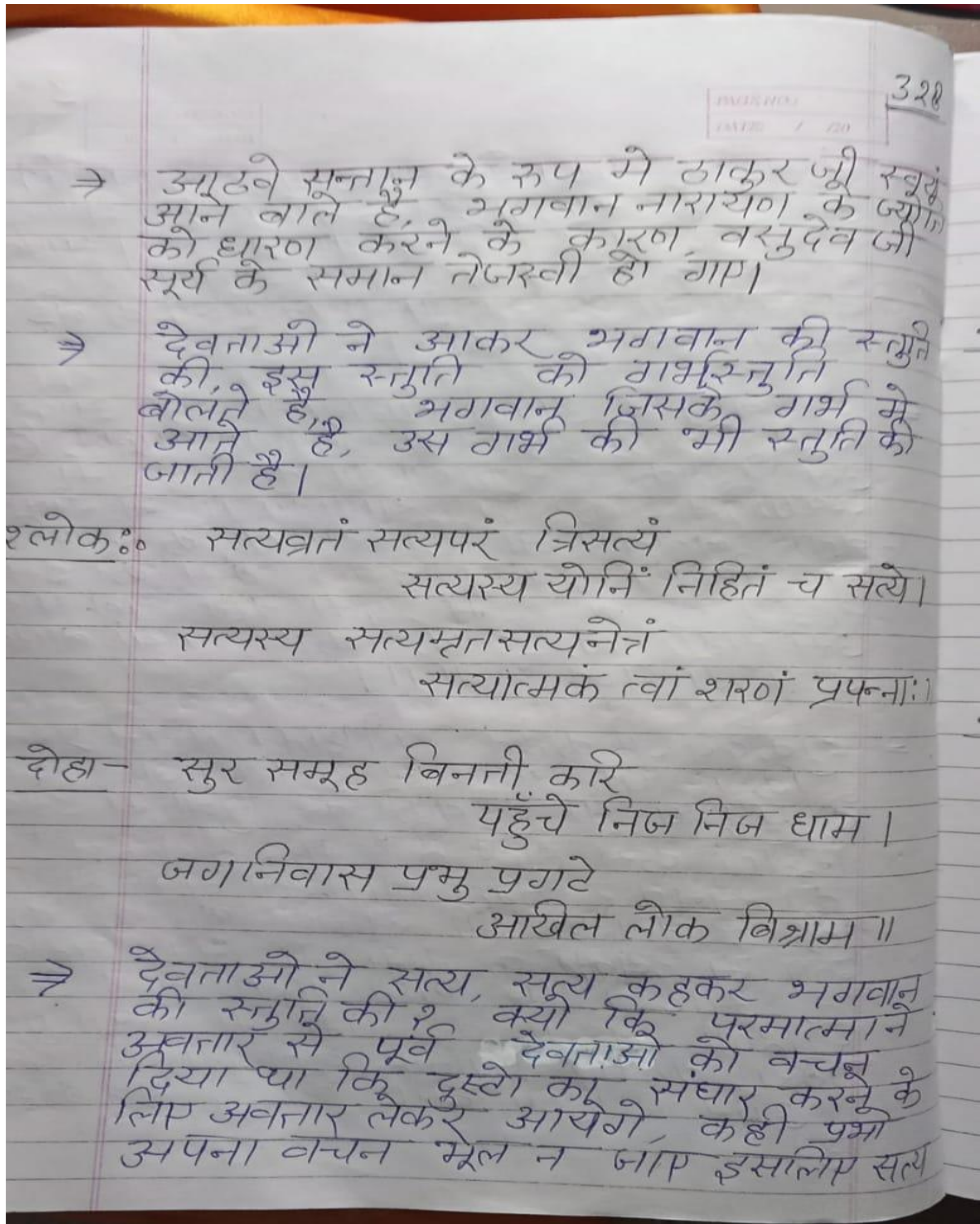
327

PAGE NO.:
DATE: / /20

=> कंस को समझ मे आ गया, पहला भी आठवां हो सकता है। इसलिए कंस ने देवकी छः पुत्रो की हत्या कर दी। सातवें बालक के रुप मे स्वयं शेषावतार बलराम जी के रुप मे ठाकुर जी के बड़े भईया बनकर पधारे।

=> भगवान ने अपनी योगमाया को आदेश दिया देवकी के गर्भ मे जो बालक है उसे ले जाकर रोहिणी जी के गर्भ मे स्थापित कर दो, योगमाया ने शेषावतार बलराम जी को रोहिणी के गर्भ मे स्थापित कर दिया। कंस को इस रहस्य के बारे मे पता नही चल पाया, उसे लगा कि देवकी का सातवां बालक गर्भ मे नष्ट हो गया।

= शुकदेव जी कहते - परीक्षित! तुमने प्रश्न किया था कि जब बलराम जी रोहिणी के पुत्र थे तो देवकी के पुत्रो मे उनकी गिनती कैसे होती है? मेरे द्वारा इस प्रसंग को सुनकर तुम्हे ज्ञात हो गया होगा कि बलराम जी सातवे बालक के रूप मे देवकी के गर्भ मे आए, भगवान के आदेश पर योगमाया द्वारा उन्हे रोहिणी मईया के गर्भ मे स्थापित किया गया, इसलिए बलराम जी देवकी और रोहिणी दोनो के ही पुत्र कहलाते है।


328
⇒ आठवे सन्तान के रूप मे ठाकुर जी स्वयं आने वाले है, भगवान नारायण के ज्योति को धारण करने के कारण वसुदेव जी सूर्य के समान तेजस्वी हो गए।
⇒ देवताओ ने आकर भगवान की स्तुति की, इस स्तुति को गर्भस्तुति बोलते है, भगवान जिसके गर्भ मे आते है, उस गर्भ की भी स्तुति की जाती है।
श्लोकः- सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं
सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं
सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्नाः।
दोहा- सुर समूह बिनती करि
पहुँचे निज निज धाम।
जगनिवास प्रभु प्रगटे
अखिल लोक बिश्राम॥
⇒ देवताओ ने सत्य, सत्य कहकर भगवान की स्तुति की? क्यो कि परमात्मा ने अवतार से पूर्व देवताओ को वचन दिया था कि दुस्टो का संघार करने के लिए अवतार लेकर आयेगे, कही प्रभो अपना वचन भूल न जाए इसलिए सत्य

⇒ सत्य कहकर भगवान् की स्तुति की। भगवान के प्रकट होने का सुन्दर समय आया।

श्लोक- अथ सर्वगुणोपेतः कालः परमशोभनः।
यर्ह्येवाजन जन्मर्क्षं शान्तर्क्षग्रहतारकम् ॥

⇒ जो काल से परे है, वह भगवान जी जब प्रकट हुए तो काल को स्वीकार किया, समस्त शुभ गुणों से युक्त बहुत सुहावना समय आया। रोहिणी नक्षत्र था।

⇒ जब तक नव द्रव्यों की शुद्धि नही होती, तब तक परमात्मा अवतार नही लेते।

श्लोक- दिशः प्रसेदुर्गगनं निर्मलोड्गणोदयम्।
मही मंगल भूयिष्ठ पुरग्राम व्रजाकरा ॥

⇒ काल, दिशा, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन और आत्मा ये नव द्रव्य है। जब इन नव द्रव्यों की शुद्धि हो गई तब भगवान प्रकट होकर पधारे।

⇒ आकाश मे सभी तारे, ग्रह, नक्षत्र, शान्त-सौम्य हो गए, दिशाएँ स्वच्छ प्रसन्न हो गई निर्मल आकाश में तारे जगमगा रहे थे।

330

श्लोकः- नद्यः प्रसन्नसलिला ह्रदा जलरुहश्रियः।
द्विजालि कुल संनादस्तबका वनराजयः॥

⇒ भाद्रपद माह मे नदियो का जल स्वच्छ नही होता, किन्तु भगवान के प्रकट होने के समय नदियो का जल स्वच्छ हो गया,

⇒ जो कमल पुष्प सूर्य के प्रकाश मे खिलते है वह रात्रि के समय ही खिल गए। वृक्षो पर सुन्दर, सुन्दर रंग बिरंगे पुष्प खिल गए। भौरे गान करने लगे, शीतल-मन्द-सुगन्ध वायु अपने स्पर्श से लोगो को सुखदान करती हुई बहने लगी। (1)

श्लोक- अग्नयश्च द्विजातीनां शान्तास्तत्र समिन्धत। (2)

⇒ ब्राह्मणो के अग्निहोत्र की अग्नि जो कंस के अत्याचार से बुझ गयी थी, वह अपने आप जल उठी। जिस समय भगवान के आविर्भाव का अवसर आया, स्वर्ग मे देवताओ की दुन्दुभियाँ अपने आप बज उठी, किन्नर, गन्धर्व मधुर स्वर मे गाने लगे, किन्तु मन्द, मन्द स्वर मे गान किया, उच्च स्वर मे करते तो कंस सामने आ जाते तलवार लेकर।

- आइए हम सभी भी भगवान का स्वागत करे।

331

PAGE NO.:
DATE: / /20

## :: भजन ::

स्वागतम् कृष्णा, शरणागतं कृष्णा।
स्वागतम् सुस्वागतम् शरणागतम् कृष्णा ॥
स्वागतम् कृष्णा, शरणागतं कृष्णा

(1) अभी आता ही होगा, सलोना मेरा,
हम राह उसी की तका करते है,
कविता सविता नही जानते है,
मन मे जो आया, सो बका करते है।

स्वागतम् कृष्णा, शरणागतं कृष्णा.....

(2) पड़ते उनके पद पंकज मे,
चलते चलते जो थका करते है,
उनका रस रूप पिया करते है,
उनकी छवि छाक छका करते है।

स्वागतम् कृष्णा, शरणागतं कृष्णा
स्वागतम्, सुस्वागतम्, शरणागतम् कृष्णा
स्वागतम् कृष्णा, शरणागतं कृष्णा

- भाद्रपद माह, कृष्णपक्ष, अष्टमी तिथि दिन बुधवार, रोहिणी नक्षत्र, श्री हर्षण योग, बव करण, मध्यरात्रि का समय 12 बजे भगवान देवकी के गर्भ से हाथों मे शंख, चक्र, गदा, कमल लिए हुए प्रकट हो गए।

332

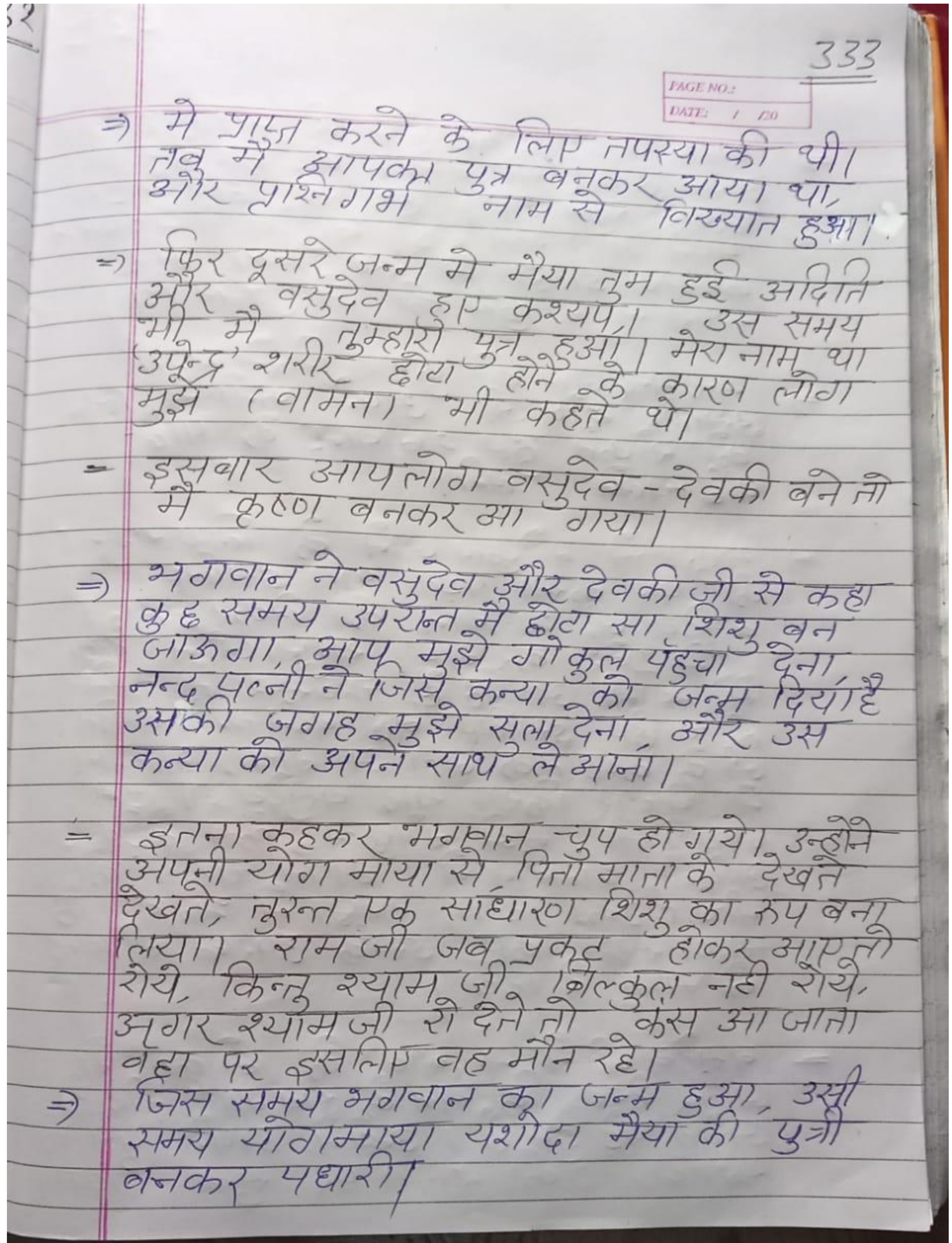
श्लोकः तमद्भुतं बालकमम्बुजेक्षणं
चतुर्भुजं शंखगदार्युदायुधम् ।
श्रीवत्सलक्ष्मं गलशोभि कौस्तुभं
पीताम्बरं सान्द्रपयोदसौभगम् ॥

⇒ वसुदेव जी ने देखा, उनके सामने एक अद्भुत बालक है उसके नेत्र कमल के समान कोमल और विशाल है। जब उन्हे यह ज्ञात हुआ कि मेरे पुत्र के रुप मे भगवान ही आये हैं, तब पहले तो उन्हे आश्चर्य हुआ, फिर आनन्द से उनकी आँखे खिल उठी। भगवान के जन्मोत्सव को मनाने के लिए उन्होने उसी समय ब्राह्मणो के लिए दस हजार गायो का संकल्प कर दिया।

⇒ माता देवकी ने देखा कि मेरे पुत्र के रुप मे भगवान आये है तो वह भगवान की स्तुति करने लगी।

⇒ तब भगवान ने माता देवकी से कहा मैया मै आज ही आपका पुत्र बनकर नही आया, इससे पहले भी आ चुका हूँ।

⇒ स्वायम्भुव मन्वन्तर मे मैया आपका नाम पृश्नि और वसुदेव जी का नाम सुतपा था। तुम दोनो ने मुझे पुत्र रुप


333
PAGE NO.:
DATE: / /20
⇒ मे प्राप्त करने के लिए तपस्या की थी। तब मैं आपका पुत्र बनकर आया था, और प्राश्निगर्भ नाम से विख्यात हुआ।
⇒ फिर दूसरे जन्म मे मैया तुम हुई अदिति और वसुदेव हुए कश्यप। उस समय भी मै तुम्हारा पुत्र हुआ। मेरा नाम था 'उपेन्द्र' शरीर छोटा होने के कारण लोग मुझे (वामन) भी कहते थे।
- इसबार आपलोग वसुदेव - देवकी बने तो मै कृष्ण बनकर आ गया।
⇒ भगवान ने वसुदेव और देवकी जी से कहा कुछ समय उपरान्त मै छोटा सा शिशु बन जाऊगा, आप मुझे गोकुल पहुचा देना, नन्द पत्नी ने जिसे कन्या को जन्म दिया है उसकी जगह मुझे सुला देना और उस कन्या को अपने साथ ले आना।
= इतना कहकर भगवान चुप हो गये, उन्होंने अपनी योग माया से पिता माता के देखते देखते, तुरन्त एक साधारण शिशु का रुप बना लिया। राम जी जब प्रकट होकर आए तो रोये, किन्तु श्याम जी बिल्कुल नही रोये, अगर श्याम जी रो देते तो कंस आ जाता वहा पर इसलिए वह मौन रहे।
⇒ जिस समय भगवान का जन्म हुआ, उसी समय योगमाया यशोदा मैया की पुत्री बनकर पधारी।

334

⇒ भगवान के प्रकट होते ही सभी द्वारपाल अचेत होकर सो गये। बंदी गृह के सभी दरवाजे खुल गए। हथकड़ी और बेड़ियां अपने आप खुल गई। वसुदेव जी ने भगवान को एक डलिया मे रख लिया और मथुरा से गोकुल की ओर चल दिए।

⇒ मन्द मन्द जल की फुहार गिरने लगी इसलिए शेष जी अपने फनो से जल को रोकते हुए भगवान के पीछे-पीछे चलने लगे।

⇒ मथुरा से गोकुल जाने के लिए यमुना को पार करना पड़ता था। इसलिए वसुदेव जी भगवान को लेकर यमुना मे प्रवेश कर गए। यमुना जी ने देखा मेरे स्वामी आ रहे है, चरणस्पर्श तो करने ही चाहिए, इसलिए वह बढ़ने लगी, वसुदेव जी के कण्ठ तक जल आ गया, भगवान ने विचार किया, यदि वसुदेव जी डूब जायेगे तो मुझे गोकुल कैसे छोड़कर आयेगे, भगवान ने अपने चरणों को नीचे लटका दिया, यमुना ने भगवान के चरण स्पर्श किए, इसके उपरान्त गोविन्द को मार्ग दे दिया।

= वसुदेव जी ने नन्दबाबा के गोकुल मे जाकर देखा, कि सब के सब गोप नींद से अचेत पड़े हुए है। उन्होंने अपने पुत्र को यशोदा की शय्या पर सुला दिया।

335

PAGE NO.:
DATE: / /20

=> और उनकी नवजात कन्या लेकर वे बंदीगृह लौट आये। जेल मे पहुँचकर वसुदेव जी ने उस कन्या को देवकी की शय्या पर सुला दिया, भगवान जब प्रकट होकर आए तो हथकड़ी और बेड़ियाँ खुल गई, किन्तु जब माया रूपी कन्या वसुदेव जी साथ आई तो हथकड़ी और बेड़ियाँ लग गई।

=> बन्धुओ जीव के जीवन मे जब ब्रह्म चलकर आता है तो वह भव बन्धनो से मुक्त हो जाता है, और जब जीव के जीवन मे माया चलकर के आती है तो वह उसके बन्धन का कारण बन जाती है।

=> कन्या जैसे ही देवकी माँ की गोद मे आई रोने लगी। शिशु के रोने की ध्वनि सुनकर द्वारपालो की नींद टूट गयी। वे तुरन्त भोजराज कंस के पास गये और देवकी की सन्तान होने की बात कही। द्वारपालो की बात सुनकर वह तुरन्त बंदीगृह पहुँच गया।

=> देवकी ने हाथ जोड़कर कहा भईया, यह कन्या तो तुम्हारी पुत्रवधू के समान है। स्त्री जाति की है तुम्हे स्त्री की हत्या कदापि नही करनी चाहिए। भैया! तुमने दैववश मेरे बहुत से अग्नि के समान तेजस्वी बालक मार डाले है। अब केवल यही एक कन्या बची है, इसे तो मुझे दे दो।

PAGE NO.:
DATE: / /20

⇒ देवकी ने बहुत प्रार्थना की। परन्तु कंस बड़ा दुष्ट था। उसने देवकी के हाथ से वह कन्या छीन ली। उसके पैर पकड़कर कंस ने उसे एक चट्टान पर दे मारा।

⇒ परन्तु श्री कृष्ण की बहिन साधारण कन्या तो थी नहीं, देवी थी, वह कंस के हाथ से छूटकर आकाश मे चली गयी और अपने बड़े, बड़े आठ हाथो मे आयुध लिए हुए प्रकट हो गयी। उन देवी ने कंस से कहा-

श्लोकः- किं मया हतया मन्द जातः खलु त्वान्तकृत्।
यत्र क्व वा पूर्वशत्रुर्मा हिंसीः कृपणान् वृथा॥

⇒ रे मूर्ख! मुझे मारने से तुझे क्या मिलेगा? तेरे पूर्वजन्म का शत्रु तुझे मारने के लिए किसी स्थान पर पैदा हो चुका है। इतना कहकर वे देवी विंध्याचल पर्वत पर जाकर विराजमान हो गयी। और विंध्यवासिनी माता के नाम से प्रसिद्ध हुई।

⇒ देवी की बात सुनकर कंस ने वसुदेव जी से कहा आज पता चला, केवल मनुष्य ही झूठ नही बोलते देवता भी झूठ बोलते है। इन देवताओ की बात मानकर मैंने तुम्हारे साथ बहुत दुर्व्यवहार किया, मुझे क्षमा कर दो, इतना कहकर कंस ने अपनी बहन और बहनोई को कैद से मुक्त कर दिया।

## १- गोकुल मे भगवान का जन्म महोत्सव १~

PAGE NO.: 337
DATE: / /20

⇒ आइये अब नन्द महल की ओर चलते है-

नन्द बाबा नब्बे के हो गये। लेकिन लाला भयो नाय। एक दिन साधु संतन की मण्डली आई। बड़े-बड़े महन्त, श्री महन्त आए। नन्दबाबा ने सबकू बुलवाय के चकाचक रबड़ी घुटबाई, मालपुआ खिलाए। महन्त जी ने डकार लेके आशीर्वाद दियो, पुत्रवान भव। नन्दबाबा गद्‌गद होकर बोले महाराज जी अब तक तो भयो नाय अब नब्बे वर्ष के है गये अब का है जायगो महन्त जी बोले आशीर्वाद दयो है तो झूठो तो बचन नाय जाय, होरा तो होके ही रहेगो

= संतन के आशीर्वाद को ऐसो चमत्कार भयो कि अस्सी साल के बुढ़ापे मे यशोदा जी को लाभ है गयो। नन्द बाबा की बहन सुनन्दा जी चार महीने पहले से ही आकर भाबी की सेवा मे लगी भई है। वसुदेव जी कब आए कब बच्चे की अदला बदली कर गए किसी को पता ही नही चला। नींद खुली तो सबसे पहले सुनन्दा जी जगी और देखा दरवाजे कैसे खुले पड़े है। खिड़की से झाँककर देखा भाबी सो रही है, और उनके पास मे एक सुन्दर नीलकमल जैसा लाला लेटा है। सुनन्दा जी दौड़कर भीतर गई। और लाला की आभा, प्रभा, शोभा को देखकर चिल्लाते हुए बोली है गयो, है गयो, है गयो, सभी ग्वाले दौड़कर सुनन्दा

338

⇒ जी के पास आकर बोले का है गयो, सुनन्दा जी ने विचार किया अगर मैंने इन ग्वालो को बता दिया, तो ये नन्दबाबा को बता देंगे फिर मुझे नवलखा हार कैसे मिलेगा, ये शुभ समाचार सबसे पहले मैं ही भईया को सुनाऊगी।

⇒ नन्दबाबा गौशाला मे बैठे-बैठे भजन कर रहे थे। इतने मे सुनन्दा जी वहाँ आ पहुँची। सुनन्दा जी ने देखा नन्दबाबा माला करते जा रहे और कहते जा रहे, अबही तो भयौ नांय, अबही तो भयौ नांय, जाने कब होयगो। सुनन्दा जी बोली भैया बधाई हो। आपके घर आंज नन्हो सौ लाला भयौ है। नन्दबाबा ने जैसे ही सुनो लाला को जन्म भयो, बाबा प्रसन्न होकर नृत्य करने लगे।

श्लोकः॰ नन्दस्त्वात्मज उत्पन्ने जाताह्लादो महामनाः
आहूय विप्रान् वेदज्ञान् स्नातः शुचिरलंकृतः।

श्लोकः॰ वाचयित्वा स्वस्त्ययनं जातकर्मात्मजस्य वै।
कारयामास विधिवत् पितृदेवार्चनं तथा॥

⇒ नन्दबाबा बड़े मनस्वी और उदार थे। पुत्र का जन्म होने पर तो उनका हृदय आनन्द से भर गया।

PAGE NO.:
DATE: / /20

=) उन्होने यमुना मे स्नान करके सुन्दर वस्त्र धारण किए। फिर वेदज्ञ ब्राह्मणो को बुलवाकर स्वास्तिवाचन और अपने पुत्र का जातकर्म - संस्कार करवाया।

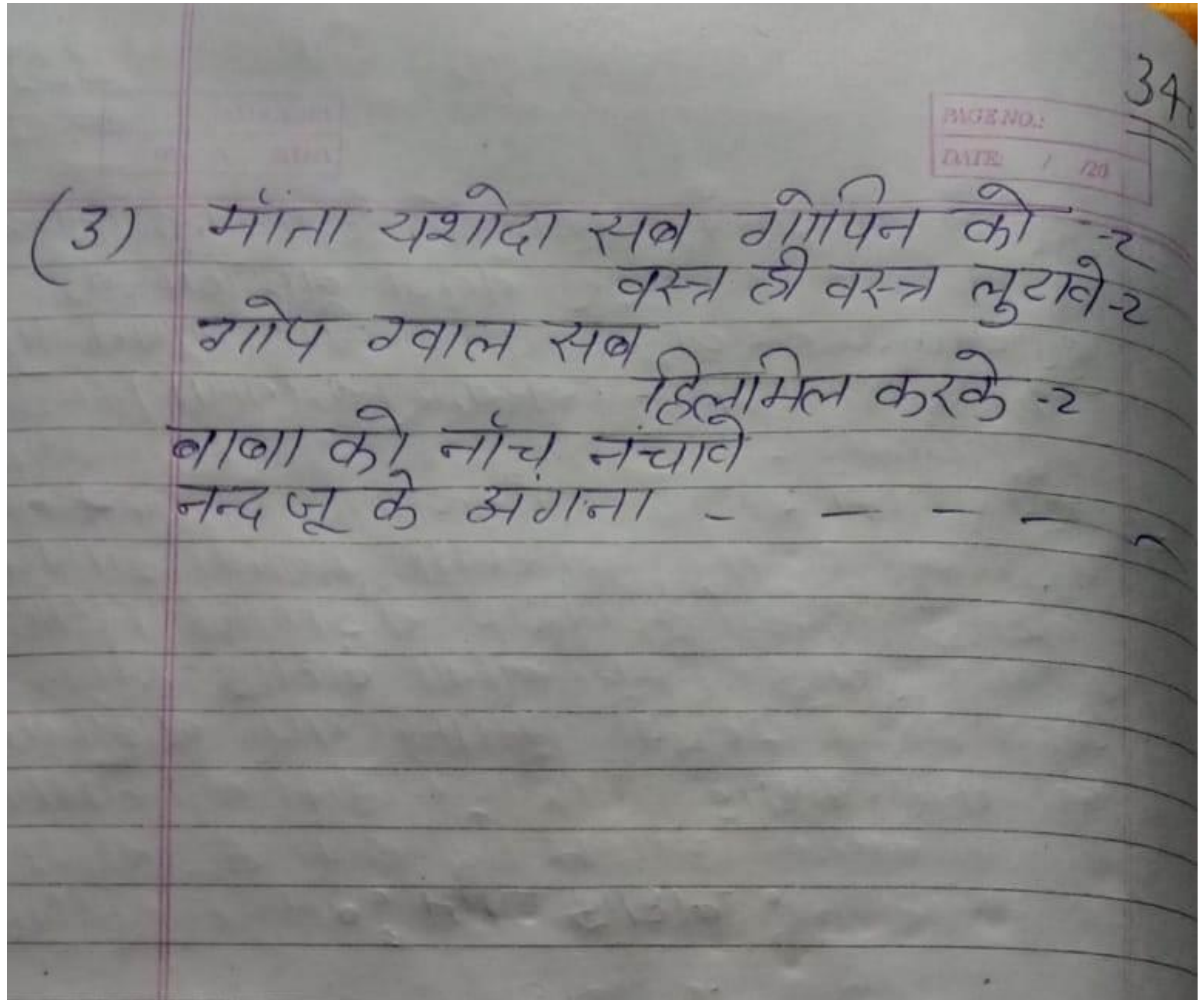
= पूरे वृज मे समाचार फैल गयो, नन्द रानी के लाला भयो, सभी ग्वाल, गोपियां बधाई देने के लिए दौड़ी चली आयी। मइया बधाइ हो, बाबा बधाई हो, सभी गोप ग्वाल, मैया, और बाबा को घेर कर बधाई गाने लगे।

:: बधाई गीत ::

नन्द जू के अंगना मे
बज रही आँज बधाई -2
सौ-सौ बार बधाई लीगो
लाखो बार बधाई -2
नन्द जू - - - - - - -

(1) चमत्कार सा हो गया भक्तो
होगई बात निराली -2
रात-रात मे नन्दबाबा की
दाढ़ी हो गई काली -2
नन्द जी के - - - - - -

(2) साठ साल के बूढ़े देखो
हो गये आँज जवान -2
नाँचे कूंदे धूम मचाँवे
गाए मीठी ताली -2
नन्द जू के - - - - -



34

(3) माँता यशोदा सब गोपिन को -2
वस्त्र ही वस्त्र लुटावे -2
गोप ग्वाल सब हिलमिल करके -2
बाबा को नाँच नचावे
नन्द जू के अंगना - - - -